कन्हैया लाल ओझा

सिंधु सीमान्त

नेशनल पब्लिशिंग हाउस
दिल्ली-७

नेशनल पब्लिशिंग हाउस,
२६–ए, जवाहर नगर, दिल्ली–७
बिक्री-केन्द्र : नई सड़क, दिल्ली–६

प्रथम आवृत्ति
मार्च, १९६७

मूल्य : रु० १०·००

भारत मुद्रणालय, के–२०, नवीन शाहदरा, दिल्ली–३२ में मुद्रित और
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली–७ के लिए
श्री सुरेन्द्र मलिक द्वारा प्रकाशित

सादर सस्नेह निमंत्रण

परम प्रिय पाठकजी,

अपने सिन्धु-सीमान्त के इस समारोह पर आपको इष्टमित्र, परिजन, प्रियजन सहित यह मेरा हार्दिक निमन्त्रण सादर प्रस्तुत है। आपकी आँखों के सामने है यह, इसका प्रमाण तो है कि आप इसे स्वीकार कर रहे हैं। अपने अमूल्य समय के दान की आपकी इस उदारता का मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। इसके बिना यह समारोह मैं आयोजित ही किस आधार पर करता ? मेरा एक बार और आपको साधुवाद और अभिनंदन।

आपने शायद सिरनामे पर प्रथम नामाक्षर में अपने नाम की अपर्याप्तता के के कारण निमत्रण-पत्र हाथ में लेने में संकोच व्यक्त किया था। शायद पत्र-वाहक ही निश्चित नहीं था कि आपको पं० सदाशय या पं० सदाशिव कहकर सम्बोधित करे। अंग्रेजी की तरह हिन्दी में तो नाम के प्रथमाक्षर के व्यवहार का चलन नहीं है न ! और तब भी जब नाम का यह प्रथमाक्षर लिखा जा रहा था तभी मैं जानता था कि इससे प्रयोजन आपका है, केवल आपका। हजारों-लाखों की भीड़ में मैं आपको अलग करके पहचानता हूँ। मुझ पर आप इतने कृपालु हों और मैं आपको पहचान भी न सकूं ? विश्वास कीजिए, यह सारी सृष्टि आपके लिए है, केवल आपके लिए। आपकी रुचि-अरुचि का अनुमान करके आपके मन के रमण के लिए अपनी क्षमता भर मैंने इसमें व्यवस्था की है। मुझे पूरा विश्वास है, मेरे प्रयत्न की सचाई पर आपको शिकायत करने का अवसर न आएगा।

यों, नाम में विशेष है ही क्या ? सदाशय में ही ऐसा क्या है जो सदाशिव में नहीं है ? यदि किसी में विशेष कुछ हो तो मैं कहूँगा, आप एक ही साथ सदाशय भी हैं और सदाशिव भी। और यदि आपको आपत्ति न हो तो मैं तो कहूँगा कि

आपके साथ ही इस समारोह में आए हुए लखनऊ के प्रसिद्ध वकील सच्चिदानन्द पाठक भी हैं, जो हार-जीत दोनों के मुकदमों में हृदय का सतोल बनाए रखकर नीर-क्षीर मीमांसा करते हैं। मैं स्वीकार करता हूँ कि कुछ व्यक्ति अपने नाम की वजह से ही प्रसिद्ध हैं, और तब यह स्वाभाविक है कि वे अपने नाम के बारे में बड़े सावधान रहें। आपके परम-सखा हैं न वे ? स्व० डॉ० नलिनविलोचन शर्मा के अनुज पं० साहित्यविलोचन शर्मा से ही मेरा अभिप्राय है—ना ना, मैं यह नहीं कहता कि कोई पं० स० पाठक से समालोचन पाठक समझ जाए, जिनके स्वतंत्र व्यक्तित्व से परिचित होने का गौरव मुझे भी प्राप्त है। और हाँ, जब बात चल ही पड़ी है तो आपसे अनुरोध है कि इन दोनों महानुभावों, पं० साहित्यविलोचन शर्मा और प० समालोचन पाठक को भी सादर साथ लिवा लाएँ। अवश्य ही इनके नाम पृथक् से निमंत्रण-पत्र तो जा ही रहा है।

एक और बात है। इन महानुभावों के साथ से आपको मार्ग खोजकर लक्ष्य प्राप्त करने में कुछ कठिनाई नहीं होगी। मैं साथ ही आपकी सुविधा के लिए मार्ग का संकेत तो दे ही रहा हूँ, किन्तु ये सज्जन राजमार्ग से लगाकर साहित्य-नगर की छोटी-से-छोटी अँधेरी-अंधी गलियों से भी पूर्णरूपेण परिचित हैं। मैंने तो सुना है कि आँखें बन्द करके भी ये किसी गली में बेझिझक पहुँच जाते हैं, और गली चाहे अंधी (Deadend) ही क्यों न हो वे उसमें से निकल ही जाते हैं।

डर भी है कि ये सज्जन कहीं मेरे मार्ग-संकेत को अपना असम्मान मानकर मुझे कोसने न लग जाएँ। पाठक क्या अंधा है कि लम्बे-चौड़े आत्म-निवेदन के वक्तव्यों की बैसाखी उसके हाथ में थमा दी जाए, ताकि जमीन ठोक-ठोक कर अन्धा पाठक लेखक की तय की हुई मंजिल तक पहुँचे ? नहीं मैं तो पाठक को अन्धा क्या सहस्रचक्षु, सहस्रबाहु समझता हूँ, और यह भी जानता हूँ कि कोई भी किसी अनजानी जगह में भी देखता-पूछता कहीं भी जा सकता है। यही नहीं पाठकजी, वह तो अगम्य स्थानों की सैर भी केवल अपने साहस और उत्साह के बल पर कर आता है। फिर भी यातायात की व्यवस्था और नियंत्रण करने वाले अधिकारी भी यात्रा के पूर्व टाइम-टेबल और गाइड की सहायता को अपने अधिकारों पर हस्तक्षेप नहीं मानते।

महासिन्धु के अनन्त विस्तार और निबिड़ गंभीरता के कारण 'सिन्धु-सीमान्त' दुर्गम मार्ग की चाहे आशंका पैदा करता हो, पर अब वह तनिक भी

दुर्गम नहीं रह गया है। विस्तार जितना भी हो, निबिड़ता जैसी भी हो, सबका अनुसंधान किया जा चुका है चाहे वह ब्रह्मांड में अन्तरिक्ष की हो, या पृथिवी पर महासिन्धु की। ये किसी भी गली में बेझिझक पहुँच जाते हैं, और गली चाहे अंधी की हो, या महादेश के जंगलों की हो, या फिर इस मानव के (Dead-end) ही क्यों नही, जटिल मन की ही क्यों न हो। आपकी यह यात्रा एक सीमान्त से दूसरे सीमान्त तक की है—अवश्य ही मानव-मन के निबिड़-गहन विस्तृत महासिन्धु की, आमने-सामने और ऊपर-नीचे।

इस गोलमटोल गोलमाल ब्रह्मांड में आदि और अन्त कुछ नहीं है। जहाँ से चल पड़ो वही आदि और जहाँ रुक जाओ वहीं अन्त। लक्ष्य चाहे वह न हो। और किसी भी दिशा में चल पड़ा जाए, अपने लक्ष्य में किसी दिशा से देर-सबेरे मार्ग पाया जा सकता है। यह महज शुद्ध दर्शन नहीं, सहज सिद्ध विज्ञान है। साहित्य में शब्दों के द्वारा इसी की प्रतीति 'सिन्धु सीमान्त का' प्रस्तुत शिल्प है, क्योंकि चार आयाम की अंतरिक्ष यात्रा जैसी यह मानव के बहु-आयामीय मन की यात्रा है। सिन्धु इसलिए इसे कहा गया है कि मनोविज्ञान में अभी तक इसी साकार संज्ञा से उसका बोध कराया जाता है। और, कह ही चुका हूँ, नाम से ही क्या आता-जाता है? वह तो एक प्रतीक मात्र है, किसी रहस्य का एक इन्द्रियगोचर भाव मात्र।

फ्रॉयड ने अपने मनोविज्ञान में मानव मन की एक दशा को 'सिन्धु-संभाव' या ओशियनिक फीलिंग (Oceanic feeling) के नाम से अभिहित किया है। अवश्य ही उनके मत से यह एक विशिष्ट दशा है, सामान्य दशा नहीं। अन्तःकरण तब नितान्त उन्मुक्त, खुला, नीरव, स्थिर तथा सौम्य होता है, अपनी अहंता तब मानो उस विराट् अनन्त नीरवता में अनुक्षण घुलती जा रही अनुभव होती है। शुद्ध स्थिर निर्विकल्प चैतन्य को कहीं से किसी प्रकार का दबाव नहीं, कहीं किसी से संघर्ष नहीं—सारा अस्तित्व मानो निर्वाण, शुद्ध कैवल्य की सतह पर तैर आया हो। इस संभाव की अभिव्यक्ति का शाब्दिक प्रयत्न प्रायः अपर्याप्त प्रमाणित होता है। कभी-कभी यदि काव्यानुभूति उसका कुछ स्पर्श प्राप्त करले तो उसे अपवाद कहना होगा। देखिए, अन्तःकरण का यह प्रशांत-प्रशांत संभाव भी किसी सीमान्त में आपको अनुभव होता है या नहीं।

वैसे यह केवल फ्रॉयड ही की मान्यता है। मैं मनोविज्ञानवेत्ता नहीं हूँ किन्तु

अनुभव करता हूँ कि सिन्धु संभाव की यह दशा मानवमन की विशिष्ट नहीं, शाश्वत दशा कही जानी चाहिए, जिसमें बड़े-बड़े प्रलयंकर तूफान, समुद्री-धाराओं की उथल-पुथल, भंवरों के आवर्त-विवर्त के बावजूद कभी बाढ़ नहीं आती। ज्वार-भाटा उसके नियमित क्रम हैं, विशालकाय मगरमच्छ, घड़ियाल भी छोटे-छोटे नाना प्रकार के अनन्त जीव-जन्तुओं के साथ उसे अपना आवास बनाए हुए हैं। और यह सब-कुछ उसके ऊपरी शल्क ही का तो स्वरूप है। इस शल्क के नीचे क्या वही प्रशांत अगाध संभाव नहीं है, जिसके वर्णन के अब तक के सब प्रयत्न 'गिरा अनयन, नयन बिनु बानी' ही प्रमाणित होते रहे हैं ?

शायद आपको सहज ही लगे, या सुझाया भी जाए कि इस समारोह में कहीं क्रम नहीं है, अन्विति नहीं है, और शैली-शिल्प की एकतानता भी नहीं है। किसी घटना का काल वर्तमान है तो उसके बाद की घटना का सुदूर अतीत, फिर क्रम-अनुक्रम पर आक्रमण कर तीसरी घटना निकटतर अतीत की आ जाती है तो उसके बाद की घटना दूरतर अतीत की। यह एक सीमा तक सच है, क्योंकि इसमें आलेख घटनाओं का नहीं, चरित्रों का है, सिन्धु-संभावों का है, जहाँ अन्विति, क्रम सब घुल-मिलकर एकाकार हो गए हैं। यदि कहीं आपको क्षणकाल के लिए भी ऐसा लगे कि यहाँ काल अपने भूत-भविष्यत्-वर्तमान तीनों रूपों को बिसरा कर कैवल्य की दिशा में सिमिटता जा रहा है तो वह मेरे प्रयत्न की सार्थकता है। शैली भी इसीलिए मिश्र हो गई है—पश्च-दर्शन, पश्च-दर्शन के भीतर और पश्च-दर्शन—स्मृति के कई स्तरों पर घटनाप्रवाहों का अनुलेखन है। सचमुच कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा, किन्तु सिन्धु-संभाव ऐसा ही तो भानमती का कुनबा है। क्रम, अन्विति, पूर्वापर-संदर्भ—कहाँ है चेतना के प्रवाह में यह सब कुछ ? एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक चेतना की मेंढ़क-कुदान की दिशा क्या निश्चित है ? उसी बिन्दु पर तो मनोविज्ञान उस स्थिति पर पहुँच जाता है जहाँ सारे विज्ञान—अणुविज्ञान, जीवविज्ञान, रसायनविज्ञान—दर्शन की अनिश्चायकता (Unpredictability) की स्थिति में पहुँच जाते हैं। तब सारी स्थिति को उत्प्रवर्तन (Mutation) के हाथों सौंप कर प्रायकिता, अवसर संयोग या किसी अन्य सत्ता की स्वीकृति के पक्ष में तर्क का झंडा उतार देना होता है।

नहीं, यह उपन्यास घटनाओं का क्रम नहीं प्रस्तुत करता, यद्यपि घटनाएँ इसमें कम नहीं हैं। चरित्रों को प्रस्तुत करने का भी इसका कोई आग्रह नहीं है,

यद्यपि चरित्र भी इसमें कम नहीं हैं। यहाँ केवल व्यक्ति के अंतःकरण के संभावों का एक रेखाचित्र मात्र है। घटनाएँ हैं तो केवल आवर्त मात्र हैं, आवर्तों पर आ पड़े व्यक्ति भी हैं, पर उनको देखने का दृष्टिकोण नवनीत का स्वयं का है। सारा व्यापार नवनीत के मानस में चलता है, उसके चेतना के प्रवाह के अनुसार ही उसका क्रम है। हाँ, कथा को सम्पूर्णता देनेवाली सारी सामग्री का इसमें आकलन है, जो यद्यपि ऊबड़-खाबड़, आगे-पीछे सजी हुई है, किन्तु इसी तरह तो वह द्रष्टा के ऊबड़-खाबड़ मन का परिचय प्रस्तुत करती है।

किन्तु कुछ व्यापार इसमें इस तरह भी पेश किए गए हैं, मानो वे नवनीत के बाहर हों। नवनीत की मानसिक स्थिति को समझने के लिए इस तरह बाहर से प्रकाश प्रक्षिप्त करना भी आवश्यक था। इसे शैली का दोष माननेवाले कई मिल जाएँगे। हम लोग, खासकर साहित्य की विधा में काम करने वाले अपनी रूढ़ियों में इस तरह बँधे हुए हैं कि उनके बाहर भी कुछ है, और उनको देखने का कोई अन्य तरीका भी हो सकता है, यह सोचने का भी खयाल नहीं करते। इसीलिए किसी लीक से बाहर कुछ दिखाई दिया कि उसे और कुछ नहीं तो शैली का दोष ही कह दिया जाता है। किसी पात्र के माध्यम से देखने के लिए उसकी चेतना का द्वार खोलकर भीतर झाँक देखने का तरीका हमारी रूढ़ि में स्थान पा गया है, और यह हम भली भाँति समझ गए हैं कि तब हमें कमरे के अभ्यतर का सब कुछ दिखाई देने लग जाएगा। किन्तु उसमें कोई काँच हो सकता है, जिसमें किसी अन्य पार्श्व से बाहर का एकदम नया अनजाना दृश्य भी प्रतिफलित हो रहा हो, या किसी छिपी खिड़की अथवा रोशनदान से कोई अद्‌भुत नई चीज ही दिखाई दे जाए, इसका हम विश्वास नहीं करना चाहते। हमारा यह विचार रूढ़ि हो गया है कि बाहर का दृश्य देखने के लिए हमें पुनः उसी दरवाजे से बाहर लौट आना पड़ेगा, उसके लिए अन्य मार्ग भी हो सकता है, यह हम देखना ही नहीं चाहते। यदि चेतना की गहराई के भिन्न-भिन्न कोष्ठ एक दूसरे के बाद गोलाई में बने हुए हों तब तो दरवाजे के बाद दरवाजे में आगे गहरे घुसते हुए हम अनायास बाहर भी निकल जा सकते हैं, और एकाएक हमें विश्वास ही नहीं होता कि यह हो कैसे गया, और हम वही पहले का दृश्य देख रहे हैं या किसी अन्य प्रदेश का? इस वैज्ञानिक और दार्शनिक परिप्रेक्ष्य के अभाव में, जिसे हम शैली का दोष मान लेते हैं, वह वस्तुतः उसका गुण भी

हो सकती है। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा उपन्यास इसलिए भी विशिष्ट है कि उसकी शैली बड़ी लचीली अथवा ढीली (Loose) होती है, और यही उसकी लोकप्रियता का भी कारण है। यों, किसी भी क्षेत्र में शैली की अपेक्षा बल हमें विषय की स्पष्टता—क्लैरिटी (Clarity) पर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त एक बात और भी है। अंग्रेजी जैसा 'डिरेक्ट' और 'इन्डिरेक्ट नेरेशन' के विशिष्ट नामाभिधान की तरह, हिन्दी में, प्रचलन के बावजूद, उक्ति का ऐसा दो टूक विभाजन नहीं है। देखा जाए तो स्थूल रूप में उक्ति की यह विविधता ही उसे व्यक्तिनिष्ठ या विषयानिष्ठ बना देती है।

मेरा खयाल है, इससे अधिक विस्तार में 'सिन्धु-सीमान्त' का मार्ग बताने का कम-से-कम आपके निकट कोई प्रयोजन नहीं है। यों भी मैं अधिक ही लिख गया हूँ। आप जैसे सुधी विद्वान् को सकेत के रूप में भी मार्ग-निर्देश वातुलता लगती ही है। लेकिन हकीकत मुझे कुछ ऐसी लगती है कि हिन्दी में गढ़ी-गढ़ाई लीक पर चलने का रिवाज इतना अधिक है कि नए मार्ग पर किसी को प्रेरित करने के लिए उसे हाथ पकड़कर ही नहीं, पैर पकड़कर भी ले जाना पड़ सकता है।

यों, नया इसमें कुछ है भी कहाँ? नवनीत कोई विशिष्ट या अवमान्य—एब्नॉर्मल व्यक्ति नहीं है। वह आज के परिप्रेक्ष्य-च्युत युवक का एक प्रतिनिधि ही तो है। अपना यह परिप्रेक्ष्य वह क्यों खो बैठता है, इसके भी कारण समाज में चारों ओर बिखरे पड़े हैं, और हम सब उन्हें अच्छी तरह जानते हैं, महसूस करते हैं। उसके अन्तःकरण का सिन्धु-सभाव भी कोई नई वस्तु नहीं है। जाने या अनजाने ही हर व्यक्ति एकाएक ही क्षणभर या अधिक समय के लिए इस अनुभव से गुजरता ही है, और परिस्थितियाँ यदि अनुकूल बनाई जा सकें तो व्यक्ति इस संभाव को पकड़े रखकर इच्छानुसार समय तक इसमें ठहर सकता है। प्रमाण के रूप में नवनीत इसी संभाव में आपके सामने प्रस्तुत है ही।

अवश्य इस संभाव के स्थायित्व के लिए एक सकरुण औदास्य की चरित्र में अपेक्षा होती है। नवनीत के व्यक्तित्व की गठन में बहुत शैशव में ही वह घुल-मिल गई होगी, जब उसे माता-पिता का सरक्षण नहीं रह गया था, पर वातावरण ने उसे दबा दिया का। जीवन की आगे की यात्रा में यह औदास्य एकाएक ही उसके मर्म को भेदकर निकल पड़ता रहता है, इसकी प्रतीति मैंने रचना-शिल्प

के द्वारा देने की चेष्टा की है। शहर से बाहर, परिजन-प्रियजन से परित्यक्त, स्वास्थ्य-उत्साह से हीन, एक खाट पर निरीह पड़े अतीत पर प्रक्षिप्त उसकी वह सकरुण उदासीन निर्लिप्त दृष्टि, जो हर घटना का ठोस वर्म फोड़कर एकाएक ही कठोर चेतना की चट्टान से टकराने लगती है, समारोह के समग्र-प्रभाव को अपनी इसी उदासीनता में सिक्त करती चलती है। वैसे नवनीत का निरा सिन्धु सभाव ही नहीं प्रस्तुत है यहाँ, मेरी चेष्टा है कि आप उसे, मनोवैज्ञानिक शब्दावलि में कहने की अनुमति दें तो, उसे उसके समग्र जैस्टाल्ट (gestalt) में प्रतिष्ठित पाएँ। और जैसा कि निवेदन किया जा चुका है, यह उपन्यास घटनाओं से अधिक व्यक्तित्वों का है, व्यक्तित्वों से अधिक मनोदशाओं का है, और सामान्य मनोदशाओं से अधिक सिन्धु-संभाव का है! मेरा विश्वास है पाठकजी, आप अवश्य यह अनुभव कर सकेंगे।

निमंत्रण-पत्र के अंत में नई सभ्यता का रिवाज है आर० एस० व्ही० पी० लिखने का। नीलम की प्रेरणा है कि उसकी भाषा का यह निवेदन-संकेत इस निमत्रण-पत्र में भी दिया जाए। हिन्दी में इसका शब्दशः अनुवाद होगा 'उत्तर-दें-यदि-चाहें'। संकेताक्षरों में 'उ० दें० य० चा०'। यद्यपि यहाँ तक आप पधार चुके हैं तो निमंत्रण तो स्वीकृत समझ ही सकता हूँ, किन्तु इस अनुरोध के अर्थ की व्याप्ति तो और भी गहरी है, विस्तृत है, इसलिए यह अनुरोध भी शेष में जोड़े दे रहा हूँ।

—तो आइए, आपको एक 'सीमान्त' पर खड़ा कर दूं—

उ० दें० य० चा०
८/ए, नंदन रोड, भवानीपुर,
कलकत्ता-२५.

आपका विनम्र सेवक,
—लेखक

अशांत-अतलांत

१ सीमान्त

"हरनाम !"

बड़ा ही क्षीण स्वर था। दीवारों ने शायद सुना हो, क्योंकि उनके कान होते हैं, लेकिन जिसको बुलाया गया था वह हरनाम अभी तक लौटा नहीं था और कान वह अपने साथ लेता गया। खाट पर फैले एक सामान्य किन्तु स्वच्छ बिस्तर पर पड़े हुए नवनीत ने फटी आँखें चारों ओर घुमाकर दरवाजे पर डालीं, दरवाजा उसी तरह बन्द था।

उधर खुली खिड़की से बाहर का नीला आकाश दिखाई देता है। गए कुछ दिनों एकाएक ही बरस जाने के बाद आज वह साफ हो गया है। कभी-कभी एकाध बादल का टुकड़ा अवश्य कभी इस खिड़की से कभी उस खिड़की से झांक जाता है। पच्छिम की ओर सारी खिड़की मानों हवा से भर उठी है, उसमें शायद फूलों का पराग चुआ पड़ रहा है, तभी तो नवनीत की दृष्टि सुगन्ध से ओतप्रोत एक ताजगी से भर उठी है। अगर यह आकाश आज उसे बेगाना लगने लगा है तो लगता रहे, अगर इस पृथिवी की गन्ध उसकी नाक में नहीं है तो न सही। किसी अतीन्द्रिय मलय-वन से बह कर आई उसके शरीर से लिपटा हुआ यह समीरण, नन्दनवन से झड़े फूलों का उसकी नाक में भरा हुआ यह पराग तो है। पतझड़ और काँटों से भरी मौत की छाया अब उसे डरा नहीं सकती। वह दिखाई ही कहां देती है ? क्या वह उसके मन का भ्रम ही नहीं था ? कवि ने गाया था, "ऐहें बहुरि बसन्त-ऋतु इन डारनि वे फूल।"

शहर का कोलाहल यहाँ तक सुनाई दे रहा है। ज्यों-ज्यों दिन बढ़ता जाता है, कोलाहल भी बढ़ता जाता है। शहर दूर है तो क्या हुआ ? वह जीवन जो

है, उसकी पहली ही शर्त है अपना अगुगुणन ! हुआ करे यह मृत्यु के देवता भैरव का मन्दिर ! वे दिन पीछे रह गए जब आदमी दिन में भी इधर आते डरते थे । केवल कथा ही रह गई कि किसी प्राचीन युग में अपनी रानी की मृत्यु पर दशोत्तर-क्रिया में किसी महाब्राह्मण को यह जमीन तथा कुछ मुद्राएं राजा से दान मिली थीं। मुद्राओं की सहायता से महाब्राह्मण ने यह मकाननुमा मन्दिर या मन्दिरनुमा मकान बनवा लिया और यमुना के पेट से एक पत्थर ढूंढ़ लाकर नीचे कमरे में उसकी स्थापना करदी । किसी ने उसे कहा यमराज, और किसी ने कहा भैरव । ऊपर के दो कमरों में रहता हुआ महाब्राह्मण का परिवार कुछ दिन देवता की पूजा से गुजर-बसर करता रहा, पर लोगों को मृत्यु के देवता में आकर्षण नहीं होता। कालान्तर में स्वयं देवता ने उसकी और उसकी पत्नी की सुधि ली । बाल-बच्चा कोई था ही नहीं । चार साल बाद राजा की जमीन पुनः राजा के अधिकार में पहुँच गई । स्वर्गगत रानी के पुन्यबल में क्या जोड़-बाकी हुआ, यह चित्रगुप्त या भैरव महाराज ही जानें ।

मृत्यु के देवता में आकर्षण चाहे न हो, किन्तु आतंक कम नहीं होता । राजा को भी साहस नहीं हुआ कि उस देवार्पित जमीन पर किसी तरह दखल करले । पुजारी एकाध शायद आ जुटा हो, पर किसी की पौध यहां फली हो इसका प्रमाण नहीं है। वे सब भूत होकर इस मन्दिर के चारों ओर चक्कर काटने लगे, मनहूसियत फैलती गई, और मकान वीरान पड़ा रहा ।

किन्तु विप्लव-दल तो मृत्यु के साथ खेलने के लिए ही बना था । उसने इस मनहूस मकान, मगर चमत्कारी मन्दिर को अपने कई गोपनीय कामों के लिए उपयुक्त ही पाया । उन्हीं के प्रयत्न से लोगदिखाऊ एक पुजारी भी आ जुटा था जिसने मकान की काया पलट कर दी थी । एक रात चुपके से भैरव की मूर्ति भी खिसक कर जहां से आई थी वहीं पहुंचा दी गई । पूजा और पूजारी दोनों ही लोगों के लिए वैसे ही रहस्य बने रहे जैसे रहस्य की जननी उनकी इष्टदेवी मृत्यु है ।

और जब से नवनीत की यहां रहने की व्यवस्था हुई है, तब से वह भी इस रहस्य का ही एक अंश बनकर रह रहा है । पुजारी जाने कहां गायब हो गया है, मानों कभी था ही नहीं। बस नवनीत है, और है उसका पुराना नौकर हरनाम, जो उसके पास ही रहता है, उसकी परिचर्या करता है, उसके लिए

पथ्य पका देता है। दोनों वक्त डॉक्टर आकर बीमार को देख जाता है, हरनाम उसके कहे अनुसार उसके दवाखाने जाकर औषधि ले आता है, और ठीक समय पर बीमार को दे भी देता है। रात होने पर बीमार की खाट के पास वह भी एक दरी फैला कर सो रहता है। हरनाम नहीं जानता, किन्तु नवनीत जानता है कि यह सारी व्यवस्था विप्लव दल की ओर से है, इसलिए नहीं कि उस दल की सभानेत्री मायावती है, बल्कि इसलिए कि उसकी इस बीमारी का, इस विवशता का, बहुत कुछ दायित्व उस दल का है। मंजरी यद्यपि व्यक्तिगत रूप से उसमें दिलचस्पी रखने लग गई थी, पर वह थी तो उस दल की ही एक सदस्या, और जो कुछ उसने किया था उसका निर्देशन दल की ही जिम्मेदारी और सूझबूझ का तो परिणाम था।—न जानते हुए भी हरनाम इस गृहस्थी का मालिक के तौर पर ही प्रयोग कर रहा है। बहूरानी ने ही उसे इस स्थान का पता दिया था और जब वह यहां एक सवेरे आ उपस्थित हुआ तो देखा कि उसका स्वामी भयानक रोग से नितान्त अकेला ही जूझ रहा है। आते ही उसने अपना चार्ज अनायास ही ग्रहण कर लिया।

बीमारी क्या है इसे डॉक्टर भी नहीं समझ पाया था। समझ पाया था तो इतना ही कि वह बढ़ती जा रही हैं, और उसके समस्त उपाय व्यर्थ होते जा रहे हैं। नवनीत को भी यह सब मालूम हो गया था कि शायद यह वह निमंत्रण है, जिसकी कोई अपेक्षा नहीं करता किन्तु उपेक्षा भी नहीं कर सकता। उपेक्षा करना वह नहीं चाहता, बल्कि अपेक्षा भी करता रहा है वह तो। क्या शेष है उसके जीवन में जिसके लिए वह इस निमंत्रण की उपेक्षा करना चाहे? इस उमर में कोई बूढ़ा जरूर नहीं हो जाता, लेकिन वह बूढ़ा हो गया है। कितनी बहारें जीवन की वह देख चुका है! बहारें फिर भी आएंगी, आती रहेंगी हर बरस। 'मगर अफसोस है, हम-तुम जुदा होंगे।'—पर यह अफसोस भी क्यों?

कुन्दन-सा यह शरीर—शराब ने इसे पी डाला। मंजरी ने अचेत करने के लिए उसे जो नशा पिलाया था, जरूर वह जहर का सगा भाई रहा होगा, वरना शराब की क्या मजाल कि उस जैसे पियक्कड़ के होश मांग बैठे। सभा-भवन में विचार के समय उसे जो उत्तेजक पेय दिया गया था वह केवल एक दूसरे किस्म का नशा ही था जो पहले नशे को अस्थाई रूप से कुछ घण्टों के लिए सुला सकता था, किन्तु उस पहले नशे का प्रभाव बहुत कुछ स्थाई-सा ही हो गया

दीखता है, तभी तो वह इस जीवन के अन्तिम राजद्वार पर आ पहुंचा लगता है। डॉक्टर बेचारा नहीं जानता कि बीमारी शरीर पर ही से नहीं, मन पर से भी उतरती है। उसके आले में मन की धड़कन नहीं बोलती, उसके थर्मामीटर में मन का उत्ताप डिग्रियां नहीं नापता, खून उसके दबाव में कोई गिनती नहीं गिनता।

नवनीत ने खिड़की से दृष्टि हटाकर फिर दरवाजे की ओर देखा, दरवाजा उसी तरह बन्द था, यानी हरनाम अभी तक लौटा नहीं है।—क्यों है वह उसके लिए इतना उत्सुक ? प्यास उसे नहीं है। डॉक्टर भी आकर देख गया है। औषधि वही चालू रखनी है, इस समय की एक खुराक वह खुद दे भी गया है। खाने के लिए जाने क्या-क्या कह गया है।—कौन बैठा है यहां नवनीत का जो उसे पकाकर खिला देगा ? हरनाम बेचारा, सब कुछ उसका वही है, पर है तो एक नौकर ही न,—स्वामिभक्त, ईमानदार और बहुत भला है तो क्या हुआ ? किस अधिकार से वह उसकी सेवा और भक्ति का ही उपभोग करे ? और यह भी तो विप्लव-दल ही की कृपा का संयोग है कि एकाएक ही उसे यहां उपस्थित कर दिया गया है, वरना क्या हरनाम की यहां मथुरा में उपस्थित होने की कल्पना भी की जा सकती थी ?

क्या इसीलिए नवनीत ने पत्र लिखकर हरनाम को वहां भेजा है ? कितना मनोमंथन उसे करना पड़ा है महज चन्द पंक्तियां लिखने के लिए ?—किन्तु रह रह कर उसे जो बहला-फुसला जाती है उस मरीचिका की पोल भी तो उसे खोल देनी है। और यदि उसमें कुछ सचाई ही हो ?—नहीं, वह तूफान अब नहीं है उसके मन में। शान्त अचंचल महासिन्धु के अछोर-विस्तार पर वह जागृत रहे, तो आँखों के सामने महाकाश के दूसरे अगम्य विस्तार में वह माया के साथ ही अपने को घुलामिला देगा, और यदि आँखें बन्द ही हो जाती हैं तो भी अन्धकार की गहराई भी तो उतनी ही विस्तृत, अछोर और अगम्य है ?

कांपते हाथों से, और उससे भी अधिक कांपते-धड़कते हृदय से उसने लिखा है, "माया, मुझे लौटा लो। लौटा लो मुझे। जीवन बड़ी मंहगी वस्तु है, किन्तु कीमत भी मैंने कम नहीं चुकाई है। अन्याय जो कुछ भी मैंने तुम्हारे साथ किया है वह पीछे है; आगे है—नहीं, किसी मिथ्या आशा का स्वप्न मैं तुम्हें नहीं देना चाहता। यही कह सकता हूँ कि अबाध्य अब और बनने की मेरी शक्ति नहीं रह

गई है। लौटा लो मुझको अपनी स्नेहमई छाया में ! मुझसे अब और अकेले जीवन का यह विस्तार सहन नहीं होता। यदि आ सको तो देख जाओ कि मैं कितना मूल्य दे चुका हूँ। हाँ, तुम्हारा वह वक्तव्य मैं अवश्य नहीं भूला हूँ, पर फिर भी कोई अव्यक्त आशा मुझे प्रेरित कर रही है। शायद तुम पाओ कि मैं अब तुम्हारे लिए अधिक अयोग्य नहीं रह गया हूँ। क्या मैं आशा कर सकता हूँ ?"

माया क्या आ जाएगी ? हरनाम ने ही कितना साहस बंधाया है उसे।—मायावती को वह पहचानता है, उस रात के बाद भी क्या परिचय की आवश्यकता रह जाती ? पर तब भी पत्र उसने लिखकर हरनाम के साथ भेजने की हिमाकत कर ही डाली है। इतनी चोट खाकर दबाव सहकर भी जो पथराता नहीं, वही क्या पुरुष का पौरुष है ? वह रात—नवनीत की आँखों के सामने उस रात की स्याही फैल गई।

कितने, तीन सप्ताह बीते होंगे या चार ?—नहीं, किस तरह यहां समय बीता-बहता जा रहा है, रीतता जा रहा है, नवनीत इसका अनुमान भी नहीं लगा सकता। वह उसकी चेतना के छोर से काफी नीचे उतर चुका है। किन्तु बांहों में आविष्ट हो जाने पर, दृष्टि के छोर पर छा जाने से क्या वस्तु अन्ध-बिन्दु पर नहीं आ जाती ?—इतने निकट से तभी तो कुछ भी दिखाई नहीं देता, वस्तु को अपनी ही लपेट में पाकर दृष्टि धुँधली हो ही जाती है। लेकिन दूर तट पर खड़े होकर नीचे असम्पृक्त बहते हुए प्रवाह को विहंगम दृष्टि से कितना स्पष्ट और कितने अनासक्त उदासीन भाव से देखा जा सकता है ?

अनुमान तो लगा ही सकता है वह। मानपुर से जब वह मंजरी के साथ उस मध्य रात्रि में खिसक पड़ा था तब मध्य अक्टूबर ही तो था। वातास में शीत की चमक स्फूर्त हो उठी थी। यहां यद्यपि उस सीलनभरी गहरी अन्धेरी कोठरी में और विप्लव-दल के भू-गर्भ के कमरे में तापमान का सही अनुमान नहीं लगाया जा सकता था, किन्तु विचार के बाद जब से वह मथुरा की खुली हवा में रह रहा है, वातावरण में उसे शीत दिन-दिन बढ़ता ही लगता है। नहीं दिसम्बर की कड़कड़ाती ठण्ड अभी नहीं है। कैसा सीमित है हमारा समय नापने का पैमाना ! नित्य प्रवहनशील तत्व जैसे नदी की धारा में किसी बिन्दु की देशस्थ स्थिति क्या है ?—उसी तरह समय के प्रवाह में किसी क्षण की कालस्थ स्थिति

क्या है ? और उसी माध्यम में दो बिन्दुओं या दो क्षणों के बीच का व्यवधान ? —क्या इन दोनों स्थानों पर माध्यम के प्रवाह की गति बदल कर उस व्यवधान को घटाया-बढ़ाया नहीं जा सकता ? किसी अन्य अपेक्षाकृत स्थिर-माध्यम पर निविष्ट दृष्टि ही तो उसकी प्रतीति दे सकती है । और वह भी कितनी भ्रमपूर्ण हो सकती है ?

घटनाओं के मान से ही यदि समय को जाँचने का रिवाज आज भी चला आ रहा है तो अभी कल ही की तो बात है कि हिरोशिमा और नागासाकी पर अणु का पेट फोड़कर विनाश का दैत्य अपनी भूख मिटाने के लिए अवतरित हुआ था ! महाभारत के महासंहार का उपसंहार संहार के देवता के सिवा और कर ही कौन सकता था ?—और एक ओर जब विजय की दुन्दुभी बज रही थी, दूसरी ओर देश में अधरलाल, टीकमचन्द जैसे प्रातः स्मरणीय महात्माओं को प्राणदण्ड दिया जा रहा था । यही क्या इस सृष्टि में संतुलन की क्रिया है ? जितना एक ओर हर्ष है, उतना ही दूसरी ओर विमर्ष होगा, एक पलड़े में जितनी राशि आनन्द की होगी दूसरे पलड़े में उतना ही दुःख लादे बिना निस्तार नहीं है, तो फिर उसके स्वयं के आनन्द-अवसाद का क्या लेखा-जोखा है, और क्या उसका महत्व है ?

लगातार शायद दो या तीन लगभग पूरी-पूरी रातें विप्लव-दल द्वारा उसके तीन दशक लम्बे जीवन का पूरा चित्र खींचने में बीती थीं । कितना आलोड़न-विलोड़न हुआ है उसके स्मृति-कोष का ? विचार-गृह में ही नहीं, कैद की उस सीलनभरी बदबूदार अँधेरी कोठरी में भी विगत की कैसी भयानक विभीषिकाएँ उसे घेरे रही हैं ? सारा जीवन वह मानों एक बार और जीने के लिए बाध्य किया गया हो । किन्तु तब भी अपने से बाहर निकल कर अपने ही जीवन को तटस्थ भाव से फिर जीने का अवसर पाना भी क्या एक गम्भीर रहस्य का प्रिय-अँग नहीं है ? विचार की वह पहली रात ही—

२ आँधी

भूगर्भ के सभा-भवन में जब नवनीत को प्रस्तुत किया गया था, वह लगभग बेहोश ही था, और उसे यह भी विदित नहीं था कि दो सशस्त्र रक्षक उसके दोनों ओर खड़े हुए हैं। उससे कुछ ही दूरी पर उसकी तरह दो सशस्त्र रक्षकों से घिरे डॉक्टर रेडियर को भी वह बहुत देर बाद पहचान पाया। शायद रेडियर खड़ा हुआ था, किन्तु नवनीत के पैरों में इतनी ताकत नहीं थी और वह फर्श पर ही नीची गर्दन किए बैठ गया।

उसके पहुँचते ही आसपास की बैंचों पर फुसफुसाहट शुरू हो गई थी, किन्तु नवनीत ने दृष्टि उठाकर एक बार भी किसी ओर लक्ष्य नहीं किया, वह उसी तरह अचेतप्राय: बैठा रहा। उसके आगमन से ही जो चंचलता सारे प्रकोष्ठ में व्याप्त हो गई थी, मानों वह उसका कोई अंश ही नहीं था।

आरती ने आहिस्ता से नीलम से पूछा, "इन आरोपियों का क्या करेंगे नीलम ?"

नीलम कुछ खीझ उठी थी, बोली, "ये बगल में जो दो लड़कियाँ बैठी हैं न, इनसे उनका विवाह रच दिया जाएगा।"

"मजाक नहीं, सच कह न ! मेरा दिल धड़क रहा है !"

"विप्लव-दल में ऐसे अपराधियों का क्या होता है ! मुँह से माफ कहलवाना चाहती है ?"

"तुम्हारा मतलब प्राणदण्ड है क्या ?"

खीझ के साथ नीलम ने कहा, "प्राणदण्ड नहीं काकी, प्राणदान, और कन्यादान साथ में दक्षिणा स्वरूप। कह तो चुकी हूँ !"

"लेकिन नवनीत बाबू का चेहरा इतना काला कैसे हो गया री ?" मानों उसने नीलम का व्यंग्य सुना ही नहीं।

"अपने जीवन के लिए दूसरों के जीवन की चिन्ता न करने वालों को मुँह काला करने के लिए बाहरी कालिख की जरूरत नहीं पड़ती। यह मौत की छाया है काकी, मौत की—मौत के कराल जबड़ों की न पूरने वाली खाई, जिसमें अधर काका और टीकू दादा को ढकेलते इसे तनिक भी विचार नहीं हुआ था। वह खाई पटी नहीं न! मौत की भूख को जो छेड़ देता है, वह उस सर्वहारा भूख से बच नहीं सकता।—किन्तु, सुनने दे न काकी, हम भी इस सभा के सदस्य हैं, और सारी कार्यवाही पर ध्यान दिए बिना हम अपना दायित्व नहीं निभा सकेंगी। सुन न···"

सभा-कक्ष कोई तलघर है, पर है काफी प्रशस्त, और इस तरह सजा हुआ है मानों ऐसी गुप्त बैठकों के लिए बनाया गया हो। सामने एक गवाक्ष है, जिस पर सफेद जाली की स्क्रीन पड़ी हुई है। गवाक्ष के भीतर अँधेरा है, अतः बाहर से स्क्रीन के अलावा कुछ दिखाई नहीं देता। सारा कक्ष बिजली की रोशनी से दीप्त है, और छत से लटकते हुए पंखे धीरे-धीरे चलकर भीतर की रही सही गरमी को भी महसूस नहीं होने देते।

बांईं ओर महिलाओं के लिए स्थान है, जहां आरती और नीलम के अतिरिक्त दो-तीन महिलएं और बैठी हुई हैं। इन में से दो लड़कियां मंजरी और उषा हैं, जिनके चेहरे पर अन्तर का गम्भीर उल्लास तथा उत्सुकता स्पष्ट देखी जा सकती है। नीलम और आरती के चेहरों पर औत्सुक्य के साथ केवल गंभीर वेदना छाई हुई है। दाहिनी ओर का स्थान केवल पुरुषों के लिए निर्दिष्ट लगता है, क्योंकि उस ओर केवल पुरुष सदस्य ही बैठे दिखाई दे रहे हैं। गवाक्ष के पास दाहिनी ओर हीं हैं सुरेश नारायण, जो सभा की कार्यवाही का संचालन करते से लगते हैं। उनके पास ही बेठे हैं प्रह्लाद राय, निकलसन आदि विप्लव-दल के अन्य सदस्य। सभी सदस्यों की कुर्सियों के सामने लम्बी डेस्कें रखी हुई हैं। इस सिरे पर गवाक्ष के ठीक सामने दो बेंचे रखी हुई हैं। किनारे पर इसी ओर कोने में दो दरवाजे हैं। एक बेंच पर डॉक्टर रेडियर बैठा हुआ है। नवनीत नीचे फर्श पर ही बैठ गया था। सुरेश नारायण से इशारा पाकर रक्षकों ने उसे हाथ पकड़ कर उठाया और बेंच पर बिठा दिया। नवनीत ने अपनी ओर से कोई चेष्टा

नहीं की ।

मालूम देता है, सभा की कार्यवाही काफी अरसे से चली आ रही है । नवनीत के प्रवेश से उसमें कुछ विघ्न सा ही पड़ा था । जब नवनीत बेंच पर बैठ चुका, और उस के प्रवेश से उत्पन्न सदस्यों की बाह्य-प्रतिक्रिया चुक गई तो सुरेश नारायण ने कहा,

"मेरा ख्याल है, अब हम आगे की कार्यवाही प्रारम्भ करें ।" और उसने एक दृष्टि गवाक्ष की ओर भी डाली । सभी सदस्यों ने सर हिला कर सहमति जाहिर की ।

सुरेश नारायण के सामने टेबल पर कई कागज रखे हुए थे उनमें से किसी कागज को उठाकर उन्होंने उलट-पुलट कर देखा, फिर अपनी नाक पर से चश्मा उतार कर कागज को टेबल पर रखते हुए बोले, "बता चुका हूँ कि हम अपने श्रद्धेय वरिष्ठ साथी अधरलाल और टीकमचन्द का उद्धार करने में असमर्थ रहे हैं, और उनको प्राणदण्ड हो गया । दल ने इसके लिए मिस्टर निकल्सन और श्री प्रह्लाद राय को नियुक्त किया गया था । उनकी रिपोर्ट मेरे पास आगई है। मगर वे खुद यहां मौजूद हैं, इसलिए मैं मिस्टर निकल्सन से प्रार्थना करूँगा कि वे खुद ही आप के सामने अपना कार्य-विवरण प्रस्तुत करें । उनकी असफलता का विचार भी आपको करना है । मि० निकल्सन···"

अपनी जगह पर निकल्सन उठ खड़ा हुआ । वह अपनी पीढ़ी में ईसाई हुआ है । मूल-रूप में वह जाट-वंश का दीपक था । ईसाई बनने का कारण उसकी वह एंग्लो-इंडियन पत्नी हैं, जो यहां अन्य मिशनरियों के साथ इसाइयत का प्रचार करने के लिए आई हुई थी । भीगतीं मसों वाले जवान जाट-युवक नकुलसिंह ने सुन रखा था कि ईसाई बन जाने पर गोरी मेम ही नहीं मिलती, सरलता से मजिस्ट्रेटी मिल जाती है । अंग्रेजों से मेल मुरव्वत बढ़ जाती है और जल्दी ही विलायत जाने का पैसा और पासपोर्ट भी मिल जाता है । गोरी मेम तो मिल गई, नकुल सिंह से निकल्सन भी बन गया, पर अंग्रेजों से मेल मुरव्वत या विलायत जाने का पासपोर्ट वगैरा कुछ नहीं मिला । नौकरी मिली जरूर, पर अधिक पढ़ा-लिखा न होने के कारण नौकरी न कुछ ही थी । सो जाट-रक्त ने विद्रोह किया । गोरी मेम भी अवसर पाकर एक दूसरे साहब के साथ विलायत भाग गई । बस, निकल्सन अग्रेजों के कट्टर दुश्मन बन गए । फिर भी अंग्रेजों के दुश्मन हो जाने पर

भी, वह अपने आपको हिन्दुस्तानी की अपेक्षा इंग्लिस्तानी ही अधिक मानता था। हिन्दी बोलने में मानों उसे कष्ट होता था। उसी तरह हिन्दुस्तानी लिबास भी उसके शरीर को अटपटा लगता था, और इस रंग का तो वह करता ही क्या। हजार साबुन से नहाओ, और पाउडर मलो, सुसरा अपनी पक्की बिसात छोड़ता ही नहीं था।

उठ खड़े होकर निकल्सन ने कहा, "मिस्टर प्रेसिडेंट और काम्रेड्स, येस मैं एडमिट करता हूं कि हमको अपने मिशन में कामयाबी नहीं मिली। वी आर सॉरी, बट नॉट अशेम्ड ऑफ इट। कोशिश करना इन्सान का फर्ज है, नतीजे के लिए वह जिम्मेदार नहीं हो सकता। आप के शास्तर में तो लिखा भी है न, कर्मन्निए माधिकारस्से मा फलेच्छा कदाचन।"

सभी सदस्यों के मुँह पर हास्य की लहर तैर आई। नवनीत को भी लगा कि कुछ हो रहा है। उसने दृष्टि उठाकर वक्ता की ओर देखा किन्तु साफ कुछ दिखाई नहीं दिया। हाँ, बाँई ओर पास ही बैठी यह आकृति कुछ-कुछ पहचान में आती-सी है, किन्तु तत्काल फिर पहचान से भाग निकलती है। यह आकृति भी देख तो उसी की ओर रही हैं, देखने दो नवनीत की पलकें भारी हो उठी हैं, वह फिर नेत्र मूँद कर निश्चेष्ट हो गया।

निकल्सन कह रहा था, "दो पूरी की पूरी रातें हमने जेल के फाटक के आस-पास ही बिताईं, पूरी रातें उस पहरेदार की नजर बचाकर हम उस की पहरेदारी करते रहे। मगर वह एक मोमेंट के लिए भी वहाँ से टलने का नाम नहीं लेता था, न ही उसने कभी जरा बैठ कर सिगरेट का एक कश ही खींचा। देन नेक्स्ट रात को पीछे से दीवार फाँद कर हमने काम्रेड अधर बाबू और टीकमचन्द के 'सेल' का पता लगाया। हमारा हिम्मत को आप एप्रिशिएट कीजिए कि पहरेदार होते हुए हमने यह सब कर लिया। अगर उसे जरा भी शक हो गया होता तो एक गोली में हमारा जान खतम था। टीकमचन्द का "सेल" को खोलकर हम उनके साथ अधर बाबू का सेल पर पहुँचा। बंच में से हमने एक चाबी ट्राई किया, मगर ताला नहीं खुला, और इसी दरम्यान उसका कुछ खटाखट से चौंककर पहरे-दार घूँमता हुआ उधर आ निकला। तब हमारा सामने कुछ बस नहीं था, हमने फायर किया, अन्धेरे में जरूर पहरेदार को नहीं लगा होगा वह। हमारा सामने भागने के सिवा कोई रास्ता नहीं था। टीकम चन्द को बोला हम, मगर वह

अधर बाबू का साथ छोड़ने को किसी तरह भी राजी नहीं हुआ। वेल, वी कुड समहाउ एस्केप विद अवर लाइफ। बस लेडीज एन्ड जेन्टिलमैन, आप लोग महसूस करेंगे कि हमारी कोशिश कितनी सीन्सियर थी। मुझे और कुछ ज्यादा नहीं कहना है, वी लीव्ह इट नाउ टु योर जजमेंट।"

निकल्सन बैठ गया, और अपने सहयोगी प्रह्लाद राय की ओर गर्व से देखने लगा। उसे लग रहा था कि अपने वक्तव्य से उसने सभा पर अच्छा प्रभाव पैदा कर दिया है।

सुरेश नारायण ने खड़े होकर कहा, "आप सब मि० निकल्सन का वक्तव्य सुन चुके हैं। अपनी ओर से मुझे यही कहना है कि उसके प्रयत्न में कूटनीति की पर्याप्त मात्रा नहीं थी, इसलिए वे परिस्थिति पर नियंत्रण नहीं पा सके। कहा जा सकता है कि ऐसे मामलों में शारीरिक शक्ति पर अधिक निर्भर नहीं किया जाना चाहिए। विप्लव-दल आतंक का सहारा केवल एक प्रकार का वातावरण पैदा करने के लिए ही लेता है, उसे अन्तिम विजय या लक्ष्य भी नहीं मानता। किन्तु इनके प्रयत्न की सचाई में दो मत नहीं हो सकते। विप्लव-दल के ऊपर केवल प्रयत्न का दायित्व है, फल का नहीं। अतः मेरा प्रस्ताव है कि असफलता के बावजूद हमें श्री निकल्सन और श्री प्रह्लाद राय का उनके प्रयत्न के लिए आभार मानना और अभिनन्दन करना चाहिए।"

इस के पहले कि दाहिनी ओर से उठकर एक व्यक्ति इसका समर्थन करे, बाँई ओर से कुमारी उषा ने उठ कर कहा, "हम लोगों का यह ख्याल कि विप्लव दल पर केवल प्रयत्न का दायित्व है, फल का नहीं, मैं समझती हूँ, कि अधूरा है और इस पर विचार होना चाहिए। फल कि चिन्ता किए बिना अगर कोशिश की जाए तो उसका लाजिमी तौर पर वही नतीजा होगा, जो मि० निकल्सन की कोशिश का हुआ है। देखा जाए तो मि० निकल्सन के मार्ग की कठिनाइयां साफ थीं। किसी पहरेदार के लिए यह ख्याल नहीं किया जा सकता कि वह अपने काम में गफलत करेगा, लेकिन हमारे साथी ने यही स्वाभाविक मान कर पूरी दो रातें बरबाद करदीं। इसके अलावा जेल की कोठरियों के ताले मामूली चाबियों से नहीं खुलते। विप्लव-दल के ऐसे प्रयत्न प्रशंसा नहीं, हँसी ही पैदा कर सकते हैं। और माननीय साथी तो, दे कुड समहाउ एस्केप विद देअर लाइफ, मगर हमारे दो बहुमूल्य साथियों की लाइफ उनकी बेपरवाही नहीं, उनकी मूर्खता से

खत्म हो गई। मैं समझती हूँ इसकी सारी जिम्मेदारी माननीय सदस्य के ऊपर है और वे इससे इन्कार नहीं कर सकते।"

मंजरी ने भी उठकर उषा के वक्तव्य का समर्थन किया।

सभा में स्पष्ट ही दो मत हो गए। फुसफुसाहट बढ़ चली। सुरेश नारायण का ध्यान गवाक्ष की ओर था। जब वह उठे तो सारी दृष्टियां उन पर केन्द्रित थीं।

"लगता है कि हम लोगों ने वस्तुस्थिति को समझने का ठीक प्रयत्न नहीं किया है। बुद्धि-तत्व एक बड़ा ही नाजुक और भरमाने वाला तत्व है, उसे समझने का कोई दावा नहीं कर सकता। प्रत्येक की बुद्धि अपनी वस्तु है, और उसी के प्रकाश में वह आगे बढ़ता है। निकल्सन और प्रह्लाद राय को पचास प्रतिशत सफलता मिल ही चुकी थी और टीकमचन्द के सेल के ताले की तरह यदि अधर लाल के सेल का ताला भी खुल गया होता तो वे शत-प्रतिशत सफल थे ही। जब कार्य सफल हो जाता है तो हम प्रयत्न का विचार करने नहीं बैठते। कार्य की असफलता पर भी हमें वैसी ही निर्लेप दृष्टि रखनी चाहिए। यह ठीक है कि असफलता बहुत महँगी साबित हुई है, किन्तु हमारे साथियों का काम भी तो उतना ही बड़ा था। उसका दायित्य स्वेच्छा से ग्रहण करके ही वे हमारी प्रशंसा अर्जित कर चुके हैं। मुझे आप अनुमति दें कि मैं इनकी इस रिपोर्ट को स्वीकार करके इन्हें धन्यवाद दे सकूं।"

उषा और मंजरी के सिवा धीमे स्वर में सभी ने प्रस्ताव का अनुमोदन किया।

सुरेश नारायण ने चश्मे को नाक पर चढ़ाया और एक कागज की ओर देखते हुए कहा, "गई बैठक में जो दो प्रस्ताव स्वीकृत किए गए थे, उन में से एक के बारे में कार्यवाही हो चुकी है। दूसरे प्रस्ताव के सम्बन्ध में मुझे यह कहते हुए अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि उसके सम्पादन में हमें पूरी सफलता प्राप्त हुई है। कुमारी मंजरी और हमारा मूक सिपाही लछमन सिंह, नवनीत लाल और डॉ० रेडियर को पकड़कर ले आ सके हैं। आदेश है कि पहले डॉक्टर रेडियर के मामले पर विचार प्रारम्भ किया जाए।"

सभी सदस्यों की दृष्टि डॉक्टर रेडियर की ओर मुड़ गई। अपने नामोल्लेख के साथ ही रेडियर ने भी एक बार ऊपर की ओर देखा, पर इतनी दृष्टियों का आक्रमण देख कर सहज ही उसकी दृष्टि नीचे फर्श पर झुक गई। उधर सुरेश

नारायण कहते जा रहे थे,

"डॉ० रेडियर को फंसा लाने में लछमन सिंह की तारीफ करना ही पड़ेगा। वह बड़ी सफाई के साथ इस मुकदमें से सम्बन्धित जज मि० कैम्पबैलका चपरासी बन गया और डॉ० रेडियर को उनका चाय का निमंत्रण देकर कार में बिठा लाया। डॉ० रेडियर ने जो भी समझा हो, हमने समझा था कि वे इस मुकदमें से सम्बन्धित जज के निमंत्रण की उपेक्षा नहीं कर सकेंगे, बल्कि इस भेंट में वे जज को अपने पक्ष में प्रभावित भी कर सकेंगे और इस तरह बड़ी सरलता से बे फँस गए। कार में बैठ लेने के बाद तो उनकी इच्छा का सवाल ही नहीं रहा। देखिये वे बैठे हैं आपके सामने" और डॉ० रेडियर की दिशा में उन्होंने अगुंली कर आदेश दिया।

नवनीत की बेहोशी धीरे-धीरे क्षीण होती जा रही थी। यहाँ ले आने के पहले शायद उन्हें होश में लाने के लिए कुछ विशेष प्रकार का पेय भी पिला दिया गया था। सबकी दृष्टि का अनुसरण करके उन्होंने भी रेडियर की ओर देखा। अभी कुछ ही दिन पूर्व नवनीत को अपने आरोपों से बचा रख कर वह नवनीत की आशा का केन्द्र भी रह चुका था। किन्तु समझ कर भी नवनीत शायद कुछ समझ नहीं पा रहा था।

डॉक्टर रेडियर, पायरिया स्पेशलिस्ट, शरीर के विशिष्ट न होने पर भी अपने व्यक्तित्व में काफी विशिष्ट था। श्याम रंग, नाटा कद, छितरे दाँत कुछ बाहर की ओर झाँकते हुए-से, छोटे-छोटे घुँघराले बाल, कनपटियों के पास सफेद हो चले थे। उमर तीस भी कही जा सकती थी और पचास भी! नवनीत की पलकों पर वह दिन तैर उठा, वह मानपुर में ब्राँच पोस्ट मास्टर के रूप में ही काम कर रहा था जब शुरू-शुरू रेडियर से बातचीत हुई थी।

नवनीत अपनी लेजर बुक में जोड़-बाकी कर रहा था कि खिड़की पर सुनाई दिया, "चौदह-चौदह आने के चार स्टाम्प और एक एअरोग्राम······"

लेजर बुक पर दृष्टि जमाए ही नवनीत ने कहा, "अरे भाई, यह ब्राँच आफिस हैं। चौदह आने के स्टाम्प तो खैर छोटे स्टाम्प से पूरे किए जा सकते हैं, पर एअरोग्राम फेरोग्राम यहाँ नहीं मिलेगा।"

"अच्छा एअरोग्राम न सही, जी० एल० टी० के नियम देख सकता हूँ

क्या ?"

"यहां से जी० एल० टी० नहीं लगता।" झल्ला कर नवनीत ने कहा, और नजर उठाकर देखा तो यही रेडियर खींसे निपोरता हुआ खड़ा था। आँखें चार होते ही हाथ उठाकर उसने कहा, "गुड मॉर्निंग मि० पोस्ट मास्टर। गाइड तो यहां जरूर होगी ही। आपको डिस्टर्ब नहीं करूँगा अगर एक मिनिट के लिए वह दे सकें तो।"

नवनीत ने केवल इशारे से भीतर आने का संकेत कर दिया, और जब रेडियर भीतर आगया तो उसने बाजू में पड़े स्टूल पर रखी मोटी सी गाइड की ओर संकेत कर दिया।

"यदि आप आज्ञा दें तो इस कुर्सी पर बैठ जाऊं।"

नवनीत ने उत्तर देने की आवश्कता नहीं समझी। रेडियर भी इस की चिन्ता न कर कुर्सी खींच कर बैठ गया और गाइड के पन्ने पलटने लगा, किन्तु दोनों ने देखा कि दोनों ही अपनी-अपनी पुस्तकों से दृष्टि हटाकर चोरी-चोरी से एक दूसरे को देख लेते हैं। नवनीत को बुरा भी लगा, बोला, "चौदह आने के कितने टिकिट चाहिए आपको ?"

मानों किताब से मुँह निकाल कर रेडियर ने कहा, "रहने दीजिए, अब लखनऊ से ही पोस्ट कर दूँगा। मगर सच कहिए, क्या यहाँ से एअर-मेल से कभी कोई चिट्ठी-विट्ठी नहीं भेजी जाती ?—कस्बा तो बड़े मजे का मालूम देता है।"

"लगता हैं आप किसी शहर के रहने वाले हैं।"

"जी, लखनऊ रहता हूँ, प्रेक्टिस करता हूँ, यानी डेंटिस्ट हूँ, पायरिया स्पेशलिस्ट। तीन दिन से हूँ यहाँ, मगर सोसायटी कुछ नहीं है। एक-एक मिनट खाने को दौड़ता है, रहने को तबीयत नहीं करती।"

"तो किसी ने कसम दे रखी है क्या ?" और लेजर पर नजर जमाए ही नवनीत ने पास रखे सिगरेट-केस से सिगरेट निकाल कर जला ली। रेडियर को पूछा भी नहीं।

रेडियर को खला तो, पर उसने ध्यान न देकर मुस्कराते हुए कहा, "कसम समझिए, वरना कौन नामुराद इस जगह पड़ा झख मारेगा। लेकिन माफ कीजिए, आप भी तो इस गाँव के नहीं मालूम पड़ते।"

"जी नहीं।"

"कहाँ के हैं आप ?"

एक बार तो मन में आया कहदे वह, जहन्नुम का रहने वाला है, पर अनायास ही उसके मुँह से निकल पड़ा, "शिकारपुर का।"

"शिकारपुर के ?—खूब हैं आप भी। मेरा मतलब है, इस जिन्दादिली के बिना यहाँ रहा ही नहीं जा सकता।—लेकिन आखिर समय किस तरह बीतता है आप का यहां पर ? मेरा मतलब—मगर आप तो परिवार के साथ ही तो रहते होंगे न।"

"जी नहीं। मैं यहां अकेला ही रह रहा हूँ।"

"अकेले ?—तब तो दफ्तर के बाद का समय…" और वह उत्तर के लिए रुक गया।

"बीत ही जाता है, जैसा कि अभी बीत रहा है। आप जैसे सज्जनों की कमी वैसे यहाँ भी नहीं है।"

रेडियर ने अपने सफेद दाँत पूरी तरह चौचन्द करते हुए कहा, "शुक्रिया, आपने कद्र तो की। कम से कम आज तो हमारे समय का सदुपयोग हुआ ही। आपके काम में तो कोई हर्ज नहीं हो रहा है न ? वैसे आपका चेहरा जैसे परिचित-सा लगता है।"

इस बार नवनीत ने लेजर को एक ओर पटक दिया और बैठे-बैठे ही कुर्सी को बाजुओं से धक्का दिया कि उसे लिए हुए वह रेडियर के सामने होगई। सिगरेट को एशट्रे पर रखते हुए उसने कहा, "कहते हैं कि सिगरेट पीने से दाँत खराब हो जाते हैं और दाँतों को पायरिया हो जाता है: सिगरेट जरूर पीता हूँ और कसरत से, मगर पायरिया इन दाँतों पर कभी मेहरबान नहीं हुआ कि कभी आपकी मेहरबानी का नियाज हासिल करने की जरूरत आ पड़े।"

रेडियर ने भी हँस कर कहा, "इस सदाबहार चेहरे से बार-बार झाँक उठने वाले ये दाँत पायरिया-स्पेशलिस्ट के भी लोभ का विषय हो सकते हैं, मास्टर साहब, लेकिन सच कहिए, क्या आप कभी लखनऊ नहीं रहे ?"

"क्यों नहीं रहा। लेकिन बरबाद करने को वहाँ समय ही कहां मिलता था ?"

"जनरल पोस्ट आफिस में थे न आप ?"

"जी नहीं, मैं था वहां पी० एम० जी० के कार्यालय में सुपरिंटेंडेंट।"

"पी० एम० जी० तो तब वहाँ मि० ज्यॉफ्री थे न ?"

"अब भी वहीं हैं वे। जानते हैं क्या आप उन्हें ?"

"क्यों नहीं जानता। और आप भी तो सब बातें जानतें होंगे ?"

"सब बातें कौन सी ?" उत्सुकता से नवनीत ने पूछा।

"यही कि उनकी लड़की का विवाह वहाँ के जिला कलेक्टर के लड़के मि किट्सन के साथ हो गया है। इन्हीं दिनों कहीं उन के हनीमून मनाने का कार्यक्रम है।

नवनीत ने उत्तर न देकर क्षणभर के लिए रेडियर की ओर देखा। रेडिय जैसे सम्हल गया और मुस्कारा कर बोला।

"मैं भी कैसा मूर्ख हूँ ? मि० ज्यॉफ्री आपके तो बॉस ही ठहरे, और आपक ही यह खबर न होगी ?—और यह भी तो होगा न कि अगर आपको मालूम ह तब भी उनका कार्यक्रम तो सारा कान्फिडेन्शियल ही होगा।"

"कान्फिडेन्शियल हो तो भी आपको सब कैसे मालूम हो गया है ?"

हँस कर रेडियर ने कहा, जैसे महज मामूली-सी बात है, "जानता तो य ही हूँ। यह जो दूल्हा है न मिस्टर किट्सन रॉगर्स, इंग्लैण्ड में आई० सी० एस० में कुछ समय के लिए मेरा क्लास-फैलो रह चुका है। यह फौजी शाखा में था और मैंने आई० सी० एस० बीच ही में छोड़ दी।"

"किट्सन आपका क्लास-फैलो रह चुका है ?" अवश्य ही नवनीत उसकी बात पर पूरा विश्वास नहीं कर सका था।

रेडियर ने उसी तरह हँस कर कहा, "किट्सन ही नहीं महाशय, यह दुलहन शर्ली ज्यॉफ्री भी मेरी सहपाठिन रह चुकी है, जरूर कॉलेज में नहीं, बल्कि हाई स्कूल में !"

"तब तो वे भी दोनों आपको जरूर जानते होंगे।"

"ताज्जुब नहीं। पर प्रमाण तो भुला दिए जाने का ही मिला है। किट्सन के साथ तो परिचय खैर चलताऊ ही बन पाया था, किन्तु शर्ली के साथ तो बहुत खेला-कूदा हूँ। ला मार्टिनियर में सीनियर-कैम्ब्रिज तक साथ थे। मैं आई० सी० एस० में चुन लिया गया और वह कॉलेज में चली गई थी। फिर उसके बाद कभी नहीं मिले, लखनऊ में रह कर भी नहीं। कुछ व्यक्तिगत कारण थे, जिनमें आप, मेरा ख्याल है, दिलचस्पी नहीं पाएँगे। बल्कि लखनऊ में ही मुझे बहुत ही कम रहने को नसीब होता है। विवाह की खबर ही वहाँ किसी मित्र ने सुनाई थी। मिल कर अभिनन्दन भी देना चाहता था, सोचा था इसी बहाने अतीत

की पहचान फिर से जीवित की जा सकेगी, पर समय ही नहीं मिला। फिर बाहर निकल जाना पड़ा। अब सोच रहा हूँ, लखनऊ पहुँचते ही सबसे पहले यही काम करूँगा। अभी तो मौका बड़ा अच्छा है। फिर शायद किट्सन जल्दी ही फ्रंट के लिए रवाना हो जाए।"

"कब तक पहुँच रहे हैं आप लखनऊ ?"

"अगली २६ या ३० तारीख तक !"

हँस कर नवनीत ने कहा, "तब तो इस बार भी आपको निराश ही रहना पड़ेगा।"

"क्यों ?"

"आप तो मित्र ही निकले, अब आपसे क्या छिपाना ! वे लोग यहीं हनीमून के लिए आ रहे हैं !"

"कहते क्या हैं आप ? यह भँजुआ कस्बा चुना है उन्होंने अपने हनीमून के लिए ?"

"कस्बा जरूर भँजुआ है, पर यहाँ का तालाब देखा है आपने ? कीचड़ में कमल है वह। पश्चिमी किनारे पर सैलानियों के लिए एक अच्छा-खासा तालाब में बिलकुल मुँह देखता हुआ गेस्टहाउस है। वहीं पर मनेगा उनका हनीमून !"

"अच्छा ! क्या वह जगह सचमुच बड़ी सुहावनी है ?"

"आए हैं तो देख लीजिएगा एक बार। दिलबस्तगी ही सही, वक्त बरबाद न होगा !"

"माफ कीजिए, मेरी दिलबस्तगी बेजान चीजों में नहीं है। मैं जानदार आदमी हूँ और जानदार आदमियों में ही दिलबस्तगी हासिल करता हूँ। मगर आपकी बातों से तो लगता है मानों वे २६-३० तक यहाँ आ जाएँगे ?"

"जी हाँ, अभी तो उनका यही कार्यक्रम है।"

"तब तो मैं यहाँ ठहर कर भी उनसे मिल सकता हूँ। जुम्मा-जुम्मा आखिर दिन ही कितने रहे हैं ! ना ना, आप चिन्ता न करें, मैं हर्गिज यह जाहिर न होने दूँगा कि उनके यहाँ होने की खबर मुझे आपसे लगी है। जिस काम से मैं यहाँ आया हुआ हूँ, उसी काम के सिलसिले में मुझे यहाँ उस समय से भी आगे तक रहना पड़ सकता है। अच्छा, मास्टर साहब, बहुत-बहुत धन्यवाद, आप तो मित्र के मित्र ही निकले।" और वह जाने के लिए उठ खड़ा हुआ।

"जी नहीं, न तो मैं किट्सन को जानता हूँ और न शर्ली का ही सहपाठी हूँ। हाँ, मिस ज्यॉफ्री, अब मिसेस रॉगर्स, जरूर मेरे बॉस की लड़की है !"

हँस कर रेडियर ने कहा, "तब भी आप मेरे तो मित्र हो ही गए हैं।" और उसने मिलाने के लिए हाथ बढ़ाया। नवनीत को बहरहाल उसे छूना ही पड़ा। दरवाजे से जाते-जाते रेडियर कहता गया, लेकिन कभी-कभी इसी बीच आकर आपको इसी तरह बातचीत के लिए तँग करूँ तो बुरा हर्गिज नहीं मान सकेंगे। अच्छा, बाइ-बाई !"

नवनीत ने आँखें मसलीं। उसी डॉक्टर रेडियर को लक्ष्य करके सुरेश नारायण कह रहे थे—

"आज से लगभग नौ-दस वर्ष पूर्व विप्लव-दल के उद्देश्यों में पूर्ण आस्था की शपथ के साथ तुमने सदस्यता प्राप्त की थी। यह ठीक है कि तुमने भी मनोयोगपूर्वक और पूरे दायित्व-बोध के साथ दल को सहयोग दिया, और उससे दल की ही नहीं, राष्ट्र की भी काफी सेवा हुई। कांग्रेस के बयालीस के असहयोग आन्दोलन में जब विप्लव-दल ने भी भाग लेने का निश्चय किया था, तब तुमने स्वेच्छा से एक बड़े ही नाजुक और अहम काम का जिम्मा लिया था, जोकि तुम्हारे गौरव के उपयुक्त ही था। लेकिन इस बार तुम्हारा निजी राग-द्वेष तुम पर इतना अधिकार जमा बैठा कि तुमने न केवल अपने कर्तव्य की अवहेलना की, प्रत्युत विश्वासघात भी किया जिसकी वजह से दल के दो अन्यतम सदस्यों को प्राणों से हाथ धोना पड़ा है, तथा इस दल का अस्तित्व ही संकट में पड़ गया है। तुम्हारे ऊपर यह अभियोग सामान्य नहीं है। कहो, अपने बचाव के पक्ष में तुम्हें क्या कहना है ?"

रेडियर धीरे-धीरे अपने आसन से उठ खड़ा हुआ। उसके आसपास दोनों रक्षक सावधान हो गए, सारी सभा की दृष्टि उसी पर निविष्ट थी। उसके दोनों हाथ रस्सी से जकड़े पीठ की ओर बँधे हुए थे। मुँह पर कोई आशा न थी, किन्तु मृत्यु के भय की छाया भी नहीं थी। सिर झुका कर उसने अध्यक्ष का अभिवादन किया और धीमे स्वर में कहने लगा—

"माननीय अध्यक्ष महोदय और आदरणीय साथीगण, मैं खुद नहीं जानता कि क्या कहने से मेरे अपराध की गहराई कम हो सकती है। अपराध मुझसे

हुआ ही है, चाह कर भी मैं उससे इनकार नहीं कर सकता। अपराध स्वीकार करने का अर्थ भी मुझे मालूम है। मौत से इस विप्लव-दल का कोई सदस्य नहीं डर सकता, और वह सम्मान मुझे मिल चुका है। मुझे अफसोस है तो यही कि मैं एक मानसिक कमजोरी का शिकार हो गया, और अगर इस अपराध के कारण मुझे और अधिक जीवित रहने का अवसर नहीं मिला तो यह कलंक सदा मेरे सिर लगा रह जाएगा। क्या इस कलंक को मिटा डालने के लिए, केवल इसको मिटा डालने के लिए, मैं आपसे, इस दल से, जीवन के एक और अवसर की माँग नहीं कर सकता हूँ?—अपनी पहले की सेवाओं की दुहाई देने पर नहीं?"

सभा में निस्तब्धता छा गई। कुछ क्षण तक राह देखने के बाद एक सदस्य उठ खड़ा हुआ और बोला, "क्या अध्यक्ष महोदय उन परिस्थितियों की चर्चा कर सकेंगे, जिनके वश होकर डॉ० रेडियर अपने कर्तव्य से च्युत हुए हैं?"

सुरेश नारायण ने अनुभव किया कि सारी सभा पूरा हाल जानने के लिए उत्सुक है, तो पास के गवाक्ष की ओर दृष्टि-निपात करके उन्होंने कहना शुरू किया,

"माननीय सदस्यगण, लखनऊ पोस्ट ऑफिस के जलाए जाने से वहां जो गोलीकान्ड हुआ था, उसे आप सब जानते ही हैं। १४४ धारा के प्रतिवाद स्वरूप जो जुलूस निकाला गया था, उसकी सदारत हमारे दलपति के पुत्र दयाराम कर रहे थे। उस समय तक जुलूस ने किसी तरह की भी हिंसात्मक कार्यवाही नहीं की थी कि अधिकारियों को उत्तेजित होने का कोई कारण हो, किन्तु जिलाधीश के विलायत से लौटे पुत्र किट्सन रॉगर्स ने बिना किसी वैध आदेश के गोलियाँ चलानी शुरू कर दीं। उस समय उनकी मँगेतर शर्ली ज्यॉफ्री भी उनकी बगल में खड़ी उन्हें प्रेरणा दे रही थी और इशारे से उन्हें विशिष्ट व्यक्तियों की पहचान करवा रही थी। नियम के अनुसार जबकि फायरिंग हवा में करना चाहिए था, यह सत्ता-मदान्ध उद्धत युवक एक-एक को निशाना बनाकर भून रहा था। नतीजा यह हुआ कि दयाराम वहीं आहत हुए, स्वयं रेडियर को भी एक छर्रा बाँह में लगा था।"

यह कह कर सुरेश नारायण ने रेडियर की ओर देखा, रेडियर की दृष्टि नत थी।

सुरेश नारायण ने कहना जारी रक्खा, "मैं कह चुका हूँ, रेडियर हमारे एक बड़े महत्त्वपूर्ण परीक्षित योद्धा रहे हैं। त्याग भी उनका कम नहीं रहा है। देश के काम के लिए इन्होंने अपना आई० सी० एस० जैसा अंग्रेजों का वैभवपूर्ण दान ठुकरा दिया था, और विलायत से अपने प्रशिक्षण को अधूरा छोड़ कर देश की सेवा का व्रत लेकर ये आन्दोलन में कूद पड़े थे—"

सभी सदस्यों की तरह नवनीत भी अपने गाफिल मन को नियंत्रित करने की चेष्टा के साथ वक्ता का भाषण सुन रहा था। जब रेडियर ने स्वयं आई० सी० एस० के प्रशिक्षण को छोड़कर अपने विलायत से लौट आने की बात उससे कही थी, तब नवनीत ने उस पर विश्वास ही नहीं करना चाहा था। सचमुच रेडियर एक अद्‌भुत व्यक्ति है, इसमें सन्देह नहीं।

सुरेश नारायण कहते जा रहे थे, "अवश्य ही नृशंस कार्य का प्रतिविधान आवश्यक था, केवल इसलिए नहीं कि दयाराम की हत्या के द्वारा दल को गहरा आघात पहुँचाया गया था, बल्कि इसलिए भी कि किट्सन जैसे रक्त-लोलुप सत्तान्ध भेड़िए भारतीय जन-जीवन के लिए एक अभिशाप हैं। स्वयं डॉ० रेडियर प्रतिविधान के लिए व्यग्र और उग्र हो उठे थे। विप्लव-दल इसके लिए उचित अवसर की प्रतीक्षा में था। और यह अवसर भी शीघ्र ही आ गया। शहरी वातारण से एकदम दूर मानपुर के शान्त सरोवर के अँचल में उनकी विवाह के बाद सौभाग्य-रात्रि मनाने की योजना बनी। मानपुर में हमारी शाखा के स्तम्भ श्री अधर बाबू और टीकमचन्द थे ही। किन्तु डॉ० रेडियर ने स्वेच्छा से आगे बढ़कर यह भार अपने कंधों पर लिया। उनके रोष के शायद कुछ व्यक्तिगत कारण भी रहे हों, किन्तु दल से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है, अतः मैं समझता हूँ, उनके उल्लेख की कोई आवश्यकता नहीं है।" और उन्होंने सभा भवन पर एक दृष्टि प्रक्षिप्त की।

स्थिर भाव से सभा की समवेत दृष्टि रेडियर पर आरोपित थी। रेडियर कहीं खोया हुआ सारे वक्तव्य को इस तरह सुन रहा था, मानों रेडियर कोई दूसरा ही व्यक्ति है।

सुरेश नारायण ने कहना जारी रक्खा, "मानपुर शाखा के तत्वावधान में सारा कार्यक्रम आयोजित हुआ था। कार्यक्रम लगभग पूरा भी हो गया था, किन्तु डॉ० रेडियर सेक्स की सामान्य दुर्बलता से परास्त हो गए। शर्ली की जादू-

भरी आँखों के निमन्त्रण को ये संवरण नहीं कर सके। उस समय उस लड़की को बचा लेने के लिए, कहा गया है, कि इन्होंने अपने ही साथियों पर आक्रमण भी किया था। बच निकल कर डॉ० रेडियर और उस लड़की ने जो कुछ किया वह तो सब आपके सामने ही है। यही नहीं, उसके बाद भी उन्होंने नवनीत लाल को किस लिए इस सारे मामले से अछूता रखा, इसका कारण भी वे ही बता सकते हैं, क्योंकि किट्सन की हत्या में प्रमुख भूमिका तो नवनीत लाल की ही थी, अघर लाल तो संयोग से ही इसमें सक्रिय होने के लिए बाध्य हुए थे। कहो डॉ० रेडियर, मैं मिथ्या तो नहीं कह रहा न ?"

"जी नहीं। नवनीत लाल को अपने विवरण में कोर्ट से बचा लेने में एक अभिसन्धि थी, जिसे मुझे स्वीकार कर लेना चाहिए। नवनीत इस दल के सदस्य नहीं थे। उन पर कोई दलगत दायित्व नहीं था। और हमें अपने आरोपों के लिए एक गवाह की आवश्यकता थी। पुलिस ही ने हमें यह सुझाया था कि या तो नवनीत लाल को फाँसी के लिए तैयार रहना चाहिए या पुलिस की ओर से गवाह बनना उन्हें स्वीकार करना होगा। उनके मन की तरलता को मैं खूब समझ चुका था, और उसी से मुझे विश्वास था कि आवश्यकता पड़ने पर वे फाँसी के तख्ते पर जाने की अपेक्षा गवाह के चबूतरे पर हमारे पक्ष से खड़े होना अधिक पसन्द करेंगे। बस, मुझे और तो कुछ कहना नहीं है। आपके लगाए हुए आरोपों को मैं अस्वीकार करना नहीं चाहता।"

सुरेश नारायण ने कहा, "अस्वीकार करना नहीं चाहते, और तब भी एक और अवसर की याचना जरूर करना चाहते हो ! लेकिन तुम यह भी जरूर जानते होगे डॉक्टर रेडियर, कि इतिहास तुम्हें किस नाम से पुकारना चाहेगा ?"

प्रकट रूप से सभा मौन थी, किन्तु दबी जबान से साफ सुनाई दिया, सदस्य लगभग समवेत स्वर में कह रहे थे, "गद्दार, कृतघ्न, जयचन्द···"

सुरेश नारायण ने हाथ उठाकर सभा को मौन रहने का संकेत कर कहा, "एक क्षण के लिए रेडियर, अपने आपको अपराधी के स्तर से जरा ऊपर उठाकर अपने अपराध की गुरुता को सोचो। तुम इस दल के एक सम्मानित सदस्य रह चुके हो। एक बार निष्पक्ष होकर कहो, तुम्हारे साथ किस तरह का व्यवहार किया जाना चाहिए ?"

साहस करके रेडियर ने एक बार दृष्टि उठाकर सारी सभा की ओर देखा,

उत्सुकता सबके चेहरों पर तैर रही थी। रेडियर की वाणी में एक परिवर्तन-सा हुआ। इस बार उसका मस्तक भी कुछ उठ गया, मानों वह स्वयं अपराधी नहीं था, बल्कि किसी दूसरे अपराधी के अपराध पर अपनी राय जाहिर कर रहा था। उसने कहा, "अध्यक्ष महोदय, मैं कहना चाहता हूँ कि अभियुक्त से जो अपराध हो गया है वह बहुत भारी नहीं है, किन्तु अभियुक्त का व्यक्तित्व अवश्य बहुत क्षुद्र है, इसीलिए उसके व्यक्तित्व की क्षुद्रता के पासंग में यह अपराध बहुत भारी हो उठा है!"

"क्या मतलब ? साफ कहो रेडियर !"

"मनोविज्ञान ने इस युग में क्या व्यक्ति के व्यक्तित्व को बहुत क्षुद्र नहीं बना दिया ? आज की शिक्षा से सम्पन्न हर आदमी यह तो जानता ही है कि फ्रायड ने आदमी के कई कामों की जिम्मेदारी उसके खुद के ऊपर नहीं रहने दी है,—खास कर उसके अपराध की मनोवृत्ति के लिए तो कब कहाँ से कैसी परिस्थिति जुट आकर बारूद इकट्ठा करती रही होगी, इसका कोई ठिकाना नहीं है। वस्तुतः इसीलिए व्यक्ति के व्यक्तित्व को कोई बड़प्पन नहीं दिया जा सकता। किन्तु विप्लव-दल के सदस्य को यह हीनता अवश्य शोभा नहीं देती। वह पहले विप्लव-दल का सदस्य है, मनुष्य बाद में। पूछा गया है, इसलिए मैं कहना चाहूँगा कि अभियुक्त के साथ किसी तरह की रू-रियायत करने की गुन्जायश नहीं है। उसे प्राणदण्ड मिलना चाहिए।"

रेडियर की गौरव-दीप्त वाणी सभा के सन्नाटे में गूँज कर निश्शेष हो गई। किसी को आशा न थी कि कुछ ही क्षणों पूर्व क्षमादान की याचना करने वाला यह ठिंगना-सा व्यक्ति अपने ही बारे में मृत्युदान की व्यवस्था प्रस्तावित करके इतना बड़ा हो उठेगा।

अध्यक्ष ने कहा, "मुझे आदेश हुआ है डॉ० रेडियर, कि मैं तुम्हारे इस साहस-पूर्ण निष्पक्ष प्रस्ताव के लिए तुम्हारा अभिनन्दन करूं, और मेरा विश्वास है कि यह सभा भी इस अभिनन्दन में मेरे साथ है।"

दाहिने पार्श्व से नीलम उठ खड़ी हुई और बोली, "अध्यक्ष महोदय, बहनो और भाइयो ! आपने डॉक्टर रेडियर पर आरोपित अभियोग सुने हैं, और स्वयं उनके द्वारा तजवीज की हुई सजा का प्रस्ताव भी। डॉ० रेडियर ने आत्मपक्ष की बिलकुल चिन्ता न करके ऐसा प्रस्ताव रखने का साहस किया है कि उनके हृदय

की सरलता और निश्छलता खूब अच्छी तरह प्रमाणित हो जाती है। मनोविज्ञान की जिस दुर्बलता का उन्होंने उल्लेख किया है, उससे हम लोगों में से कौन बचा हुआ है ? कसौटी प्रस्तुत होने पर क्या हम उनसे अधिक खरे उतर सकते हैं ? किन्तु उन्होंने अपने लिए इस तिनके का सहारा भी छोड़ दिया है, जो उनके चरित्र की दृढ़ता का प्रमाण है। वे इस दल के एक मान्य सदस्य रह चुके हैं, और उन्होंने दल तथा देश की अच्छी सेवा भी की है। जब उन्होंने जीवन का एक अवसर मांगा था तब भी केवल इसलिए कि वे कलंक को साथ लिए जीवन से विदा होना नहीं चाहते थे। इसके अतिरिक्त जिस मनोवैज्ञानिक तथ्य को हम सामान्य सी दुर्बलता मानते हैं, यदि वह दुर्बलता ही सारी सृष्टि का संचालन करती हो और यदि उसी के बलबूते पर प्रकृति में संतुलन बना हुआ हो तो उसे सामान्य-सी दुर्बलता मानने से तो काम नहीं चल सकता। हमारा लक्ष्य अपराध है, अपराधी नहीं, और डॉ० रेडियर ने अपने निर्भीक वक्तव्य से प्रमाणित कर दिया है कि उनमें अब अपराध की वृत्ति तो नहीं ही है, प्रत्युत वे उसका प्रतिविधान भी करने को उत्सुक हैं। ऐसी अवस्था में उन्हें मुक्त न करके हम न केवल इस दल का ही अहित करेंगे, बल्कि न्याय की चुनौती स्वीकार करने से भी हम असमर्थ प्रमाणित होंगे।"

डॉ० रेडियर कुछ बोलना चाहता था, पर अध्यक्ष ने उसे रोक दिया। मि० निकल्सन खड़े हो चुके थे, उन्होंने कहा, "मिस्टर प्रेसिडेंट, इस तरह सस्ती चीप सेंटीमेंटेलिटी से काम करना हमारा पार्टी के लायक नहीं है। सिरफ कसूर मंजूर कर लेने से ही किसी अक्यूज्ड को माफ नहीं किया जा सकता। अगर उसे माकूल सजा नहीं मिली तो फ्यूचर जेनरेशन के लिए यह एक बोगस एग्जाम्पल होगा, मिस्टर प्रेसिडेंट। मैं अपने प्रेडिसेसर की बात का विरोध करता हूँ।"

जवाब नीलम ही ने दिया, "आने वाली जेनरेशन की जिम्मेदारी आप ले सकेंगे ? अपनी पूर्व पीढ़ी की कितनी मान्यताएं आप मान रहे हैं ? आपने तो अपना सारा अतीत ही मार्ग की धूल की तरह झाड़-पोंछ डाला है। फिर किस बूते पर आप आने वाली पीढ़ी का दायित्व ले रहे हैं ? भविष्य नहीं, वर्तमान को अपने हाथ में पकड़िए, भविष्य अपनी चिन्ता आप कर लेगा। वर्तमान में इस दल को, इस देश को डॉ० रेडियर जैसे साहसी व्यक्ति की बहुत आवश्यकता है, और किसी बेबुनियाद आशंका के आधार पर किसी योग्य व्यक्ति की सेवा से

राष्ट्र को विरत करने का किसी को अधिकार नहीं है। अगर उनके हृदय-परिवर्तन पर विश्वास नहीं किया जाएगा तो विश्व में कोमल भावों की कोई सार्थकता नहीं रह जाएगी।"

निकल्सन ने तत्काल उत्तर दिया, "जिसने पार्टी की हस्ती को ही खतरे में डाल दिया है मेडम, उसको बचाने की आपकी कोशिश किसी दूसरे खतरे को इनवाइट कर रही है, शायद यह आप नहीं जानतीं। रेडियर को प्राणदंड मिलने से ही पार्टी में डिसिप्लीन रहने की उम्मीद की जा सकती है। जिस लड़की की वजह से उन्होंने अधरलाल और टीकमचन्द को फाँसी के हवाले कर दिया, वह लड़की तो अभी भी मौजूद है और रहेगी। क्या भरोसा है कि रेडियर के छूटते ही उन आँखों का जादू इस पार्टी के सिर पर ही न बोलने लग जाए?—मि० प्रेसिडेंट, यह अनार्किस्टों की पार्टी है, महज औरतों का मजमा नहीं। यहाँ कोमल भावों के लिए क्या जगह हो सकती है? हमारा सारा तरीका प्रेक्टिकल होना चाहिए।"

अध्यक्ष के आदेश की चिन्ता न करके रेडियर बोल उठा, "माननीय मि० निकल्सन के तर्क काफी महत्त्वपूर्ण हैं, और मैं उनको उनके साहसपूर्ण बयान के लिए बधाई देता हूँ। नीलम कुमारी का अवश्य मैं हृदय से आभार मानता हूँ कि उन्होंने मेरी वकालत की है, किन्तु मैं स्वयं नफरत का जीवन जीना नहीं चाहता।"

निकल्सन ने उत्साह के साथ ताली बजाना प्रारम्भ कर दिया, कुछ और सदस्यों ने भी साथ दिया। निकल्सन ने तालियों की गड़गड़ाहट में अपनी आवाज उठा कर कहा, 'एनार्किस्ट कोमल भावों को नहीं जानता। वूमन, दाइ नेम इज फ्रेल्टी—'

निकल्सन का वाक्य पूरा नहीं हुआ कि सामने अंधकारमय गवाक्ष से एक गम्भीर नारी कंठ गरज उठा, 'निकल्सन—'

सारी सभा शांत हो गई, और सबकी आँखें गवाक्ष की ओर उठ गई। नवनीत को लगा मानो समवेत-संगीत कहीं ठोकर खाकर एकाएक गिर पड़ा, किसी गीत की मधुर तान पर पहुँचते ही मानों सितार के सभी स्वरों के तार एक साथ आवाज करके टूट गए! उसके मानस-चक्षुओं के आगे किसी चीनी बाजीगर की फीते की लम्बी रंगीन पट्टियों की तरह रंग-बिरंगी रेखाओं के घेरे उसे घेरते चले जा रहे थे। गवाक्ष से निसृत इस ध्वनि-समारोह की कंपन-लहरों के स्पर्श

मात्र से मानो उसके मन का मोर एक अँगड़ाई लेने लग गया।

कुछ क्षणों की नीरवता के बाद गवाक्ष से फिर वही ध्वनि मुखरित हुई, "तुम्हें क्या फिर से याद दिलाना होगा कि जिस तरह तुम अपने मिशन में नाकामयाब रहे हो, उससे एक 'वूमन' तुम्हारी इज्जत पर पानी फेर चुकी है ?—वेल, जिस माहौल में तुम चाहते हो कि डॉ० रेडियर का मामला तजवीज हो, मैं चैलेंज करती हूँ, कि तुम्हारी नाकामयाबी की जाँच भी उसी माहौल में की जाए। एन्ड आइ कैन टेल यू, अगर रेडियर को धोखा देने वाली एजेन्सी उनका हृदय है, तो तुमको धोखा देने वाली एजेन्सी तुम्हारी दिवालिया-बुद्धि है। और इस सभा के निकट चाहे भावना के दोष से हो या बुद्धि के दोष से, नाकामयाबी का अपराध बराबर है। हैव यू गट्स नाउ कि रेडियर की तरह तुम भी अपने लिए मौत की सजा माँग सको ?—स्पीक ऑन।"

निकल्सन की बोलती बन्द हो गई। महिलाओं ने हर्ष से तालियां पीटीं, बहुतेरे पुरुषों ने भी साथ दिया।

यद्यपि सबकी दृष्टियाँ गवाक्ष पर ही टिकी हुई थीं, किन्तु इस बार बोले सुरेश नारायण ही। अवश्य गवाक्ष से उन्हें ऐसी ही प्रेरणा मिली होगी। "माननीय सदस्यगण, आपने रेडियर का पूरा मुकदमा सुना है, और अन्य सदस्यों के वक्तव्य भी। आप लोगों की राय जानकर ही सभानेत्री जी अपना निर्णय व्यक्त करेंगे।"

सभानेत्री से उनका तात्पर्य गवाक्ष की वही गम्भीर वाणी थी, सभी ने उसे सुना था। लगभग सभी समवेत स्वर से बोल उठे, "डॉ० रेडियर को क्षमा कर दिया जाए।"

डॉ० रेडियर ने अविश्वास की दृष्टि से चारों ओर देखा। सुरेश नारायण ने कुछ कागज अँधेरे गवाक्ष की ओर बढ़ा दिए। सभी साँस रोके उसी ओर देख रहे थे।

तब तक सुरेश नारायण ने मानो अपनी ही प्रेरणा से कहा, "डॉ० रेडियर, सभा के इस अभिव्यक्त मत पर मैं एक बार और तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ। किन्तु मैं यह अवश्य कहना चाहूंगा कि मनोविज्ञान की जिस दुर्बलता का तुमने उल्लेख किया था, उससे ऊपर उठकर ही मनुष्य मनुष्य हुआ है, वरना यह पशु ही बना रहता, फिर तुम्हारी दुर्बलता का लक्ष्य भी कौन बनी। उस आँग्ल-समाज की लड़की

जो भारतीयों को घृणा की दृष्टि से देखता है। उसका प्रेम कभी तुम पा सकते, इस पर कभी विश्वास नहीं किया जा सकता। बल्कि मुझे तनिक भी आश्चर्य न होगा यदि तुम्हें और तुम्हारी आसक्ति को हथियार बना सकने पर वह लड़की तुम पर दिल खोलकर हँस रही होगी। उसके देश-प्रेम का भी अगर तुमने अनुकरण किया होता तो तुम अपने ही प्राणरक्षकों के साथ विश्वासघात न करते''—और फिर गवाक्ष से बढ़ाए हुए कागज़ को हाथ में लेकर तथा नाक पर चश्मा ठीक करके उन्होंने कागज पढ़ते हुए कहा, ''यह है तुम्हारे मुकदमे का फैसला—डॉ० रेडियर को इस सभा की सम्मति के अनुसार सभी अभियोगों से मुक्त किया जाता है। किन्तु जो कुछ इन्होंने किया है उससे दल का विश्वास वे नष्ट कर चुके हैं। इसलिए उन्हें अभी तो विप्लव-दल की सदस्यता से भी पृथक किया जाता है।—रक्षको इनके बन्धन खोल दिए जाएं।''

तुमुल हर्ष-ध्वनि के बीच डॉ० रेडियर के बंधन खोल दिए गए, किन्तु एक लम्बी साँस लेकर डॉ० रेडियर ने कहा, ''दल की सदस्यता से मुक्ति, यानी मैं अब विश्वास के लायक नहीं रहा ? जो कलंक मैं उतार फेंकने के लिए उद्यत हुआ था, उसी कलंक को सिर पर लिए मुझे मेरे देश में घूमना पड़ेगा ?''—और उसने गवाक्ष की ओर सतृष्ण नेत्रों से देखा। सारी सभा उसका अनुसरण करने लगी।

तभी डॉ० रेडियर ने शीघ्रता की। उसके रक्षकों को सावधान रहने की आवश्यकता न थी झपट कर एक के हाथ से रेडियर ने पिस्तौल छीन लिया और इसके पहले की कोई इसका निदान कर सके, उसने पिस्तोल को अपने सीने से लगाकर दो-तीन फायर कर दिए। हृदय से रक्त की धारा वह निकली, अपने पैरों पर वह खड़ा नहीं रह सका, गिरते-गिरते उसके मुंह से निकला, ''मैं जीवित रहने योग्य नहीं हूँ······मुझे क्षमा कीजिए······मैं देश के एक······तुच्छ सेवक की तरह ही······मरना चाहता हूं''······और उसकी चेतना भी क्षीणतर होने लगी।

सभा में कोलाहल छा गया था। सभी उठ खड़े हुए थे, और सभी के हृदय बड़ी जोर से धड़क रहे थे। न जाने कैसी संभव-असंभव कल्पनाओं से सबका मस्तक घूमने लग गया था। पिस्तौल हाथ में पाकर कोई क्या नहीं कर सकता ? कितने सदस्यों के प्राण नहीं उसकी मुट्ठी में थे ? पर नहीं, उसने केवल अपने ही प्राणों का अधिकार अपने हाथों में लिया। सभी की दृष्टियाँ रह-रह कर फर्श

पर पड़े निष्प्राण होते जा रहे रक्तप्लुत रेडियर से जा टकरातीं।

—लेकिन पिस्तौल की फायर का सबसे भीषण घोष नवनीत के मस्तिष्क में झनझनाया। उसकी समस्त जड़ता मानो गोली के आघात से मस्तक के रन्ध्रों को फोड़ कर बाहर निकल पड़ना चाह रही थी। उसे कुछ नहीं दिखाई दिया कि वह कहाँ है, क्या हो रहा है, और ये सब वहाँ कौन-कौन हैं ?

—सिर पर हाथ रखकर हरनाम ने आवाज दी, "सरकार, राजा बाबू।"

नवतीन ने आँखें खोलीं। देखा, हरनाम है, उसने फिर आँखें बन्द कर लीं।

"क्या हुआ मालिक ? कोई खराब सपना दिखाई दिया है ?"

"सपना ?"

"हाँ, देखिए न, सारा बदन पसीने-पसीने हो रहा है। ओठ इस तरह हिल रहे थे, जैसे आप कुछ कहना चाह रहे थे, पर कह नहीं पा रहे थे।"

नवनीत ने फिर आँखें बन्द कर लीं। उस रात सभा की कार्यवाही तभी शेष कर दी गई थी, किन्तु दूसरे दिन जब रात्रि को फिर सभा जुड़ी और सब सदस्यों के बीच पहली रात्रि की तरह ही नवनीत को वहाँ लाया गया तो तब भी उसे लग रहा था मानों डॉ० रेडियर की निष्प्राण देह उसकी बगल में पड़ी फटी-फटी आँखों से उसी की ओर देख रही थी।

३ तूफान

नगर का कोलाहल घना होता हुआ बढ़ता ही जा रहा था। और नवनीत के जलते हुए माथे पर हरनाम का हाथ उसे तस्कीन पहुँचा रहा था। उसने कहा,

"अभी डॉक्टर नहीं आया सरकार? अब तक तो आ जाना चाहिए था उसे।"

"आ चुका है रे।—तू तो जो गया सो वापिस लौटने का नाम ही नहीं था जैसे—कुछ पीने को पानी-वानी दे दे जरा।"

दक्षिण दरवाजे से दूसरे कमरे में जाकर हरनाम एक गिलास में पानी ले आया।

"उबला हुआ लाया है न?" आँखें खोलकर नवनीत ने पूछा।

हरनाम ने कुछ न कहा तो नवनीत ही बोला, "उबले हुए पानी से प्यास तो मरती नहीं। जो पीते हैं, वे प्यास बुझाने के लिए नहीं, महज खाना हजम करने के लिए पीते हैं। उबला हुआ पानी पीने वालों की प्यास तो बोतल ही बुझाती है। उसको तो तू हाथ भी नहीं लगाने देगा न—अरे, नल का न हुआ, कुएँ का ताजा बिना उबला पानी ही ला देता, उसमें तो कुछ दोष नहीं है।"

"पर डॉक्टर ने तो मना कर रक्खा है न सरकार।"

"मना किया था, पर कब?—उस दिन की हालत जैसी थी, क्या आज भी वैसी ही बनी हुई है?—पर तुझसे बहस कौन करे। ला, जो लाया है सो ही पिला दे।" और उठ बैठने की कोशिश की तो हरनाम ने उसे सहारा दे दिया। नवनीत आधा गिलास गटागट पी गया। उसे अकस्मात हँसी आ गई। एक बार ऐसी ही भयानक बीमारी में मानपुर में किसी खाट पर बैठे बड़े से लोटे से उसने पानी पीने की चेष्टा में गंगावतरण का दृश्य उपस्थित कर दिया था, तब आरती

के गंगा की उज्ज्वल पवित्र धारा के समान ही, पहली बार ही कहना चाहिए, उसे दर्शन हुए थे। कितना पीछे छूट गया है वह नवनीत।—और आरती ?

"डॉक्टर और क्या कह गया है सरकार ?" नवनीत को पुनः लिटाते हुए उसने पूछा।

"कह गया है कि मैं अच्छा हो रहा हूँ, और मन करे तो एक-आध घूंट भी ले सकता हूँ।"

"मजाक कर रहे हैं सरकार। कल ही तो वह मना कर गया था।"

"जब मेरी बात पर तुझे यकीन नहीं आता तो पूछता क्यों है ?—पत्र दे आया ?"

"दे तो आया हूँ, पर बहूरानी घर पर नहीं थी। महरी को दे आया हूँ, कह आया हूँ कि बहुत जरूरी खत है, आते ही दे दे।"

"महरी को दे दिया ? वापिस क्यों नहीं ले आया ?—महरी क्या जानती है व······

"कह आया हूँ कि आप बहुत बीमार हैं, जल्दी ही आकर आपसे मिल जाएं।"

नवनीत ने आँखें बन्द करलीं। मानो अपने आपसे ही बोला, "शहर के बाहर कोई आवारा बहुत बीमार हो जाए तो उससे उस महरी को क्या लेना देना ? और फिर इस खबर से उसकी मालकिन को ही सिर दर्द क्यों हो ? बल्कि अगर किसी आवारा बीमार का खत है तो मालकिन को दिया ही क्यों जाए।—नहीं दे तो ही अच्छा है। न जाने क्या सोच कर तैंने खत के लिए जोर दिया और मैं भी मान गया। घर पर नहीं थीं, यही क्या तेरे भगवान का इशारा नहीं था कि चिट्ठी लिख भेजना ठीक नहीं हुआ ? ले क्यों नहीं आया उसे वापिस ?"

"नहीं सरकार, चिट्ठी बहूरानी के हाथ में जरूर पहुँचेगी। महरी से ताकीद करके कह आया हूँ कि बीमार और कोई नहीं, खुद बहूरानी के पतिदेवता हैं।"

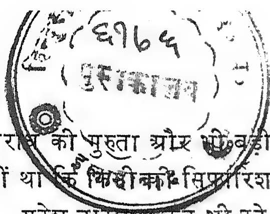
"कह क्या रहा है रे ?"

"महरी नई थी न हजूर। पुरानी होती तो आपका नाम लेने से ही काम चल जाता।" पति-देवता !—आँखें बन्द किए नवनीत मन ही मन हँसा। पति और देवता, दोनों में से क्या है वह ? शायद कुछ नहीं। देवता तो उसने अपने आपको कभी नहीं माना, पर पति ?—उस रात को वह भ्रम भी कहाँ रह गया ? वही तो रात थी—

मानो रेडियर की निष्प्राण देह, पूरा एक दिन और एक रात बीत जाने पर भी, वहीं बगल में पड़ी हुई अपनी फटी आँखों से उसे ही देख रही थी। चैतन्य उसे तभी से लाभ होता जा रहा है। रेडियर की आत्महत्या मानो उसकी चेतना के बिफरते हुए घोड़े के लिए चाबुक का प्रहार थी, और किसी आसन्न-संकट का आभास पाकर मानो उसके कान खड़े हो गए थे। उसके पहले तक जो कुछ हुआ था, उसका उसे मानों परोक्ष सूचना भास ही था, किन्तु उसके बाद से ही वह पूर्ण सचेत हो गया था। सभी के सभी सदस्यों ने बारी-बारी से उठ कर रेडियर के प्रति सम्मान जताकर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की थी, और सभा स्थगन के पूर्व ही लाश को वहाँ से हटा दिया गया था, किंतु नवनीत के मन में मानों वह शव अभी भी वैसे ही वहाँ रक्तप्लुत पड़ा उसी की ओर देख रहा था।

गत रात्रि की तरह ही सारी सभा जमी हुई थी। सभा का संचालन शायद उस रात्रि की तरह ही, सुरेश नारायण कर रहे थे। नहीं, आज भी गवाक्ष ही में कोई अदृश्य मूर्ति आसनासीन है, सुरेश नारायण तो उसका वाहन मात्र है। सभाध्यक्ष अदृश्य रहे, किसी भी आतंक-दल के लिए यह नई बात नहीं है। और नवनीत तो निश्चित रूप से बाहरी व्यक्ति है। इसके अतिरिक्त वह अदृश्य अधिकारी कोई महिला है शायद। कल निकल्सन ने अपने वक्तव्य में जब शायद नारी जाति को लेकर कुछ क्षुद्रतापूर्ण बात कही थी, तब उसका अनायास ही तिलमिला उठना भी यही प्रमाणित करता है। नारी होकर भी कोई इतनी कठोर हो सकती है कि किसी मृत्यु-यज्ञ जैसे भयंकर अनुष्ठान की पुरोहिताई या आतंक दल का नेतृत्व करने के लिए उद्यत हो सके, किन्तु नवनीत को इससे क्या ?—स्वर बड़ा ही मोहक और आशा का व्यंजक था न। पर नारी-स्वर की सहज मोहिनी के अलावा वह और हो ही क्या हो सकता है ?

चेतन्य-लाभ के साथ ही जब से नवनीत सारे व्यापार को समझने की स्थिति में आ गया था, उस पर एक आतंक, एक भय भी छा गया था। रात तो फिर भी नींद आ गई थी, आखिर थकावट और शराब का शेष प्रभाव तो था ही। पर आज का सारा ही दिन एक घोर दुश्चिन्ता और आशंका में कटा है उसका। अवश्य डॉ० रेडियर की हत्या नहीं की गई, उसने अपनी इच्छा से मृत्यु का वरण किया था। किन्तु उसकी हत्या भी उतनी ही सभावित थी, जितनी उसकी आत्म-हत्या संभव हुई है। नवनीत भी एक वैसा ही अपराधी है, डॉ० रेडियर से उसके



अपराध की गुरुता और भी बड़ी है, और वह तो इस दल का कभी सदस्य भी नहीं था कि किसी की सिफारिश की अपेक्षा कर सके।

सुरेश नारायण कह भी रहे थे—

"नहीं, दूसरे अभियुक्त को आप शायद ही जानते हों। वह कभी आपके दल का सदस्य नहीं रहा। यह भी सही है कि दल के प्रति प्रतिश्रुत होकर इस अभियुक्त ने आपके प्रति कोई विश्वासघात भी नहीं किया, इसलिए दल के प्रति इसकी कोई प्रत्यक्ष जिम्मेदारी भी नहीं है। यही क्यों, यदि इसके अपराध से अधरलाल और टीकमचन्द के प्राणदण्ड का कोई सम्बन्ध नहीं होता तो इन्हें आपके सामने खड़ा होने की भी जरूरत नहीं थी। लेकिन हमारे विप्लव-दल का कोई काम किसी निजी-हित का साधन नहीं, बल्कि मातृभूमि की सेवा है, और इस उद्देश्य में जो भी बाधक हो वह इस दल का शत्रु है। नवनीतलाल तुमने देश और मानवता के साथ विश्वासघात किया है। इसके अतिरिक्त किट्सन रॉगर्स की हत्या के आयोजन में सदस्य न होकर भी सहायता पहुँचाने के लिए तुम तत्पर हुए थे और इस तरह दल के प्रति तुम्हारा दायित्व हो गया था। अतः तुमने न केवल दल के दो कार्यों में बाधा पहुँचाई है, बल्कि इस दल के अन्यतम सदस्य और तुम्हारे प्रत्यक्ष सहायक प्राणरक्षकों का रक्त भी तुम्हारे कंधे पर है। क्या कहना है तुम्हें इस सम्बन्ध में नवनीत लाल ?"

नवनीत को पूर्ण चेत तो था, किन्तु मदपान की खुमारी और गले पर उसका प्रभाव भी पूर्ण मात्रा में विद्यमान था। दल की कैद में उसे प्रायः ही शराब के नशे में व्यस्त रखा जाता था, ताकि वह पूर्ण चेतना में अपने आपको पाकर किसी तरह का उपद्रव या कोई ऐसी बाधा न उपस्थित कर दे, कि उसका अस्तित्व ही संकटग्रस्त हो जाए। नवनीत की मानसिक दशा भी ऐसी थी कि वह मदपान के लिए कोई विरोध नहीं प्रकट करता था, और जिस मात्रा में जिस प्रकार का भी शराब उसे मिल जाता वह गटक लेता। उसी थकावट से शीशा बनी अपनी भारी पलकों को उठाकर नवनीत ने ऊपर देखा, रक्षकों ने हाथ पकड़कर उसे पैरों पर उठ खड़े होने में मदद दी। नवनीत उठा, किन्तु उसका एक पैर रक्तप्रवाह रुक जाने से झनझना उठा और वह लड़खड़ाने लगा। सारी सभा गम्भीरता से इसी ओर देख रही थी।

निकल्सन ने कहा, "हजरत इस वक्त भी चढ़े हुए हैं।"

कई सदस्यों ने हँस दिया। नवनीत का चक्कर खाता हुआ दिमाग स्थिर हो गया। उसने वक्ता की ओर देखा और नशे से चिपचिपाती वाणी में उसने कहा "चड़ा उवा ऊँ, इसलिए कि चड़ा दिया गया ऊँ। —इस मैखाने कोई आपने अदालत बना लिया। —अब याँ शराब के जाम फरश पर नहीं लुढ़कते, याँ अब खून की लाल परी चमकती ऐ। —ऐ मेरे मेम्अर बान दोस्त"—और उसने ढीले हाथ से उस स्थान की ओर इशारा किया जहाँ कल रेडियर की रक्तप्लुत देह निष्प्राण होकर गिर पड़ी थी।

नवनीत के व्यंग्य से सभा में सन्नाटा छा गया। नवनीत भी कुछ देर मौन रहा, फिर बोला, कुछ हँसा भी, "लेकिन अदालत में बोल रआ ऊँ। जो कुछ कऊँगा खुदा को आजिर-नाजिर समझकर, बिना नशे-पते। —किन्तु गंगाजल तो चलता ऐ न ? हिन्दू ऊँ। जामे-शराब नई, गंगाजल पीकर कऊँगा कि मुझे इस अदालत ने ई पिलाई ऐ। ऐसी पिलाई कि होश होने पर भी होश नई आता। पैर डग-मगाने लगते ऐं, तो दुनिया समझती ऐ कि अम पीके आए।"

"तुम अभी भी नशे में हो नवनीत लाल।" सुरेश नारायण ने कहा।

"नई अदालत सरकार। —शेर को देखकर नशा तो इरन ओ गया ऐ। सरकार, उकुम दें तो बैठ जाऊँ और तब बयान दूँ। बयान मेरे पास बउत ऐं। आपकी नुमाइन्दा मिस मार्गरेट ने आँखों के जाम के अलावा क्या ऐसा तेज पिलाए कि सीने में और गले में कटार और आग की लवें कम ई नई ओती।' और किसी की आज्ञा की चिन्ता न कर वह पुनः अपनी बेंच पर बैठ गया।

सुरेश नारायण ने आगे बढ़ आकर मंजरी से धीमे से पूछा, "तुम्हारे उस पेय का प्रभाव तो अभी न्युट्रलाइज नहीं हुआ है। इस अवस्था में विचार कैसे किया जा सकता है। एंटीडोज है तुम्हारे पास ?"

मंजरी ने अपने बैग में से एक शीशी निकाली और उसमें से कागज में कुछ दवा डालकर कहा, "इससे जल्दी ही उनका गला तर हो जाएगा, और वे अच्छी तरह बोल सकेंगे। होश अगर न हो तो वह भी जल्दी लौट आएगा।" —लगता है, वह डोज वाकई बड़ा 'स्ट्राँग' बन गया था, लेकिन मुझे कहा जो गया था कि ही विल रिक्वेयर ए व्हेरी स्ट्राँग डोज।'

एक गिलास में पानी मँगवाकर सुरेश नारायण ने वह औषधि नवनीत को पिला दी। उसका गला वैसे ही सूख रहा था, पानी पीने से उसे राहत ही

मिली ।

दाहिने ओर से एक सदस्य उठा, और बोला, "माननीय अध्यक्ष महोदय, इस सारे प्रकरण में अभियुक्त नवनीत लाल की क्या भूमिका रही, क्या आप इसे सदस्यों की सूचना के लिए पूरे रूप में बताने की आवश्यकता नहीं अनुभव करते ?"

सुरेश नारायण ने देखा कि नवनीत को प्रकृतिस्थ होने में आखिर कुछ समय तो लगेगा ही, क्यों नहीं तब तक वे सारे प्रकरण को एक बार विस्तार के साथ सुना जाए ?

मानपुर के तालाब के पूर्वी तट पर पूनम का चाँद पहले तो पीतल की थाली की तरह प्रकट हुआ, किन्तु चढ़ते-चढ़ते उसके अंग में गुराई बढ़ने लगी, और आकार में कुछ-कुछ सिकुड़ते हुए शीघ्र ही पालिश की हुई चमचमाती चाँदी से अपने शरीर ही को नहीं, वह अपने वातावरण को भी मढ़ने लगा । आकाश आज अनायास ही बड़ा साफ है। सूर्य काफी पहले अस्त हो चुका था। पश्चिम के दरवाजे की अवशेष लाली कजराती जा रही थी। पवन का वेग बहुत तेज न था, वह भी संध्या के इस मनोरम तट पर मानो अपनी सुदूर यात्रा से थककर विश्राम लेना चाहता था।

गैस्ट हाउस ठीक तालाब के ऊपर बना हुआ है। अपने पीछे की पहाड़ी के पार अस्त होते हुए सूर्य की प्रभा से गाढ़ी पृष्ठभूमि में अभी सफेदी की हुई इमारत दूर से भी बड़ी भव्य लग रही है। वहाँ तक पहुँचने के दो मार्ग हैं—एक पश्चिम की ओर स्थल से, दूसरा पूर्व की ओर सामने फैले जल से। काफी गहराई तक सीढ़ियाँ बाँधकर घाट को प्रशस्त और पक्का कर लिया गया है। एक ओर घाट से लगी एक छोटी किन्तु सुन्दर नाव लहरों के झूले पर इठला रही है । उसमें दो मल्लाह बैठे हुए मौजें ले रहे हैं। गेस्ट हाउस की सफेद इमारत पहाड़ी की छाया के गहरे बालों से ढके अपने मुख के सौन्दर्य को लबरेज भरे हुए तालाब के दर्पण में देख-देखकर प्रमुदित होती इतराती जा रही है।

ऊपर घाट के प्रशस्त दालान में दो तीन टेबलें सजी हुई हैं । एक पर पुष्पाधारों के बीच काँटे-छुरी-चम्मच और चीनी की रकाबियाँ सजी हुई रखी है, दूसरी पर गमलों के बीच कुछ रंगीन बोतलों का वैभव थिरक रहा है। बीच वाली एक बड़ी टेबल के चारों ओर कुर्सियों पर तीन मूर्तियां आरोपित हैं—

मूर्तियाँ नहीं, सजीव व्यक्ति। मूर्तियाँ तो इसलिए कि सारा माहौल एक सुन्दर रमणीय चित्र का है, और चित्र में मूर्तियाँ ही होती हैं।

एक ओर बैठा है मेज़बान नवनीत लाल, स्थानीय ब्रांच ऑफिस का पोस्ट मास्टर, और शेष दो हैं अंग्रेज़-दम्पति, मिस्टर किट्सन रॉगर्स, और मिसेज़ शर्ली रॉगर्स अभी कुछ ही दिन पूर्व विवाह-बन्धन में बँधे हैं। यहाँ आए हुए हैं अपनी सौभाग्य-रात्रि मनाने के लिए।

किट्सन रॉगर्स जिला कलेक्टर मि० क्रॉमवेल रॉगर्स के पुत्र हैं। इंग्लैंड में ही शिक्षा प्राप्त करके वे सैंडहर्स्ट में भरती हो गए थे। कमीशन प्राप्त करके भारत अपने पिता से मिलने आया तो बर्मा फ्रंट पर तैनाती का आदेश लेकर आया था। तभी यहाँ के पोस्ट मास्टर जनरल मि० विनफ्रेड ज्याफ्री की लड़की शर्ली ज्याफ्री से उसका परिचय हुआ था, माता-पिता के उत्साहदान से भी यह प्रकट हो रहा था कि दोनों विवाह-सूत्र में बँध जाएँगे। बर्मा पहुँचने पर भी दोनों में खतोकिताबत होती रही, और परिचय गाढ़तर होता गया। इधर मध्यपूर्व में प्रसिद्ध जर्मन सेनापति रोमेल के तत्वाधान में नया सैनिक अभियान धुरी राष्ट्रों की विजय पर विजय प्रमाणित हो रहा था, और किट्सन रॉगर्स भी अन्य अधिकारियों के साथ वहाँ तबदील कर दिया गया था। अपना नया पद भार सम्हालने के पूर्व वह कुछ दिनों के अवकाश पर भारत आया हुआ था। यहाँ महात्मा गाँधी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन जोरों पर चल रहा था। लखनऊ में सदर पोस्ट आफिस के जला देने के सिलसिले में एक जुलूस पर गोली चलाई गई थी। किट्सन ने अपने जिला कलक्टर बाप के अधिकार अपने हाथ में लेकर वे चुन-चुनकर फायर किए कि प्रदर्शनकारियों को भागते ही बना। यह लड़की शर्ली भी उसके पास खड़ी-खड़ी नेताओं की पहचान करवा रही थी। जुलूस के नेता दयाराम भी शहीद हुए।

शर्ली और किट्सन में प्रेम कितना बढ़ा, यह तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु यह अवश्य निश्चित हो गया कि नए फ्रंट पर जाने के पहले दोनों विवाह बन्धन में बँध जायेंगे। विवाह दोनों का होगया है, और हनीमून के लिए उन्होंने मानपुर निश्चित किया है। एक सप्ताह बाद ही किट्सन की छुट्टी शेष हो रही है, तब उसे फ्रंट पर पहुँच जाना है।

किट्सन हिन्दी नहीं जानता, किन्तु शर्ली खूब जानती है, कई बरस से जो

हिन्दुस्तान में रह रही है। जूनियर और सीनियर केम्ब्रिज की परीक्षाएँ उसने ला मार्टिनियर स्कूल से भारतवर्ष में ही दी थीं। नवनीत को जब पी. एम. जी. आफिस में नियुक्ति मिली थी, तब शर्ली के पिता का यह भी उद्देश्य था कि वह शर्ली को हिन्दी के अतिरिक्त अन्य विषय भी पढ़ा दिया करे। लेकिन पाठ शर्ली ही नवनीत को पढ़ाती थी, और वह भी रंगीन प्रेम का, और जब नवनीत अपनी एक भारतीय की हैसियत भूलकर उसपर अधिकार जताने की चेष्टा करने लगा था तो उस अंग्रेज कन्या ने कहा था, "डीयर नीट—" शर्ली नवनीत को प्यार में नीट कहकर ही पुकारती थी,—"डीयर नीट, मैं तुम्हें लव्ह करती हूँ लेकिन शादी करने के लिए नहीं। आइ वुड बी प्रेटी फूल टु मैरी एन इंडियन। तुम भी तो शादीशुदा हो जिस तरह हम रहते आए हैं, उसी तरह रहते रहें, क्या यही ठीक नहीं होगा ?"

नहीं, नवनीत से यह स्वीकार नहीं किया जा सका, और तभी कुछ और घटनाएँ घट गईं। मि० नवनीत लाल कार्यालय के उस ऊँचे आसन से लुढ़के, और तब से लुढ़कते ही आ रहे हैं इसीलिए तो एक भजुए देहात के ब्राँच ऑफिस में कार्ड-लिफाफे बेचने पड़ रहे हैं।

किट्सन अंग्रेजी में ही कह रहा था, "मि० नीट, यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि आप शर्ली को पहले से जानते हैं। हमारे लिए यह सारी व्यवस्था करके आपने काफी कष्ट उठाया है। आपको बहुत-बहुत धन्यवाद।"

नवनीत ने भी अंग्रेजी ही में उत्तर दिया, "इसमें ऐसी क्या बात है मि० रॉगर्स। मिसेज रॉगर्स मेरे अधिकारी की पुत्री भी है, वे खुद मेरे लिए अफसर के समान हैं। यदि आपको इस व्यवस्था से थोड़ा भी सुख पहुँचा तो मेरा श्रम सार्थक हो जाएगा।"

शर्ली ने कहा, "इतना ही नहीं किटी, मि० नीट ने मुझे पढ़ाया भी है।"

"पढ़ाया भी है ? तब तो मेरे लिए यह आश्चर्य ही है। भारतीय किसी अंग्रेज को पढ़ा भी सकता है। तुम मुझे हरा रही हो शर्ली।"

"नहीं डीयर, मि० नीट एक स्कॉलर हैं। इंडियन हिस्ट्री ही नहीं, इंग्लिश हिस्ट्री भी यह खूब जानते हैं, और रोमन हिस्ट्री तो इनकी स्पेशल स्टडी रही।"

"मुझे बड़ी खुशी है। लेकिन मि० नीट, फासिज्म के खिलाफ मानवता के इस महान युद्ध में आप भारतवासियों को, इतिहास के परिप्रेक्ष्य ही में सही, सहायता करने के लिए क्यों नहीं प्रेरित करते ?"

नवनीत ने कहा, "आप उन्हें आजाद करके निर्णय करने की स्वाधीनता तो दीजिए। एक पराधीन राष्ट्र की इच्छा की कीमत ही क्या है ?"

"यह तो आप लोगों की वही पुरानी दलील है। मैं तुम्हें कह सकता हूं मि० नीट कि गाँधी का तुम्हारा यह फकीर तुम्हारे देश को अपने जैसा ही नंगा बनाकर रख देगा। मुझे तो यही आश्चर्य होता है कि हिज मैजेस्टीज किंगडम यह सब खुराफात क्यों सहती चली जा रही है ? अगर मुझे अधिकार मिल जाएँ—"

नवनीत ने मुस्कराकर कहा, "पिस्तौल तो आपकी बगल में है ही और···"

"मैं एक चाबुक से उन पर शासन कर सकता हूँ मि० नीट।"

शर्ली ने शायद लक्ष्य कर लिया कि नवनीत अपने आसन पर कुछ अस्थिर हो रहा है, तो उसने कहा, "क्या डीयर, तुम भी यह राजनीति की सूखी बहस ले बैठे। लो थोड़ा गला तर कर लो, और मैं यह नहीं भूलने दूंगी कि हम यहाँ मौज करने के लिए आए हैं। इस मधु-रात्रि को मैं राजनीति या और किसी नीति की ऊबड़-खाबड़ता से बदरंग नहीं होने दूंगी।"

नवनीत ने कुछ सिर झुकाकर कहा, "मैं आपसे पूर्णतया सहमत हूँ मैडम।"

आपानकों की पूरी व्यवस्था नवनीत ने कर रखी थी। बहुत कुछ तो खास आदमी को लखनऊ भेजकर मँगवा लिया गया था। और कुछ दिनों से जबसे यहाँ उसका इस क्षेत्र में पद-संचार हुआ है, यहाँ से भी दो-चार बोतल उसने संग्रहीत की हैं। साहब के साथ भी तो एक पूरा मैखाना चलता है, अतः अगर कुछ कमी भी रह गई हो तो वह भी नहीं रह गई थी। मधु-रात्रि ही का समारोह जो ठहरा। खासा पार्टी जुड़ चली। नवनीत ने दोनों को खूब पिलाया; अच्छी से अच्छी शराब, गले से नीचे उतरते ही रंग दिखाने लग गई थी। शर्ली खुद भी पी रही थी और किट्सन को तो वह पूरा छक ही कर देना चाहती थी। नवनीत हिन्दू ब्राह्मण होने से अपने आपको बचाता जा रहा था, किन्तु अपना कर्तव्य-भार निभाने के लिए आवश्यक शक्ति वह पहले ही उदरस्थ कर चुका था।

चाँद आकाश में ऊपर चढ़ रहा था। वृक्षों की पंक्तियाँ काफी नीचे रह गई थीं। पश्चिम से संध्या की बचीखुची रेखाएँ भी लुप्त हो चुकी थीं। सारे तालाब

में चन्द्रमा का आसव छा गया था, मानो पारद-समुद्र में हिलोरें मार रहा था। केवल वृक्षों की घन-श्यामल-राजि ही उसे आकाश की सफेदी से पृथक् कर रही थी। सारा ही वातावरण बेसुध होता जा रहा था।

पीने में कुछ विराम आया तो नवनीत ने कहा, "जैसे-जैसे चाँद ऊपर चढ़ता जा रहा है तालाब की लहरें उसमें मिलने के लिए मचल-मचल कर इठला रही हैं। लेकिन चाँद को ही नहीं, हम लोगों को भी तो इनका निमंत्रण है। है न मि० रॉगर्स ? कुछ तालाब की सैर करली जाए न ! तब तक डिनर का वक्त भी हो जाएगा। क्या कहते हैं ?"

"दैट्स राइट। नाव में कुछ ड्रिंक्स साथ ले सकते हैं न ?"

शर्ली ने कहा, "उसके बिना बोटिंग का लुत्फ ही क्या रहेगा ? मगर किटी, तुम्हें कम-से-कम स्वेटर तो पहन ही लेना चाहिए। तालाब की हवा काफी ठंडी है, और तुम्हें टेम्परेचर के इस चढ़ाव-उतार से बचना चाहिए।"

"तुम ठीक कहती हो माय लव्ह। मैं सूट ही बदल आता हूँ।" और हाथ का गिलास खाली करके वह गेस्ट हाउस में कपड़े बदलने चला गया।

शर्ली ने नवनीत का हाथ पकड़ कर हिन्दी ही में कहा, "मेरा लेटर मिल गया था न ?"

"यह आपकी मेहरबानी है कि आप अब भी मुझे याद रखती हैं मिसेस रॉगर्स।"

"मिसेस रॉगर्स को मारो गोली। मैं हूँ शर्ली, वही तुम्हारी डियर शर्ली। नहीं ?"

"जरा धीरे बोलिए, मि० रॉगर्स सुन लेंगे। और बीती बातें याद करने से होता ही क्या है ?"

"किट्सन की परवाह मत करो तुम ! वह हिन्दी बिलकुल नहीं जानता। समझे न ? यानी हम उसके सामने ही हिन्दी में जो चाहे सो बक सकते हैं। इसके अलावा शराब के नशे में जल्दी ही उसे कुछ भी होश नहीं रह जाएगा। बहुत कुछ होश तो उसका गायब हो ही गया है।"

"तुम्हारा बाकी है क्या ? तुम भी तो ऊँचे घोड़े पर सवार हो।"

"मैं और भी ऊपर हवा में चढ़ना और उड़ना चाहती हूँ नीट। यह तो मैंने

तुम्हें अपने लेटर में ही समझा दिया था कि तुम्हारा प्रेम ही मुझे यहाँ खींच लाया है। मैं तुम्हें एक दिन के लिए भी नहीं भुला सकी डीयर।"

"यह मेरा दुर्भाग्य ही था शर्ली।"

"दुर्भाग्य ?"

"तभी तो यहाँ पड़ा हूँ, इस जंगल में।"

शर्ली ने अपने हाथ को नवनीत के कंधे पर रख कर कहा, 'तुमने भी तो मुझे बिलकुल ही भुला दिया न। अगर एक खत भी लिखा होता, तो देखते मैं खुद डैडी से कह कर पुनः तुम्हें अपनी पुरानी जगह पर बहाल करवा देती।"

नवनीत ने कंधे पर से शर्ली का हाथ उतारते हुए कहा, "ये मल्लाह देख रहे हैं शर्ली।"

"ओह, ये मामूली से नौकर ? बक्शीस देने से ही इनकी जीभ बंद हो जाती है डीयर ! बक्शीस कुछ ज्यादा हो तो आँख और कान पर खुद इनका इतबार नहीं रहता। मैं खूब जानती हूँ इन्हें।"

"लेकिन किट्सन ?"

"उसकी भी चिन्ता मत करो। वह मिलिटरी का अफसर है, और मिलिटरी के क्लासिक्ल अफसरों की तरह ही बौड़म है। शराब के बाद उसे कुछ भी सुध नहीं रहती, अपनी और अपनी नई बीवी की भी नहीं। लेकिन उतावले मत हो जाना। हम यहाँ एक हफ्ते तक ठहर सकते हैं, तब तक बहुत मौका मिलेगा। आज की रात उसके लिए रहने देना होगी। इसके बाद ही तो बेचारा लड़ाई के भाड़ में चला जा रहा है।"

"तुम उसे प्रेम नहीं करतीं ?"

"क्यों नहीं करती। खूब प्रेम करती हूँ। न करती तो शादी कैसे करती ?"

"लेकिन तब इस तरह पराए पुरुषों से मिलते रहना अन्याय नहीं माना जाएगा ?"

"तुम्हारे यहाँ माना जाता है ?"

"हमारे यहाँ ? हमारे यहाँ तो स्त्री के ऐसे अपराध के लिए पति कभी-कभी उसकी नाक तक काट लेता है।"

"माई गुडनेस ! लेकिन जब तुमने मुझसे प्रेम किया था तब तुम भी तो

विवाहित थे।"

'पुरुषों के बारे में हमारे समाज में सख्ती नहीं है।"

"क्यों? पुरुष भी तो स्त्री ही के पेट से पैदा होता है।"

"सो तो ठीक है। मैंने तो केवल यहाँ की एक सामाजिक प्रथा की बात कही है!"

"मैं जानती हूँ, और यह जान कर ही मैंने तय किया था कि प्रेम हो या न हो, मैं किसी हिन्दुस्तानी से शादी नहीं करूँगी। इन फैक्ट, इसीलिए मैं हिन्दुस्तानियों से नफरत भी करती हूँ। बट, लेटस फारगेट ऑल एबाउट इट। यह वक्त ऐसी बातों की याद में गँवाने का नहीं है। इस चाँदनी रात में कितने खूबसूरत लगते हो तुम डीयर। और मेरी ओर देखो, मैं भी क्या खूबसूरत नहीं लगती?"

"यह चाँदनी रात ही धोखेबाज है शर्ली। इसमें सभी कुछ तो सुन्दर दिखाई देता है।"

"और उसे हम और भी सुन्दर बना रहे हैं। जानते हो नीट, किट्सन ने प्रस्ताव किया था कि हनीमून के बाद मैं भी उनके साथ इजिप्ट चली जाऊँ। फ्रंट के पास ही मेरे रहने का वे इन्तजाम कर देंगे।"

"बुरा क्या है!"

"तुम चलोगे? मेरे फादर-इन-लॉ की लार्ड वेवल से अच्छी जान-पहचान है। तुम्हें जूनियर कमिशन तो मिल ही सकता है।"

हँस कर नवनीत ने कहा, "मैं कह सकता हूँ, तुम भारत छोड़कर कहीं नहीं जाओगी।"

"कैसे?" फिर मुस्करा कर कहा, "तुम तो बहुत ज्यादा बाँध कर रखना नहीं चाहते न।"

"नहीं। लेकिन तब भी मैं जानता हूँ कि तुम कहीं नहीं जाओगी।"

"जादू जानते हो?"

"जादू नहीं, ज्योतिष जानता हूँ, ज्योतिष।"

"ओह येस। हिन्दुस्तानी ज्योतिष जरूर जानते हैं। अच्छा मेरा हाथ देखो जरा।"

और जब शर्ली ने अपना हाथ बढ़ा दिया तो उसकी उपेक्षा करते हुए हँस

कर नवनीत ने कहा, "हाथ देखना ज्योतिष नहीं है शर्ली रानी, उसे कहते हैं पामिस्ट्री। ज्योतिषी हाथ नहीं, होस्कोंप देखता है, हॉर्स स्कोप, इफ यू लाइक।"

शर्ली ने भी हँस कर कहा, "यू प्रेटी डेविल, एंड यू स्पीक ए लाइ। अच्छा लाओ तुम्हारा हाथ। मैं देखती हूँ तुम्हारा फ्यूचर।"

नवनीत ने अपना हाथ बढ़ाया। शर्ली उसे अपने हाथ में लेकर कुछ झुकी, और शीघ्र ही उसे चूम लिया। फिर हँसते हुए कहा, "जानती हूँ न पढ़ना ? यह पढ़ना भी तुम नहीं जानते ?" और उसने किसी आशा से अपना मुँह आगे बढ़ा दिया।

नवनीत ने कहा, "इन अधरों पर और कई ललचा रहे हैं शर्ली। लिपस्टिक और ड्रिंक्स ने तो अपना अधिकार जमा ही रखा है। लो मि० किट्सन भी आगए हैं।"

"येस मि० नीट।" शर्ली को किट्सन के आगमन का पता ही नहीं था। उसने गरम नीला सूट पहन रखा था। मुँह में सिगार थी। शर्ली को लक्ष्य करके बोला, "रात बड़ी खूबसूरत हो गई है माइ लव्ह। चलो, लहरों के झूले पर भी कुछ झूल लिया जाए। बोटिंग के लिए सब ठीक है मि० नीट ?"

"सब ठीक हुए जाता है मि० रॉगर्स, अगर हम चलने को तैयार हों।"

"येस, हम तैयार हैं।"

"लेकिन···" नवनीत ने शर्ली की ओर लक्ष्य करके कहा।

"हाँ, हाँ ! चलिए तैयार हैं।" शर्ली ने बड़ी बेतकल्लुफी से मुस्करा कर नवनीत की ओर देखा।

किट्सन मानो अभी भी हल्के नशे में था।

शर्ली ने घाट की ओर मँथर गति से बढ़ते हुए नवनीत से लगभग सटकर उसकी हथेली अपने बाँएं हाथ में लेकर भींचदी और उसके मुँह से मादकता भरे स्वरों से फूट फड़ा—"माई लव्ह ! ···"

नवनीत ने टीकम चन्द को आवाज दी। घाट से बँधी हुई नाव से एक मल्लाह ने आकर सबको सलाम किया। टीकू की वेशभूषा बिलकुल धीवरों जैसी थी। सिर पर फेंटा बँधा हुआ था। कसा हुआ उभरती मछलियों का नंगा बदन, जिसका काला रंग चाँदनी में भी चमचमा रहा था, कमर में खूब कस कर बाँधी

हुई मटमैली धोती जो घुटनों से ऊपर ही खत्म हो गई थी। नवनीत के इशारे से उसने अपने दूसरे साथी को भी बुला लिया। उसकी वेशभूषा भी वैसी ही थी, पर वह बदन पर एक गाढ़े की मिर्जई पहने हुए था, और उसका बदन भी टीकू की तरह कसा हुआ नहीं लगता था।

एक छोटा टेबल नाव में उतारा गया। रंग-बिरंगी बोतलें उस पर जमा दी गई। बर्फ और सोडे का भी प्रबन्ध था। नवनीत ने बेहरे को साथ लेने की आवश्यकता नहीं समझी। शर्ली के लिए यह सुविधाजनक ही था, क्योंकि बेहरा किट्सन का व्यक्तिगत सेवक था। तीनों नाव में उतर कर आमने-सामने बैठ गए, यानी एक ओर किट्सन तथा शर्ली, और सामने नवनीत। आपानकों की जमघट पास सरका दी गई। दोनों मल्लाह सामने के सिरे पर बैठ गए। एक था टीकू और दूसरा करणीसिंह। करणीसिंह जाति का राजपूत था और मानपुर में सिलाई का काम करता था। नवनीत को बता दिया गया था कि वह भी अधर-लाल के दल में है।

रस्सी खोल, लग्गी को किनारे से टिका कर टीकू ने जरा-सा धक्का दिया कि नाव घाट से छिटक गई। उधर से करणीसिंह ने दो-चार डाँडें मारीं और नाव ने किनारे की क्षुद्र लहरों से सिर उठाकर गम्भीर जल की ओर मुँह कर लिया।

किसी राजहंस की तरह नाव गंभीर जल पर शनैः-शनैः तैरने लगी। नवनीत और शर्ली ने एक-दूसरे की ओर एक क्षण निर्निमेष देखा। अधरों पर मुस्कान खेल गई। वातावरण में मादकता थिरक उठी थी।

किट्सन ने जब से सिगार निकाला और नवनीत ने कनखियों से शर्ली के गुलाब से विकसित मुख-मंडल में झाँकते हुए माचिस की तिल्ली सुलगाकर उसे प्रज्वलित कर दिया।

इधर गिलास भरे जाने लगे। सिगार किट्सन ने हाथ की अँगुलियों में थाम लिया था। मुँह फुलाकर उसने ओठों से एक अंग्रेजी ट्यून बजानी शुरु कर दी। गिलासों की टकराहट, और फिर बातचीत का सिलसिला भी शुरू हुआ।

नवनीत ने सिगरेट केस निकाल कर शर्ली के सामने पेश किया। लक्ष्य करके

किट्सन ने कहा, "मुझे खेद है मि० नीट, मैंने आपको स्मोक ऑफर नहीं किया। मैंने सोचा था कि आप ड्रिंक की तरह स्मोक भी नहीं करते।"

"कभी कभी ही, मिसेज रॉगर्स की तरह ही, कर लेता हूँ।" शर्ली के सिगरेट ले लेने पर उसने केस किट्सन के सामने पेश किया। किट्सन ने अपने हाथ का सिगार फेंक कर नवनीत का पेश किया हुआ सिगरेट ले लिया। जब तक कि नवनीत जेब से माचिस निकाल कर जलाए, किट्सन ने अपना चांदी का सिगरेट लाइटर निकाल कर शर्ली की ओर बढ़ा दिया था। शर्ली ने उसी से अपना सिगरेट जलाया। नवनीत ने जली हुई सलाई किट्सन की ओर बढ़ाई, पर खुली हवा में वह शीघ्र ही बुझ गई।

किट्सन ने कहा, "कष्ट मत कीजिए।" और उसने लाइटर से पहले अपना सिगरेट जला कर फिर लाइटर नवनीत की ओर बढ़ा दिया। पहले दूसरे की सिगरेट जलाने के सामान्य शिष्टाचार की अवहेलना देखकर नवनीत ने पहले ही दोनों हाथों से आड़ करके अपनी सिगरेट जला ली थी। "ओह" कहकर किट्सन ने लाइटर अपनी जेब के हवाले किया।

बातचीत का सिलसिला छेड़ने के लिए नवनीत ने कहा, "युद्ध के बारे में आपका क्या खयाल है मि० रॉगर्स ?"

"उसे मित्र-राष्ट्र जीतेंगे।"

"लेकिन जर्मन तो ठेठ मास्को तक पहुँच गए हैं।"

"और रोमेल इजिप्ट में बढ़ता जा रहा है। पर इससे क्या हुआ। जीत हमारी होगी।"

"सुनते हैं सिंगापुर भी खाली कर दिया गया है।"

किट्सन ने नवनीत की ओर देखा, क्या वह अंग्रेजों का मजाक उड़ाना चाहता है ? जरा चिढ़ते हुए-से उसने कहा, "जो भी हो, हमने जीतने का पक्का इरादा कर रखा है।"

"सो तो धुरी-राष्ट्रों ने भी कर रखा होगा।—आप शायद मिस्र जा रहे हैं?"

किट्सन ने नवनीत की ओर जरा गहराई से देखकर कहा, "मिलिटरी अधिकारियों की गतिविध बड़ी गोपनीय रखी जानी चाहिए मिस्टर नीट। मिसेज़ रॉगर्स को हमारी बातों में कोई दिलचस्पी आती नहीं लगती। हम विषय क्यों

न बदल लें। बाइ दी वे, शायद आप जानते हैं, मैं बर्मा में कुछ समय रह चुका हूँ। आपका वह बागी नेता—क्या नाम है ?''

'सुभाष चन्द्र बोस ?''

''येस येस। उनकी आई० एन० ए० के बारे में आप कुछ जानते हैं ?''

''बहुत कुछ जानता हूँ...''

नवनीत की वाणी में उत्साह था। शर्ली उसे देखकर तनिक गम्भीर हो गई।

''क्या जानते हैं आप मि० नीट...उसका कांग्रेस से निकाला गया...तब उसने बगावत किया...'' और उपेक्षा से ओठ सिकोड़ते हुए उसने आगे कहा—''दैट अनट्रस्टेड आई० सी० एस०...''

शर्ली को नवनीत के अंग्रेज-विरोधी विचारों का आभास था। वह जानती थी कि नवनीत को यदि कुछ मालूम भी होगा तो वह कुछ नहीं कहेगा। किट्सन भी नशे में अपना चेत खोता जा रहा है, क्या मालूम बहक कर वह कुछ गोपनीय ही प्रकट न कर दे। और इन बेकार की बातों से लाभ ही क्या ? वह रोमान्स के लिए आई है, युद्ध की बात से उसे क्या सरोकार है ? इसलिए मुस्कराकर, नवनीत जब आई० एन० ए० के बारे में कुछ स्पष्ट ही ऐसी बात कहने जा रहा था जो अंग्रेजों के पराभव की द्योतक हो, तो शर्ली ने बीच ही में कहा, ''डीयर, मैं अपने पुराने मित्र से यहाँ की नेटिव्ह लेंग्वेज हिन्दी में बात करके अपने हिन्दी के ज्ञान को जाँच लेना चाहती हूँ, तुम्हें कुछ आपत्ति है ? जरूर ये बोतलें तुम्हारी खिदमत में हैं ही।''

''दैट्स फाइन। लीव्ह मी अलोन। इट सूट्स मी एड्मिरेबली एंड परफेक्टली वेल।''

नवनीत ने कहा, हिन्दी में ही, ''जरूर तुम्हारी व्यवहार बुद्धि की मुझे दाद देनी चाहिए, लेकिन अब सिर्फ हम दोनों में बातचीत करने को है ही क्या ? हमारा पड़ोसी न समझे, मगर ये मल्लाह...''

''इट्स नॉनसेन्स। सॉरी, मुझे तो हिन्दी में बोलना चाहिए न। मेरा मतलब है इन लोगों से डरने की कोई बात नहीं है। वे सिर्फ टिप्स के भूखे होते हैं।

साहब लोगों की बातों में दखल नहीं देते।"

"लेकिन मैं तो साहब नहीं हूँ।"

"मैं तो तुम्हें साहब ही बनाना चाहती थी न। लेकिन तुम लोग प्रेक्टिकल जो नहीं हो।"

"कैसे ?"

"जैसे—मैं अभी भी नहीं समझ पाती कि उस दिन तुम्हारा जेम्स से उलझ पड़ने का क्या कारण था ? मैं तो तुम्हारी पत्नी नहीं थी।"

"अब तो मैं भी यही सोचता हूँ शर्ली। इसीलिए तो मैं निर्विकार तुम्हारा और किट का नाटक देख रहा हूँ। पहले जैसी स्थिति होती तो फिर न उलझ पड़ता ?"

किट्सन ने अपना नाम सुना तो बोला, "मेरे बारे में क्या बात हो रही है शर्ली ?"

झट से शर्ली ने कहा, "मिस्टर नीट कह रहे हैं कि रात का यह सुहावना समय मि० किट् को बहुत भा रहा है। है न ?"

"निश्चय मि० नीट। इस व्यवस्था के लिए बहुत बहुत धन्यवाद, मुझे आज के ट्रिप से अहमडाबाड का कांकरिया लेक याद हो आया है, मिस्टर नीट ! व्हाट ए वन्डरफुल लेक इट इज़···"

"हाँ, मिस्टर नीट !—" शर्ली ने कहा—"हिन्दुस्तात की खूबसूरत जगहों में डियर किट्सन को उदयपुर और अहमदाबाद की झीलें बहुत ही पसन्द हैं। इसलिए आपको आज की सुन्दर योजना के लिए धन्यवाद दे रहे हैं।···"

'यस ! थैंक्स मि० नीट···आई थैंक यू एगेन—"

नवनीत ने कुछ झुककर मुस्कराहट के साथ किट्सन के धन्यवाद को स्वीकार किया, और शर्ली से हिन्दी में बोला, "तुम्हारी तत्काल बुद्धि की दाद मैं पहले ही दे चुका हूँ। कभी-कभी अब भी इच्छा होती है कि हिन्दू पति होने में ही क्या गौरव है ? एक ही पत्नी को गले में लटकाए जन्मभर ही नहीं, बल्कि जन्म-जन्मान्तर तक भटकते रहने की बनिस्बत हर फूल का रस चखना क्या बुरा है ? रस चखने तक तो ठीक है शर्ली, लेकिन भारतीय पुरुष को एक तो झूठा रस चखने

की बात पर ही उबकाई आने लगती है, और दूसरे अपने प्याले को दूसरा कोई ओठों से लगाले तो उसका खून खौल उठता है। जेम्स से जब मेरा झगड़ा हुआ था, तब सचमुच मैं तुमसे प्यार अनुभव करता था, लेकिन जब तुमने उसकी वकालत की तो वह तो बच ही गया, मैं भी बच गया।"

"कैसे ?"

"तुम्हारे नाटक से। तुम लोग नाटक के ऊपर ही तो भरोसा करते हो।"

"तो क्या सोचते हो कि तुम्हारे साथ मेरा प्रेम महज एक नाटक है ?"

"मि० किट्सन से पूछूँ क्या ?" और उसने किट्सन की ओर एक उड़ती दृष्टि डाली। वह नशे में छक होता जा रहा था, उसे इन लोगों की अब कोई सुधि नहीं रह गयी थी।

शर्ली ने कहा, 'भारतीय स्त्रियों की तरह हम लोगों को तुम दासी बनाकर नहीं रख सकते। एक दिन आएगा जब भारतीय स्त्री भी जरूर उठ खड़ी होगा और पुरुष समाज से इसका बदला लेगी। तुम्हारी पत्नी के क्या हाल हैं ? सुना था, वह तो पढ़ी-लिखी हैं।"

नवनीत ने सिगरेट का धुआँ आसमान पर फूँक दिया। सफेद रेशों में उसकी पत्नी की वह बिदा लेती मूर्ति नाच उठी। शर्ली ने शरारत से फूँक देकर धुएँ को तितरबितर कर दिया।

शर्ली को लेकर ही तो दोनों में मनमुटाव हुआ था। अवश्य ही उसकी पत्नी बाद में मामले को बहुत तूल दे बैठी थी। तब नवनीत शर्ली के गुदकारे बदन की स्मृति में अचेत था। वह तो उससे विवाह कर लेने के लिए भी उधार खाए बैठा था। मगर शर्ली के कई प्रेमी युवकों और स्वयं शर्ली ने उसके स्वप्न को झटककर भंगकर दिया था। नाटक ही तो था।

"उसके बारे में कुछ कहना नहीं चाहते न ?" शर्ली ने अपने प्रश्न के बारे में कहा।

"नहीं, यह बात नहीं। जब से मैंने लखनऊ छोड़ा, तभी से वह अपने पिता के घर है। यह तो जंगल है न। यहाँ मुझ जैसे जंगली ही तो रह सकते हैं।"

"मुझपर भरोसा करके तुमने कभी मुझे लिखा ही नहीं। वरना डैडी से कहकर मैं तुम्हें फिर से लखनऊ बुलवा सकती थी।"

"जब तुमने ही मुझे यहाँ भिजवाया था तो मैंने सोचा यह भी तुम्हारा ही

प्रसाद है। जेम्स के साथ रँगरेलियों में शायद तुम मुझे भुला ही बैठी होओ।"

हँसकर शर्ली ने कहा, "लेकिन सचमुच नहीं भूली न ?"

"नाटक करने वाले दूसरों को ही भुलावा देना जानते हैं, जेम्स भी यही समझा, और ये हजरत भी नहीं समझे।" और नवनीत ने किट्सन की ओर इशारा कर दिया—"मुझे तुमने समझा दिया है इसके लिए धन्यवाद। लेकिन कहना मैं यह चाहता था शर्ली, कि अंग्रेज हो या हिन्दू, नारी आखिर नारी ही है, और अपने पुरुष को धोखा देकर शायद वह अपना ही अहित करती है। आज शायद तुम यह न समझो, लेकिन अगर तुम कभी भी माँ बनी—"

"तुम्हारा मतलब है कि मैं अपने पति को धोखा दूँगी ? तुम अंग्रेज नारी को नहीं जानते नीट। वह प्रेम से ज्यादा अपने कर्तव्य को मानती है। वह प्रेम से खिलवाड़ कर सकती है, मगर कर्तव्य से नहीं। मैं तुम्हें प्यार करती हूँ, किन्तु कर्तव्य की प्रेरणा से ही मैंने तुम्हारे साथ विवाह नहीं किया। यही क्या इसका सबूत नहीं हैं ?"

हँसकर नवनीत ने कहा, "जो अपने अपने प्रति ही सच्चे नहीं हैं, उनकी बात को गंभीरता से नहीं लिया जाता शर्ली।"

"क्या इसका यह मतलब नहीं कि तुम मेरा और मेरे प्रेम का मजाक उड़ा रहे हो ?"

"उस प्रेम के कुछ मानी हैं क्या ?" उसी तरह आकाश में धुआँ छोड़ते हुए उसने कहा।

शर्ली चिढ़ उठी, "मेरी नाराजी का कुछ नमूना तुम देख चुके हो। मैं नहीं चाहती कि मेरी वजह से तुम्हारा और अधिक अहित हो।"

नवनीत ने निहायत इतमीनान से हँसते हुए अंग्रेजी में कहा, "मेरा खयाल है आज की इस मामूली-सी व्यवस्था में जो मेरा आत्मभाव व्यक्त हुआ है, उससे तुम्हें नाराज होने का तो कोई कारण नहीं है। आप क्या कहते हैं मि० किट्सन ?"

किट्सन चौंक उठा, "क्या ? मुझे कुछ कह रहे हैं मि० नीट ?"

शराब के कारण किट्सन की आवाज उखड़ चुकी थी। नवनीत ने अपनी बात दुहरा दी।

किट्सन ने कहा, "इसके लिए हम आपके आभारी हैं, और इसमें निश्चय

ही मेरी पत्नी मेरे साथ है मि० नीट।"

"आपकी सेवा करने का अवसर पाकर मुझे बेहद खुशी हुई है।" और नवनीत ने मुस्कराकर शर्ली की ओर देखा। उसने भी व्यंग्य से तिलमिलाकर अंग्रेजी ही में कहा, "लखनऊ पहुँचते ही तुम्हारी अतिरिक्त-तरक्की के लिए डैडी को कहना होगा।"

नवनीत ने और भी व्यंग्य से कहा, "मैं परमपिता से प्रार्थना करूँगा कि तुम बहुत जल्दी वहाँ पहुँचो। और शर्ली, यह 'पेग' तुम्हें मेरी खातिर लेना होगा।"

पीछे बैठा हुआ करणी सिंह कब टीकू के पास आ बैठा था, इसे किसी ने लक्ष्य नहीं किया। नाव तब तक तालाब के बीच में पहुँच चुकी थी। चन्द्रमा भी सिर पर आ लगा था। सारा वातावरण दूधिया बन गया था। चारों ओर पहाड़ियों की हरियाली भी दूध में नहाकर कुहराच्छन्न हो गई थी, और उनके शिखर आसमान में घुलमिल गए थे। तालाब बहुत बड़ा है। तट का अब केवल अन्दाज ही रह गया था। दूर पश्चिम में सफेद चमकता हुआ गेस्ट हाउस भी मानो हलके कुहरे से छा गया था। लहरें तालाब में नृत्य के मिस मुखर हो गई थीं, और नाव से टकराकर बार-बार मानो नुपुरों की छूम-छपाक कर रही थीं।

नाव लहरों की मर्जी पर कभी इधर, कभी उधर झोके खा रही थी, मल्लाहों ने डाँड चलाना बन्द कर दिया था। वे बार-बार चौकन्ने होकर चारों ओर दृष्टि घुमा रहे थे, और बहुत धीमे ताकि अन्य आरोही सुन न सकें, बातें भी करते जा रहे थे।

करण सिंह ने कहा, "क्या बात है टीकू दादा, अब तक तो उन्हें आजाना चाहिए था।"

टीकू ने कहा, "वक्त भी काफी हो गया है। सभी तरफ चुप्पी छाई हुई है। पर करणी, लगता है जैसे नाव इधर की ओर बह रही है। हवा भी तो दक्खिन से बह रही है न। नहीं भाई, नाव को बीच ही में रहने देना होगा।" और एकाध डाँड चलाकर वह नाव को पुनः अपनी पहली जगह पर ले आया। तभी एक बड़ा-सा पक्षी कहीं से पंख फड़फड़ाता उनके सिर से उड़ निकला। पता नहीं बाज था या क्या, निश्चय ही नीड़ से भटका हुआ नहीं था वह, बल्कि रात में किनारे

के वृक्ष-कोटरों में दुबके पड़े पक्षियों या उनके अंडों ही की तलाश थी उसे। तभी तो रह रहकर कुछ ही देर में वह इधर से उधर परबाजी कर रहा था।

करणी सिंह ने कहा, "कहीं उनका इरादा बदल गया हो तो ?"

"नहीं। रेडियर कभी इरादा बदल दे, ऐसा मुमकिन नहीं।"

"लेकिन उनकी और राह देखना क्या वाजिब होगा ? अब तो इनके खाने का वक्त भी आ रहा है। अगर लौटने का हुकुम मिल गया तो ? हमीं लोग क्या काफी नहीं हैं ?"

"काफी तो क्यों नहीं हैं, मगर जिस पर जितनी जिम्मेदारी सौंपी गई है उसे उतना ही काम अंजाम देना चाहिए। तभी पूरा बड़ा काम सर होता है करणी।"

"मगर यह तो सबकी जिम्मेदारी है टीकू दादा। देश किसी एक का नहीं, हमारा सबका है और देश का दुश्मन हमारा भी उतना ही बड़ा दुश्मन है जितना रेडियर का या और किसी का हो सकता है।"

"तुम कहते तो ठीक हो भाई, लेकिन इस वक्त हमारी जिम्मेदारी संघ के प्रति है, और काम की जिम्मेदारी है नायक के ऊपर। हम सिपाही हैं सिपह-सालार नहीं। काम तो अपनी सौंपी जिम्मेदारी के करने से ही पूरा होता है। पर देखो, सामने कुछ हिलता-सा दिखाई देता है न। जरूर नाव है। वह देखो, वृक्षों की छाया में चाँदी-सी उछालती हुई आगे बढ़ती जा रही है। होशियार करणी, मौका आ गया दीखता है।"

सचमुच ही उत्तर-पूर्व दिशा से लहरों के जाल को उच्छिन्न करती हुई एक नाव बड़ी तेज गति से इधर ही आती दिखाई दी। वेग के साथ लहरों से टकराने के कारण मानो उसके मुँह से फेन निकल रहा था।

आरोहियों में से सबसे पहले शर्ली की दृष्टि उधर गई। नवनीत का हाथ पकड़कर उसने कहा, "वह क्या कोई नाव है सामने ?"

नवनीत ने अनदेखा करके कहा, "कैसे कोई नाव हो सकती है ? कुछ ज्यादा पी ली है क्या।"

"पी तो है लेकिन—नहीं नहीं, नाव के सिवा और क्या हो सकता है ?"

—नाव अब और भी अधिक निकट आ गई थी। देखकर भी न पहचानना असम्भव था। नवनीत ने भवों को सिकोड़कर कहा, "नाव ही तो लगती है। पर आई कैसे ? मैंने तो खास तौर से हिदायत दे दी थी। अरे टीक।"

टीकू हाथ जोड़कर खड़ा होगया, बोला, "सरकार !"

"यह नाव किस की है जी ? तुमने कहा था न कि और किसी से नाव का सौदा मत करना आज़ ।"

टीकू ने देखकर कहा, "मगर सरकार, ऐ नाव तो हमारा नाहीं । गंगामाई का कसम ।"

"लेकिन यहाँ तो और किसी की नावों का लाइसेन्स नहीं है ।"

"कहा जानी सरकार । सुनत रहा, ओ परे के गाँव के कुछ सिरफिरे लोग रात को डिग्गी लेकर मछलियाँ पकड़त फिरत, मगर कबहों देखा नाहीं । मुआ आजै पकड़ माँ आय गए हन, तो छटई का दूध नाहीं याद कराय दें तो नाव नाहीं ।"

शर्ली ने अंग्रेजी में कहा, "नीट, उनसे कहदो, बेकार किसी से झगड़ा न कर बैठें वे ।"

किट्सन ने कुछ-कुछ होश में कहा, "क्या बात है डार्लिंग ?"

"कुछ नहीं । चाँदनी रात बड़ी सुहावनी जो है । हमारे सिवा अगर और भी कोई तालाब में अपनी अलग नाव लाकर सैर करे तो हमें क्या आपत्ति हो सकती है ?"

नवनीत ने अंग्रेजी ही में कहा, 'लड़ाई-झगड़ा कुछ नहीं है शर्ली । यह तो इन मल्लाहों ही की बदमाशी है । किसी ने ज्यादा पैसे दिए कि लोभ में आ गए । किसी मछली पकड़ने वाले की नहीं, स्पष्ट ही वह किसी सैलानी की नाव है । देखना, झगड़ने का थोड़ा-सा नाटक भर करेंगे, और सब बात साफ मालूम हो जाएगी । कल फिर सारी जाँचकर के सबक सिखाऊँगा बदमाशों को ।"

किट्सन ने कहा, "उनको भी आनन्द मानने दो नीट ! उस नाव में 'वूमन' और 'वाइन' है या नहीं ?"

नाव और भी पास आ चुकी थी । साफ देखा जा सकता था कि उसमें दो ही पुरुष हैं—एक खड़ा हुआ और दूसरा नाव चलाने वाला । शर्ली ने कहा, "नारी तो कोई नहीं है ।"

"नॉट ईव्हन वन ? व्हेरी बैड इंडीड ! व्हेरी अनफेअर टु बी विदाउट फेअर सेक्स !" और किट्सन ने अपने हाथ का पूरा गिलास गले में उढ़ेल लिया ।

शर्ली ने कहा, "वह भी कोई मि० नीट जैसा ही लँडूरा होगा ।"

"मि० नीट ? ओह येस। मैंने तो ध्यान ही नहीं दिया। मिसेस नीट को क्यों नहीं देख पा रहा हूँ मि० नीट ?—क्या आप बैचलर हैं ?"

उत्तर शर्ली ने दिया, "ओह, नीट जरूर विवाहित है, और जानते हो डीयर ? इण्डियन वाइफ अपने हसबंड को बाँध कर रखती है, मेड़े की तरह। नीट के गले में पट्टी बँधी हुई नहीं देखते ? इधर-उधर जरा भी नहीं हो सकते. ठीक नाक ही की सीध में चल सकते हैं मि० नीट!" और वह खिलखिलाकर हँस पड़ी।

किट्सन ने कहा, "खुदा मुझे समझे अगर मैं कुछ समझ पाया होऊँ। लेकिन—"

सामने वाली नाव और भी पास आ गई थी। स्पष्ट था कि इन लोगों की नाव भी उसकी दिशा में आगे बढ़ रही थी। मल्लाह की जगह बैठे व्यक्ति का मुँह सिर पर बँधे बड़े फेंटे से सारा ढँका हुआ था। उसकी घनी दाढ़ी-मूँछ शरीर के आबूनस जैसे रंग में घुलमिल गई थी। मालिक के स्थान पर खड़ा आदमी कोई गुजराती सेठ लगता था। सिर पर सफेद आँटेदार साफा, शरीर पर बन्द गले का सफेद लम्बा कोट। उसका मुँह भी बड़े पग्गड़ के नीचे छिप गया था।

टीकू ने चिल्लाकर कहा, "तोहार दीदा की फूट गएल हन ? चढ़ा ही चला आत है।"

उस नाव के मल्लाह ने टीकू की बात पूरी नहीं होने दी और कहा, "खुदा कसिम, मुँह सम्हाल के बोल : चढ़ा खुद चला आता है। तालाब क्या तेरे बाप का है ?"

टीकू ने कुछ डाँड इस तरह मारे कि नाव बच कर एक ओर हो गई। फिर उसने कहा, "जो कहीं टक्कर होय जाती तो ?"

"बचा कर नहीं चलेगा तो टक्कर क्या, खुदा कसिम, नाव ही उलट जाएगी !"

सामने वाली नाव यद्यपि इससे छोटी है, पर अधिक चुस्त और सुन्दर भी है। और अब तो दोनों ही आमने-सामने हैं।

करणीसिंह, ने कहा, "तौ का अही तय करना चहत हौ क ऐ तलाब हमार दोनों में केहरे बाप का है ? नीक चहौ, तो अपने रस्ते-रस्ते चलैं जावो। तलाब

ओ अतनौ छोट तौ नाँय न !"

गुजरांती सेठ ने कहा, "झगड़ो केम करो छो भाई ! बधू जगाँ छे तामारा माटे ओ। एक बाजू माँ थी निकाली लो नी ?"

उसके मल्लाह ने कहा," निकाल तो रहा ही हूँ, इन जैसा जाहिल नहीं हूँ मैं। मगर खुदा कसिम, ये मानपुर के मछुए बड़े हरामजादे हैं। एक-न-एक दिन इनको सबक सिखाना ही पड़ेगा।" फिर एक-दो डाँड मारकर नाव को एक ओर करने का उपक्रम-सा करते हुए बोला, "छोड़ देता हूँ आज तो, मगर खुदा कसिम, एक दिन जरूर देखूँगा तुम लोगों को।"

टीकू ने कहा, "अरे जा खुदा कसिम के नाती। तू कहा देखी हमका ?"

किट्सन ने शर्ली से कहा, "कम क्लोजर माइ हनी। व्हॉट इज दिस ? डीप-सी पायरसी ? आ'इल शूट देम ऑफ !"

शर्ली ने किट्सन के पास सरक कर कहा, "उस नाव का माँझी बड़ा जंगली लगता है। नीट उसे कहो कि खैर चाहता हो तो दूर चला जाए। इसमें साहब लोग बैठे हैं।"

नवनीत ने दूसरी नाव के भद्र आरोही को लक्ष्य करके कहा, "सेठजी, इस गँवार माँझी के साथ मालूम देता है तुम भी गँवार हो गए हो।"

मुड़ती हुई नाव मानों फिर रुक गई। वह माँझी ही तड़पकर बोला, "कसिम खुदा की मेरे मालिक को जो गँवार कहे, मैं उसका खून पी जाऊँगा। मानपुर के मछुए ही नहीं, यहाँ के तमाम बाशिन्दे भी अक्ल के दुश्मन और उल्लू के पट्ठे हैं !"

करणी सिंह को गुस्सा हो आना स्वाभाविक था। मानों ऐसे ही अवसर के लिए पास ही एक लकड़ी का कुन्दा रखा हुआ था। उसने पतवार छोड़ दी और कुन्दे को उठाकर उस नाव के माँझी को लक्ष्य करके फेंक दिया। यदि वह नाव-वाला बड़ी चतुराई से अपनी नाव को मोड़ न लेता तो पानी में न गिर कर वह कुन्दा उसी के सिर से टकराता।

सेठजी ने नवनीत से कहा, "फिरंगी साब ने साथे तमारो पोतानो माथो ओ फिरेलो छे। हमारा माणस के गैरजबान क्यूं बोलता है तमारा लोक ? गुसा हमेरे को भी बूध आवड़े शे।"

लेकिन तब तक मुसलमान माँझी ने बहते हुए कुन्दे को पकड़ लिया था और उसे उठाकर करणीसिंह की ओर फेंकते हुए उसने कहा, "कसिम खुदा की, काफिर को जो जिन्दा दरया-एगोर न कर दूँ।"

करणीसिंह भी बचा गया वार। शर्ली ने भय से आँखें बन्द कर ली थीं। उसे लगा था कि करणीसिंह के सिर की अबकी बार खैर नहीं है।

किट्सन ने सब धुँधली आँखों से देखा। समझा सिर्फ इतना ही कि लड़ाई शुरू हो गई है तो जेब में पिस्तौल पर हाथ रख कर उसने नवनीत से कहा, "मि० नीट, इन लोगों से कह दो कि साहब के पास पिस्तौल है। अगर वे चुपचाप हट न गए तो उन्हें मौत से लिपट जाना होगा।"

नवनीत ने यह बात चिल्लाकर बताई तो किट्सन ने भी पिस्तौल वाला हाथ ऊँचा उठा कर सबको दिखा दिया कि नवनीत की बात में किसी को सन्देह नहीं करना चाहिए।

नवनीत ने कहा, "मि० रॉजर्स, पिस्तौल को जेब में रख लीजिए। सख्त जरूरत के बिना उसे काम में मत लाइए। माँझियों की मूर्खता से बात थोड़ी बढ़ गई है, मैं अभी ठीक किए देता हूँ। क्यों शर्ली? बात बढ़ गई, तो बाहर कैसी हवा बह रही है तुम जानती ही हो। लोग इसे भी कुछ राजनीतिक रंग दे बैठेंगे।"

"येस डीयर। इसकी वजह से हम पहले ही काफी बदनाम हैं।" शर्ली ने किट्सन से कहा।

लेकिन इसी बीच टीकू ने अपनी नाव को उस नाव के पीछे लगा दिया था, और लग्गी से उसे ऐसा धक्का दिया कि वह एक ओर डगमगा उठी। शायद मुसलमान माँझी ने उसे सम्हाल लिया वरना उलटने में कुछ बचा न था। और टीकू कह रहा था, "तो देख लओ मियाँ, गंगा मैया की कबर ओ देख लओ कैस होत है!"

गुजराती सेठ फिर अपनी जगह पर खड़ा हो गया और बोला, "ए दारू-पिएड़ा टामी बच्चा से हमकूँ डराता है? अगर लड़ने का ही इरादा है तो हमसे बोल दे न। लड़ना हमेरे कूँ भी खूब आता है।"

मुसलमान माँझी ने तब तक पीछे से जाकर टीकू की नाव को एक टक्कर मारी। नतीजा बड़ा मजेदार रहा। रंगीन बोतलों से सजी हुई टेबल लुढ़क गई। बोतलें फर्श पर गिरीं तो कुछ फूट गईं, कुछ बह निकलीं। शराब की तेज बू ने

सारे वातावरण को शराबी बना दिया।

मुसलमाग माँझी के मुँह से निकला, "तौबा, तौबा। तुम पर शैतान का कहर नाजिल हो काफिरो !"

किट्सन ने जेब में पिस्तौल रख कर कहा, "मैं किसी की परवाह नहीं करता। ये भारतीय सिर्फ भेड़-बकरियाँ ही तो हैं। वे मरने के लिए, जिबह करने के लिए ही तो होती हैं।" और खुले मुँह की नीचे फर्श पर लुढ़की व्हिस्की की बोतल को उठाकर उसने मुँह से लगा लिया।

दोनों नावें पास आ लगी थीं। नवनीत कूद कर दूसरी नाव पर जा पहुँचा और चिल्ला कर बोला, "क्या तुम लड़ना चाहते हो ? मैं यहाँ का पोस्ट मास्टर हूँ। और तुम नहीं जानते, नाव में बैठे हुए साहब यहाँ के जिला कलेक्टर के पुत्र और मिलिटरी के बड़े अफसर हैं। अपनी मेम साहब के साथ।"

सेठ ने कहा, "कलेक्टर नो बेटो ? लखनऊ माँ जणी गोली चलावी हती ?"

लेकिन जब किट्सन बोतल से मुँह लगाए हुए था, तभी उसको एक जोर का धक्का लगा। करणीसिंह बेतहाशा चला आ रहा था। हाथ जोड़कर बोला, "हुजूर, माफी माँगता हूँ, जल्दी में आप दिखाई नहीं दिए, और मैं टकरा गया।" लेकिन तब तक किट्सन लड़खड़ा कर नीचे गिर पड़ा और फर्श पर पहले से उलटी पड़ी टेबल से टकरा गया। करणीसिंह ने फिर गलती की। ठोकर मार कर उसने टेबल को आगे सरका दिया। अवश्य किट्सन नीचे गिरा, पर पहले टेबल से रुक जाने के कारण उसे अधिक चोट नहीं लगी। शायद शराब के नशे में उसकी मनोवृत्ति भी किसी चोट को महसूस करने में असमर्थ थी।

शर्ली हतमूढ़ हो गई। उसने नवनीत को लक्ष्य करके कहा, "गुड हैवन्स ! नॉट, ये सब मल्लाह आपस में मिले-जुले लगते हैं। इस अपने मल्लाह ने मि० रॉगर्स को नीचे गिरा दिया है।"

करणीसिंह ने कहा, "नहीं मेम साब। मैं तो मास्टर साब की मदद के लिए जा रहा था। जल्दी में सा'ब मेरी ओर मुड़े और मुझसे टकरा गए। सा'ब से ही पूछ लीजिए—"

किट्सन ने कहा, "माइ डार्लिंग, माइ शेरी ! कम क्लोजर। टाइम टू बी इन बेड..."

उधर सेठजी और नवनीत के बीच कुछ फुसफुसाहट हो रही थी, तब तक

मुसलमान माँझी इस नाव पर कूद आया था। उसने आकर करणीसिंह के कान में कहा, "खबरदार करणीसिंह, शर्ली को मेरे लिए छोड़ देना। नवनीत ने चाहे जो कहा हो।"

करणी सिंह ने उससे भी धीमी वाणी में कहा, "रेडियर साहब, यही तो मौका है। टीकमचन्द ने छुरा निकाल दिया है। आप साहब को सम्हालिए, मैं तब तक इस छोकरी को तालाब के हवाले करता हूँ। नाव उलटने का यही मौका······"

रेडियर ने कहा, "तुम निपटो उस सफेद-भैंसे से। शर्ली मेरे लिए है। वह मरेगी नहीं। तुम नहीं जानते, हम एक दूसरे को प्यार करते हैं।"

"लेकिन मुझे तो हुकुम कुछ दूसरा ही मिला है, और उसी जिम्मेदारी से मुझे काम अन्जाम देना है। तुम एक ओर हट जाओ। वक्त बरबाद करने के लिए नहीं है।"

"करणी! तो तुम्हें मुझसे लड़ना होगा। मेरे पास शस्त्र है।"

"शस्त्र मेरे पास भी है। पर तुमसे क्यों लड़ूँगा?" और उसे बचा कर वह शर्ली की ओर बढ़ा। टीकू ने शर्ली को एक ओर सरक कर बैठ जाने के लिए कह दिया था ताकि वह किसी आने-जाने वाले की फैट से बची रहे। वह बहुत भयभीत हो चुकी थी, और शराब के नशे ने उसके मन की गति कुंठित कर दी थी। वह मुसलमान माँझी करणीसिंह से उलझ पड़ा था, और वह नीचे फर्श पर दुबकी बैठी थी। उनकी बातों का कुछ भी अंश उस तक नहीं पहुँचा था।

रेडियर ने करणी सिंह को पकड़ कर बाँहों में जकड़ लिया। करणी सिंह रेडियर से इतने प्रतिरोध की अपेक्षा नहीं करता था, वह नीचे फर्श पर आ गिरा। शर्ली के होश और भी फाख्ता हो गए। उसने कहा, "नीट, हमारा मल्लाह पिट गया।" करणीसिंह का सिर एक फूटी बोतल से टकरा गया। रक्तस्राव के साथ वह भी अचेत हो गया।

रेडियर घबराया, वह नवनीत को इधर नहीं आने देना चाहता था। भय-त्रस्त शर्ली के पास जाकर उसने बहुत धीमे से कहा ताकि टीकू भी न सुन सके, "शर्ली, किसी पर विश्वास मत करो और चुपचाप बैठी रहो। मैं तुम्हारा उद्धार करूँगा! यह एक षड़यंत्र है!"

"षड़यंत्र? सो तो ठीक, पर कौन शत्रु है और कौन है मित्र? यह मुसलमान

माँझी भी माँझी जरूर नहीं है, अँग्रेजी फर्राटे से बोलता है।—"कौन हो तुम ?"

"अभी नहीं। बाद में मालूम हो जाएगा। तुम इसी तरह दुबकी रहो।" और वह टीकू की ओर बढ़ा।

नवनीत ने शर्ली की आवाज सुनली थी, वह लौटा तो उसे न तो शर्ली दिखाई दी, न किट्सन ही, तो उसने समझा, योजना पूरी कर दी गई है। नाव को सम्हाले हुए टीकू उस ओर खड़ा था। रेडियर को उसके पास जाते देख कर बोला, "वेल डन रेडियर।"

रेडियर ने पास आकर कहा, "अभी तो वह सफेद भैंसा पट पड़ा हुआ है न !"

शर्ली ने नवनीत और रेडियर की बातचीत का अंश सुन लिया। उसने चिल्लाकर अंग्रेजी में ही कहा, "यू कावर्ड बूचर। यू हैव्ह प्लेड ट्रेजन विद अस। आइ विश आइ हैडंट डेजिस्टेड किटी फ्रॉम हिज पिस्टल !"

नशे में धुत किट्सन ने कहा, "क्या बात है डीयर ?"

नवनीत ने कहा, "ओह, तो तुम अभी यहीं हो। रेडियर, तुम सम्हालो उसे। मैं देखता हूँ इस लड़की को—"

रेडियर ने कहा, "उसे अभी रहने दो नवनीत। पहले हम इस भैंसे को साफ करते हैं।"

"ना ना, उसे इस तरह अपनी मर्जी का मालिक नहीं छोड़ना चाहिए। वह एकाएक ही नई आफत बन सकती है। यदि तुम्हें जरूरत हुई मेरी, तो मैं अभी निपटा कर आया उसे।"

और वह शर्ली की दिशा में आगे बढ़ा तो रेडियर ने उसे भी करणी सिंह की तरह ही पकड़ लेना चाहा। नवनीत अपने को उसके बाहुपाश से छुड़ाने का प्रयत्न करने लगा।

शर्ली चिल्लाई, "डीयर किटी, फायर प्लीज, फायर ! सेव्ह मी ! हरी अप !"

जिस करवट किट्सन पड़ा था उसी ओर के पॉकेट में पिस्तौल थी। लुढ़की हुई टेबल और बेंच के बीच करवट बदलना सम्भव न था। वह अपने निबिड़ के साथ सुलझने का प्रयत्न करने लगा।

नवनीत ने रेडियर की अभिसन्धि समझ कर उसकी नाक पर एक मुक्का

मारा, और रेडियर वहीं अचेत होकर करणी सिंह के पास ही गिर पड़ा। उसकी आँखों के सामने काले-पीले धब्बे और फिर एकदम अंधकार छा गया।

लेकिन किट्सन ने भी इसी बीच जेब से पिस्तौल निकाल लिया। शराब का नशा तेज तो था, पर सामने आई हुई मौत ने मानों उसके कुहरे को छिन्न कर दिया था। उसने हाथ की अँगुलियों से घोड़े की तलाश की, और जब तक नवनीत शर्ली की ओर लपका तब तक उसने उसमें अपनी तर्जनी फँसाकर शिथिल हाथ को ऊँचा उठाया ताकि वह लक्ष्य साध ले।

एक "क्लिक" की आवाज हुई, और किट्सन का लहूलुहान हाथ नीचे आ झुका। वह अपनी पिस्तौल का घोड़ा नहीं खींच सका। सामने की नाव से गुजराती सेठ अपने पग्गड़ की ओट से इस नाव का सारा व्यापार देख रहा था। चन्द्रालोक में उसने यह भी खूब अच्छी तरह देख लिया कि किस तरह घोर नशे की अवस्था में भी एक अंग्रेज संकट के समय शीघ्र ही चैतन्य लाभ करके अपना कर्तव्य निश्चित कर लेता है। उसने भी अपने लम्बे कोट की जेब से पिस्तौल निकाल लिया और जैसे ही किट्सन का हाथ पिस्तौल चलाने के लिए ऊपर उठा कि उसने अपने पिस्तौल को चला दिया। उधर टीकू भी किट्सन की इस हरकत को बराबर देख रहा था। उसने भी जल्दी की, अपने हाथ के छुरे को उसने किट्सन के उठे हुए हाथ में ताक कर मारा। नवनीत की रक्षा उस सेठ के पिस्तौल ने की या टीकू के छुरे ने, कहना कठिन है।

पिस्तौल की आवाज तो हुई, पर मामूली-सी। उस शांति में दूर वृक्षों पर एकाध पक्षी ने अपने पंख फड़फड़ाए भी, पर शर्ली ने वह भी नहीं सुना। वह नवनीत के वज्रबाहुओं में थी। अपने सीने में सटाकर वह उससे कह रहा था, "किसी दिन तुमसे प्रेम किया हो, मैंने, पर तुमने मेरा मजाक उड़ाया है। आज मैं तुम्हें नफरत करता हूँ। औरत को मारने से मर्दानगी नहीं है, लेकिन तुमसे बदला तो लेना है, और काम भी मेरे सुपुर्द किया गया है, तो मैं तुम्हें कत्ल नहीं करता। तुम्हें जिन्दा पानी की कब्र के हवाले करता हूँ। और उसने उसे ऊपर उठाया। चन्द्रमा के उस निराच्छन्न प्रभूत प्रकाश में शर्ली भय से काँपकर अचेत-प्राय: हो गई। नवनीत ने जब एक झटके के साथ उसे लहरों की भेंट कर दिया तो उसे कुछ भी होश न था।

रेडियर को तब तक चेत हो चुका था। करणी सिंह भी होश में आकर नवनीत की ओर देख रहा था। करणी सिंह ने देखा कि रेडियर लेटे-लेटे ही नवनीत की ओर चुपके से बढ़ रहा है, अवश्य उसका इराद अच्छा नहीं है। करणी सिंह ने भी उसी तरह आगे बढ़कर उसे थाम लिया। रेडियर ने देर न की। उसके हाथ में छुरा था। उसने करणी सिंह के ऊपर वार कर दिया। करणी सिंह के मुँह से एक चीख निकली, किन्तु तब तक शर्ली तालाब की भेंट हो चुकी थी। नवनीत करणी सिंह की ओर मुड़ा। उधर आहत किट्सन ने कुछ हरकत की तो टीकू ने उस ओर ध्यान दिया। रेडियर ने अवसर देखा तो धीरे से उठा, और झुके-झुके ही नाव के किनारे तक बढ़ आकर वह एकदम पानी में कूद पड़ा। एक हल्की-सी छपाक की आवाज हुई, सो लहरों की अन्य कई ध्वनियों में सहसा ही विलीन हो गई। रेडियर की ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया।

आहत किट्सन चिल्लाना चाहता था। उसकी पिस्तौल घायल हाथ से नीचे छूटकर गिर पड़ी थी, जिसे टीकू ने उठा लिया था। चिल्लाकर कोई नई विपत्ति न खड़ी करदे इसलिए टीकू उसकी छाती पर चढ़ बैठा और उसका गला भींचने लगा। किट्सन का नशा तो हिरन हो ही चुका था। खतरे को भी अब वह साफ देख रहा था। डरपोक वह नहीं था। संकट के समय हर बहादुर के बदन में दूनी शक्ति आ जाती है। उसने अपना बाँया हाथ फैलाया, शराब की एक बन्द बोतल उसके हाथ पड़ गई। उसने पूरी ताकत लगा कर वह बोतल टीकू के माथे पर दे मारी। बोतल फूट गई, उसकी गैस से टीकू का मुँह झुलस गया मस्तक से रक्त भी बह निकला। किट्सन का गला छूट गया।

गुजराती सेठ का ध्यान नवनीत की ओर था जो अचेत करणी सिंह को सम्हाल रहा था, किन्तु बोतल की आवाज से उसने टीकू की ओर देखा। टीकू के हाथ में किट्सन की पिस्तौल तो थी लेकिन बोतल के आघात से टीकू मानों अचेत-सा होता जा रहा था और उधर किट्सन उसी टूटी बोतल से उस पर एक और प्रहार करना चाहा रह था, ताकि उससे पिस्तौल छीन कर मैदान सर करने की कोशिश करे। सेठ ने देर न की। एक और पहले जैसी "क्लिक" की आवाज के साथ किट्सन वहीं ढेर हो गया। टीकू भी उसके साथ ही उस से लिपटा हुआ लुढ़क गया। सेठ का निशाने का ज्ञान अद्भुत था। दोनों अवसरों पर जरा-सी देरी से या जरा से लक्ष्य के चूक जाने से किसकी जगह कौन मारा

जा सकता था। बस तत्काल गुजराती सेठ भी इस नाव पर कूदा। टीकू को उठा कर उसके घाव को कपड़े से दबाते हुए नवनीत से पूछा, "करणी सिंह को क्या हुआ है ?"

"उसके सीने में छुरा भौंक दिया गया है। साँस भी नहीं चल रही है।"

"छुरा ? रेडियर कहाँ है ?"

"उसीने तो किया है, पर है कहाँ वह ?"

"उस नाव पर नहीं है ?" रेडियर उसने पुकारा, और फिर साथ ही कहा, वह लड़की भी तो एक बार भी ऊपर नहीं आई।"

"लड़की तो खैर, तालाब में मगर भी कुछ कम नहीं हैं। पर रेडियर कहीं बेहोश तो नहीं है ?"

"यहीं तो पड़ा था। उसका प्रतिरोध समझ में नहीं आया अधर भैया। यदि नाक पर मैं आघात करके उसे काबू में नहीं करता तो सारी योजना मिट्टी में मिल जाती, और हम लोग कहीं के नहीं रहते।"

रेडियर की खोज हुई। वह कहीं नहीं मिला। अधर लाल ने कहा, "मुझे पहले ही कुछ-कुछ सन्देह तो था। मालूम देता है, शर्ली का मोह वह नहीं छोड़ सका और उसके साथ ही तालाब में कूद पड़ा, हम सबकी दृष्टि बचा कर।"

"लेकिन तुम्हीं तो कह रहे थे, यह निश्चित आत्महत्या है। तालाब में गिर कर कोई बच नहीं सकता।" तब तक टीकू को भी चेत होता जा रहा था।

"कहीं अपने व्यर्थ के प्रयास पर उसे ग्लानि तो नहीं हो आई ? अगर वह मगरमच्छ का आहार न हुआ तो ?"

"तैर कर बच भी सकता है, पर तैरना जानता है क्या वह ?"

"यह तो तुम्हीं को मालूम होगा। तुम्हारे दल का ही तो व्यक्ति था न।"

"पर यहाँ की शाखा का नहीं था। टीकू, क्या तैर कर कोई निकल आ सकता है इस तालाब से ?"

"मुमकिन तो नहीं है भैया, पर होने को क्या नहीं हो सकता है ? तालाब में लहरें भी इतनी ऊँची हो गई हैं, कि इस चाँदनी रात के धुँधलके में कुछ दूर आगे साफ दिखाई भी तो नहीं पड़ता।"

नवनीत ने कहा, "वह उधर कुछ काला-काला सा दिखाई देता है न। वह क्या है ?"

टीकू ने कहा, "वैसा तो वह उधर भी है, और उधर देखो, उधर वैसी तीन चार चीजें दिखाई दे रही हैं। नहीं अधर भैया, अगर वह तालाब में कूद पड़ा है तो मरने के लिए ही। बच निकलना बड़े सौभाग्य ही की बात होगी। पर हम उसकी ओर से अभी फिलहाल तो निश्चिन्त हो सकते हैं। तब तक हमें जल्दी में सब काम निपटा लेना है।"

"हाँ, यह बात तो ठीक है। आखिर गोलियाँ चली हैं, कहीं किसी ने आवाज भी सुनी हो सकती है, अगर कहीं कोई आ मौजूद हुआ तो कठिनाई बढ़ जाएगी।"

"करणी सिंह की लाश भी पानी के हवाले कर दी जाएगी ?" नवनीत ने पूछा।

"चारा ही क्या है ? मगरमच्छ तो तृप्त होंगे और हमारे विरूद्ध गवाही भी नहीं रहने देंगे।" अधर लाल ने कहा।

"मगर उसके घर पर तो खबर किसी तरह पहुँचानी होगी।" नवनीत ने कहा।

"क्या जरूरत है नवनीत बाबू ? उसके घर केवल एक अंधी और बहरी दादी है, जो उसे न देख कर पहचान सकती है न सुन कर। व्यवस्था उसकी कुछ हो ही जाएगी। यह दल का दायित्व है।"

टीकू ने कहा, "अब मैं पूरी तरह ठीक हो गया हूँ भैया। चलो, इन लाशों को ठीक-ठिकाने कर दिया जाए।"

नवनीत और अधर लाल ने मिल कर किट्सन की भारी लाश को उठाया, और उसे उन्हीं कपड़ों में पानी में धीरे से छोड़ दिया। बहते हुए रक्त की गंध से देखते ही देखते बड़े-बड़े मगर और मच्छों में छीना-झपटी हो गई। करणी-सिंह की लाश के साथ भी वही व्यवहार दुहराया गया। टीकू की आँखों में आँसू आगए। पर रोने के लिए समय नहीं था। जल-जन्तुओं के भीषण आक्रमण से सब को विश्वास हो चला कि शर्ली और रेडियर के शरीरों के भी इसी तरह कभी के चिथड़े होकर इनके उदर में समा गए होंगे।

एक गहरी साँस लेकर नाव की सब वस्तुओं को एक-एक कर तालाब की भेंट किया जाने लगा। नाव के फर्श को रगड़-रगड़ कर रक्त के दाग धो डाले

गए ताकि पता लगा कर निकालने पर भी किसी खून का प्रमाण न मिले। फिर तीनों व्यक्ति कूद कर बाद में आई हुई नाव पर चढ़ गए। इसी बीच दोनों नावों को टीकू ने न जाने कब एक रस्सी से बाँध दिया था, वह रस्सी खोल डाली गई। टीकू ने लग्गी की सहायता से अपनी नाव को इस तरह झुकाया कि वह टेढ़ी हो गई और उसमें पानी भरने लगा, और कुछ ही क्षणों में वह पूरी पानी से भर कर जलगर्भ में अन्तर्ध्यान हो गई।

चन्द्रमा का मार्ग तै हो चुका था, और पूर्वाकाश में सफेदी फैलने लगी थी। एक घने जंगल में जब इनकी नाव किनारे पर लगी तो प्रभात पवन ने उषा का संदेशा चारों ओर प्रसारित कर दिया था। पहले तो तीनों ने अपने वस्त्रों को धो-पोंछ कर रक्त के दाग छुड़ाए। उसके बाद जहाँ-तहाँ से नोच-नाच कर उन्हें कीचड़-मिट्टी में लोथ लिया गया ताकि जरूरत पड़ने पर कोई कहानी गढ़ी जा सके। किन्तु घर पहुँचने तक ऐसी कहानी की जरूरत नहीं पड़ी।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही सारे मानपुर में खबर फैल गई कि रात्रि को वरुण देवता का अपमान करने वाले वारुणि-भक्त एक आंग्ल-दंपति की नौका को भगवान के मत्स्यावतार ने जलमग्न कर दिया, और उन अभिमानी नास्तिकों को अपने उदर में समाधि दे दी। निषाद राज टीकू और पोस्ट मास्टर नवनीत लाल भी पकड़ लिए गए थे, पर प्रार्थनाओं और मिन्नतों से उन्हें छोड़ दिया गया। भगवान की कराल दाढ़ों के चिह्न उनके शरीर पर अब भी मौजूद हैं और देखे जा सकते हैं। दुष्ट की संगति का फल तो मिलता ही है न।"

तार तो था नहीं, पर एक खास हरकारा पास के तार ऑफिस तक दौड़ाकर नवनीत ने लखनऊ एक तार भिजवा दिया। उसके साथ ही एक अत्यन्त आवश्यक रिपोर्ट भी उसी दिन प्रधान कार्यालय में प्रेषित करदी गई। किस तरह नौका-विहार के समय आपानकों की सत्क्रिया के बाद दम्पति को मगर का शिकार करने की सूझी, किस तरह चारा डालकर मगर को फुसलाया गया, और फिर उस पर एक नहीं, दो-दो फायर किए गए। फायर की आवाज दूर बस्ती तक पहुँची इसका भी प्रमाण है। किन्तु फायर का नतीजा उल्टा ही हुआ। किस तरह मगर मरे तो नहीं, किन्तु क्रुद्ध होकर नाव पर टूट पड़े। किस तरह टीकमचन्द ने तीन-तीन बार नाव बचाई, किस तरह आखिरी बार घबराकर उनसे बचने के लिए सब आरोही नाव में एक ओर हुए कि संतुलन खोकर नाव उलट गई। किस

तरह रात भर अपने प्राणों की चिन्ता छोड़कर श्रीमान और श्रीमती रॉगर्स की खोज की गई, किस तरह इसी प्रयत्न में उनका एक मल्लाह फिर एक मगर की भेंट हो गया, किस तरह स्वयं नवनीत लाल एक मगर की लपेट में आते-आते बचे, किस तरह दूसरा मल्लाह टीकमचन्द शराब की बोतल से टकराकर अपना मस्तक आहत कर बैठा—सबकी विवरण में बड़ी विस्तृत, खुलामावार और सकारण चर्चा थी कि सरकार ने आगे जाँच करने की भी कोई आवश्यकता नहीं समझी। शायद जाँच न करने के राजनैतिक कारण भी रहे होंगे।

रिपोर्ट काफी दिलचस्प थी, घटना उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण थी। रेडियो, अखबार आदि से सारा देश, बल्कि विलायत का एक भाग भी सारी घटना से वाकिफ हो गया।

सुरेश नारायण ने सभा की ओर दृष्टि डाली। सभी सदस्य मंत्रमुग्ध से घटना का विवरण सुन रहे थे। सभी के मुख-मंडल पर हर्ष और विषाद, उत्साह और निराशा, एक साथ रह-रहकर आ जा रहे थे। जिन लोगों का विचार हो रहा है, उन्होंने अवश्य बहुत बड़ा काम भी किया है, और साथ ही फिर ऐसे काम में भी वे प्रवृत्त हो गए हैं कि उनकी सारी प्रतिष्ठा एकाएक ही नष्ट हो गई है। डॉ० रेडियर स्वयं प्रायश्चित स्वरूप आत्महत्या कर चुका है, यह उसके गौरव के अनुकूल ही हुआ है। और अब यह दूसरा अभियुक्त नवनीत लाल ? सबने उसकी ओर देखा।

पानी में मंजरी की दी हुई दवा पीकर नवनीत अपने आपको काफी स्वस्थ महसूस कर रहा था। उसके झनझनाते पैर स्थिर मालूम दे रहे थे। सुरेश नारायण ने सदस्यों को क्या-क्या कहा वह बराबर सुन रहा था यद्यपि वह अपने आप में खोया हुआ भी था। आँखें मसल कर उसने सामने देखा, किसी सदस्य के प्रश्न के उत्तर में सुरेश नारायण कह रहे थे।

"यद्यपि समझा यही गया था कि किट्सन की हत्या से ही सारा मामला निपट गया है, और यह भी मान लिया गया था कि शर्ली और डॉ० रेडियर तालाब के मगरमच्छ का शिकार हो गए, किन्तु काफी दिनों बाद जाकर मालूम हुआ कि यह धारणा गलत है। रेडियर बहुत ही बढ़िया किस्म का तैराक निकला। उसने पानी में डूबती हुई अचेत शर्ली को खोज निकाला, और सबकी नजर

बचाकर वह उसे तालाब के बाहर निकाल ले गया। कई दिनों तक क्यों वे चुप रहे, इसका कारण शायद यही दिखाई देता है कि वे राजनैतिक स्थिति का अध्ययन कर रहे थे। या शायद उन्हें यही सलाह दी गई हो कि अंग्रेजों के प्रति तत्कालीन-भारतीय-मानस को ध्यान में रख कर भी कुछ ठहर जाना अच्छा है। कारण जो भी कुछ हो, काफी समय बाद वे न्यायाधिकरण के निकट प्रस्तुत हुए, और अधर लाल तथा टीकमचन्द गिरफ्तार कर लिए गए। प्रमुख गवाह के तौर पर नवनीत लाल को सुरक्षित रक्खा गया, और इनकी मुखबिरी की वजह से अधरलाल और टीकमचन्द को प्राणदण्ड सहना पड़ा। आप लोगों को बताया जा चुका है कि उस समय नवनीत लाल की प्राणरक्षा भी अधरलाल और टीकमचन्द ने ही की थी, वरना वे उन अंग्रेजों के हाथों निश्चय ही मारे जाते। उनकी सेवाओं का बदला नवनीत लाल ने अपने विश्वासघात से दिया है।"

निकल्सन ने कहा, "ऐसे खतरनाक आदमी को पकड़ लाने की कामयाबी के लिए मिस मंजरी देवी को बहुत-बहुत कान्ग्रेचुलेशन्स दिए जाने चाहिए। जरूर ऐसे खतरनाक आदमी को मौत की सजा के सिवा और दिया ही क्या जा सकता है। यह तो हमारी पार्टी के एग्जिस्टन्स को ही खतरा है। लेकिन मुलजिम शायद कुछ कहना चाहे तो उसे मौका दिया जाना चाहिए। मुमकिन है कामरेड रेडियर की तरह वह भी अपने लिए खुद मौत की सौगात माँग ले—जरूर वह उसके लिए सौगात ही होगी।"

"मंजरी देवी ?" नवनीत ने देखा कि मंजरी के नामोल्लेख के साथ ही उनकी पूर्व परिचित मार्गरेट ने अपनी दृष्टि नीची करली है। तो क्या वह मार्गरेट न होकर मंजरी देवी है ? मंजरी हो या मार्गरेट, उन्हें क्या ? उनकी दृष्टि निकल्सन की ओर गई, पर इस बार उस दृष्टि में निरीहता नहीं, बल्कि एक आग थी, जिसे निकल्सन ने ही नहीं, अन्य कई सदस्यों ने भी अनुभव किया।

सुरेश नारायण ने कहा, सारी सभा तुम्हारा वक्तव्य सुनने को उत्सुक है, नवनीत लाल।"

नवनीत लाल इस बार दृढ़ पदों से खड़ा हुआ। उड़ती हुई दृष्टि उसने अँधेरे गवाक्ष की ओर डाली। फिर सुरेश नारायण को लक्ष्य करके उसने कहा, 'यद्यपि आपकी इस अदालत के अधिकार क्षेत्र को चुनौती दी जा सकती है, पर मैं वह दायित्व आपकी ही न्याय-निष्ठा पर छोड़ता हूँ। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं

समझता हूँ, इस सभा के प्रति मेरी कोई जिम्मेदारी नहीं है। अधरलाल और टीकमचन्द आपकी सभा के सदस्य हो सकते हैं, उससे मुझे क्या ? आप शायद जानते हैं, अधरलाल मेरे हाथ नीचे पोस्टमैन थे, और इसके अतिरिक्त यदि हमारे बीच किसी और तरह का सम्बन्ध रहा हो तो वह हमारी व्यक्तिगत वस्तु थी। यही बात टीकमचन्द के बारे में भी कही जा सकती है। मैं यह जानना चाहूँगा कि आपको या आपकी इस सभा को मेरे कर्तव्याकर्तव्य का विचार करने का क्या अधिकार है ?"

सुरेश नारायण ने मुस्कराकर कहा, "कुछ अधिकार, नवनीत लाल ऐसे होते हैं जो मनुष्य को जन्म से मिलते हैं, और कुछ ऐसे हैं जो स्वभावत: सहज ही उसे मिलने चाहिएँ पर मिलते नहीं, वे उससे किसी अधिक सबल शक्ति द्वारा छीन लिए जाते हैं। कुछ को वह स्वेच्छा से किसी सुविधा से बदल भी लेता है। आप तो इतिहास के अच्छे विद्यार्थी रहे हैं, आपको तो यह जानना चाहिए कि इन अधिकारों की छीना-झपटी से ही इतिहास बनता है। यह सभा भी कुछ अधिकार, मसलन तुम्हारे बारे में विचार करने का अधिकार समाज से या सर-कार से जबर्दस्ती हथियाकर एक नए इतिहास की रचना करना चाहती है। और छीने हुए अधिकार की रक्षा के साधन हमारे पास हैं, आशा है, यह तुम जानते हो।"

नवनीत ने उस स्थान की ओर देखा जहाँ कल रेडियर ने आत्महत्या करली थी, और कहा, "यदि पिस्तौल की शक्ति के ऊपर ही आप लोगों को गर्व है तो फिर यह नाटक किसलिए किया जा रहा है ?"

"यह नाटक नहीं नवनीत लाल, यह एक वास्तविकता है, और तुम इसे नहीं समझते, यह मैं नहीं मान सकता। अंग्रेजों की दासता का अभिशाप तुमने कम नहीं सहा है और स्वतंत्रता के अपने प्राकृत अधिकार के लिए उनसे जूझने में भी तुमने कम साहस नहीं दिखाया है। लेकिन यहाँ अभी तुमने मनुष्यता के साथ अन्याय किया है। अधर लाल और टीकमचन्द को मृत्यु के मुँह में झोंकने वाले तुम हो। देश तुम्हें इसके लिए कभी क्षमा नहीं कर सकता जब तक कि तुम अपने कार्य की उचित कैफियत नहीं दे लेते।"

नवनीत ने स्पष्ट ही लक्ष्य किया कि कैसे वह 'आप' से अचानक ही 'तुम' हो गया। अभियुक्त जो है वह। और सुरेश नारायण ? मालूम देता है, नवनीत

के प्रति उसके मन में कुछ गाँठ है। नवनीत ने उसकी चिन्ता नहीं की और कहा, "मालूम नहीं आपकी मनुष्यता का विधान क्या है और आपकी संकीर्ण राष्ट्रीयता के दायरे में क्या न्याय है और क्या अन्याय है। किन्तु यह आपको मालूम ही होगा कि अधर लाल और टीकमचन्द को मृत्यु-मुँह में पहुँचानेवाला मैं नहीं, उनके कृत्य हैं। मैंने तो प्रचलित न्याय की रक्षा के लिए उन्हें राज्याश्रय के सुपुर्द मात्र करने में सहायता दी है, वह भी खासकर इसलिए कि उनके किए हुए कृत्य का फल मुझे न भोगना पड़े"—नवनीत ने देखा कि उसकी बातों का कुछ प्रभाव पड़ रहा है, तो वह कुछ तन कर खड़ा होगया और बोला, "यदि आप विचारक का अभिनय करना चाहते हैं महाशय, तो यह जानने का प्रयत्न कीजिए कि किट्सन की हत्या करनेवाले अधर लाल और टीकमचन्द थे, नवनीत नहीं। और यदि आप यह जानते हैं तो यह न्याय विधान की किसी गहरी अभिज्ञता की बात नहीं कि हत्या करनेवाले केग ले फूलमाला से नहीं, बल्कि मौत के फन्दे से ही सुशोभित किए जाते हैं।"

सुरेश नारायण जरा अप्रतिभ हुआ मालूम दिया। सारी सभा कान खड़े किए नवनीत की ओर देख रही थी। मंजरी की आँखों में उत्साह चमकने लगा था। आरती के हृदय की धड़कन बढ़ती जा रही थी, और नीलम के ओठ रह रहकर फड़कने लग गए थे।

सुरेश नारायण ने मानो अंतिम शक्ति लगाकर कहा, "मि० नवनीत लाल, यह मैं पहले बता चुका हूँ कि जब किट्सन तुम्हारे प्राणों का खेल निपटाने के लिए गोली चलाने वाला ही था तब तुम्हारी प्राणरक्षा के लिए ही अधर लाल और टीकमचन्द ने किट्सन की हत्या का सूत्रपात किया था। इन दोनों से ही तुम्हें प्राणदान मिला है, यह क्यों भूल जाते हो?"

व्यंग्य को कुछ और तीखा करते हुए नवनीत ने कहा, 'उसे मैं कहाँ अस्वीकार करता हूँ माइ लॉर्ड? लेकिन प्राण देने वाले को प्राण लेने का अधिकार भी मिल जाता है क्या? आप तो न्याय की मूर्ति हैं। खैर, आपका शायद यही तो मतलब है कि प्राणरक्षा करने के कारण, प्राणदान के लिए नहीं महाशय, केवल प्राण-रक्षा के कारण मुझे अधर लाल और टीकमचन्द का कृतज्ञ होना चाहिए था। कृतज्ञता को मैं भी मनुष्यता का एक अच्छा गुण समझता हूँ, किन्तु मेरी दृष्टि से उससे भी उत्तम गुण है, सत्य की रक्षा का उद्देश्य। यदि सत्य की रक्षा और

प्रतिष्ठा है, और जहाँ तक मेरी छोटी-सी बुद्धि की दौड़ है, मैं समझता हूँ कृतज्ञता-ज्ञापन से उसका उतना सम्बन्ध नहीं है जितना सत्य की प्रतिष्ठा से, तो माई लॉर्ड, मैंने सत्य की प्रतिष्ठा का पाप किया है। अवश्य मैं कृतज्ञता का ऋणि नहीं बन सका। आपके पास अधिकार है, चाहे वह पिस्तौल के बल पर जबरन छीना हुआ ही क्यों न हो। उसी अधिकार और पिस्तौल से मेरे पाप का आप प्रतिविधान कर सकते हैं। किसी के सामने यहाँ मेरी तरह आपको जवाब देने की जरूरत नहीं होगी।" और नवनीत ने मानो थककर अपनी आँखें बन्द करलीं।

नवनीत की वाक्चातुरी और प्रतिभा से सुरेश नारायण अप्रतिभ होगए, उन्हें तत्काल कोई उत्तर नहीं सूझ पड़ा। उन्होंने गवाक्ष की ओर देखा, किन्तु उधर भी अँधकार के सिवा उन्हें कुछ नहीं दिखाई दिया। स्तब्ध सभा की ओर जब उनकी विवश दृष्टि पड़ी तो उन्होंने देखा कि नीलम अपने आसन पर चंचल हो उठी है। डूबते हुए सुरेशनारायण ने मानों तिनका पा लिया, बोले "आप कुछ कहना चाहती हैं नीलम देवी ?"

"यदि आप आज्ञा दें।" और वह खड़ी हो गई।

"कहिए आप जो कुछ कहना चाहें, किन्तु वह इस मामले से सम्बन्धित ही हो।"

"अभियुक्त पर अभियोग ठीक तरह से नहीं आरोपित किए गए हैं। मेरे भी कुछ प्रश्न हैं उन पर। यदि आप आज्ञा दें तो मैं उन्हें प्रमाणित करूँ।"

"अच्छा, आप अपनी बात कह सकती हैं।" और सुरेश नारायण अपने आसन पर बैठ गए।

धड़कते हृदय पास बैठी आरती ने हाथ पकड़ कर नीलम को विरत करने की चेष्टा की, किन्तु नीलम ने उसे झटक दिया और अपने अत्यन्त गौर-मुख पर भवें नचाते हुए नवनीत की ओर देख कर उसने कहा, "महाशय, आशा है आप अस्वीकार न करेंगे कि आप मुझे जानते हैं !

नवनीत ने दृष्टि संयम करके नीलम की ओर देखा, उन नीली आँखों में प्रतिहिंसा की जो बिजली खेल रही थी, वह निश्चय ही भारतीय नहीं थी। नवनीत ने पहले कभी इस आग का परिचय नहीं पाया था। एक क्षण पहले जो आशा विजय के शिखर पर चढ़ चली थी, वह एकाएक ही मानों नीचे गिर पड़ी, किन्तु मुँह के भाव को जबरन उसने पूर्ववत बनाए रखा और कहा, "माइ लॉर्ड क्या

इस सभा का प्रत्येक व्यक्ति विचारक का नाटक खेलेगा ? जहाँ तक मेरा किसी अराजक या आतंक दल का ज्ञान है, ऐसे नाटक की बात मैंने नहीं सुनी। पिस्तौल के शासन में नाटक खेलना, या नाटक के शासन में पिस्तौल से खेलना—पता नहीं आपकी सभा किस भानमती का पिटारा है ?"

जवाब नीलम ने ही दिया, "डर गए इतने शीघ्र। नाटक कह कर उड़ा देने से बात उड़ नहीं जाती मि० नवनीत लाल। नाटक यह सभा नहीं, आप खेल रहे हैं, और वही मैं प्रमाणित करने जा रही हूँ। आप चाहे सुनें, चाहे न सुनें, जवाब दें, चाहे न दें। यह सभा आपके निकट नहीं, इन सदस्यों के प्रति उत्तरदायी है और उन्हीं के निकट औचित्य सिद्ध करने के लिए यह कार्यवाही की जा रही है, चाहे आप इसे नाटक ही क्यों न माने। यदि आप अभियोगों का उत्तर न देंगें तो वे सहज ही प्रमाणित मान लिए जाएंगे। मैं माननीय सदस्यों से ही पूछती हूँ कि क्या वे मुझे इन अभियोगों को व्यक्त करने की आज्ञा देते हैं ?"

लगभग सभी सदस्यों ने कहा, "आपको यह अधिकार यह सभा देती है। आप सब बातें शुरू से हीं बताती चलें।"

विजय-गर्व से नीलम ने चारों ओर देखा फिर एक दृष्टि नवनीत की ओर प्रक्षिप्त करके उसने कहना प्रारम्भ किया, "मि० नवनीत लाल को आप मानपुर कस्बे के केवल एक ब्रांच पोस्ट मास्टर के रूप में ही जानते हैं। उससे आगे अब आप यह भी जान गए हैं कि माननीय अधरलाल और टीकमचन्द की अपमृत्यु का कारण भी ये ही हैं। मैं आपको इनके इतिहास में कुछ और गहरे ले जाना चाहती हूँ। आपने अभी अध्यक्ष महोदय को कहते सुना है कि नवनीत लाल इतिहास के बड़े अच्छे विद्यार्थी रह चुके हैं। सचमुच ये कॉलेज जीवन के एक मेधावी छात्र थे, और इनका छात्र-जीवन बड़ा ही रंगीन-रससिक्त रहा है जिसमें उड़ाया गया पैसा आपके माँ-बाप की गाढ़ी कमाई का नहीं, किन्तु आपकी पत्नी के माँ-बाप की गाढ़ी कमाई का रहा है—"

निकल्सन ने पूछा, "इनके पिता क्या करते थे ? उनके बारे में भी कुछ बताइए न मैडम।"

एक दूसरे सदस्य ने, जो सम्भवतः मानपुर शाखा का ही सदस्य था, कहा, "अच्छा नवनीत लाल जी विवाहित भी हैं ? पर मानपुर में तो कभी इन्हें इनकी गृहस्थी के साथ रहते देखा नहीं।"

नीलम ने कहा, "कहाँ से देखा होगा, क्योंकि चार-पाँच वर्ष तक अपनी पत्नी को विवाह के कैद-खाने में बन्द रख कर तथा अपनी उदासीनता और अवहेलना से माँ की एकमात्र आशा उसकी कन्या की मृत्यु का कारण बनकर भी ये उस पर दयालु नहीं हो सके। उसके पिता के पैसे से अपने पैरों पर खड़े होने की योग्यता के लिए कृतज्ञ होने के मार्ग में शायद उस समय भी सत्य की प्रतिष्ठा का कोई प्रश्न आ गया हो तो वे ही बता सकेंगे। आप शायद यह न समझ बैठें कि उनकी पत्नी कुरूप या अशिक्षिता रही होगी। जहाँ तक विदित हुआ है, उसका काफी पढ़ी-लिखी और औसत से अधिक सुन्दर होने का ही प्रमाण मिला है।"

नवनीत ने तिलमिला कर कहा, "आपने दो आँखों देखा भी है मेरी पत्नी को ?"

इस विचित्र प्रश्न से, जिसके कई अर्थ हो सकते हैं, कई सदस्य हँस दिए। नीलम के मुँह पर भी मुस्कराहट फैल गई, किन्तु उसने कहा, "खैर, आपने यह तो स्वीकार किया कि आपको कभी एक पत्नी तो प्राप्त थी। हरनाम को यदि गवाह के रूप में पेश किया जाए तब भी क्या आप मेरी बात नहीं मानेंगे ? दुर्भाग्य है कि आपकी पत्नी को अभी तक देख नहीं सकी। भारतवर्ष में नारी की इतनी अधिक भर्त्सना होती है कि उससे अधिक परिचय न होना भी एक सौभाग्य ही है। अभागिनी नारी, मैं ही क्यों, शायद आप भी नहीं जानते कि अपने अभिमान का बोझ और अपमान का दंड सहती हुई वह आज जीवित भी है या नहीं। कहिए, जानते हैं ?"

नवनीत का मानों पका हुआ घाव किसी ने छू दिया, और सदस्यों की घृणा से भरी दृष्टि उस घाव को गहरे तक कुरेद गई। क्या उत्तर देते वे ? सचमुच कहाँ है वह आज ? अगर उस संध्या को माया केवल अपने निष्फल अभिमान का बोझ लिए उसके घर से चली न जाती तो क्या उन्हें ये सब दिन देखने पड़ते ? क्या यह उसी महिमावती देवी के प्रत्याख्यान का फल नहीं था कि वे पुनः शर्ली के उपसर्ग में फँस गए ? और तब रेगिस्तान में कितनी मरीचिकाएं नहीं उन्हें अपने में भटकाती-उलझाती रहीं ? आरती, नीलम मन्जरी—ओह, सिर घूम जाता है, आँखें झुक जाती हैं, मन स्तब्ध हो जाता है। जरूर उन्होंने पढ़ा था कि पुरुष प्रकृति से ही बहु-स्त्री-गामी होता है, किन्तु प्रकृति से तो वह पशु होता है, केवल पशु, जिसे आहार, निद्रा, भय और मैथुन के सिवा और किसी से

सम्बन्ध नहीं है। सहस्राब्दियों से जो वह संघर्ष करता हुआ मनुष्यता की सीढ़ियाँ चढ़ता चला जा रहा है, वह क्या कुछ नहीं है? डार्विन-फ्रायड—कैसे सस्ती ढालें बन गई हैं मनुष्य की? और उन्हीं के बल पर वह पशुता तथा वहशीपन के कौन से खेल नहीं खेल लेना चाहता? यह नारी नीलम, जिसमें भारत और फ्रांस का रक्त मिला हुआ है, दूसरी जोन ऑफ आर्क बनने जा रही है। कहाँ से मिल गया उसे नवनीत का इतिहास? हरनाम का उल्लेख वह कर चुकी है। उसे ले आया गया है क्या यहाँ? उसका इतिहास—उसका भी कोई इतिहास है क्या? वह तो केवल इतिहास का एक विद्यार्थी मात्र रहा है। उसने भी कोई इतिहास निर्माण किया है? उसका इतिहास जिसे वह भुलाता जा रहा है, पर भुला नहीं सका है, वही तो नीलम बता रही है। उसका इतिहास—

४ मायावती

साढ़े पाँच बज रहे थे जब नवनीत दफ्तर से लौटा और सीधा अपने कमरे में चला। गरमी के दिनों में काफी दिन रहते ही पाँच बज जाते हैं। घर आते-आते आध घंटा लग ही जाता है। आज उसके मन में बड़ी उत्फुल्लता मालूम दे रही है, ओठों को सिकोड़कर वह एक सिनेमा की धुन बजा रहा है। टाई उसने जीना चढ़ते-चढ़ते ही खोल ली थी। उसे खूँटी पर टाँगकर उसने कोट उतारा तथा सामने पलंग पर वैसे ही पटक दिया, उसी तरह पैंट भी उतार कर उसने पटक दी। हरनाम आकर सबको तरतीब से रख देगा। उसी तरह सीटी बजाते हुए वह पास के बाथ-रूम में घुस गया।

नहाने-धोने, कपड़े बदलने और चाय पीने में घंटा-पौन घंटा लग ही जाएगा, आधा घंटा रास्ते में समझ लो। साढ़े सात तक तो वह पहुँच ही जाएगा। मि० ज्याफ्री सवेरे से ही दौरे पर चले गए हैं, एक सप्ताह तक बाहर ही रहेंगे। मिसेज़ ज्याफ्री भी साथ गई हैं। आज शर्ली से सब बात कर लेनी होगी। यों भी जब वह जाता है, शर्ली उसकी राह देखती हुई ही मिलती है। और सब तो ठीक है, मगर घमंड उसे बहुत जरूर है। अंग्रेज अफसर की लड़की ठहरी। माँ चाहे एंग्लो इंडियन हो, पर इंगलिश खून तो है ही उसमें। इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि नवनीत को वह दिल से प्यार करती है। जेम्स से प्यार करती होती तो लाइब्रेरी में बाद में वह नवनीत का पक्ष न लेती। कॉलेज में जेम्स जैसे और भी कई उसके दोस्त हो सकते हैं। लेकिन जेम्स तो उसी दिन राह से अलग हट गया था। पता नहीं लखनऊ में भी है या नहीं। पूछेगा आज शर्ली से।

शॉवर के नीचे बैठे उसे कितनी देर हो गई, ध्यान ही नहीं रहा। किन्तु

हाथ और पैरों पर अभी भी साबुन लगा हुआ है। जबसे नीचे बैठा, तब से हिला भी तो नहीं वह। उसने मुँह फिराया, हाँ अब ठीक है, फव्वारे का पानी सारे बदन पर गिर रहा है। कल मिस्त्री को बुलाकर फव्वारे को भीतर से भी साफ करवाना चाहिए, उसके कुछ छेद बन्द हो गए मालूम देते हैं।

अब यही काम ले लो। पत्नी यदि इन छोटी-छोटी बातों को भी न देखे तो पत्नी ही क्या हुई। शर्ली इन बातों को देखेगी क्या ? पति के लिए न हो, पर अपने लिए तो जरूर उसकी दृष्टि इन बातों पर आएगी ही। और घर तो दोनों के लिए होता है, बल्कि पत्नी ही के लिए तो घर होता है, तभी तो उसे गृहिणी कहते हैं। और एक उसकी पत्नी है कि गए दो माह से मुँह से बोलती तक नहीं, पढ़ी-लिखी, सुन्दर, सब कुछ हो मगर क्या ? मन का मेल न हो तो तन के मेल से ही क्या हो जाता है। मन का मेल, नवनीत हँस दिया चौदह वर्ष की उम्र में ही उसका विवाह हो गया था। यह तब जानता ही कौन था कि मन भी कोई चीज होती है, और उसके मिलने की भी समस्या कभी आ खड़ी हो सकती है—और अब भी कोई यह समस्या हो ऐसा उसे तो नहीं लगता। वह खुद प्रमाण है, पत्नी से उसे कहीं कुछ शिकायत नहीं है, और जहाँ तक उसके खुद के मन का सवाल है वह तो उससे खूब मिलने के लिए उत्सुक है। अगर माया ही अपने मन को रोके रहे तो वह क्या कर सकता है ? और यह तो कोई बात नहीं कि मन जहाँ मिला कि फँस ही जाए। माया के बारे में वह जितना आतुर है, उतना ही शर्ली के बारे में क्यों नहीं हो ? उतना ही मन उसका इतिहास के अध्ययन में भी लगता है, और दफ्तर में जब काम करता है तब भी उसका मन इधर-उधर नहीं होता। लिखते-लिखते उसे ध्यान ही नहीं रहता कि उसकी अँगुलियों में स्याही लग गई है—

उसने हाथ उठाकर अँगुलियाँ देखीं, स्याही तो छूट गई थी, किन्तु काफी देर से पानी पड़ते रहने से पोरों का सफेद चमड़ा सिकुड़ गया था और उसमें सल पड़ गए थे। कितनी देर हो गई उसे शॉवर के नीचे बैठे-बैठे ? वह खड़ा हुआ देरी पर झल्लाता हुआ।

बाथ-रूम से सीधा सोने के कमरे की ओर बढ़ा वह। हस्ब मामूल माया पलंग पर लेटी हुई या आराम कुर्सी पर पड़ी हुई कुछ पढ़ रही होगी। क्या पढ़ रही होगी ? उन दिनों अवश्य गम्भीर साहित्य पढ़ती थी वह, पर अब तो जासूसी

कहानियाँ या क्राइम—फिक्शन और एडवेंचर के सिवा और कुछ पढ़ती ही नहीं है। लेकिन नहीं, आज वह यहाँ नहीं है। रसोई में बेचारे हरनाम पर बरस रही होगी तब, या फिर नवनीत हँस दिया। यदि बाहर घूमने जाने का शौक होता तो जरूर मन में कुछ ताजगी मिलती। तब शायद उसे भी माया से शिकायत का अवसर नहीं मिलता।

कपड़े बदलकर जैसे ही नवनीत अपने कमरे में घुसा, वह चौंक उठा पर तत्काल सम्हल गया। माया उसी के कमरे में कुर्सी पर बैठी हुई थी। सामने चाय की टेबल पर चाय का सब सामान रखा हुआ था। उसके उतारे हुए कोट और पैंट उसी तरह पलंग पर फैले हुए पड़े थे। अवश्य हरनाम अभी तक इस कमरे में नहीं आया है—या नहीं आने दिया गया? चाय भी इस समय वही लेकर आता है, आज स्पष्ट ही माया खुद लेकर आई है, कुर्सी पर बैठी कोई पुस्तक देख रही है। पुस्तक रेलवे का टाइम-टेबल है। यानी बहाने के लिए कुछ हाथ में लिए बैठी है ताकि कुछ कहना-सुनना न पड़े। अच्छा।

नवनीत ने दूसरी कुर्सी खींची। बैठना तो सामने ही पड़ा। बोला, "हरनाम कहीं गया है क्या?"

"हाँ।" नवनीत ने देखा कि आँखें किताब के ऊपर ही थीं, और यह 'हाँ' भी बिना ओठ खोले ही उच्चारित किया गया था।

अपनी चाय का प्याला उठाते हुए उसने कहा, "एक प्याला और ले आओ न।"

"मैं ले चूकी हूँ।"

"एक और सही, जब बैठे ही हैं तो।"

"नहीं। और बैठी इसलिए हूँ कि हरनाम नहीं है।"

"सो तो है।" और उसने केतली में से चाय उढ़ेलना शुरू कर दिया। अगर सामने की कुर्सी पर माया की जगह शर्ली होती तो "डार्लिंग, स्वीटी, हनी" आदि न जाने क्या-क्या कहकर अपनी चहचहाहट से सारे वातावरण को मुखरित कर देती। बाथ-रूम में वह इतनी देर बैठा रहा, शर्ली तो शायद दरवाजा तोड़ कर भीतर घुस आती, और चाय पर ही साथ न देती? नहीं, आज जरूर वह उसके निकट प्रस्ताव करेगा—

माया ने कहा, "आज मैं जा रही हूँ।"

"कई बार तो मैं तुम्हें कह चुका हूँ। इस भीषण गरमी में तो तुम्हें जरूर शाम को बाहर निकलना ही चाहिए।"

"मैं किसी सैर-सपाटे की नहीं कह रही, वह तुम्हें ही मुबारक रहे।"

"मैं—सैर-सपाटा? माया, तुम खूब अच्छी तरह जानती हो कि मैं इस समय सैर-सपाटे के लिए नहीं, बल्कि अपने बॉस की लड़की को पढ़ाने जाता हूँ।"

"जानती हूँ। यह भी जानती हूँ कि इतिहास पढ़ाने जाते हो। इतिहास में तो केवल मात्र घटनाएँ ही होती हैं, उस हड्डियों के ढाँचे पर तुम रक्त-माँस चढ़ाते हो।"

नवनीत हँस दिया। "उपन्यास तुम भी चाहो तो लिख सकती हो। शर्ली जरूर ऐसी लड़की है। तुमने देखी नहीं न! किसी दिन जरूर बताऊँगा। तुमसे ही डरता हूँ, वरना कभी भी घर लाकर तुम्हें दिखा सकता था।"

"इसीलिए तो मैं हमेशा के लिए जा रही हूँ कि तुम उसे इस घर में लाकर रख सको।"

नवनीत ने प्याले से होठ हटाकर माया की ओर देखा। वह इसी ओर देख रही थी, उसने टाइम-टेबल अपनी आँखों के सामने कर लिया। कुछ क्षणों तक उसी ओर देखते रहकर हँसकर नवनीत ने कहा, "क्या इसीलिए टाइम-टेबल की छानबीन हो रही है?"

"वह तो कभी की हो चुकी। हरनाम स्टेशन टिकिट लेने गया है, आते समय ताँगा लेता आएगा।"

"अच्छा।" फिर उसने बची हुई चाय एक ही घूँट में पीकर कहा, "पर पिता जी को पहले लिख भेजना क्या उचित न होता? एकाएक वे क्या समझेंगे?"

"उचित-अनुचित का क्या प्रश्न है? और जो उन्हें समझना है वे तो समझेंगे ही।"

नवनीत ने प्याले में और चाय उढेंली, मानो समझ ही नहीं पा रहा था कि क्या करे वह। आखिर उसने कहा, मैं तो सोचता था कि मथुरा जाने की अपेक्षा कहीं पहाड़ों पर हो आतीं। छाया की मृत्यु के बाद तुम्हारा स्वाथ्य भी तो नहीं लौटा है।"

माया उठ खड़ी हुई। छाया उनकी एकमात्र कन्या का नाम था, जो डेढ़

साल हुआ काल-कवलित हो गई थी। उसके नामोल्लेख से ही माया के मुँह पर सफेदी फैल गई। शायद वह उस प्रसंग को सुनना भी नहीं चाहती थी। उसने कहा, "आठ बजे जो एक्सप्रेस जाती है, उसी से मैं जा रही हूँ। खाना बना लिया है। हरनाम खिला देगा।"

"हरनाम नहीं जाएगा साथ ?"

"जरूरत क्या है ? तुम्हें जो तकलीफ पड़ेगी।"

"मगर—"

माया कमरे से बाहर निकल गई। नवनीत का चाय का प्याला वैसे ही पड़ा रह गया।

माया कमरे से निकल गई, किन्तु वह भीतर बैठे नवनीत की आँखों में और भी गहरे समा गई। उसके गौर रंग पर आवेश की ललाई फैल गई थी। माया का क्रोध ही मानो उसके स्वभाव का मुख्य अंश था। दोनों की उमर में कोई विशेष अन्तर नहीं है। माया चौबीस की है, अगर वह पच्चीस का है। लम्बी, छरहरे बदन की, सुडौल गौर और स्निग्ध देह-काँति। ताम्रवर्ण के केश सिर पर बिना आयास जूड़े के रूप में बँधे हुए थे। उनके नीचे ललाट कुछ तिकोना-सा मालूम देता था, लेकिन वह बाल ही कुछ इस तरह बाँधती है कि ललाट तिकोना दिखाई दे, और खूब दिखाई देता है वह माया के चेहरे पर। नाक पतली किन्तु शेष भाग में कुछ उठी हुई-सी और उसके नीचे चिबुक पतले ओठों के बीच उसके मुँह की सदा सहज मुस्कराती हुई रेखा। उसके नीचे चिबुक कपोलों के भरे हुए प्रदेश से सट कर एक त्रिभुज-सा हो गया था। सबसे अधिक आकर्षण का केन्द्र थीं उसकी आयताकार आँखें, जिनकी घनी बरौनियों में काजल भी छिपकर रह जाता था। उन पतले किन्तु माँसल अधरों में यदि एक दुर्निवार निमंत्रण था, तो इन गहरी आँखों की निबिड़ता में एक चुनौती थी जिससे कैसी भी दुर्द्धर्षता सहज ही सहम उठती थी। किन्तु इसके बावजूद माया का सब कुछ मोहक था, बहुत ही मोहक ! चौकोर गले के ब्लाउज में खुली पीठ से केशों के बाहुबल तक उठी उसकी सुराहीदार गर्दन से नवनीत को मिस्र की साम्राज्ञी तूतनखामन की आवक्ष मूर्ति का स्मरण हो आया।

उन गहरी आँखों की आर्द्रता पर आज मानो उदासी का हल्का-सा कुहरा भी छाया हुआ था। नवनीत हमेशा से ही इन आँखों की गहराई से डरता रहा है

और आज जब माया ने एकाएक ही एक नया निश्चय कर लिया है, तो उसके अन्य व्यापारों की गहराई की तरह यह निश्चय भी उसकी समझ में नहीं आया। वह भूल गया कि उसे शर्ली को पढ़ाने आज अन्य दिनों की अपेक्षा जल्दी जाना है। उससे आज नवनीत ने बहुत कुछ महत्वपूर्ण बातें करने की योजना बना रखी है, और आफिस से जब तक वह चला था तो उसका मन मानो हवा पर तैर रहा था।

शीघ्र ही उसकी तन्द्रा टूट गई। उसने लक्ष्य किया कि बाहर बरामदे में कोई व्यक्ति नीचे भारी कदमों से, उतरा है। भारी कदमों से, यानी कोई वजन उठाकर। यदि उसका मन प्रकृतिस्थ होता तो एक-बार नहीं बल्कि दो-तीन बार वह हरनाम के चलने-फिरने का क्रम लक्ष्य कर सकता था। यही नहीं, स्टेशन जाने के लिए वह जो ताँगा लेकर नीचे पहुँचा था, उसके घोड़े के गले में बँधी घंटी भी बजी थी, जो अभी भी कभी-कभी रह-रहकर बज उठती है। नवनीत के मन में एक गाँस-सी अटक गई। क्या सचमुच माया जा रही है?

दरवाजे पर रुक कर माया ने कहा, "ताला और चाबी यहाँ ताख में रख रही हूँ। हरनाम गाड़ी में बिठाकर स्टेशन से लौट आएगा।"

"लेकिन गाड़ी में बिठाकर ही क्यों? उसे मथुरा तक लेती जाओ न! मुझे कुछ भी असुविधा नहीं होगी।"

"पर उसके होने से मुझे भी कोई खास असुविधा नहीं होगी। स्टेशन तक छोड़ आएगा सो ही बहुत है। यों वहाँ तक जाने की भी उसको जरूरत नहीं है, पर वही मन में क्या कहेगा?"

"मैं स्टेशन तक चलूँ?" खड़े होकर जरा डरते-डरते नवनीत ने पूछा।

"नहीं। जरूरत ही क्या है। तुम्हें पढ़ाने भी तो जाना है। वैसे ही देर भी हो गई है। ताले की एक चाबी हरनाम के पास है। और ये चाबियाँ रहीं तुम्हारे ट्रंक-अलमारी वगैरा की। सिवा अपने कपड़े बिस्तर के मैं खास कुछ ले नहीं जा रही हूं।" और चाबियों का एक गुच्छा उसके सामने फेंक कर वह दरवाजे से आगे बढ़ गई।

नवनीत केवल कह सका, "एक बार जरा हरनाम को ऊपर तो भेज देना।'

चाबियों का गुच्छा उठाकर, वह अपने सोने के कमरे में गया। अलमारी खोलकर ड्राअर में से उसने अपना बटुआ निकाला। नोटों की कुछ गड्डियाँ

रखी हुई थीं उसमें। तो माया ने इसमें से कुछ भी अपने लिए नहीं लिया है। यही तो कुल मिलाकर नवनीत की कमाई है, वरना और सब कुछ तो माया का ही है। हरनाम दरवाजे पर आ खड़ा हुआ था। नवनीत ने देखा, उसके चेहरे पर रुलाई छाई हुई थी।

दस-दस रुपए के बीस नोट हरनाम को थमाकर उसने कहा, "हरनाम, तेरी बहू रानी कुछ नाराज होकर जा रही हैं। अपने लिए भी स्टेशन से टिकिट लेकर ठेठ मथुरा तक साथ जाना और दो-चार दिन में गुस्सा ठीक हो जाए तो साथ लेकर वापिस आना। समझा न? मेरी चिन्ता करने का कोई कारण नहीं है। मैं होटल में खा लूंगा। बल्कि इसी बहाने तू उन्हें जल्दी लौटा ला सकेगा। समझ गया न? वैसे तो तू बहुत समझदार है।"

हरनाम ने रुपए ले लिए। कुछ कहना चाहता था वह, किन्तु भावावेश में कुछ कह नहीं सका। नवनीत ने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा, "यहाँ कुछ मत कहना। टिकिट खरीद कर गाड़ी में बैठ जाएगा तो फिर इनकार करने का मौका ही नहीं मिलेगा। समझ गया न?"

हरनाम ने केवल सिर हिला दिया और नीचे उतर गया।

नवनीत भी बाहर छत की मुंडेर से आकर टिक खड़ा हुआ। संध्या की निबिड़ता घनी हो गई थी। ऊपर से देखने पर ताँगे की छत आड़ में आ जाती है, किन्तु तब भी नवनीत कह सकता था, माया पीछे की ओर बैठी है। सादे जार्जट की चम्पई साड़ी के नीचे उसकी चमकती हुई सैंडिल का सुनहरी फीता यहाँ से भी साफ दिखाई दे रहा है। हरनाम आगे बैठ लिया तो ताँगेवाले ने अपना चाबुक हिलाया। घंटी बज उठी, और घोड़ा आगे बढ़ा। धीरे-धीरे साड़ी का कुछ और हिस्सा दृष्टि में आया, चम्पई रंग के गोद में रखे बैग ने भी उसकी दृष्टि को बाँधने की चेष्टा की, किन्तु उसके बाद फिर कुछ दिखाई नहीं दिया। केवल दूरतर होते हुए ताँगे की बत्ती, पीछे से अपनी लाल रोशनी फेंकती-फेंकती शेष हो गई। कुछ क्षण और घोड़े के घुँघरू बजते रहे, फिर सब कुछ शेष होगया। मुँडेर पर से पैर उठा कर नवनीत ने देखा कि वह अकेला है, और उसके सामने अँधेरा गहराता जा रहा है।"

नहीं, अब आज शर्ली को पढ़ाने वह नहीं जा सकेगा। देर तो हो ही गई है, उसका मूड भी नहीं रह गया है। जो बातें उसने शर्ली से करनी हैं, उनके लिए

निश्चिय ही मन के हल्केपन की आवश्यकता है। लदे हुए मन से बात बिगड़ने की ही अधिक संभावना है। शयन-कक्ष में लौट आकर वह अंधेरे में ही पलंग पर लेट गया।

विवाह की उसे पूरी स्मृति नहीं है। आठ-दस बरस बीत गए उस बात को। तब उसे अपना कुछ होश भी नहीं था। अनाथ ही था एक तरह से। माँ की बहुत धुँधली-सी याद आती है, मुँह लटकाए अश्रुशेष आँखों से कोई नारी उस की ओर देखती रहती थी। चेहरे पर गहराई के सिवा और किसी भाव या रूप की उसे याद नहीं पड़ती। वह शायद गहरी वेदना थी। गहरी वेदना के सिवा वह और हो ही क्या सकती थी। उन बड़ी-बड़ी आँखों में झलकते हुए मोतियों को पकड़ने के लिए जब नन्हें-नन्हें दो हाथ उठ जाते थे, तो उन मोतियों की बरसात का अन्त नहीं होता था। बस, इतनी ही कुछ तो स्मृति है, उसे माँ की ! तीन बरस का भी नहीं हो पाया था वह, कि उसकी मृत्यु हो गई थी—उसकी मृत्यु के बारे में भी जितने मुँह उतनी बातें सुनी हैं उसने।

कहते हैं, उसके बाद कभी एक दूर की बुआ के सहारे वह रहा, कभी कोई आया उसे देखती रही, और कभी किसी नई-नवेली अच्छी लगने वाली शकल की छाया भी उसके ऊपर रही। थोड़े-थोड़े समय पर – मानो किसी उनींदे बालक की मिल-मिल कर खुलने वाली आँखों के सामने फिल्म की तस्वीरें आ-आकर चलती जाएं। और इसके बाद ही वह ईसाइयों के किसी मिश्नरी स्कूल में भरती कर दिया गया, जहाँ नर्सरी क्लास से लगाकर सीनियर कैम्ब्रिज तक की अवधि उसने बिताई।

पिता के बारे में उसने सुना है कि वे एक बड़े वकील थे। खूब पैसा कमाया, और उससे अधिक उड़ाया। अगर उनके चारों ओर हजार दास्तान थीं, तो दिल भी उन्होंने हजार कर लिए थे। पीना, और पिलाना और मौज करना, यही उन की जिन्दगी का उसूल था। हजार दिल हों तो किसी दिल के कहीं अटकने का सवाल ही नहीं उठता। हजार दिल और हजार दास्तानों के लिए प्रेमिकाओं की संख्या की भी कल्पना की जा सकती है—प्रेमिकाएं न कह कर संगिनियाँ कहना अधिक उपयुक्त होगा क्योंकि कई स्त्रियाँ उनकी केवल कुछेक घंटों की ही संगिनी रही हैं। किन्तु पत्नी उनकी एक ही थी, और एक पुत्र भी था। अवश्य ही दिल का कोई अंश उनका इन दोनों स्थानों पर भी अटका हुआ नहीं था। पत्नी मर

गई तो कैसे मरी इस पर विचार करना व्यर्थ है, विचार करने से मरा हुआ मनुष्य तो पाया नहीं जा सकता। ईश्वर के आगे किसका वश है ?—तब उनकी उमर कोई ऐसी नहीं थी कि इच्छा करने पर दूसरा विवाह नहीं कर पाते। बल्कि कई माह तक उनके पीछे कुआँरी बेटियों के चिन्तातुर बापों की फौज जुटी रही, किन्तु अपनी विगत साध्वी पत्नी की स्मृति में उन्होंने फिर और विवाह नहीं किया। पुत्र की भी चिन्ता थी ही, सौतेली माँ से कौन सन्तान पेश पा सकी है ?

और जब बरेली के बाजार में गिरे हुए झुमके की तालाश में थिरकती हुई किसी बाई जी का मुजरा लेते हुए एक रात अचानक ही उनके हजार में से हजारों दिलों ने एक साथ हड़ताल बोल दी तो नवनीत मिशन स्कूल में केवल बारह बरस का था और सातवें जमात में पढ़ रहा था। अवश्य ही उस पूरे सत्र का उसका शुल्क जमा कर दिया गया था, इसलिए उस वर्ष तो उसे कठिनयां नहीं ही होतीं। शायद उसे पिता की मृत्यु का पता ही तब चलता जब या तो शुल्क जमा करने का प्रश्न आता या सत्र-समाप्ति पर स्कूल बन्द हो जाने के कारण पिता के घर या उनके आदेश से अन्यत्र कहीं बाहर जाने की जरूरत आ पड़ती। बरेली में ही उसके पिता के एक मित्र ने स्कूल के रेक्टर के पास नवनीत के पिता की मृत्यु का समाचार भेजा ताकि रेक्टर अवसर देख कर पुत्र को यह दुःखद समाचार सुना दे। उसके भविष्य के बारे में भी मित्र ने सुझाया था कि अगर मिशन चाहे तो उसे ईसाई बना कर उस की शिक्षा और पालन-पोषण जारी रख सकता है, वरना उसके लिए किसी अनाथालय की खोज करनी पड़ेगी। उसके किसी निकट नातेदार को पता न था। नवनीत जहीन तो था ही, रेक्टर उसे छोड़ना नहीं चाहता था। समस्या उसे सिर्फ ईसाई बनाने की थी।

यह संयोग ही कहिए कि रेक्टर महोदय का मथुरा के प्रसिद्ध व्यवसाई तथा जन-सेवी कमल किशोर से बहुत अच्छा सम्बन्ध था। यह स्कूल कनाड़ा के मिशनरियों द्वारा चलाया जाता था, और श्री कमल किशोर की कनाड़ा में भी आढ़त की एक दूकान थी। यहाँ कमल किशोर की फर्म के जरिए इस मिशन का लेन-देन बराबर चलता था, जिसकी भरपाई कनाड़ा में उनकी आढ़त की गद्दी से हो जाती थी। कमल किशोर को इससे भी दलाली का लाभ हो जाता था। स्कूल शहर से बाहर दूर यमुना के किनारे जंगल में बना हुआ है। प्रायः ही कमल किशोर वहाँ आते-जाते रहे हैं, और स्कूल के कामों में भी दिलचस्पी लिया करते हैं।

व्यवसाई तो कमल किशोर हैं ही, पर उससे भी बड़े हैं वे जन-सेवक और राष्ट्र-सेवक। विदेशों में जितने भी भारत के अंग्रेज-विरोधी अभियान चल रहे थे उनमें से कई में उनका हाथ और कई में उनकी दिलचस्पी थी। पैसा पास काफी था, और शौक के नाम यही राष्ट्र-सेवा थी। प्रकट में था उनका व्यवसाय और राष्ट-सेवा थी गुप्त। पैसा उन का अधिकांश उसी में व्यय होता। किसी राज्य विरोधी गुट से उनका किसी तरह का सम्पर्क भी है इसकी प्रकट कल्पना किसी को भी नहीं हो सकती थी। साथ ही परोपकार के कामों में भी वे पीछे नहीं रहते थे, जिससे उनकी लोकप्रियता खूब बढ़ी हुई थी। घर में उनकी पत्नी का सात-आठ वर्ष पूर्व देहान्त हो चुका था। एक कन्या है ग्यारह वर्ष की। बस, उसी के लिए उनका संसार है, वरना खुल कर देश के लिए कुछ करने की उनकी बड़ी साध है।

रेक्टर ने एक दिन जब यों ही प्रसंग वश नवनीत के दुर्योग की बात कही, तो एक दिन स्कूल जाकर कमल किशोर नवनीत को देख आए।

उन्होंने पूछा, "किसके लड़के हो ?"

"श्रीयुत सर्वजीत लाल के ?"

"कहाँ रहते हैं ?"

"बरेली में वकील हैं ?"

"पढ़ कर क्या करोगे ?"

"वकालत ?"

"किसकी वकालत करोगे ?"

"जो चाहेगा उस की ?"

"मैं चाहूँ तो ?"

"क्यों नहीं करूँगा ?" और हँस कर बोला, "लेकिन पढ़ तो लेने दीजिए ?"

"और अगर तुम्हारे पिता तुम्हें आगे नहीं पढ़ाएँ ?"

"क्यों नहीं पढ़ाएंगे वे ? मैं पढ़ना चाहूँगा और वे न पढ़ाएँगे ?"

"पर मान लो, उनका मन बदल जाए, या और ऐसी ही कुछ बात हो जाए ?"

"तो भी मैं पढ़ूंगा ?"

"पर पढ़ने का खर्च कहाँ से आएगा ?"

लड़का बगलें झाँकने लगा। शायद उसे पता भी न था कि पढ़ने के लिए खर्च की समस्या भी पेश हो सकती है।

"पिता जी से वकालत नहीं करोगे?" कमल किशोर ने कहा।

"पढ़ने के बाद ही तो।" और उत्तर में वह मुस्करा दिया।

"पिता जी को मना भी नहीं सकते क्या? भय लगता हैं उनसे?"

"नहीं, भय तो नहीं लगता। लेकिन उन्हें इन सब बातों की फुरसत ही कहाँ है?"

कमल किशोर सर्वजीत लाल के बारे में सब कुछ सुन चुके थे। उन्होंने कहा 'अगर अपने पिता को छोड़ कर मेरे यहाँ रहो तो तुम बिना बाधा के बराबर पढ़ते रह सकोगे।"

"आपके यहाँ रहने से कैसे पढ़ सकूँगा? पढ़ने के लिए तो मुझे स्कूल में रहना होगा न।" हँस कर नवनीत ने कहा, मानो उसने कमल किशोर की एक गलती पकड़ ली थी।

"हाँ हाँ, सो तो ठीक है। बात यह है कि तुम्हारे पिता तुम्हें आगे नहीं पढ़ना चाहते।"

"वाह यह कैसे हो सकता है? पढ़ने के लिए ही तो उन्होंने मुझे यहाँ रख छोड़ा है।"

"सो तो ठीक है मेरे बच्चे, लेकिन वे तुम्हें यहीं छोड़ कर अब बरेली से भी दूर चले गए हैं। कुछ ठीक नहीं कह सकता, पर शायद विलायत चले गए हैं।"

कुछ सोच कर नवनीत ने कहा, "आपने कहा था न, आप पढ़ाएँगे मुझे?"

"इस शर्त पर कि तुम मुझे अपने पिता के स्थान पर समझो।"

"सो तो आप हैं ही। उमर में तो आप मेरे पिता से अधिक हैं।"

"तो ठीक।"

और इसके कुछ दिनों बाद जब नवनीत को पता लगा कि उसके पिता वास्तव में विलायत नहीं, किन्तु परमात्मा के धाम चले गए हैं, जहाँ से लौट कर कोई कभी नहीं आता, और उनके पीछे उनकी छोड़ी किसी सम्पत्ति का कोई पता ठिकाना नहीं है, तो नवनीत को कुछ खास आघात जैसा नहीं अनुभव हुआ। सब कुछ यथावत चलता रहा। उसके बाद से छुट्टियाँ उसे मथुरा में कमल किशोर के यहाँ बितानी पड़तीं। शेष समय तो स्कूल में ही बीतता था। यहीं मथुरा में जिस

वर्ष उसने सीनियर कैम्ब्रिज की परीक्षा दी, कमल किशोर ने अपनी अभिसन्धि के अनुसार नवनीत का अपनी कन्या मायावती से विवाह कर दिया। विवाह के उत्सव और उसकी चहल-पहल से उसे खुशी ही हुई थी। कमल किशोर के कन्धे से एक भार उतर गया। उसके बाद नवनीत चला गया आगे कॉलेज में पढ़ने के लिए। माया भी आगे दो-एक वर्ष तक पढ़ती रही। कमल किशोर ने माया को अपने पास ही रक्खा ताकि नवनीत अपनी कॉलेज की पढ़ाई पूरे मनोयोग से पूरी कर सके।

कॉलेज में नवनीत ने खूब उन्नति की। ससुर का पैसा उड़ाने के लिए था ही। सुन्दर स्वस्थ शरीर, चढ़ती जवानी की फिजाँ, तीक्ष्ण बुद्धि—और क्या चाहिए था उसे। कॉलेज में ही कई लड़कियाँ आँखें बिछाए रहतीं उसके लिए। नौ बजे रात को वार्डन की रोल कॉल हो जाती, सब कुछ जब नीरव हो जाता, तो अपने बिस्तर पर रजाई को गोल गोल लम्बी फैला कर एकाध दोस्त के साथ प्रायः ही बाहर निकल जाता। दरवाजे पर दरबान था हरनाम, जिसे बिला नागा रिश्वत मिला करती थी। नवनीत के कारण तो नहीं, पर एक दूसरे छात्र की अनुपस्थिति पर जब हरनाम पकड़ा गया और उसे बरखास्त कर दिया गया तो नवनीत ही ने तो शरण दी थी उसे। आइ० ए० आगरा से पास करके जब बी० ए० के लिए नवनीत ने लखनऊ जाना तय किया तो हरनाम भी उसके साथ लग लिया। बस, लखनऊ में उसे फिर होस्टल में ठहरने की जरूरत नहीं पड़ी। फाइनल ईयर में था वह तभी मथुरा में कमल किशोर के कानों में नवनीत की उच्छृंखलता की चर्चा पहुँचने लगी थी, और वे एक दिन माया को लेकर वहाँ आ पहुँचे। गृहस्थि का उचित प्रबन्ध दो-तीन दिन ही में करके माया को वहाँ छोड़ वे लोट गए। हरनाम को उन्होंने विश्वास-योग्य व्यक्ति पाया था। ठीक है, नवनीत के कार्यक्रम में उससे कोई तूल-अरज नहीं हुआ।

यह घर भी तभी कमल किशोर ने देख कर ले लिया था। परीक्षा-फल निकलने के पहले ही कमल किशोर की प्रेरणा तथा अपनी हिकमत से उसे पी० एम०-जी० के कार्यालय में सहायक सुपरिंटेंडेंट की जगह मिल गई थी। साल भर में वह सुपरिंटेंडेंट भी हो गया था। इसके मूल में उसका अच्छा काम, या उसके ससुर का प्रभाव तो था ही, पर इन सबसे ऊपर थी पी० एम० जी० मि० विनफ्रेड ज्याफ्री की कन्या शर्ली ज्याफ्री की नजरे-इनायत, जो अनायास ही नवनीत

पर बरस पड़ी थी ।

तीसरे वर्ष में प्रवेश लिया था उसने । उसी वर्ष तो शर्ली ने प्रथम वर्ष में प्रवेश लिया था । इतिहास में वह काफी कमजोर थी । प्रोफेसर ने ही नवनीत की सिफारिश करदी थी शर्ली के लिए । इतिहास नवनीत का अपना विषय था, और फिर किसी सुन्दरी की सहायता न करना यह भी तो भद्रता न होती । और जब परिचय बढ़ता गया तो फिर उसका लाभ भी क्यों न मिलता नवनीत को ?

माया ने नवनीत को इस विषय में कभी कुछ नहीं कहा । नवनीत जैसे सुन्दर स्वस्थ, मेधावी पति पर उसे जितना गर्व था, उतनी ही चेतना उसे अपने सौंदर्य, स्वास्थ्य तथा बुद्धि की भी थी । पढ़ी-लिखी भी कम न थी । इसके अतिरिक्त गर्व करने को उसकी और भी उपलब्धियां थीं, जैसे चरित्र, पतिनिष्ठा आदि जिसका नवनीत के पास जवाब न था । शायद किसी अवचेतन के निगूढ़ कोने में अपनी ही सम्पत्ति से नवनीत के निर्माण की श्रेय-भावना भी छिपी पड़ी हो । पिता द्वारा पैदा किया हुआ आत्म-सम्मान तो उसकी नस नस में व्याप्त था । पिता के दुलार ने तथा ऐश्वर्य की प्रचुरता ने उसे आग्रही और श्रेष्ठता की भावना से भी भर दिया था । माँ की अनुपस्थिति में किसी का उस पर शासन होने की अपेक्षा घर में उसका ही शासन चलता था । और इन्हीं सब कारणों से वह मान बैठी थी कि उसकी निष्ठा एक दिन नवनीत को ठीक मार्ग पर लाकर ही रहेगी ।

भिनभिनाता हुआ एक मच्छर नवनीत के कान पर आकर बैठ गया । सामने की खिड़की तो उसने खोली न थी, किन्तु दरवाजा सारा खुला पड़ा है । शाम को कुछ मच्छर हो ही जाते हैं । किवाड़ बन्द करने का नवनीत को ध्यान ही नहीं रहा । ध्यान उसे रहा और किस चीज का है ? कमरे में अँधेरा है, लेकिन बाहर के प्रकाश की धुँधली-सी आभा कमरे में फैली हुई है । अरे, पंखा भी तो नहीं चल रहा है, इसीलिए तो चेहरे पर पसीना चमक आया है । गरमी ही कौन कम है ? क्या खूब हो नवनीत तुम भी । माया ने आखिर तुमको पटखनी दे ही दी । किसी नारी से न हारने की तुम्हारी अकड़ थी न । माया, नहीं, केवल मात्र नारी ही नहीं, माया पत्नी भी है । पर पत्नी और नारी में कुछ अन्तर होता है, यह भी क्या आज ही, अभी ही तुम्हें नहीं महसूस हुआ ?

उस दिन जब जेम्स से उलझना पड़ गया था, तब भी तो नवनीत का

परिप्रेक्ष्य नष्ट नहीं हुआ था। परिप्रेक्ष्य नष्ट होना !—अंग्रेजी का कितना अच्छा मुहावरा है ? माया साहित्य की विद्यार्थिनी है, वह होती तो उससे जरूर बहस करता वह। इस मुहावरे के वजन का हिन्दी में कोई मुहावरा है ? नहीं है, तो इसका प्रचलन किया जाना चाहिए। और जेम्स उसी वक्त अपना परिप्रेक्ष्य खो बैठा था। अवश्य ही उसके मन में शर्ली को लेकर पत्नी की भावना घर कर गई होगी-भावी पत्नी की भावना ही सही !

संयोग ही कहना चाहिए उसे। कॉलेज लाइब्रेरी के पुराने रिकार्डों के कमरे में शर्ली के बैठे मिलने का कोई प्रयोजन नहीं था—ना, अध्ययन में कभी उसने विशिष्ट रुचि प्रगट नहीं की। सचमुच ही वह जेम्स की प्रतीक्षा ही कर रही थी। एकान्त कमरा, जरूर दोनों ने पहले से वहाँ मिलना तय कर लिया होगा, तभी तो जेम्स उस समय ही वहाँ गया। किसी पुराने रिकार्ड देखने जाने का बहाना उसका बहाना ही था। पर बहाना क्यों ? नवनीत स्वयं भी तो वहाँ पुराना रिकार्ड देखने के लिए ही गया हुआ था, कोई शर्ली से मिलने नहीं। शर्ली को तो पता भी नहीं था कि वह भी वहाँ पहले से मौजूद है, और दो अलमारियों की आड़ में दूर छत से लगी किताबों के पन्ने उलटने में लगा हुआ है। अवश्य ऊपर होने की वजह से ही वह सब कुछ देख सकता था। जेम्स चुपके से ही तो आया था, और पीछे से ही अनायास जाकर शर्ली को चूम लेने का अभिनय किया था उसने। चौंक कर क्या कहा था शर्ली ने यह तो नवनीत सुन नहीं सका था पर शर्ली की मुखमुद्रा भी तो कुछ सहमति की नहीं थी। अवश्य ही तब शर्ली ने नवनीत को भी उतर कर आते हुए देख लिया था, और हो सकता है शर्ली की शिकायत केवल चोरी पकड़े जाने पर छुटकारे का बहाना भर हो। नहीं, नवनीत के हाथ का थप्पड़ खाकर जेम्स का परिप्रेक्ष्य नष्ट नहीं हुआ था, गुर्रा कर ही तो उसने कहा था कि वह तो उन दोनों के बीच की बात थी, नवनीत को बीच में कूद पड़ने का क्या अधिकार था ? अवश्य उस दिन कोई भयंकर अप्रिय कांड घट जाता यदि शर्ली बीचबचाव न करती। जेम्स अपने प्रेम करने के अधिकार की रक्षा के लिए नवनीत जैसे पहाड़ से टकरा जाने के लिए तत्पर हो उठा था, और नवनीत के मन में भी ईर्ष्या की आग कम न थी। परिप्रेक्ष्य तो जेम्स ने तब खोया जब उसने देखा कि शर्ली नवनीत के प्रति भी अनुरक्त है, यहाँ तक कि उस दिन के बाद शायद वह शर्ली के मार्ग से ही अलग हट गया। न अलग

हुआ होता तो ?

कैसी जिघांसापूर्ण है वह स्मृति । जेम्स की वकालत में शर्ली ने उस दिन जो कुछ कहा था, क्या उसी से नवनीत जैसे व्यक्ति को शर्ली की उपेक्षा नहीं कर देनी चाहिए थी ? शायद उपेक्षा कर भी देता, किन्तु शर्ली का बाप ही तो उसका स्वामी भी है, और उसे असिस्टेंट से पूरा सुपरिन्टेंडेंट भी तो बनना था। बाद में तो फिर वही सौंदर्य और चोंचलों की चकाचौंध, नवनीत के हाथ से मन की लगाम छूट गई। और आज तो वह शर्ली से प्रस्ताव करने वाला था कि—

नवनीत उठा। पंखा तब भी निर्धूम लटक रहा था । स्विच ही ऑन नहीं किया था उसने । कमरे की बन्द हवा में घुटते रहने का क्या अर्थ है ? इससे बाहर खुली छत पर हवा तो होगी। बाहर आया, और ठेल कर अपने पीछे दरवाजा बन्द करता आया वह। बाहर और भी उजेला था । सड़क पर जलती नगर-पालिका की बत्ती की ओर हाथ घड़ी करके उसने देखा कि साढ़े नौ बजने वाले हैं—यानी हरनाम माया के साथ मथुरा जाने में सफल हो गया है, वरना अब तक उसे लौट आना चाहिए था। नवनीत ने एक लम्बी साँस ली। इसका तात्पर्य यह हुआ कि सचमुच माया भी चली गई । संयोग से ही सही, कितना अच्छा होता कि माया लौट आती और वह ठठाकर हँस सकता, बस, डराना ही चाहती थी न ?

छत की मुँडेर से टिककर खड़ा हो गया वह । सड़क पर इस ओर अब बहुत भीड़ नहीं थी । कभी-कभी एकाध ताँगा निकल जाता, लेकिन नवनीत का ध्यान इन उपसर्गों में नहीं था । वह उलझा हुआ था अपने और माया के विगत से । माया उसे छोड़कर चली गई अपने पिता के घर,—और वह अपना परिप्रेक्ष्य खोता चल रहा लगता है।

माया की ओर से उसे शिकायत क्या होती ? कर्तव्य-पालन में सैदव क्या तत्पर नहीं मिलती थी वह ? हरनाम के होते हुए घर में उसका सारा काम वह स्वयं अपने हाथों करती और उसमें संतोष और प्रसन्नता अनुभव करती। उसकी सुविधा ही मानों माया के जीवन का व्रत था। सबेरे बिस्तर पर ही चाय और अखबार लिए वह उसे उपस्थित मिलती थी। बाथ रूम से लौटता तो शेविंग का उपस्कार तैयार मिलता। दोनों साथ बैठकर हल्का-सा नाश्ता करते ।.दफ्तर जाने के लिए नवनीत कौन से कपड़े पहनेगा, यह माया निकाल कर तैयार रखती।

नवनीत कुछ देर पढ़-पढ़ा कर नहाने के लिए स्नान घर में घुसता, और माया उसके लिए अपने हाथ से खाना बनाने के लिए रसोई घर में। खाना खा कर वह ऑफिस चला जाता, तब कहीं माया को शायद फुरसत मिलती ! शाम को दफ्तर से लौटता तो माया उत्सुक प्रतीक्षा में दरवाजे पर खड़ी मिलती। कुछ भी हुआ हो, उसके मुँह की प्रसन्नता का भाव नवनीत ने कभी लुप्त होते हुए नहीं देखा ! स्नान और चाय के बाद नवनीत फिर बाहर निकल जाता, और तब उसके लौटने का कोई समय नहीं था। लेकिन आधी रात गए लौटने पर भी माया उसे प्रतीक्षारत ही मिलती, और उसके लाख कहने पर भी कभी उसने नवनीत के पहले खाना नहीं खाया। कभी कभी तो नवनीत हँस कर कह भी देता, "माया, तुम्हारी पढ़ाई-लिखाई व्यर्थ ही हुई। आज कल तो बेपढ़ी लिखी भी ईश्वर तक की ऐसी अन्धी भक्ति नहीं करतीं।"

एक बार कहा था उसने, "भई माया, खूब हो तुम भी। सुनता था कि स्त्रियों के घर में पैर और मुँह में जीभ कभी स्थिर नहीं रहते, तुम तो एकदम घरघुस्सू और गुमसुम हो।"

"मालूम देता है स्त्रियों के बारे में तुम्हारी जानकारी बहुत अधिक है। लेकिन मैं घरघुस्सू या गुमसुम हूँ, यह तुम कैसे कहते हो ?"

"न तो तुम्हें कभी बोलते देखा है न कभी बाहर जाते।"

"इन दीवारों से पूछो न। दिन भर इनसे कितनी बातें करती रहती हूँ।"

नवनीत ने हँस कर कहा, "ताना कस रही हो न ? मैं दोष मंजूर कर लेता हूँ। अगले महीने ही तो इम्तिहान हैं, फिर देखना मेरी माँग कितनी बढ़ जाती है।—और गाना-वाना भी तो जानती हो न तुम ?"

हँस कर माया ने कहा, "गाना ही नहीं, रोना भी जानती हूँ। पर तुम कहोगे, रोना कौन स्त्री नहीं जानती ? है न ?"

"सो नहीं कहूँगा, क्योंकि तुम बहादुर स्त्री हो, तुम कभी नहीं रोओगी।"

नहीं; नहीं रोऊँगी। और जानते हो ? नाचना भी जानती हूँ, भरत-नाट्यं भी। बताऊँ ताता थेई—ना ना, बिना घुँघरू और साज के कैसे हो सकता है वह ? घबराओ मत, अभी नहीं नाचूँगी। लेकल अपनी जानकारी ही जाहिर कर रही थी।"

हँस कर नवनीत ने माया को बाहुओं में भर लिया था, और चूम कर कहा

था, "तुम अशेष गुणवती हो माया। तुम्हें पाकर सचमुच मैं बड़ा सौभाग्यशाली हूँ।"

"सचमुच ? लगता तो नहीं। लेकिन तब मुझे घरघुस्सू क्यों बता रहे थे ?"

"इसलिए कि तुम कभी बाहर घूमने के लिए भी नहीं जातीं।"

"किसके साथ जाऊँ ?"

फिर हँस कर नवनीत ने कहा था, "यह चोट भी मुझ पर ही सही। ठीक है, वक्त आने दो, देखूँगा कहाँ तक साथ देती हो। पर तब तक न, हो, हरनाम के साथ ही गंगा किनारे तक कभी-कभी हो आया करो।"

हरनाम के साथ क्यों ? जाऊँगी तो तुम्हारे साथ ही जाऊँगी।"

"मैं तो केवल तुम्हारे स्वास्थ्य की दृष्टि से कहता था।"

और हँसकर कहा था उसने, "मेरा स्वास्थ्य ? क्या अच्छी नहीं लगती मैं तुम्हें ?"

"यह क्या कह रही हो माया ? तुम अच्छी न लगोगी तो और कौन अच्छा लगेगा ?"

"सो तो तुम जानो—कहाँ तुम्हारी शाम बीतती है और जरूरत से ज्यादा देर हो जाती है सो मैं क्या जानूँ ?"

अप्रतिभ होकर नवनीत ने कहा था, 'लो, तुम भी सामान्य नारी की तरह शिकवे-शिकायतें करने लगीं। मुझे तो तुम पर इसलिए गर्व है कि मैं एक असाधारण स्त्री का पति हूँ।

"एब्नॉर्मल ?" हँस कर माया ने उत्तर दिया था। और टालने के लिए एक बार और उसे बाहुओं में भर कर तथा चूम कर कहा था उसने कि उसे पढ़ाने जाने के लिए विलम्ब हो रहा है। माया ने बाधा नहीं दी थी। उसके बाद इस सम्बन्ध में माया से, वह कुछ कह ही क्या सकता था।

पूर्व दिशा में चाँद का पाँडुर-मन्डलक क्षितिज के ऊपर उठ रहा था। कब नवनीत उछल कर मुँडेर पर बैठ गया था उसे पता ही नहीं था। सड़क अब सूनसान हो गई थी। सड़क पर जलते लैम्प पोस्ट की रोशनी में देखा तो घड़ी में साढ़े दस बज चुके थे। अवश्य ही कृष्ण पक्ष की छठ या सप्तमी होगी। हरनाम तो है नहीं, खाट बाहर खींच लाने से ही सब कुछ हो जाएगा। खाना ? माया कह गई है, खाना बना हुआ रखा है, हरनाम खिला देगा। हरनाम जब है ही नहीं

तो ? नहीं, कल या परसों क्या होगा, इसकी बात नहीं कहता वह। आज अब उसे भूख भी नहीं है, सिर्फ लेट जाना चाहता है। नहीं, नींद उसे जल्दी ही नहीं आएगी। सोना चाहता भी कहाँ है वह। बस, माया की स्मृति ही आज उसके बगल में रहे।

सोने के कमरे से पलंग खींच लाने में बड़ा तरद्दु है। भीतर बरामदे में दो-एक चारपाइयाँ पड़ी हैं। हरनाम शायद वहीं से ले आता है। एक चारपाई; बिस्तर पलंग पर है ही। वहाँ गोल किया और यहाँ चारपाई पर लाकर फैला दिया। इतना ही तो !

खाट पर लेटते ही महसूस हुआ कि बिस्तर सदा की तरह आरामदेह नहीं है, कहीं कुछ अटपटा-सा लग रहा है। लेकिन इससे क्या अन्तर पड़ जाता है ? हरनाम या माया बिस्तर कैसे लगाते थे, यह सीखना जीवन की कोई बहुत बड़ी उपलब्धि नहीं है। उपलब्धि तो यही होगी कि इन सबके अभाव में जिया कैसे जा सकता है ! और जिया तो जा ही सकता है, नवनीत जीकर बता देगा। उसका परिप्रेक्ष्य इस मामूली-सी घटना से नहीं खो सकता।

नवनीत को याद नहीं कि उसके बाद माया ने कभी बाहर जाने की या नवनीत को लेकर किसी तरह की कोई चर्चा चलाई। उस बार भी नवनीत ने खुद ही छेड़ा था, इसलिए कहना तो यही चाहिए कि माया ने पहली और आखिरी बार चर्चा तभी चलाई थी जब छाया की बीमारी ने उसे उद्विग्न कर दिया था, शायद तब ही खोया था उसका परिप्रेक्ष्य।

कितनी प्यारी लड़की थी छाया ! गोल-मटोल, रूई के गाले जैसी गुदगुदी और गोर, गाल अधपके सेव की ललाई लिए हुए। बिना दाँत के भरे मुँह से जब हँसती थी तो सारी सृष्टि का सौंदर्य उस मुँह में समा जाता था। नवनीत उससे अभिभूत नहीं हुआ, यह कौन कह सकता है ? मन में माया के क्या रहा हो सो वह नहीं जानता, किन्तु मुँह से तो कभी उसने कुछ कहा नहीं था। पर वे ही तो दिन थे जब उसका रोमान्स बड़े ही उग्र रूप में शर्ली के साथ चल रहा था। अवश्य माया उस व्यापार को जान चुकी थी, मुँह से न कहा हो तो क्या ! नवनीत से आखिर वह खिची-सी रहने ही क्यों लगी थी ? सारा समय जो वह छाया में ही मगन रहती थी सो नवनीत ने उसे अपनी मुक्ति का अवसर ही समझा था। नहीं समझा था उसने तो यही कि नारी, भारतीय नारी की

आकाँक्षा का केन्द्र बिन्दु क्या है !

छाया अस्वस्थ हो गई थी। बच्चों के जब दाँत फूटने को होते हैं, तो उनके कोमल शरीर पर कुछ प्रभाव पड़ता ही है। दूसरे ही दिन संध्या को ऑफिस से लौटते समय ही वह शहर के सबसे बड़े बाल-रोग विशेषज्ञ डॉ० घोष को ले आया था। औषधि की व्यवस्था करके वह भी कह गया था कि चिन्ता करने जैसी कोई बात नहीं है। यह भी उसने बता दिया था कि पूरे दाँत निकलने तक बच्ची के स्वास्थ्य में कभी कभी गड़बड़ी हो सकती है।

सो चिन्ता की कोई बात हो, तो नवनीत कैसे समझ सकता था ? अवश्य उसके बाद नवनीत किसी दूसरे डॉक्टर को नहीं लाया, पर स्वयं डॉक्टर घोष ने इसकी कोई आवश्यकता नहीं समझी थी। इतने पर भी यदि माया की दिल-जमई नहीं हुई तो वह स्वयं भी तो किसी भी डॉक्टर को बुलवा कर दिखा सकती थी। पढ़ाई-लिखाई के बाद भी आखिर कोई दूसरे पर इतना निर्भर रहे तो पढ़ने-लिखने का लाभ ही क्या ?

और उस दिन के लिए भी दोषी वह कैसे है ? रात्रि को चाँदनी रात में गंगा-विहार का जब कार्यक्रम रखा गया था तो उसे क्या मालूम था कि छाया उस दिन अधिक बीमार हो जाएगी ? हाँ, यह उसने अवश्य मिथ्या कहा था कि पार्टी दफ्तर की ओर से संगठित की गई थी, जबकि हकीकत यह थी कि उस रात केवल शर्ली और उसके कुछ दो-एक अन्य साथी ही इस पार्टी के प्राण थे। पर माया के लिए उससे क्या अन्तर पड़ता है। उसकी अनुपस्थिति चाहे इस कारण से रही हो, या उस कारण से, अनुपस्थिति में तो कोई अन्तर नहीं पड़ता है न !

दफ्तर से लौटते ही उसने माया को कहते सुना था, "बेबी की तबीयत आज अधिक खराब मालूम देती है।"

नवनीत ने हँस कर कहा था' "तुम्हारा तो वही माँ का मन है न ! अरे दोस्त, उस छोटी-सी शैतान के बारे में जितनी चिन्ता करती हो, उसकी आधी ही सही, कभी मेरे लिए भी कर लिया करो। और देखो, रोज ही बीमार पड़-कर वह तुम्हें तंग कर लिया करती है, मैं तुहें अपनी बीमारी से बिलकुल भी तंग नहीं करूँगा।"

"मजाक नहीं। उसका पेट फूल गया है, साँस भी ठीक तरह नहीं ले

पाती !"

"च्च च्च ! दूध पिला दिया होगा। अरे भाई, ऐसे समय तो उसे ग्लूकोज मिले पानी के अलावा कुछ भी नहीं देना चाहिए। तुम लोग तो खिला-पिला कर खासे भले-चंगे आदमी को बीमार कर सकते हो। अच्छा आज जरा देखो। कल डॉ० घोष को फिर बुला लूंगा—हालाँकि आकर वह मुझे ही बीमार करार कर देगा, यानी बहम का बीमार !"

"अभी जाकर ले आओ न !" और डॉ० घोष ही क्यों, लखनऊ में और भी तो कई डॉक्टर होंगे !"

"होंगे क्यों नहीं ! क्या तुम सोचती हो, आज भी यहाँ वाजिद अली शाह ही रहते हैं ? अलबत्ता नवाब सब हैं यहाँ, ताँगेवाला और घास छीलने वाला भी। मगर डॉ० घोष तो यहाँ बच्चों की बीमारियों का सबसे बड़ा डॉक्टर है। यों—अच्छा, बेबी है कहाँ अभी ?"

"हरनाम के साथ जरा बाहर भेजा है। दिन भर से रो रही थी !"

"यह तो बहुत अच्छा किया। उसी के साथ डॉक्टर के यहाँ भी भिजवा सकती थीं। अरे, यह हरनाम एक रतन है रतन ! लखनऊ के चप्पे-चप्पे से वाकिफ हो लिया है। बल्कि उसी को भेज कर किसी डॉक्टर को बुलवा लेना न !"

नवनीत कपड़े बदल कर पुनः जूते पहनने लगा तो माया ने कहा, "तुम जा रहे हो क्या ?"

"हाँ भई, जाना बहुत जरूरी है। दफ्तर के लोगों ने आज नौका-विहार का प्रबन्ध किया है, पूनम है न !"

"अगर न जाओ तो ?"

"कहती क्या हो माया ! न जाऊँ ? अरे भई, सुपरिंटेंडेंट हो जाने के बाद इतनी आजादी कहाँ रह जाती है ! मैं तो कह भी चुका था, किन्तु उन लोगों ने कहा कि यदि मैं नहीं गया तो सारा कार्यक्रम ही रद्द कर देंगे वे। अब तुम्हीं कहो इस छोटी-सी बात के लिए इनकार करके उनका दिल तोड़ देता मैं ?"

"मेरा दिल जाने क्या हो रहा है आज।"

"मगर मैं जानता हूँ, वह टूटेगा नहीं।" और वह हँस कर उठ खड़ा हुआ था।

माया ने अंतिम बार चेष्टा की, "एक बार उसे देख जाते। आज तो उसकी आँखें भी मुझे जाने कैसी हो गई लगती हैं।" और मुँह फिरा कर शायद आने वाली रुलाई को रोक लिया।

चलते-चलते नवनीत ने कहा था, "मैं नीचे हरनाम से मिलता हुआ जाता हूँ। वहाँ से भी जल्दी ही लौट आऊँगा। बस, उनका कार्यक्रम शुरू भर कर देता हूँ। और ऐसी बात क्या है ? मैं भी कोई डॉक्टर तो हूँ नहीं। हरनाम से कहकर ···बल्कि मैं ही कहता जाता हूँ उससे।" और वह नीचे उतर गया था। नवनीत को आज महसूस हुआ, डॉक्टर तो नहीं, पर बाप तो वही था, और पति भी वही था। रात भर वह नहीं लौट सका था, और सवेरे जब लौटा तो सब कुछ शेष हो चुका था। छाया को स्मशान ले जाने की तैयारियाँ पूरी हो रही थीं। हरनाम बहुत होशियार है, रतन है रतन, लखनऊ के चप्पे-चप्पे से वाकिफ, लोक-व्यवहार में निष्णात !

खाई उसके बाद से ही बढ़ने लगी थी। नवनीत भीतर ही भीतर माया से भय करने लगा था। और माया मानों सब कुछ से कट चुकी थी। जब उसके पिता उसे साँत्वना बँधाने आए थे, तो वह उनके साथ ही चली जाना चाहती थी, पर कुछ समझ कर उन्होंने ही उसे वहाँ रहने दिया था। माया तब से ही मानों वीतराग हो गई। वह अब नवनीत की प्रतीक्षा भी नहीं करती, और अपने काम के लिए मानों उसे किसी की अपेक्षा ही नहीं थी।

नवनीत ने प्रयत्न न किया हो सो बात नहीं। वह खाना खाती होती तो जबर्दस्ती उसके थाल में उसके साथ ही खाना खाने बैठ जाता। एकाध निवाला लेकर माया हाथ खींच लेती। माया ने अपना बिछौना अलग कर लिया तो नवनीत उसी पर जाकर सो रहा। माया ने कमरा ही बदल लिया। जब नवनीत वहाँ पर भी पहुँच गया तो वह बरामदे में सोने लगी। नवनीत अपने आप को अधिकाधिक अपराधी महसूस करने लगा, और अधिकाधिक शर्ली उसे अपनी ओर खींचने लगी। उसके साथ बैठ कर वह शान्ति अनुभव करता, और पाश्चात्य-नैतिकता की उदारता पर बड़ी हसरत भरी भावना से विचार करता रहता।

उस दिन उसके मन में आया था कि आखिर माया पढ़ी-लिखी है, सब कुछ समझती है, तो आखिर उससे सब बात साफ साफ क्यों नहीं कर लेता ? सब

कुछ के बाद भी माया उसे दोषी समझती रहे तो उसकी इच्छा। साहस करके वह माया को थाम कर उस शाम को बैठ गया।

"आज तुमसे कुछ कहना है!"

"मुझसे ? लेकिन तुम्हें पढ़ाने जाने को देर नहीं हो रही होगी ?"

"उसको गोली मारो!"

हँस कर माया ने कहा, "गोली मैं कैसे मार सकती हूँ, और गोली मारने से फाँसी के तख्ते पर जो चढ़ना पड़ता है।"

"पति की खातिर पत्नी के लिए यह कोई बड़ी बात नहीं।"

"मैंने तो सुना था कि वह युग कभी का बीत गया। खैर, तुम कहते हो तो वही सही। पर क्या सचमुच आज पढ़ाने नहीं जाओगे ?"

"नहीं!"

"चाय के लिए मैंने हरनाम से कह तो दिया।"

"चाय मैं ले चुका हूँ, पर तुम पियो तो तुम्हारे साथ मैं भी एक कप ले सकता हूँ।"

"मैं तो शाम को चाय नहीं पीती!"

"नहीं पीतीं ? कब से ? "लेकिन प्रश्न करते ही नवनीत चौंक पड़ा था। कहीं—

"तभी से जब से छाया ने यह घर छोड़ा।" सचमुच नवनीत ने अनजाने ही पके घाव पर हाथ रख दिया था, किन्तु कहाँ ? माया ने तो बड़े ही निर्विकार भाव से उत्तर दिया था! नवनीत ने सिगरेट जला ली। यही तो कठिनाई है, माया वार नहीं करती। वार करे तो बचने का कुछ उपाय भी किया जाए।

नवनीत ने कहा, "इसी सम्बन्ध में बात करनी है। देखता हूँ तुम पहले से एकदम बदल गई हो।"

"बदल गई हूँ ? मुझे तो नहीं लगता। काँच में मुँह भी सदा पुराना ही नजर आता है। नाम तक तो···"

"तुम मुझे बनाना चाह रही हो माया। लेकिन तुम खूब अच्छी तरह समझ रही हो मेरा क्या तात्पर्य है!" झल्ला कर नवनीत ने कहा।

"न समझ पाई होऊँ तो समझा दो न एक बार और!" माया ने शांत भाव से कहा।

"यही जैसे तुम शाम को चाय नहीं पीतीं ! भला क्यों ?"

"और यदि सवेरे भी नहीं पीती होऊँ ?"

"कहती क्या हो ? क्या चाय एकदम छोड़ दी है तुमने ?" नवनीत ने सिगरेट एश ट्रे पर रख दी।

उसके चौंक उठने पर मुस्करा कर माया ने कहा, "नहीं एकदम से नहीं छोड़ी है। और यह भी तो हो सकता है कि चाय की जगह मैंने और कुछ जैसे दूध, कॉफी या और कुछ पीना शुरू कर दिया हो ! लेकिन मैं दूध पीती बच्ची नहीं हूँ। और सवेरे प्रायः चाय पी लेती हूँ बस ?"

"तुम मुझसे छिपा रही हो माया। अपने मन की बात क्यों नहीं कहतीं ? तुम सदा उदास रहती हो, मानों किसी काम में दिलचस्पी ही नहीं रह गई है तुम्हें !"

"कुछ अपराध हुआ मुझसे ? घर की किसी चीज-वस्त का नुकसान तो नहीं किया मैंने !"

"माया !" और पैर पटक कर नवनीत उठ खड़ा हुआ। माया ने इसकी चिन्ता नहीं की, और कहती रही, "अवश्य तुम्हारी परिचर्या में मैं सामने नहीं आती हूँ। अब, पर यह तो, तुम्हारे मन का भाव समझ कर ही किया है मैंने। कहा भी तो था न तुमने, यह चाय-वाय, खाना-पीना हरनाम क्यों नहीं करता इसीलिए तो रखा है न उसे ! लेकिन अगर तुम कहो तो फिर से वह सब काम मैं कर लिया करूँगी !"

"मेरा यही मतलब था !" और उसने आगे बढ़कर एश ट्रे में से सिगरेट उठा ली, पर बैठा नहीं।

"शायद मेरी सूरत से तुम आजिज आ गए हो!"

सिगरेट का एक लम्बा कश खींच कर धुएँ के अम्बार को उसने कमरे में छोड़ दिया, जो फैल कर महीन रेशों में बदलता जा रहा था। वह प्रकृतिस्थ हो चुका था। माया भी, स्पष्ट है पैंतरा सम्हाल कर प्रस्तुत है। चुनौती पाकर भी निष्क्रिय रह जाए माया ऐसी लड़की नहीं है। ठीक है, यही तो नवनीत चाहता है। और डरने से भी क्या ? आखिर एक दिन इसका फैसला तो होना ही है !

नवनीत पुनः अपनी कुर्सी पर जम कर बैठ गया और बोला, "जाने कब तक तुम शब्दों से खिलवाड़ करती रहो। अच्छा है कि मैं ही तुम्हारे मन की बात

कह दूँ !"

"तो तुम जानते हो मेरे मन की बात ? फिर भी पूछना चाहते थे ?"

"हाँ, क्योंकि वह आखिर मेरी कल्पना मात्र ही तो है।"

"क्या है तुम्हारी कल्पना ? सुनूँ तो। कल्पना से ही तो कविता पैदा होती है !"

हँस कर नवनीत ने कहा, "मैं तो भूल ही चुका था कि तुम साहित्य की विद्यार्थिनी रह चुकी हो !"

"कला की भी। गाना और नाचना भी जानती हूँ। क्या करूँ तुम्हें कभी दिखाने का मौका ही नहीं मिला। और रोना भी सीख चुकी हूँ। लेकिन यह बात रहे अभी, तुम अपनी कल्पना की बात कहो।"

नवनीत फिर अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ, बोला, "पता नहीं तुम्हारे मन में क्या है ! लेकिन तुम शायद यह सोचती रही हो कि—"

'कि क्या ?"

"कि मेरा कुछ आवारा स्त्रियों से—मेल-मिलाप है, और यह कि छाया की मृत्यु के लिए मैं जिम्मेदार हूँ।" और माया के सामने वह खड़ा नहीं रह सका, कुछ आगे बढ़ गया। माया की पीठ की ओर ही उसकी पीठ थी। माया ने कुछ उत्तर नहीं दिया। उसकी दृष्टि फर्श खुरचते अपने पैरों के नाखूनों पर थी।

कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद नवनीत से कहा, "क्यों, झूठ कहता हूँ ?"

माया ने एक लम्बी साँस ली, और वह भी उठ खड़ी होकर कहने लगी, "हरनाम चूल्हा लेकर बैठा होगा, मैं जाती हूँ।"

किन्तू नवनीत ने उसे दोनों कन्धे पकड़ कर थाम लिया और अपनी कुर्सी पर बिठाकर कहा, "नहीं, आज खाना नहीं बनता है तो न सही। एक दिन तुम भी अगर भूखी रह लोगी तो प्रलय नहीं हो जाएगी। मैं आज सारी बात कर लेना चाहता हूँ।"

स्मशान चिता-सी दीप्त हँसी के साथ अपनी कुर्सी पर बैठकर उसने कहा, "मेरी चिन्ता नहीं, मेरा तो आज यों भी व्रत है।"

नवनीत का यह वार भी खाली गया ? उसने कहा, "तो तुम व्रत तो करने लग गई हो ? खैर कब से करने लग गई हो यह नहीं पूछूँगा। तुम यही कहो,

मेरी कल्पना जो मैंने अभी तुमसे अभिव्यक्त की है, सच है या नहीं ?"

कुछ क्षण सोचती-सी रहकर माया ने कहा, "किन्तु मैंने कभी ऐसी बात के लिए कैफियत तो नहीं चाही।" माया ने भी मानो अपने आपको तैयार कर लिया। ढीले जूड़े के बालों की एक लट छुटकर उसकी आँखों पर मँडराने लग गई थी। उसे हटाते हुए और एक लम्बी साँस लेकर उसने अपना वक्तव्य जारी रखा, "छाया की मृत्यु शायद उसके लिए वरदान ही हुई है। भारत में नारी का भाग्य ही क्या है कि किसी नारी को जीवन से मोह हो। उन दिनों अवश्य मुझे उसका दुःख रहा होगा, पर अब नहीं है। केवल एक उपेक्षा से ही वह भविष्य-जीवन की अन्य सभी उपेक्षाओं से बच गई। मुझे इसके लिए किसी से शिकायत नहीं।"

नवनीत ने कहा, "मैं बहस नहीं करूँगा। जो बीत गया है, और जिसको पाने का कोई उपाय नहीं है, उसकी आलोचना व्यर्थ होती है। चाहो तो मैं अपना अपराध भी स्वीकार कर लेता हूँ। आवश्यक केवल यही है कि अपनी पुरानी गलतियों से हम सबक लें, और उन्हें भविष्य में न होने दें।"

"ऐसे मामलों में अपराधी तो होता है सिर्फ तकदीर।" और उसने फिर मुस्करा दिया।

"उसे भी जाने दो। मैं अब दूसरी बात के बारे में पूछना चाहता हूँ। यानी अन्य स्त्रियों के साथ मेरे सम्बन्ध की तुम्हारी कल्पना के बारे में।"

माया ने कहा, "मेरी कोई कल्पना नहीं है। होगी तो तुम्हारी ही होगी। यदि तुम्हारा किन्हीं स्त्रियों से सम्बन्ध हो तो मुझे क्या ? मैं क्यों उससे अपना सिर खराब करने लगी ? इतिहास में यही तो पढ़ती आई हूँ कि पुरुष एक साथ कई-कई विवाह करते आए हैं। हमारे आदर्श भगवान कृष्ण के तो सोलह हजार आठ रानियाँ थीं। मथुरा में पैदा होकर इतनी छोटी-सी बात मैं ही न जानूँगी तो कौन जानेगा। इसके अलावा पुरुष विवाह के बाहर भी तो कई-कई सम्बन्ध रखता रहा है! जिसे समाज ने ही स्वतन्त्रता दे रखी है, उसके लिए एक अबला नारी की शिकायत ही क्या।"

"मैं समाज की इस संकीर्णता का पक्षपाती नहीं हूँ।" नवनीत ने नई सिगरेट जला ली थी।

"उससे उदारता की आशा करते हो ?" माया ने कहा।

"आशा ही नहीं, अपेक्षा करता हूँ।"

"सो पुरुष को तो प्राप्त है ही।"

"वह पर्याप्त नहीं है। नारी के लिए भी उसे उदार मनोवृत्ति अपनानी होगी।"

"यानी तुम चाहते हो कृष्ण के साथ ही साथ द्रौपदी का आदर्श भी समाज में प्रचलित हो ?"

"तुम समझने की कोशिश क्यों नहीं करतीं माया। मेरा यही मतलब है क्या ?"

"तो फिर अपना मतलब तुम्हीं साफ-साफ क्यों नहीं कह देते ?"

नवनीत ने फिर सिगरेट को एश ट्रे से उठा लिया और मानो विचार संग्रहीत करके धीरे-धीरे कहने लगा, "मैं कह रहा था माया—तुम खुद पढ़ी-लिखी हो, और सृष्टि के तथा मनुष्य के विकास के बारे में, उसके मनोविज्ञान के बारे में भी काफी कुछ पढ़ा होगा—"

"कोई खास नहीं।"

"मैं भी कोई विकासवाद या मनोविज्ञान के गूढ़ तत्वों की बात नहीं कहता। मैं केवल नर-नारी के प्राकृतिक सम्बन्धों के बारे में ही कुछ कहना चाहता था। आखिर प्रकृति ने नर और नारी को बनाया ही क्यों ?"

"माया ने हँसकर कहा, "इसलिए कि एक नर अनेक नारियों के साथ विवाह करके मौज करे।"

"यह बुराई समाज में बहुत बाद में आई। पहले ऐसा नहीं था।"

"यानी मनुष्य ने विकास के फलस्वरूप इस प्रथा का आविष्कार किया ?"

नवनीत ने भी हँसकर कहा, कह सकती हो, क्योंकि प्रकृति के समाज में अच्छाई या बुराई नाम की कोई चीज नहीं है, कम से कम इस अर्थ में तो नहीं जिसे हम मानते हैं। प्रकृति में नर और नारी की विशिष्ट योजना का एक ही प्रयोजन रहा है, और वह है प्रजातियों का वर्धन। प्रकृति के समस्त प्राणियों में यह नियम सरलता से देखा जा सकता है, निरपवाद।"

"कुतिया के पीछे लगे कई-कई कुत्ते कोई भी देख सकता है, पर उनमें फिर भी एक मौसम होता है। क्या मैटिंग-सीजन कहते है न ? मानव में वह भी नहीं होता।"

नवनीत ने माया के व्यंग की चिन्ता न की और कहा, "मानव उच्चतर प्राणी जो है, वह अपने आवेगों पर नियंत्रण जो रख सकता है ! यह नियंत्रण कहीं इतना निषेधात्मक न हो उठे कि प्रकृति का प्रयोजन ही नष्ट हो जाए इसलिए प्रकृति ने नर-नारी में पारस्परिक एक आकर्षण की सृष्टि भी की है, ताकि हर स्वस्थ पुरुष और हर स्वस्थ नारी एक दूसरे के प्रति आकर्षित हों। प्रकृति का यह सहज नियम है।"

माया ने हँसकर कहा, "इतना सहज नियम है, यह मैं नहीं जानती थी। लेकिन तब तो कौन किसके लिए घर बसाता ? पति और पत्नी की संज्ञा कितने क्षण की होती ? बच्चे खैर माँ को तो पहचान ही जाते, पर बापको कहाँ से जानते ? और बच्चे ही क्यों, माँ ही उनके बाप को कहाँ पहचान पाती।"

"लेकिन समाज का ऐसा रूप भी रह चुका है माया, जिसे मातृसत्ताक समाज कहा जाता था। तब एक ही नारी के कई-कई पति होते थे, और वही परिवार का केन्द्र होती थी।"

"और आज का पति उसी का बदला लेना चाहता है। है न ? अब पति के कई-कई पत्नियाँ हों, और परिवार का केन्द्र भी वही हो। ठीक तो है।"

"शायद हमारे समाज की वर्तमान अवस्था ऐसी ही प्रतिक्रिया से उत्पन्न हुई हो।"

"मान लेती हूँ। लेकिन इस सबसे अभी क्या अर्थ है ? क्या तुम कुछ और विवाह करना चाहते हो ? मेरी ओर से कोई बाधा नहीं है तुम्हें।"

"मैं विवाह की बात नहीं कहता माया। मुश्किल यह है कि समझकर भी तुम समझना नहीं चाहतीं। एक मित्र के साथ तो स्वस्थता तथा अनासक्ति के साथ चर्चा की जा सकती है, किन्तु अपनी ही पत्नी से उसी आब्जेक्टीविटी के साथ बात करना बड़ा कठिन हो जाता है।"

"तो जाने दो। बात ही करना हो तो और भी कई विषय हैं। चाहो तो पूछ सकते हो कि तुम्हारी गैरहाजिरी में मैं दिन भर क्या करती हूँ, या कि तुम्हारी तनख्वाह को किस तरह खर्च किया जाता है। नारी ही के विषयों में दिलचस्पी हो तो बता सकती हूँ कि पकौड़ियाँ किस तरह बनाई जाती हैं, मसाला किस परिमाण में तैयार किया जाता है—।"

नवनीत ने हँसकर कहा, "तुमसे बहुत कुछ सीखना है माया। मैं नहीं जानता

था कि तुम इतनी बुद्धिमान हो। दोष मेरा ही है, कभी बैठकर बातों का लुत्फ नहीं उठाया तुम्हारे साथ। अच्छा, एक प्रश्न का सच्चा उत्तर दोगी ?"

"झूठ बोलना मेरी आदत नहीं है।"

"मैं तो कभी-कभी बोल ही लेता हूँ। खैर, यह बताओ, तुम मुझे प्यार करती हो ?"

अँधेरा बढ़ चुका था। कमरे में रोशनी थी, किन्तु माया का मुँह ठीक रोशनी के सामने नहीं था। शायद नवनीत ने लक्ष्य करने की चेष्टा की, किन्तु माया के सफेद गालों पर एक क्षणभर के लिए तैर आने वाली ललाई उसकी पकड़ में कैसे आती। और फिर माया ने भी अपने आपको सम्हाल कर कहा, ऐसे प्रश्नों का उत्तर तो सिनेमा के पर्दे पर पाँच आने देकर प्राप्त किया जा सकता है।"

"मजाक नहीं माया, तुम्हें मेरी कसम है, सच सच कहो।"

"कसम तो खाने की चीज है, खाने के बाद उसका क्या रह जाता है। लेकिन—।"

"कहो बिना संकोच के कहो माया । छिपाने की जरूरत नहीं है, मैं तुम्हें कभी गलत नहीं समझूँगा। किसी को प्यार करना या न करना दुःख की बात हो सकती है, पर लज्जा की नहीं।"

"लेकिन इसका ठीक उत्तर कोई जानता ही हो, यह क्या सदैव संभव है ?"

"नहीं हो सकता है, पर तुम अपनी बात कहो।"

"मैं भी नहीं जानती। सच ही कह रही हूँ। भय मुझे किसी का नहीं है। शादी तब ही हो गई, जब न शारीरिक-दृष्टि से न मानसिक दृष्टि से उसके बारे में कुछ समझती थी। और तब प्रेम करने का सुयोग ही कहाँ रहता है ?" और वह कुछ-कुछ मुस्करा दी।

"शादी तो मेरी भी उसी उमर में हुई है न। और तब मैं भी क्या उसके बारे में समझता था ?"

"तो फिर तुमने प्रेम करने का सुयोग पा लिया होगा। मेरी मुबारकबाद। पत्नी के सामने न हों, पर मित्र के सामने तो ऐसी बातें खुलकर की ही जा सकती हैं। और दोस्त को मुबारकबाद भी देना ही चाहिए। बस ? अब चलूँ मैं ?" और वह उठ खड़ी हुई।

नवनीत ने माया की ओर देखा। एक लम्बी साँस लेकर एश ट्रे से बुझी हुई

सिगरेट उठाकर वह भी उठ खड़ा हुआ और बोला, "शायद मेरी बात की कीमत तुम पाँच आने भी न समझो अगर मैं अपनी कहूँ···" और वह रुक गया।

"जितने की बात होगी उतना तो समझना ही होगा। खरीद करते समय कम कीमत आँकने के लिए नारी यों ही बदनाम है। लेकिन रुक क्यों गए? खरीदार के भाव पर तो माल की सच्ची कीमत निर्भर नहीं करती।"

"नहीं, कहने से कोई लाभ नहीं। तुमने यों ही उसे सौदेबाजी की जिन्स बना डाला है।"

"मैंने? मैं तो महाराज, यह भी नहीं जानती कि तुम कहना क्या चाहते हो।"

नवनीत ने सिगरेट जलाकर कहा, "तुम सच कह रही होगी। अगर मैं कहूँ कि मैं तो तुम्हारे सिवा किसी को प्रेम नहीं करता तो अवश्य मुझ पर हँसोगी। विश्वास भी शायद नहीं कर सकोगी।"

माया मुँह फिरा कर खड़ी हो गई। "हँसूँगी? और एक हिन्दू नारी के लिए क्या इस तथ्य की कीमत सिर्फ पाँच आने है? लेकिन तुमने जो इसे, पाँच आने क्या पाँच कौड़ी का बना डाला है। तुम क्या जानो, प्रेम किसे कहते हैं।"

लेकिन नवनीत के चेहरे पर झुँझलाहट नहीं थी। मुँह से धुआँ फँकते हुए बोला वह।

"चौदह-पन्द्रह की उम्र में अगर एक एक लड़की प्रेम का अर्थ नहीं समझती तो लड़का ही कहाँ समझता है? लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं है कि मैं कोई प्रेम-विवाह का हिमायती होऊँ। इसके अलावा प्रेम करना कोई कठिन बात नहीं है, कठिन तो उसकी परीक्षा होती है, जिससे हमें अभी सामना ही नहीं हुआ है। मैं सचमुच नहीं जानता कि तुम्हारे प्रेम की परीक्षा में मैं सफल हो सकता हूँ या नहीं—परीक्षा के बिना ही तुम जो मुझे मिल गई हो न। और आदमी का मन जरूर थोड़ा शहजोर होता है, खाली खड़े रहने से उसे दुश्मनी है, इसीलिए उसे लगाम की जरूरत रहती ही है। प्रेम और आकर्षण में आखिर तो अंतर है ही, और न हो, चौदह-पन्द्रह की उमर में, पच्चीस वर्ष की उमर में तो उस अंतर को समझा ही जा सकता है।

"और वह तुम्हारे साहब की लड़की?"

"वही क्यों? और भी कुछ लड़कियाँ हैं, और ढेर सारे लड़के हैं, जो मेरे मित्र हैं अलग-अलग रास्तों पर। किसी से कम छनती है, किसी से अधिक।

किसी से मित्रता का आधार है टेनिस का खेल, तो किसी से एक ही दफ्तर का काम, और किसी से इतिहास की रुचि।"

"किन्तु तुम्हारे साहब की लड़की से मित्रता का आधार तो बहुत बड़ा है न।"

नवनीत ने माया का हाथ पकड़कर कहा, "बैठो बैठो। यह अच्छा हुआ कि बात छिड़ गई। कोई नहीं चाहता कि ऐसे मामलों में गलतफहमी रह जाए।"

माया पुनः बैठ गई, किन्तु इस बार अवश्य उसके चेहरे पर हल्कापन नहीं था।

नवनीत ने माया के और प्रश्न की अपेक्षा नहीं की। सिगरेट को एश ट्रे में चूर कर डालते हुए उसने कहा, "पत्नी को पति का सबसे बड़ा मित्र भी होना चाहिए, और यदि वह ऐसा मित्र है तो कोई कारण नहीं कि दोनों अपने मन की बात निर्भय परस्पर क्यों न कहें। हमारे विवाह को अवश्य दस वर्ष होने आए हैं, पर साथ हम रह रहे हैं गए चार-पाँच साल से। यह बात नहीं कि पहले के पाँच-छः वर्ष तक मैंने तुम्हारे बारे में कभी सोचा ही न हो। समय के साथ ही साथ कई संदर्भों में कई रूपों से तुम्हारे बारे में सोचता रहा हूँ, यद्यपि तुम्हारे विरह में मैंने कोई कविता नहीं की, दुःख भी अनुभव नहीं किया। मेरे निकट तुम थीं तो नहीं, पर आकाश-कुसुम भी तुम नहीं थीं। चौदह की उम्र में विवाह के ठीक बाद बिताया तीन-चार दिन का समय किसी वेदना की अपेक्षा कुतूहल का ही विषय हो सकता था। और यह भी जानता था कि हमारी-तुम्हारी पढ़ाई के हित में हमारा दूर रहना ही उचित था। लेकिन उमर और वातावरण तो हमारी सुविधा के लिए रुके नहीं। कॉलेज में लड़कियाँ भी मिलीं, लड़के भी मिले। मुफ्त का पैसा, और छोटी उमर में ही कॉलेज में बड़े-बड़े लड़कों से आगे। खूबसूरती कुछ खास नहीं—सच कहता हूँ मुझसे अधिक सुन्दर लड़के वहाँ मौजूद थे, और उनके पीछे लड़कियाँ थीं भी। लेकिन लड़कियों का दिमाग उल्टा भी जरूर होता है तभी तो मुझे घेरे रखने वाली लड़कियों की संख्या कम नहीं हुई। कॉलेज में तो यह आमफहम बात है, यह तो तुम जरूर जानती होगी, कम से कम जहां सहशिक्षा है। नहीं क्या?"

"मैं क्या जानूँ? मैं तो हमेशा से लड़कियों के कनवेंट में ही पढ़ी हूँ।"

"तभी तुम्हारा आत्मसम्मान बना हुआ भी है। यों कॉलेज के अन्य छात्रों से मेरी परिस्थिति केवल एक बात में भिन्न थी कि मैं विवाहित था, पर कहने पर भी

कोई विश्वास नहीं करता था। लेकिन अविवाहित छात्रों का कॉलेज का प्रेम भी कोई खास गुल नहीं खिलाता। परीक्षा हुई, अपने अपने घर गए, और माँ-बाप की मरजी के अनुसार विवाह की घंटी बाँध ली अपने गले में। उन दिनों की बातें बस यार-दोस्तों में ही करने को रह जाती हैं।"

"लेकिन अब तो तुम कॉलेज में नहीं हो, फिर भी वह जो तुम पर छाई हुई है।"

"इसलिए कि एक तो वह मेरे बॉस की लड़की है, जिसे पढ़ाते रहने का मुझे लाभ भी हुआ है। देखती तो हो, मैं दफ्तर में सुपरिंटेंडेंट हो गया हूँ।"

"उससे विवाह कर लो तो शायद सहायक पोस्ट मास्टर जनरल हो जाओगे!"

"मैं चाहता रहा हूँ कि बिना विवाह ही यह यदि सम्भव हो जाए तो क्या बुरा है!"

"वाइसराय की लड़की से विवाह करने पर तो तुम किसी प्रान्त के गवर्नर तक हो सकते हो!"

"लेकिन वह है तो सौदेबाजी ही न? तुमसे जो सम्बन्ध है उसमें सौदेबाजी कहाँ है?"

"मुझ गरीब से तुम्हें मिल ही क्या सकता है?" किन्तु इस कथन के साथ ही शायद दोनों ही एक साथ समझ गए कि आखिर नवनीत आज जो कुछ है वह किस की कृपा का फल है! कहीं नवनीत माया के कथन का यह अर्थ न लगा ले, इसलिए माया ने कहा, "मुझे मथुरा भेज दो न!"

"क्यों?"

"अपने साहब की लड़की से विवाह करके बड़े अफसर बनने का मार्ग मुक्त हो जाएगा।"

"इसी को तो स्त्रियों की तुनुक मिजाजी कहते हैं। तुम शायद नहीं जानना चाहतीं कि मैं शर्ली को छोड़ सकता हूँ किन्तु तुम्हें नहीं।"

माया फिर उठ खड़ी हुई, और बोली, इतनी जल्दी किसी स्त्री का जादू पुरुष पर से उतर जाए यह मानने जैसी भोली मैं नहीं हूँ।"

"लेकिन प्रारम्भ तो कहीं से करना ही होता है। मैं मानता हूँ, शर्ली का जादू ऐसा नहीं कि जल्दी उतर जाए। तुम न होतीं तो शायद मैं उससे विवाह

का प्रस्ताव भी कर सकता था, पर तुम न होतीं तब ही !"

माया ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह अपने कमरे में चली गई। नवनीत देखता ही रहा। वह यह भी नहीं सोच सका कि आज की बातचीत को वह संधि समझ ले, या अभी पहले जैसा विग्रह ही बना हुआ है ?

अवश्य उसके बाद नवनीत की संध्याएँ घर पर ही बीतने लगी थीं। शर्ली को पढ़ाते रहने के बहाने को उसने बिलकुल ही छोड़ दिया। लेकिन माया की ओर से उसे फिर कोई उत्साह नहीं मिला। शाम को जब वह लौटता तो हरनाम के हाथ चाय भिजवा देती वह, और फिर खुद चौके में फँस जाती, जहाँ से नौ-दस से पहले उसका निकलना नहीं हो पाता। नवनीत जासूसी पुस्तकें लेकर समय बीतने की राह देखता और इसी में सो भी जाता। एक दिन उसने सिर दर्द और बुखार का बहाना भी किया। बुखार की पोल थर्मामीटर ने खोल दी, और सिर-दर्द के लिए हरनाम बाम ले आया। बाम या और किसी प्रकार के उपचार से तो उसका सिर दर्द ही भला। किसी तरह आँखों ही आँखों में रात बिताई, और लगभग पन्द्रह दिन की व्यर्थ तपस्या के बाद उसने सोचा कि संध्याएँ शर्ली के साथ चाहे न हों पर इस तरह घर पर नहीं बिताई जा सकतीं। और तब धीरे-धीरे शर्ली को उसके निकट सम्पर्क में पुनः आने में विचार की जरा-सी ढील आवश्यक थी। वह अब उसके निकट ही आ गई थी, और आज तो वह उससे प्रस्ताव ही करने वाला था—क्या लाभ है उस बात को सोचने से ही। माया ने अचानक ही मथुरा अपने पिता के घर चली जाने का इरादा कर लिया और उसे पता ही तब लगा जब कि हरनाम स्टेशन पर टिकिट लेने चला गया था।

नवनीत की तन्द्रा टूट गई। सचमुच कहाँ है आज माया ? यदि उस रात वह उसे इस तरह एकाकी छोड़ कर न चली जाती तो क्या कभी उसका परि-प्रेक्ष्य खो सकता था ? और एक क्षण पहले ही तो नीलम ने पूछा था, कि क्या वह जानता है कि वह अभागिनी जीवित भी है या नहीं ?

५ नीलम कुमारी

नवनीत की तन्द्रा टूट चुकी थी। नीलम खड़ी हुई उसे ललकार रही थी। सभा के सभी सदस्य मंत्रमुग्ध की तरह नवनीत पर लगाए जा रहे आरोपों को सुन रहे थे।

नीलम कह रही थी, "चिरकाल से नारी को अपने पैर की जूती समझने वाले मि० नवनीत लाल, नारी अब जागृत हो गई है, और पुरुष के किए हुए पाप को अब वह चुपचाप नहीं सहेगी, बल्कि कुचली हुई नागिन की तरह फन फैला कर उठ खड़ी होगी। सौभाग्य से आज इस सभा का नेतृत्व भी एक ऐसी ही जागृत अद्भुत क्षमताशालिनी नारी के हाथ में है। और आपके अपराधों की गुरुता? संयोग से यदि इस आसन पर आपकी पत्नी, वह अभागिनी परित्यक्ता देवी भी होती, और उसे आपके अपराधों का विचार करने का अधिकार दिया जाता, तो अवश्य ही आप जैसे शठ को उसके निकट प्राणों की भीख माँगना ही शेष रह जाता। और मैं यह भी कह सकती हूँ कि सहे हुए अत्याचारों का स्मरण करके वह आपकी इस भीख को ठुकरा कर नारीत्व के गौरव को बनाए रखती।"

मथुरा नगरी के बाहर भैरव के मन्दिर में खाट पर पड़े बीमार नवनीत की आँखें एकाएक ही दीप्त हो उठीं। अपराधों पर हास्य की एक रेखा भी फूट आई। बीमार का सिर सहलाता हुआ हरनाम चौंक उठा। उसका मालिक क्या सपना देख रहा है? जगाकर पूछे? किन्तु नहीं, सो रहे हैं, और यदि स्वप्न में ही उन्हें किसी तरह का संतोष और प्रसन्नता प्राप्त हो रही हो तो उन्हें क्यों उससे विरत किया जाए?

किन्तु नवनीत सोया न था, स्वप्न भी नहीं देख रहा था, केवल स्मृति के

पट पर अपना अतीत का चित्र देख रहा था। नीलम ने कहा था कि यदि उस आसन पर उसकी परित्यक्ता पत्नी होती ! नहीं, उस समय वह जानता था कि सभा की अध्यक्षता उसकी पत्नी ही कर रही थी। कोई नहीं जानता था, पर स्वयं सभानेत्री तो जानती ही थी। नीलम का वक्तव्य सुन कर क्या प्रतिक्रिया हुई होगी उस पर ? जो भी कुछ प्रतिक्रिया हुई होगी, पर वाह री माया, प्रगट में मानों तुम्हारे ऊपर कुछ कहा ही नहीं गया हो जैसे ! अगर अपने मनोभावों पर इतना गहरा नियन्त्रण न हो तो विप्लव-दल जैसे दुर्द्धर्ष दल का नेतृत्व कैसे मिल सकता है ? और ऐसी ओजस्विनी नारी और कोई नहीं, उसकी पत्नी स्वयं मायावती थी ! यह क्या कम गर्व, कम प्रसन्नता की बात है ? आवेश के कितने अवसर नहीं इस न्याय-विचार में माया के सामने प्रस्तुत हुए, किन्तु कैसा भी कोमलतम अवसर क्यों न हो, माया ने अपनी भूमिका बड़ी ही सफलता से निभाई। कहाँ है अब वह महिमामई नारी ? क्या उसकी पुकार पर वह कुछ भी कान देगी ? क्या नवनीत उसके व्यक्तित्व के क्षुद्रतम अंश के उपयुक्त भी रह गया है ?

शीघ्र ही तो नवनीत अपनी स्मृति की गेलरी में पहुँच गया। हरनाम जान ही नहीं सका कि नवनीत चेतना के किस स्तर पर अपने ही मन के राज्य में विचरण कर रहा है।

तो, नवनीत को पहले जो क्षीण-सा अभास हुआ था कि सभा का नेतृत्व सुरेश नारायण नहीं, बल्कि कोई महिला कर रही है, शायद जिसका स्वर भी वह एक बार सुन चुका है, यह सच है। कौन है वह नारी ? कहाँ है वह ? क्या वह अँधेरे गवाक्ष में तो नहीं है ? अराजक दल और गुप्त संगठनों में नकाब से चेहरा ढाँकने की प्रथा तो है। तभी तो सुरेश नारायण रह-रह कर गवाक्ष की ओर देख लेते हैं, मानों वहीं से उन्हें प्रेरणा मिल रही है। किन्तु नवनीत का ध्यान नीलम की वक्तृता पर सदस्यों द्वारा बजाई गई तालियों की गड़गड़ाहट में टूट गया। नीलम सभी की आँखों का केन्द्र बनी हुई थी।

नवनीत के स्वाभिमान को चोट लगी। अवश्य ही माया के प्रति उसने अन्याय किया है किन्तु उसके मन की उदग्रता को समझे बिना वह स्वयं जो उसे उस शाम अकेला छोड़ कर चली गई, वह क्या उसका अन्याय नहीं था ? विवाह

का तात्पर्य, प्रेम और विवाह के नाम पर भी, एक दूसरे के ऊपर निरंकुश शासन नहीं है। परस्पर सहानुभूति, पारस्परिक रुचियों को समझना, और उसके अनुसार अपनी ओर से सहयोग और त्याग, यह भी तो विवाह की आवश्यक शर्त है। इस दिशा में जितने दोषी वे हैं, उतनी ही दोषी क्या माया नहीं ? और तब भी यह तो उन दोनों के बीच की बात है। यदि माया उनसे अभियोग करती तो उचित भी था, पर यह नारी ? सचमुच इसने भी तो प्रेम किया था नवनीत से। आकर्षित भी हुआ था नवनीत उसकी ओर, किन्तु प्रथम तो उसकी प्रगट सामाजिक-मर्यादा से, और फिर आरती की उत्फुल्ल मादकता ने रोक लिया था उसको। कहीं अपने ही प्रत्याख्यात प्रेम का बदला तो नहीं ले रही है नीलम ? तब तो मियाँ की जूती और मियाँ का सिर ही क्यों न हो ?

नवनीत ने सीना तान कर कहा, "यदि तालियों की गड़गड़ाहट से आप के कान पक न गए हों नीलम कुमारी, तो मैं एक बात आप से पूछना चाहता हूँ। जो कुछ आप कह रही हैं वह क्या सचमुच मेरी प्रत्याख्यात पत्नी की वकालत है, या उनकी आड़ में आप अपने ही किसी काल्पनिक प्रत्याख्यान की पैरवी कर रही हैं ? मेरी पत्नी की वकालत हो तब तो मैं जानना चाहूँगा कि आपको इसका अधिकार देने वाली वह देवी कहाँ है ? वकालतनामा न भी प्रस्तुत कर सकें तो भी मुझे कोई आपत्ति नहीं। मैं केवल उनका पता जानना चाहूँगा। और अगर आपकी ही बात हो तो क्या सफाई पेश करने की आप मुझे इजाजत देंगी ?"

नया गुल खिला देख कर सभा की उत्सुकता चरमता को पहुँच गई थी। नीलम और नवनीत में परिचय तो अवश्य रहा होगा, यह सभी जानते थे, किन्तु किसी मधुर-सम्बन्ध की व्याप्ति भी दोनों के बीच थी इसकी कल्पना उन्हें न थी। स्वयं नीलम भी इस अप्रत्याशित प्रहार से क्षण भर के लिए स्तंभित हो गई, किन्तु तत्क्षण ही अपने को सम्हाल कर उसने कहा।

"नहीं मि० नवनीत लाल, न तो मैं वकालतनामा ही प्रस्तुत कर सकती हूँ, न उनका पता ही मैं जानती हूँ। फिर भी एक नारी हूँ, इसलिए उनकी वकालत का अधिकार तो मुझे है ही। रही बात मेरे प्रत्याख्यान की, सो आप क्यों उसकी सफाई दें ? मैं खुद दे सकती हूँ। आखिर वह मेरी ही तो कमजोरी है, मेरे हृदय ने जो मुझे धोखा दिया था उसकी कथा तो मैं ही अच्छी तरह कह सकूँगी, फिर उसने सदस्यों की ओर मुँह करके कहा, "साथियों, जिस प्रवाद की ओर

मि० नवनीत लाल ने संकेत किया है, वह किसी लज्जा का प्रसंग नहीं। नारी को तो जीवन ही प्रेम करने के लिए मिला है, किसी योग्य-पात्र के प्रति समर्पण किए बिना उसके जीवन की सार्थकता ही कहाँ है? दुर्बलता का प्रसंग यह हो सकता हो कि उसके जीवन को सार्थक करने वाले प्रेम का पात्र कोई नवनीत लाल जैसा क्षुद्र व्यक्ति हो जाए। और दुर्बलता भी तो वह नहीं है। मैं आपको सारी ही कथा कह सुनाती हूँ। मुझे तो गर्व भी है कि जैसे ही मुझे अपने प्रीतिपात्र की अकिंचनता का पता चला, मैं उसे जीर्ण-कन्था की तरह विसर्जित करने में भी सफल हुई हूँ। मैं स्वीकार करती हूँ, यही वह व्यक्ति है जिसे मैंने एक दिन अनायास ही प्रेम करने की भूल की थी। लेकिन वह भूल कैसे हुई, किन परिस्थितियों में हुई? कल्पना कीजिए?"

फरवरी की शाम थी। इन दिनों जाते-जाते रुककर सरदी पीछे मुड़ कर अपनी उपलब्धियों को देखने का लोभ नहीं रोक पाती। बड़े शहरों में सरदी एक नियामत हो सकती है किन्तु मानपुर जैसा कस्बा तो आठ बजे रात से ही घरों के भीतर चार दिवारी में लिहाफ में लिपट जाता हैं। बाहर रहती है केवल निस्तब्धता, और एकान्त का लाभ उठाकर प्रायः ही कुहरा उसे अपने आलिंगन में कस लेता है।

नीलम का दिन आज बड़े उत्सव में बीता था। क्रिप्स-मिशन असफल होकर लौट गया था। 'भारत छोड़ो' आन्दोलन की शुरुआत हो गई थी। दिन को अंग्रेजों के युद्ध-प्रयत्नों में असहयोग को बढ़ावा देने के लिए पास के गाँव में जो गुप्त-सभा हुई थी, अधर लाल उसमें नहीं जा सके थे। उनका नया पोस्ट मास्टर अस्वस्थ हो गया था, इसलिए नीलम ही को वहाँ जाना पड़ा था। गाँवों की सरल जनता से यह उसका पहला साक्षात्कार था, और वह उनसे बहुत अधिक प्रभावित हुई थी। शाम को गाँव के गामोठ पं० भर्तृहरि शास्त्री ने दशम स्कंध की कथा भी सुनाई थी। गोपियों के अनन्य प्रेम की कथा से नीलम का सारा मानस सिक्त हो गया था। आध्यात्मिक-प्रेम की मादकता छाई हुई थी ही, इस लिए जरा अँधेरा होते ही उसने अपने साथी वादकों को बुला भेजा था। मानपुर में वह यों भी एक गायिका के रूप में ही प्रसिद्ध है। संगीत का अभ्यास चल रहा था उसका उस समय। शास्त्री जी को भी रोक लिया था उसने। मीरा के भक्ति-रस की

स्रोतस्विनी में वे भी बह चल थे।

गाँव की बस्ती में उसका विशेष आदर-सत्कार नहीं है, इसकी वह चिन्ता भी नहीं करती। गायिका का गाँव-देहात में कोई वेश्या के अलावा दूसरा अर्थ नहीं लेता। पर वह क्या करे ? गायिका का बानक भी उसे जबर्दस्ती स्वीकार करना पड़ा था। किसी भी भले गाँव में बिना कुछ किए और बिना किसी जीविका के प्रगट-साधन के, रहा तो नहीं जा सकता न। मानपुर छोड़ कर अन्यत्र जाने का भी उसके सामने प्रश्न नहीं था। एक तो अधर लाल वहीं पर तैनात थे, दूसरे, दल की उनकी शाखा को छिपे रह कर यहीं से कार्य करने में सुविधा थी। भारतीय-संगीत में नीलम कभी की निष्णात हो चुकी थी, और यहाँ आने पर जिस समय उसने प्रगट रूप में अपनी जीविका के लिए यह पेशा घोषित किया तो उसे इसके अन्य अर्थों की कल्पना भी नहीं थी। जो हो, जो लोग वेश्या शब्द से ही कतराते हैं, वे प्रारम्भ से ही इस नारी से उदासीन रहे हैं। लेकिन हर गाँव में एक दल मनचले, बिगड़ेदिल शौकिन जवानों का भी होता है। पहले तो उन्होंने खुले प्रस्ताव किए जो एकदम ही टाल दिए गए। तब कुछ लोगों ने संगीत सुनने के बहाने प्रवेश प्राप्त किया। यहाँ तक नीलम को भी कोई आपत्ति नहीं थी। पर जब नीलम को डिगाने के उनके अन्य सब प्रयत्न व्यर्थ हो गए, तो वे आप ही उदासीन होकर लौट आए। कभी-कभी कोई भीरु-युवक तथ्य को न जानकर रात्रि के अँधेरे में छिपकर भी आजाया करता, और वह भी मीरा के भजनों में अपने मन के वहम को खोकर बिदा हो जाता, कभी-कभी अच्छे उपदेश के साथ भी।

मीरा का भजन शेष हो गया तो नीलम ने किसी विरहिणी गोपिका की करुण पुकार तानपूरे में ध्वनित की। वागीश्वरी का ठाठ जमाया गया। उस्ताद नजीरुद्दीन खाँ साहब सारंगी के कान उमेठ कर उसे उसी ठाठ पर सस्वर करने लगे। पखावज को एक ओर सरका कर मास्टर चिम्मन ने तबलों की पीठ थपथपानी शुरू करदी, और फिर ठिठुरती हुई मध्य-रात्रि-जैसी उस निर्जनता में नीलम के कंठ से मानों मूर्त वागीश्वरी ही फूट पड़ी, "कैसे कटे रजनी सजनी, पिया बिन। मानो महारात्रि के विरहान्धकार का पर्वत वेदना-विगलित आँखों के आँसुओं से तिल-तिल कर घुलने लगा। साजिन्दो के साथ ही साथ भर्तृहरि शास्त्री का सिर भी झूमने लगा, उनकी आँखें आपसे आप बन्द होगई।

लेकिन तभी गायिका को लगा मानो मजीरे बजाने वाले ने ताल भंग कर दिया। पर वह तो उसी तरह रस में डूबा बेसुध है, और उसकी ताल एकदम स्वर-संस्थान से मिलीरिली हुई है। तब ? उस्ताद नजीरुद्दीन खाँ मस्त बने सारंगी के गज से ताने-पलटे निकाल रहे थे और मास्टर चिम्मन द्रुत में कूद पड़ने की राह देख रहा था। नीलम की अँगुलियाँ जरूर तान पूरे पर थीं, पर मन उस बेसुर की ओर था। अवश्य नीचे के दरवाजे पर साँकल खटखटाने का स्वर क्षीण था, इसमें तो कोई सन्देह नहीं तभी तो नीलम के सिवा किसी ने लक्ष्य नहीं किया। कोई भीरु किशोर होगा, किन्तु नीलम को क्या करना है ऐसे गुप्त ग्राहकों से ? आप ही चला जायगा। शायद फिर साँकल खटखटाए, ऊपर से ही दुतकार न दिया जाए ? लेकिन देखे तो नीलम, कैसा है लड़का ? इस तरह के एकरस जीवन से वह ऊबती भी तो जा रही है। मगर गीत बीच में भी तो नहीं छोड़ा जा सकता। अच्छा ठीक है अगले आरोह के बाद सम, और फिर पड़ाव।

गीत समाप्त होने तक नीलम के कान उधर ही लगे रहे, पर किसी ने फिर साँकल नहीं खटखटाई। तो भी नीलम ने एक क्षण भर की छुट्टी ली, और दबे कदमों वह नीचे उतर आई। अगर बिलकुल ही कच्ची उम्र का होगा तो दरवाजे से सटा खड़ा होगा ताकि आने जाने वाला कोई देख न ले। दिल भी खूब ही धड़क रहा होगा उसका। कहते हैं दरवाजे से कान लगाओ तो धड़कन इस पार सुनाई दे जाएगी। सोचकर आप ही हँस पड़ी नीलम। उसने धीरे से अर्गला खोली, और किवाड़ को थोड़ा-सा खींच कर बाहर झाँका। वहाँ सिवा घनीभूत कुहरा-च्छन्न ठंडे अंधकार के कहीं भी तो कुछ नहीं है। म्युनिसीपैलिटी के दिए बुझ चुके थे, और द्वादशी का चाँद अभी क्षितिज की कोर तक भी नहीं पहुँच पाया था। जवाब न पाकर शायद लौट गया है। साहस ने ही जवाब दे दिया होगा। और हवा के झोंके से भी तो साँकल हिल सकती है। या फिर उसका भ्रम मात्र था।

और जैसे ही वह पुनः किवाड़ भिड़ाने को हुई कि उसे दूर जमीन पर कुछ बुझता हुआ स्फुलिंग-सा दिखाई दिया, और उसी के पास कुछ गठरी-जैसी भी तो पड़ी हुई है। दरवाजे की झिरी कुछ चौड़ी हुई। आँखें फाड़ कर नीलम ने देखा कि यह तो कोई पुरुष है, और वह स्फुलिंग है अस्तमान सिगरेट का आखिरी टुकड़ा। कितना नजदीक पड़ा हुआ है, अगर जलता हुआ सिरा इधर होता तो ?

लेकिन इस तरह पड़ा हुआ क्यों है ? मरा तो नहीं है, कम-से-कम कुछ क्षण पहले तक तो अवश्य जीवित था। जलती हुई सिगरेट बता रही है, और साँकल भी तो खटकी थी अभी। तो क्या शराबी हैं कोई ? बेहोश होकर पड़ गया है इस ठिठुरती हुई सरदी में।

नीलम दरवाजा छोड़ कर आगे बढ़ी। सिगरेट के टुकड़े को उसने दूर हटा दिया। नहीं, पिए हुए नहीं हैं, नहीं तो मुँह की बदबू के मारे पास खड़ा होना कठिन था। साँस भी अजीब-सी चल रही है। क्या बात है ? गाँव-देहात का तो लगता नहीं। नीलम ने हाथ पर हाथ रख कर देखा। अरे यह क्या हुआ ? हाथ उसके हाथ से छूट गया। यह क्या बिजली का करंट था ? नहीं नहीं, वह तो आग के समान जल रहा है। आग की गर्मी ? नहीं, वह अनुभूति कुछ और ही है। नीलम ने फिर उसके हाथ पर हाथ रखा, माथे पर रखा, फिर छाती पर—सचमुच बड़े जोरों से धड़क रही है। पर हुआ क्या है इसे ? यह स्पर्श कैसा क्या लग रहा है उसे ? पहले तो कभी वह ऐसी विवश नहीं हुई थी।

नीलम ने सिगरेट के बुझते हुए टुकड़े को उठा लिया तथा उसे फूँक देकर उस ने युवक को देखा। अरे, यह तो काफी बलिष्ठ, सुन्दर और मोहक लगता है। पहले कभी दिखाई नहीं दिया, जरूर बाहर का है। लेकिन...

काफी समय हो गया था उसे। उस्ताद नजीरुद्दीन और मास्टर चिम्मन भी नीचे आ गए, क्या बात होगई ? दरवाजे से गर्दन बढ़ाकर नजीरुद्दीन ने कहा, "क्या हुआ नीलम बानू ?"

नजीरुद्दीन खाँ नीलम को सदा बानों कहकर ही पुकारते, यद्यपि नीलम स्वयं इसे पसन्द नहीं करती। पर यह व्यक्ति अभी नया ही रखा गया है, और संगीत में सचमुच माहिर है।

उठ खड़ी होकर नीलम ने कहा, 'कोई परदेसी बेहोश हो गया लगता है उस्ताद।"

"चे खूब। इस कूचे में होश रहता ही किसे है ? मगर तुम क्यों परेशान होती हो ? चलो भीतर आ जाओ, इस शिद्दत की सरदी में कहीं ठंड खा बैठी तो गला तो खराब होगा ही..."

"नया आदमी है उस्ताद, इसे मदद की जरूरत है। इसे ऊपर पहुँचा दिया जाए न।"

नजीरुद्दीन नया आदमी था, किन्तु समझ गया था कि नीलम की बात टाली नहीं जा सकती। वह सामान्य नारी नहीं है, सामान्य गायिका तो हर्गिज नहीं है। वह आज्ञा नहीं देती, पर उसकी इच्छा में सेनानायक के आदेश की दृढ़ता रहती है। शीघ्र ही ऊपर से दो नौकर बुला लिए गए। अचेत व्यक्ति कोई सामान्य गठरी नहीं था कि एक आदमी के उठाये उठ जाता। और बेहोशी भी उसकी खूब थी उठाए जाने पर भी उसे कुछ पता नहीं था।

तल्खी भरी आवाज में नजीरुद्दीन ने कहा, "कहाँ पटक दूँ इस लाश को ?"

नीलम मुस्कराई। आवाज में ही नहीं, उसके मन में भी तल्खी है। बोली, "रात भर तो रियाज चलेगा न। अपनी खटिया खाली रहेगी। उसी पर पटक दो न।"

उस्ताद ने कहा, "मगर अपनी रजाई मैं किसी नामाकूल पर डालने के लिए तैयार नहीं हूँ बानों। खटमल चाहे खाट में ही परवरिश पाते हों, मगर जूँएँ तो आदमी के बदन पर ही पनपती हैं। फिर बिस्तर की चादर तो आसानी से धुलवाई जा सकती है, पर रजाई ?"

अपने बदन पर से इटाली का बढ़िया रग उतार कर उस्ताद को देते हुए हँस कर नीलम ने कहा तो यह डाल दो बेचारे के ऊपर। और जरा इन नौकरों को भी समझा देना कि यह भी तो उन्हीं-जैसा हँसता-बोलता इन्सान है, मैले कपड़ों का गट्ठर नहीं। और अगर भूले-भटके इस कूचे में आ गया है तो आँख का अन्धा भी होगा और गाँठ का पूरा भी जरूर होगा। सबेरे जाएगा तो मालामाल कर जाएगा आपको।"

"मगर बानो, तुम तो ठिठुर जाओगी। मेरा मतलब यह तो हर्गिज नहीं था कि···"

लेकिन नीलम हँसती हुई ऊपर चली गई।

उसके बाद संगीत की सभा फिर प्राणवान हो उठी। मालकौस के बाद हिंडोल, बसंत, और फिर सोहनी के स्वरों में जब मीरा का दर्द भरा दीवाना स्वर— "ऐरी ! मैं तो प्रेम दिवानी, मेरा दरद न जाने कोय।" मुखर हुआ तो पूर्व में द्वादशी के चन्द्रमा की कोर के साथ ही साथ अरुणोदय की लाल रेखा भी स्फीत हो उठी थी। नजीरुद्दीन ने भैरवी में एक गजल का अनुरोध किया, और नीलम के कंठ से जब अनायास ही निकल पड़ा, "वो चले, वो चले झटक के दामन मेरे

दस्ते-नातवाँ से ।" तो उसका दिल धड़क उठा । कहीं यह गजल सच होने के लिए तो नहीं है ? गजल के समाप्त होते ही अपने दिल की धड़कन को दबाती हुई नीलम भीतर उस्ताद के कमरे में जाकर देखती है तो उनकी खाट खाली पड़ी थी । अवश्य ही उसकी चादर की सिलवटें और गरमी बता रही है कि कोई दो मिनट पूर्व तक उस पर लेटा रहा है, और उसके साथ बहुमूल्य इटालियन रग भी गायब है । नीलम के चेहरे से पूर्व की सफेदी फैलते उस्ताद ने भी देख लिया।

"कहा था न मैंने बानो, बना हुआ उचक्का था । बीमारी का तो महज बहाना था । जरूर पीए हुए होगा । पता नहीं अलवान के साथ और किस पर हाथ साफ कर गया है।"

—सारी सभा जब मन्त्रमुग्ध होकर नीलम की कथा सुन रही थी, तो एका-एक रुक कर नीलम ने नवनीत की सोई हुई नत दृष्टि की ओर देखा, और फिर धीरे-धीरे कहा, "यह था मेरा पहला परिचय श्रीमान नवनीत लाल से ।"

"तो उस रात आपके दरवाजे पर बेहोश पड़ा वह आवारा युवक यह आदमी था ?" पुरुषों की गैलरी से निकल्सन ने कहा ।

दूसरे सभासद ने कहा, "शराब का नशा भी खूब था हजरत का । ताज्जुब है कि आपको पता ही नहीं चला । और रग भी चुराली हजरत ने । इसे कहते हैं हाथ की सफाई । भई आदमी खूब है, इसमें शक नहीं ।"

नवनीत ने कड़क कर कहा, "पर मैं नशे में नहीं था, यह क्यों नहीं कहतीं आप ?"

"अपनी ओर से मैं कह चुकी हूँ ।"

"और आपकी रग का चोर भी नहीं ।"

"यह कहना जरूर शेष है । सचमुच मुझे वह रग ही नहीं मिली, रात भर उससे जो उपयोग लिया गया था तथा मकान का एक रात का किराया भी, बीस रुपए का भुगतान भी मुझे मिल गया था ! क्या करती, मुझे पता लगा तब तक आप का सन्देशवाहक लौट चुका था, और किराए की रकम के बारे में मैं कुछ भी उज्र नहीं पेश कर सकी, न ही उस रकम को लौटा सकी ।"

"मैं वहाँ उस रात कैसे और किस हालत में पहुँचा था यह भी तो मैंने आपको बतलाया था । कहती क्यों नहीं उसे ?"

"मैंने तो अभी अपनी केवल पहली मुलाकात की चर्चा की है। उसके बाद दूसरी भेंट तक मुझे छः मास की राह देखनी पड़ी थी। नहीं क्या ? और तब भी नहीं। अपनी पहली मुलाकात का इतिहास आपने इससे भी बहुत बाद में बताया था मुझे। अच्छा, न हो, आप खुद ही कह दीजिए न अपनी बात ।"

नवनीत ने कहा, "विशेष क्या है सिवा इसके कि मैं उन दिनों लखनऊ से तब्दील होकर नया-नया ही मानपुर आया था। बीमार था शरीर और मन दोनों से। आया था तब माथे पर और पैर में पट्टियां बँधी थीं, पर उस रात तक शायद माथे की पट्टी खुल चुकी थी। उस दिन रात को ठिठुरती हुई सरदी के बावजूद एकाएक ही मेरा जी घबरा उठा था, और बिना नोकर को बताए ही मैं खुली हवा के लोभ से घर के बाहर निकल आया था। उसकी जो सजा मुझे भुगतनी पड़ी वह आप सुना ही चुकी हैं। आपके यहाँ तो मैं अनायास ही पहुँच गया था बिना किसी योजना के। आपके बारे में इससे पहले कभी कुछ सुना ही नहीं था। मैं कहना यही चाहता हूँ कि होश आने पर आपके सुरीले कंठ का संगीत मेरे मन में किसी मोह के स्थान पर नफरत ही भर सका था। एक ऐसे आवारा और बाजारू वातावरण में अपनी रात बिताने की मजबूरी पर मैंने कितना धिक्कारा था अपने आपको, इसे मैं ही जानता हूँ।"

"मैं भी जानती हूँ महाशय। और साथियो, जिस कारण से इनके सिर पर पट्टियाँ बँधी थीं, वह भी मैं आपको सुनाना चाहूँगी। इन्होंने नहीं सुनाया आपको क्योंकि वह इनकी आत्म-प्रशंसा होती। मैं सुनाती हूँ, क्योंकि आपको विश्वास हो जाए कि मैं निष्पक्ष हूँ या नहीं इस मामले में। यों, वह कथा भी इन्हीं के मुँह से सुनी है मैंने। आपकी इजाजत है मि० नवनीत लाल ?"

"क्या उसकी जरूरत है ?"

"जरूरत है। आपके व्यक्तित्व का सच्चा परिचय यह सभा भी पा जाए ताकि आपके साथ न्याय हो सके। आपकी पत्नी आपको छोड़ कर चली गई उसके बाद की घटना है न यह ? और शायद किसी सिनेमा के साथ लगे हुए बार और रेस्त्राँ में ही तो घटी थी न ?"

माया के विरह की ही मानसिक स्थिति थी नवनीत की उस संध्या की, जब समय बिताने का और कोई उपाय न देखकर वह सिनेमा देखने के इरादे

से बाहर चला गया था, पहले सांध्य-शो के लिए काफी लेट, और दूसके रात्रि-शो के लिए काफी जल्दी ! पास ही ग्रीनबर्ड नामक रेस्त्राँ और बार के दरवाजे पर खड़ा दाढ़ी वाला पंजाबी दरबान हर आने वाले का स्वागत कर रहा था, और जाने वाले को सलाम। कोई आने-जाने वाला अतिथि उसे अन्नी-दुअन्नी की टिप भी दे जाता। नवनीत जैसे ही पास से गुजरा, सरदार जी ने मुस्करा कर दरवाजा खोल दिया, मुस्कराता हुआ नवनीत भी भीतर घुस लिया। बाईं ओर बार का काउंटर था, वह उससे हट कर दाहिनी ओर एक खाली टेबल के पास जा बैठा। रेस्त्राँ में विशेष भीड़ नहीं थी। बार के पास ही एक अंग्रेज के सामने बोतल और ग्लास रखा हुआ था। तब तक नवनीत को बीअर और व्हिस्की आदि के अन्तर का भी पता न था, किन्तु उस अंग्रेज की चेष्टाओं से ही स्पष्ट था कि वह छक गया था।

नवनीत ने वेजिटेबल सैंडविच और चाय का ऑर्डर दिया तथा पास से अंग्रेजी की एक सचित्र पत्रिका उठाकर उसमें मगन हो गया। ग्राहक आ-जा रहे थे। नवनीत अपने ही में खोया हुआ था कि तभी बार के काउंटर पर शोर सुन कर उसने दृष्टि फिराई। वह अंग्रेज बार के मैनेजर पर लाल-पीला हो रहा था। प्रायः सभी ग्राहकों की दृष्टि उधर ही खिंच गई थी बल्कि एकाध ग्राहक उठकर वहाँ जा भी पहुँचा था। नवनीत ने जल्दि से अपना प्याला उठा कर चाय समाप्त की, और पत्रिका को एक ओर पटक कर वह भी उठ खड़ा हुआ।

साहब अंग्रेजियाना हिन्दी में बमक रहा था, "यू ब्लडी फूल। जल्डी करना माँगटा हमको पिक्चर जाना माँगटा हाय।"

मैंनेजर ने झुक कर बड़ी नम्रता से कहा, "आपका बिल सर ?"

"डिया न टुमको अब्बी टेन-रुपी नोट के साट।"

"नहीं, मुझे तो आपने कुछ नहीं दिया सर। आपका बिल होता है"—और मैंनेजर ने अपनी बिल की किताब उलट कर एक पन्ने से पढ़ते हुए कहा, "सात रुपए नौ आने सर।"

"या। आय नौ दैट। लेट मी हैव्ह माइ बैलेन्स बॉय, टू रूपीज सेवन एनेज-डो रुपिया साट आना। समझा ?"

"हाँ सर, मगर आपका दस रुपया का नोट तो मुझे नहीं मिला।"

"यू बास्टर्ड फूल। व्हॉट डु यू मीन ? डिडंट आइ पे यू द टेन-रूपी नोट ?

बैलेन्स जल्डी मॉगटा । कोठी पर अमरा मेम साब वेट करना मॉगटा ।"

मैनेजर ने दो रुपए सात आने गिने किन्तु उन्हें आगे बढ़ाते-बढ़ाते साहस करके फिर कहा, "सर, दस रुपए का नोट या बिल-विल आपने मुझे कुछ नहीं दिया । आप अपनी जेब तो सम्हाल कर देख लीजिए ।"

साहब ने मैनेजर के हाथ से बाकी के पैसे झपटते हुए कहा, "व्हॉट ? यू निगर, यू मीन, साब लोक झूँट बोलटा ?"

"झूठ नहीं सर पर गलती तो हो सकती है । इतने नोट में कौनसा नोट आप ने दिया है शायद यह न भी पहचाना जा सके, किन्तु वह बिल भी तो मेरे पास नहीं है । ये ही तो रहे सारे बिल ।" और उसने तार में फँसे दिन भर के संग्रह किए बिल की ओर इशारा किया ।

"अम नेई जानटा । टुम अपना कैश डेखो ।" और साहब आगे बढ़ने को तत्पर हो गए । काउंटर पर भीड़ काफी जमा हो गई थी, इसलिए चाह कर भी वे जल्दी नहीं कर सके । उधर मैनेजर ने अपना केश बक्स खोल कर देखा तो उसमें सौभाग्य से एक भी दस रुपए का नोट नहीं था । यह तो पक्का प्रमाण है कि साहब ने उसे दस रुपए का नोट नहीं दिया । उसने आगे बढ़ते हुए साहब का कोट पकड़ लिया और कहा, "नहीं साहब, देखिए मेरे कैश बक्स में अभी दिए नोटों में तो एक भी दस का नोट नहीं दिखाई दे रहा है ।"

"टो टुम चोर बी हैं ? अम टुमको पुलिस में डेगा । अमने टुमको डस रुपया का नोट डिया हाय । अम टोमरा कोई बाट सुनना नेई माँगटा ।"

मैनेजर को थोड़ा तैश आ गया, बोला, "उल्टा आप मुझी को चोर बता रहे हैं साहब । और कोट छोड़कर धीरे से कहा, "खुद चोर कोतवाल को डाँटे । राज जो ठहरा इनका ।"

मैनेजर की बात मुँह की मुँह में रह गई । वह अपनी जगह पर लौट रहा था कि साहब ने उसे पकड़ कर उसके गाल पर एक तमाचा जड़ दिया, और उसके ऊपर वे गर्ज उठे, "यू काला मैन, निग्गर । साब लोक को बोलटा चोर ? गुलाम मुलुक का आडमी टुम, टोमरा इटना इम्मत ? आगे से व्हाइट मैन का अडब करना सीखना माँगटा । समझा ?"

तब तक नवनीत आगे बढ़ आया, उसने कहा, "ऐ साहब, तुमको इस वक्त होश-हवास नहीं है । तुम नहीं जानते कि तुम क्या बक रहे हो । सीधी तरह से

इसका दस रुपए का नोट निकाल दो, और जो गालियाँ दी हैं उसके लिए माफी माँगो उससे।"

"व्हाट ? नॉनसेन्स।" और वह दरवाजे की ओर बढ़ने लगा।

नवनीत ने कहा, "आइ से, यू कांट गो विदाउट पेइंग हिम हिज बिल।"

—साहब ने लाल होकर नवनीत पर अपना हाथ उठाया, किन्तु नवनीत इसके लिए तैयार ही था। नहीं था तो साहब नहीं था एक काले नवयुवक के हमले के लिए। और फिर उसकी निज पर नियन्त्रण की सारी सामर्थ्य को शराब ने खींच लिया था। इसलिए जब नवनीत का उतना ही करारा तमाचा साहब के गाल पर पड़ा तो साहब सन्तुलन खोकर पास की कुर्सी पर गिर पड़ा। सारा समुदाय चकित हो उठा। नवनती ने यह क्या किया ?

नवनीत कुर्सी में पड़े साहब की ओर बढ़ना चाहता था, किन्तु तभी मैनेजर को अपने गाल की सारी वेदना भूल गई, और दौड़ कर नवनीत से लिपटते हुए वह बोला।

"यह क्या कर रहे हैं आप ?"

"इस जंगली भैंसे को यह सिखाना है कि सभ्य लोगों से व्यवहार कैसे किया जाता है।"

"लेकिन यह अंग्रेज है, यहाँ के जिला क्लक्टर का सगा भाई।"

"ओह मैं हूँ इसका बाप। इसको दिखाता हूँ कि भाई की क्लक्टरी पर कितना नाज दिखाया जा सकता है।" लेकिन और भी दो-चार व्यक्तियों ने नवनीत को पकड़ लिया ताकि झगड़ा बढ़ने न पाए।

तब तक साहब ने भी संज्ञा प्राप्त करली थी। यह भी देख लिया कि वे सुव्यवस्था में हैं और दुश्मन दुरावस्था में। भीड़ का मनोविज्ञान भी भाँप गए वे। दुश्मन की गर्जना के बावजूद एक अंग्रेज का रोब उन पर छाया हुआ है। कुर्सी में से उठे वे, और नवनीत की ओर बढ़े। जो उसे थामे हुए थे उन्होंने उसे छोड़ने की तत्परता दिखाई तो साहब ने कहा, "नोनो डोंट रिलीज हिम। वो एक डेंजरस डॉग हाय। उससे इढर का अमन खटरे में पड़जाने का अन्डेसा हाय।"

लोगों ने नवनीत को फिर पकड़ लिया। साहब और पास आगए, बोले, "डस रुपया माँगटा हाय टुम ?"

"मैं क्यों माँगने लगा ? जिसका माँगना है उसे दो।"

साहब ने पेंट की जेब में से हाथ निकाला कि नोट शायद आगे बढ़ाएं—कि उन्होंने नवनीत के पेट जोर से बंधी हुई मुट्ठी से प्रहार किया। कोई इसके लिए तैयार नहीं था। अपने आपको छुड़ाकर बचाने की नवनीत ने जब चेष्टा को तो साहब ने बूटधारी पैर भी उस पर चला दिया। विवश नवनीत इस दुहरे आघात को सह नहीं सका। उसे पकड़ने वाले आदमी उसे छोड़कर अलग हट गए, और नवनीत नीचे फर्श पर आ रहा, फिर तो साहब की बन आई, और उन्होंने उल्टे-सीधे नवनीत को जो पीटना शुरू किया तो तभी दम लिया जब वह अचेत हो गया। कहीं मर न जाए इसलिए मैनेजर ने ही कहा, "सर, आपका शो···"

"डैम फूल।" और फिर घड़ी की ओर देख कर साहब ने चारों ओर देखा। सभी ग्राहक डर के मारे बाहर निकल गए थे। केवल मैनेजर ही रह गया था वहाँ। उसे देखकर साहब ने कहा, "टुम बी माँगता डस का नोट ?"

हाथ जोड़ कर मैनेजर ने कहा, "मिल गया हुजूर, कहें तो रसीद लिख कर भी दे दूँगा। कोठी पर मेम साहब आपकी राह देख रही हैं।"

"या या।" हाथ उठाकर मस्त हाथी की तरह झूमता हुआ वह बाहर निकल गया।

अंग्रेज सचमुच वहाँ के जिला क्लेक्टर मि० रॉगर्स का भाई था। नवनीत का दूसरे ही दिन पता लगा लिया गया। ऐसा आदमी बड़ा खतरनाक हो सकता है, और फिर युद्ध के दिनों में अंग्रेजों का विरोध करने में वह कुछ भी उठा नहीं रखेगा। लोगों के मन यों ही अंग्रेजों के प्रति भड़क उठे हैं। गाँधी जी की अजीब आँधी सारे देश में छा गई है। शीघ्र ही पोस्ट मास्टर जनरल से सम्पर्क स्थापित किया गया। वे नवनीत से पहले से ही रुष्ट हो चुके थे। शर्ली तकाजे पर तकाजे करती जा रही थी कि नवनीत को पदस्थ करके किसी जंगली वातावरण में तबदील कर दिया जाए। अवसर और बहाना पाकर नवनीत को सुपरिन्टेंडेंट के पद से हटा दिया गया और ब्राँच पोस्ट मास्टर बनाकर एक निहायत मामूली से कस्बे मानपुर में भेज दिया गया। लखनऊ शहर को एक संभावित भयानक क्रान्तिकारी से मुक्ति मिली। जब तक नवनीत लाल अस्पताल से छूट कर आए उसे मानपुर जॉइन करने का आदेश थमा दिया गया। आदेश अविलम्ब पालन करने के लिए था। नवनीत के मन में तो आया कि वह त्याग-पत्र देकर सारे

झगड़े को ही खत्म करदे, पर अभी फिलहाल त्याग-पत्र देकर भी वह करेगा क्या ? मानपुर भी क्यों न देख ले एक बार ? त्याग-पत्र वहाँ से भी तो दिया जा सकता है। और जब वह मानपुर पहुँचा तो उसके सिर और पैर की पट्टियाँ भी नहीं खुली थीं।

नीलम ने नवनीत की ओर दृष्टि फिराकर कहा, "मैंने मिथ्या तो नहीं कहा न।"

नवनीत ने कोई उत्तर नहीं दिया।

नीलम ने कहा, "सो साथियों, ऐसी थी हमारी पहली मुलाकात—"

नवनीत ने बात काटकर कहा, "जी नहीं, मैंने तो आपको देखा भी नहीं था तब होश आते ही मैं रवाना हो गया।"

हँसकर नीलम ने कहा, "सो तो मैं कह चुकी हूँ। मेरी रग भी आपने उसके प्रचुर किराए के साथ भिजवा दी थी। महत्वपूर्ण यह नहीं है कि आपने मुझे देखा। मैं तो कहना चाहती हूँ कि पहली बार मैंने आपको तब देखा था। उसे आप चाहें तो मुलाकात न भी कह सकते हैं। और साथियों, उसके बाद दूसरी मुलाकात के लिए मुझे छः माह प्रतीक्षा करनी पड़ी थी। शायद मि० नवनीत लाल को स्मरण न हो, किन्तु···"

"मुझे स्मरण है नीलम देवी। मानपुर के उस तालाब को जिसने देखा है वह कभी भुला नहीं सकता उसे।"

अगस्त की अवसादमई दुपहरी थी। गत कुछ दिनों से घनी बरसात के बाद आज ही पानी कुछ थमा था। सूरज के कई दिनों से दर्शन नहीं हुए थे, और आकाश अब भी निबिड़ बादलों से ढँका हुआ था, किन्तु लगता था कि अब पानी नहीं बरसेगा। बच्चों के लिए तो बरसात एक बरदान ही है। "पानी बाबा आना, ककड़ी-भुट्टा लाना।" का शोर जंगल में मेंढ़कों के शोर से टक्कर लेता था। पानी बन्द होने पर अब वे घरों में घुस गए हैं और बड़े-बूढ़े बाहर निकल आए हैं। बाजार में इन दिनों सौदा-सुलुफ ठप्प पड़ गया था। घर गृहिणियाँ धुँआती लकड़ियों से ही किसी तरह काम चलाती रही हैं। पानी थमते ही मानो कर्मणयता का थमा हुआ ज्वार चालू होगया।

पोस्ट ऑफिस में छुट्टी तो नहीं थी, किन्तु काम भी कुछ नहीं था। गाँव-

कस्बे में यह सुविधा तो है ही, जब चाहो छुट्टी करलो, जब चाहो दफ्तर में बैठ लो। बाहर से जाँच अफसर भी अगर आया तो आएगा तो बस से ही। स्टेशन यहाँ से बीस मील दूर है और पहले तो दिन में दो बार बस बराबर आती जाती थी, किन्तु लड़ाई के दिनों से ही अब चौबीस घंटों में सिर्फ एक बार आती-जाती है। और इधर तो नदी-नालों में बाढ़ के कारण गए एक हफ्ते से बस का पता ही नहीं है। ऐसे मौके पर जाँच अधिकारी भी अपने घर की छत के नीचे बीवी-बच्चों के बीच बैठा-बैठा ही ऊपर के अफसरों के लिए रिपोर्ट लिख भेजता है, "नद्दी नाले पूर, बन्दा जाने से मजबूर।"

अधरलाल ने कहा, "बड़े उदास दिखाई दे रहे हैं।"

"मौसम ही जो उदासी का है। काम ही कुछ कहाँ है ? अलबत्ता, मक्खियाँ बरसात में जरूर काफी हो जाती है, बैठे-बैठे उन्हें मारना कस्बे में एक काम हो सकता है, लेकिन मुश्किल यह है कि इस काम कि तनखाह तो मिलती नहीं।"

"वह अपनी गाँठ से वसूल होती है। मक्खियाँ मारना सरकारी काम नहीं, हाँलाकि जनता के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी सरकार की ही है। लेकिन तब यहाँ बैठे-बैठे करेंगे क्या ?"

"तो जाऊँ कहाँ ? इस मनहूस कस्बे में है ही क्या सिवा इन फाइलों के और दूसरों के इन खुले-बन्द पत्रों के ? न कोई सोसाइटी, न सिनेमा न थिएटर। कोई ढंग का पढ़ा-लिखा साथी भी तो नहीं यहाँ।"

"चलिए, आज मानपुर की नायाब चीज दिखा लाऊँ आपको।"

"नायाब चीज ? मगर मानपुर की मक्खियां भी तो नायाब ही हैं। सचमुच अधर लाल जी, मानपुर किसी न किसी माने में तो नायाब है ही।"

"देखिए, एक तो आप मुझे 'आप' न कहा कीजिए। आप मेरे अधिकारी हैं यहाँ के इंचार्ज, और मैं महज मामूली-सा एक पोस्टमैन…"

"तो उससे क्या हुआ। उमर में तो आप मुझसे बड़े हैं।"

"उमर में मुझसे भी बड़ा यह मकान है, लेकिन इसे मैं भी 'तू' कहकर पुकारता हूँ। नहीं-नहीं, यह आपा-धापी नहीं चलेगी साहब।"

"एक शर्त पर मैं 'तूतू-मैंमैं' कर सकता हूँ तो फिर।" मुस्कराकर नवनीत ने कहा।

अधर लाल ने भी हँसकर कहा, "किस शर्त पर ?"

"बस तूतू-मैंमैं। मैं भी 'तुम' तुम भी 'तुम'।"

"लेकिन यह कैसे हो सकता है ? आखिर पद की मर्यादा, दफ्तर की मर्यादा तो पालनी ही होती है।"

"ठीक है, दफ्तर में आपा-धापी होगी, और बाहर तूतू-मैंमैं। अब कहिए, क्या है आपकी नायाब चीज। नहीं, यहाँ 'तुम' नहीं चलेगा, यह दफ्तर है।"

हँसकर अधरलाल ने कहा, "मैं शुरू करता हूँ 'तुम' से, क्योंकि अभी यहाँ हम दोनों ही तो हैं। चलो बाहर चलें। वह चीज कहने की नहीं है, कहा जा ही नहीं सकता उसके बारे में। देखना ही सब कुछ है उसे, जिसके लिए तुलसीदास जी ने कहा है न, 'गिरा अनयन नयन बिनु, बानी।"

"तुम साहित्य में भी रुचि रखते हो क्या ? लेकिन मेरी पहुँच नहीं हैं वहाँ तक भाई।"

नवनीत उठ खड़ा हुआ था कुर्सी से। अधर लाल ने बक्स को ताला लगाकर चाबी नवनीत को सौंपते हुए कहा, "तुलसीदास जी तो हिन्दुओं का वेद है न। साहित्य तुम जैसा डिग्रीधारी व्यक्ति नहीं जानेगा, और मैं पुच्छ-विषाण-हीन जान लूँगा उसे ?"

नवनीत ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह बरामदे से चलकर बाहर आ खड़ा हुआ था। अधर लाल ताला लगाने के लिए पीछे रह गए थे। यह ठीक है कि अधर लाल नवनीत से उमर में बड़ा है, व्यक्ति भद्र और भला है, और नवनीत के ऊपर अहसान भी है उसका। गई बिमारी में यदि यह दया करके अपने घर न लिवा जाता उसे तो जाने क्या हालत होती उसकी। और उसकी पत्नी, वह आरती ? हरनाम तो भक्त ही हो गया है उसका। पर उसके अद्भुत होने से ही क्या हो जाता है ? अधर लाल आखिर है तो पोस्टमैन ही। ऐसा कोई नियम नहीं है कि पोस्टमैन भद्र या भला व्यक्ति न हो, या उसकी पत्नी अदुभुत न हो। न कहीं यह नियम है कि पोस्टमैन उमर में पोस्ट मास्टर से बड़ा न हो। यह 'तुम' का सम्बोधन कुछ अटपटा तो है ही।

मानपुर के पास कुछ पहाड़ियाँ हैं, और इसीलिए यहाँ की जमीन कुछ-कुछ पथरीली है। बरसात में पानी का बहाव रही-सही मिट्टी भी ले जाता है। रास्ते में पत्थर निकल आते हैं, और अपने बहने का रास्ता बनाने के लिए पानी आम रास्ते में छोटी-मोटी नालियाँ बना डालता है। कहीं-कहीं लड़के आसपास से

रहा-सहा कंकर मिट्टी बटोर कर इन नालियों का मुँह बन्द कर देते हैं, वहाँ पानी आकर जमा होने लगता है, और वे उसमें नंगे बदन दौड़-धाम करते हुए एक-दूसरे को छाँटते रहते हैं।

कुहनी के कोण में छाता लटकाए अधर लाल बाहर रास्ते में खड़े किसी राहगीर से बात करने लग गए हैं। पोस्टमस्टर की अपेक्षा पोस्टमैन ही गाँव में अधिक परिचित होता है। उस आदमी ने नवनीत को देखकर सहमते हुए सलाम भर कर लिया था, लेकिन अधर लाल को देखकर उसने रोक लिया है। घर-संसार की बातें ही तो होंगी दोनों के बीच। नवनीत को कौतूहल नहीं होना चाहिए। वह अधर लाल को पीछे ही छोड़कर धीरे-धीरे आगे की ओर बढ़ने लगा।

घर-संसार में अधर लाल क्या अपनी पत्नी की बात न करता होगा? और ये दूसरे व्यक्ति भी क्या इसीलिए उससे मेल-मुरव्वत बढ़ाए हुए हैं? आदमी जवान ही है, अधर लाल से तो जरूर उमर में छोटा है। गरीब की जोरू सबकी भाभी, मिल कहाँ गई ऐसी जोरू अधर लाल को? एक पोस्टमैन की औकात ही क्या है। आरती, पता नहीं, पढ़ी-लिखी कहाँ तक है। शील-संकोच का अभाव तो है, पर उसे गँवारूपन भी नहीं कहा जा सकता। पढ़ाई-लिखाई के साथ यही संकोच-हीनता उसका आभूषण हो सकती है। जिस रत्न को सम्राट के मुकुट में शोभित होना था, वह आ पड़ा है काँच के मैले रंगहीन टुकड़ों में।

अधर लाल जब तक नवनीत को पकड़ पाएँ, गाँव का किनारा आ गया था। यहाँ से पश्चिम की ओर दो मार्ग जाते हैं। एक पक्की सड़क आगे जाकर कहीं कच्ची कहीं पक्की होती हुई बीस मिल दूर रेलवे स्टेशन से मिल जाती है। दूसरा एकदम कच्चा रास्ता है, पर पक्के से कम नहीं, वह सैलानियों के आवा-गमन का राजमार्ग है। इसी रास्ते पर आगे कुछ बगीचे, और उससे भी आगे पहाड़ियों के बीच तालाब है। नवनीत जब भी घूमने गया है, पक्की सड़क पर ही। कच्ची सड़क पर तालाब की दिशा में जाने का उसने कभी अपने में उत्साह नहीं पाया। लोग कहते हैं कि नहाने के लिए तालाब बड़ी अच्छी जगह है, बिलकुल स्वीमिंग पूल की तरह। मगर घड़ियाल काफी बड़े और बहुतायत से हैं उसमें, पर वे किनारे पर नहीं पाए जाते। नाव चलाने का भी अच्छा सुयोग है उसमें। किन्तु मानपुर आते ही उसका सारा उत्साह मानो बिखर चुका था। अपने स्वभाव में भी वह कुछ-कुछ रूखा और चिड़चिड़ा होता जा रहा था, जिसे

वह स्वयं अनुभव कर चुका था।

नवनीत आगे बढ़ता रहा, किन्तु उसने देखा कि प्रायः ही जनता इस समय सड़क की ओर न जाकर कच्चे रास्ते की ओर जा रही है। उनकी चाल में तेजी है। स्त्रियाँ और बच्चे भी भीड़ में कम नहीं हैं। क्या इस ओर कोई मेला भरता है इन दिनों? वह रुक गया ताकि अधर लाल आ पहुँचे।

"किधर चलना होगा मानपुर की नायाब चीज देखने के लिए?"

"महाजनः येन गता स पन्थाः इधर ही चलिए, जिधर सब चल रहे हैं।"

"लेकिन इस भीड़-भड़क्के में घूमने का क्या आनन्द रहेगा?"

"एक तो यह कि हम घूमने का आनन्द पाने के लिए नहीं जा रहे हैं। दूसरे बस, जरा आगे चलकर ही हम आम रास्ता छोड़ देंगे। वह रास्ता बिल्कुल एकान्त का होगा।"

नवनीत का मन हुआ कि दोनों में जो दफ्तर के बाहर "तूतू-मैंमैं" का अभी करार हुआ है उसकी ओर अधर लाल का ध्यान दिलाए, किन्तु उसे लगा कि आखिर उसकी एक मर्यादा तो है ही, और वह चुप ही रहा। जब दोनों कुछ ही समय बाद एक एकाकी पगडंडी पर चलने लगे तो अधर लाल ने पूछा, "आप चुप क्यों हैं? क्या अच्छा नहीं लग रहा है?"

मानो बात बनाने के लिए ही नवनीत ने कहा, "कोई खास बात तो नहीं है। सिर्फ यही सोच रहा था कि यह समय है तो हमारा ऑफिस में बैठने का। क्या इससे हम अपने कर्तव्य के प्रति गैर जिम्मेदार नहीं बनते?"

"मुझसे पूछिए तो मैं कहूँगा कि 'नहीं' क्योंकि एक तो हम काफी काम कर चुके हैं, जितना एक दिन में किया जाना चाहिए उससे अधिक। दूसरे, दफ्तर में बैठे हुए करने को कोई काम ही नहीं रहा है। जब कुछ है ही नहीं, तो उसमें से हम अपने लिए कुछ ले ही कहाँ रहे हैं? तीसरे, जिस जनता के लिए हम काम करते हैं, वही एक तरह से छुट्टी पर है, फिर हमीं क्यों न छुट्टी मनाएं। चौथे,—अच्छा नवनीत बाबू, कभी आपके मन में यह आया है कि यह सरकार तो विदेशी है, और इसकी सेवा अपनी मातृ-भूमि से द्रोह है?"

नवनीत लाल ने अधर लाल की ओर देखा। अधरलाल ने सम्हल कर कहा, "अब यही देखिए, लड़ाई छिड़ी है सात समन्दर पार विलायत में, और उन लोगों की आजादी की रक्षा के लिए लड़न को कहा जाता है हमको, जब कि हम खुद

आजाद नहीं हैं। हम लड़ें तो क्या इसलिए कि अंग्रेज बराबर बने रहें, और हमारा देश इसी तरह उनके पंजे में फँसा रहे ? हमारी आजादी का सपना और भी गहरी नींव में गाड़ दिया जाए ? नहीं है यह देश से गद्दारी ?"

नवनीत ने तब भी कोई उत्तर नहीं दिया। पगडंडी काफी छोटी थी। दोनों ओर खेतों में भदई की फसल सिर उठा रही थी। आगे-आगे नवनीत, और पीछे अधर लाल। मार्ग इतना चौड़ा नहीं कि दोनों साथ-साथ चल सकें। नवनीत ने उत्तर नहीं दिया तो अधर लाल ने सोचा, क्या यह बात छेड़कर उन्होंने गलती की? अगर नवनीत ने ऊपर के अधिकारियों से रिपोर्ट कर दी कि उनके मातहत पोस्टमैन अधर लाल के विचार अंग्रेज-विरोधी हैं, तो क्या उनकी नौकरी पर नहीं बन आ सकती ? किसी सरकारी नौकर के लिए कांग्रेस का सदस्य होना दूर, उसका हिमायती होना भी पाप है। और यह नौकरशाही तो ऐसा तन्त्र है, कि अंग्रेजों से नहीं जितना इन सिरफिरे उनके गुलाम अफसरों से डरना होता है।

अधर लाल ने कहा, "सुनते हैं कि गाँधी बाबा अपने चेलों की जमात के साथ गाँव-गाँव घूमकर लोगों को उपदेश देते फिर रहे हैं।"

नवनीत ने मुँह खोला, "गाँधी जी कोई बाबा नहीं हैं अधर लाल, वे एक राजनैतिक नेता हैं, और उनके चेलों कि जमात कोई छोटी जमात नहीं, वह इस समय देश की सबसे बड़ी राष्ट्रीय संस्था है, उसी का नाम तो काँग्रेस है।"

अधर लाल ने सन्तोष की साँस ली, और अपनी अज्ञानता प्रगट करते हुए कहा, "अच्छा काँग्रेस गाँधी जी की संस्था है क्या ? लेकिन गाँधी जी तो, कहते हैं, सत्य और अहिंसा का उपदेश देते हैं, जैसे पुराने युग में महात्मा बुद्ध दिया करते थे।"

"गाँधी जी ने राजनीति और धर्म में अभेद नहीं रहने दिया है, इस माने में वे महात्मा बुद्ध से आगे बढ़ गए हैं। वे एक नया ही इतिहास बना रहे हैं अधरलाल। आने वाली पीढ़ियाँ या तो उनके उपदेश को स्वीकार करके देवता बन जाएंगी, या फिर यह विश्वास भी नहीं कर सकेंगी कि किसी अतीत में ऐसा दो पैरों वाला मनुष्य धरती पर अवतरित हुआ था।"

अवश्य ही नवनीत ने जो कुछ कहा, वह राजनीति नहीं थी, थी केवल एक व्यक्ति के प्रति अगाध भक्ति। किन्तु उस महातमा का व्रत तो मातृभूमि की स्वाधीनता है। क्या नवनीत सचमुच इसे अनुभव करता है ? अनजान बना रहकर

ही नवनीत की थाह लेने के लिए अधरलाल ने पूछा, "तब तो सरकारी नौकरों को सचमुच ही गाँधी जी और काँग्रेस से दूर रहना चाहिए।"

नवनीत ने हँस कर कहा, "लेकिन अभी तो तुम अंग्रेज-सरकार की भर्त्सना कर रहे थे।"

"सो तो है, लेकिन पेट तो हृदय से बड़ा है न। नौकरी और देशभक्ति में आखिर बड़ी चीज क्या है? एक रुपया देतीं है, और दूसरी सिर माँगती है। है न?"

नवनीत ने उत्तर दिया, "यही तो दुःख की बात है अधर लाल। गुलाम देश की गुलामी और आजाद देश की आजादी न तो किसी को आँखों से दिखाई देती है, न उन्हें लेकर शहद के साथ चाटा ही जाता है, वे तो वहाँ के निवासियों की आत्मा में रम जाती हैं। इसीलिए एक गुलाम देश का नागरिक अपने पेट को बड़ा समझने लगता है, लेकिन आजाद इंग्लैंड की ओर आँख उठा कर देखो। चर्चिल कहता है अपने देश के नागरिकों से—"तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।" तब वह पेट की चिन्ता नहीं करता, उसके देशवासी भी नहीं करते पेट की चिन्ता।" कहते-कहते ही नवनीत ने जेब से सिगरेट केस निकाला, एक सिगरेट ओठों में दबा कर दूसरी जेब में माचिस तलाश करने लगा—"अरे। क्या माचिस घर पर ही रह गई? लो, सिगरेट का सारा मजा ही किरकिरा हो गया। अब यहाँ कहाँ मिलेगी, इधर तो कोई आ-जा भी नहीं रहा।"

सिगरेट को पुनः केस में डालकर उसे जेब में इस तरह रक्खा मानो कुएं में कोई निरर्थक वस्तु फेंक दी। अधर लाल ने कहा, "आइए, शायद इधर आगे एक झोंपड़ी में माचिस न सही, आग तो मिल ही जाएगी।"

"न-न, वैसी कोई बात नहीं है। कहाँ किस देहाती उजड्ड का एहसान लेंगे। जाने दो।"

"चलिए भी। झोंपड़ी दूर ही कितनी है। और एहसान क्या है इसमें? होगा भी तो मुझ पर होगा, और यकीन मानिए मैं उसे आप पर नहीं लाद दूँगा।"

अधर लाल बढ़कर आगे हो गया, नवनीत पीछे। अधरलाल ने कहा, "बातें तो आप पते की कहते हैं, और लोग जब कहते थे तो यकीन ही नहीं आता था। लेकिन एक बात तब भी समझ में नहीं आती।"

"क्या?"

"आखिर हमें तो सरकार नौकरी का पैसा देती ही है, ठीक समय पर और ठीक रकम। लेकिन आपके कई देसी मालिक नौकरों को कभी वक्त पर तनखा नहीं देते और वह भी पूरी रकम नहीं, अगर देंगे भी।"

"तब भी बाहरी लोगों की फटकार से अपने लोगों की लात भी अच्छी होती है भाई। और नौकरी का जहाँ तक सवाल है, अगर आज सरकार को यह पता चल जाए कि तुम अपने देश के बारे में इस तरह के विचार रखते हो तो नौकरी से ही नहीं जाओगे, तुम्हारे ऊपर राजद्रोह का मुकदमा भी चल जाएगा। जानते हो मैं यहाँ पर तबदील होकर कैसे आया हूँ, शायद यह तो तुम जानते ही होगे कि मैं प्रधान कार्यालय में सुपरिटेंडेंट था।"

"अफसर थे आप यही सुना था। अफसर आप अब भी हैं, पर तब आप काफी बड़े अफसर रहे होंगे।"

"और नौकरी भी अच्छी तरह से करता था, इसीलिए हेडक्लर्क से असिस्टेंट और उसके बाद पूरा सुपरिटेंडेंट हो गया था। काम का पैसा मिलता होता तो मेरे तनज्जुल होने की कोई वजह नहीं थी। किन्तु मैंने, एक गुलाम देश के अफसर ने, एक आजाद देश के कमीने अंग्रेज को उसकी बेईमानी की सजा देनी चाही थी। जब यहाँ आया था तब देखी नहीं थीं मेरे सिर और पैर में पट्टियाँ ? और उतने से ही हमारे माँ-बाप ज्याफ्री साहब संतुष्ट नहीं हुए, मुझे उन्होंने यहाँ इस जंगली वातावरण में फेंक कर ही दम लिया।"

"कहते क्या हैं आप ?"

नवनीत ने अधर लाल को लखनऊ में जिला कलक्टर के भाई के साथ घटी घटना सुना दी। लेकिन तब तक दोनों एक आम के पेड़ के नीचे पहुँच चुके थे। एक झुकी हुई शाखा को हाथ से पकड़ कर अधर लाल ने आवाज लगाई, "टीकू।" तो नवनीत ने लक्ष्य किया कि सामने ही एक फूस की झोंपड़ी है।

तत्काल भीतर से ही उत्तर आया, "उस्ताद टीकू मरि गवा। आज अब और नाव ना लगाई। हमारे पाँव में काँटा गड़ गयल।"

"नाव नहीं चाहिए उस्ताद, जरा बाहर तो आओ।"

नवनीत ने स्वर के औद्धत्य को लक्ष्य करके कहा, "जाने भी दो। यह तो महज एक आदत बन गई है कि जब-तब हाथ सिगरेट केस पर पहुँच जाता है, और सिगरेट ओठों के बीच। वरना इस वक्त अब उसकी तलब ही नहीं महसूस

होती।"

भीतर ही से उत्तर आया अधर लाल की बात का, "केहर के बाप का उधार नाहीं खात। कहब, सुनब की होई तो हियाँई ते सुन लिहिब।"

नवनीत ने अधर लाल की पीठ पर हाथ रख कर कहा, "चलो भी, क्या इन छोटे लोगों के मुँह लगा जाए?"

"मैं चाहता हूँ कि एक बार इसे भी देख लें। अरे भाई टिंकर साहब? क्या बात है? क्या पैर का काँटा बहुत गहरा है?"

"अरे अधर भैया हैं? तब तो आना ही पड़ा।" कहते-कहते ही टीकू दरवाजे पर आ खड़ा हुआ, साथ में एक और आदमी को देख कर जब वह आगे बढ़ा तो लंगड़ा रहा था।

नवनीत ने देखा कि टीकू उर्फ टिंकर एक छोटा-मोटा दैत्य ही है। काफी काला, कमर में एक मटमैली चारखाने की लुंगी, सारा बदन खुला हुआ, पर माथे पर वैसा ही एक फेंटा लपेटे हुए। उमर यही साठ के करीब थी, पर सारा बदन फौलाद का बना हुआ हो जैसे। हाथ-पैर और सीने में मछलियाँ उभरी पड़ रही थीं। मुँह पर घनी, सख्त मूँछों के बाल अभी भी काले थे। दोनों हाथों में चिलम सम्हाले हुए था, जिससे धुएं के रेशे ऊपर उठ रहे थे।

अधरलाल के कहा, "क्या सचमुच पैर में काँटा गड़ा है?"

हँस कर टीकू ने कहा, "इस लोहे के पैर में काँटा नहीं कील गड़ती है भैया और वह कील लोहे की नहीं, तुम तो जानते हो किस चीज की है।" और उसने रहस्यपूर्ण दृष्टि से नवनीत की ओर देखा।

"सो जानता हूँ। तभी तो कह रहा था यह काँटे की शिकायत क्या है?"

"अरे सवेरे से नाव चलाता रहा हूँ। नाला क्या लग गया, आफत लग गई। जिसकी अंटी में चार पैसे हुए, वही नवाब साहब बन गया। बिना तालाब की सैर के चैन ही नहीं हजरत को। लेकिन, नाव खोलूँ क्या तुम्हारे लिए?"

अधर लाल ने नवनीत की ओर देखा, किन्तु वे कुछ पूछें उसके पहले ही नवनीत ने कहा, "नहीं-नहीं नाव की सैर करने की अभी फुरसत नहीं है।"

अधर लाल ने कहा, "अच्छा, जरा दियासलाई की डिबिया तो दो।"

नवनीत ने कहा, "वैसे क्या जरूरत है। इस चिलम से ही सिगरेट लगा ली जाएगी। बाजार में माचिस भी कहाँ आसानी से मिलती है आजकल?"

टीकू ने कहा, "नाव चलाते वक्त एक आदमी से माँग लाया था। फाजिल रखी है, और चाहें तो इसी चिलम से लगा सकते हैं।" और उसने चिलम आगे बढ़ा दी।

नवनीत ने चिलम के पास मुँह लेजाकर सिगरेट को जला लिया। लेकिन इसी बीच नवनीत का ध्यान टीकू के बदले हुए स्वर और उसकी प्राँजल भाषा की ओर भी गया। क्या यह छद्म वेश में है ? नहीं, शरीर तो एकदम निरावरण है, छद्म हो तो वह चाक्षुस-तत्वों पर नहीं, अन्य कहीं हो सकता है।"

अधर लाल ने कहा, "माचिस भी रख लेते तो आगे काम आ जाती।"

"क्या जरूरत है। इस सिगरेट के बाद तो एक के बाद एक, कई सिगरेटों की लाइन जलती रह सकतीं है न।"

टीकू ने हँस कर कहा, "लेकिन चिलम से दूसरी चिलम नहीं जलाई जा सकती उसके लिए किसी बिचवैये की जरूरत रहती ही है। लेकिन यह बिचवैया— सरकार चाहे जितनी राशनिंग करे अधर भैया, नाले पर देखना, पाँच पैसे रास के हिसाब से चाहे जितनी ले लेना।"

अधर लाल केवल मुस्करा दिए पर तब तक नवनीत आगे बढ़ चुका था। टीकू के आँख के इशारे के उत्तर में अधर लाल ने धीमे से कहा, "हमारा पोस्ट मास्टर है।" और आगे बढ़ गए।

सिगरेट को ओठों में दबाए रख कर ही नवनीत ने पूछा, "तुम्हारा यह टीकू तो बड़ा रहस्यमय आदमी मालूम देता है।"

"फारेन रिटर्न्ड है।" हँस कर अधर लाल ने कहा।

ओठों से सिगरेट निकाल कर नवनीत ने पूछा, "क्या मतलब ?"

"चौंकने की बात हो सकती है। रहस्यमय तो हो जाना पड़ा है बेचारे को। अभी अंग्रेज सरकार का गुणानुवाद किया था न हम लोगों ने, उसी सरकारी मेहरबानी का शिकार है।"

"समझा नहीं भाई।"

"वारंट का आसामी है। अपराध यह है कि इसने अपनी मातृभूमि से प्रेम किया है, लेकिन सरकार तो उसे राजद्रोह मानती है न। छिप कर मल्लाह के रूप में जिन्दगी बसर कर रहा है।"

"और इसे मालूम है कि आप इसकी सारी बातें जानते हैं ?"

हँस कर अधर लाल ने कहा, "जानता हूँ या नहीं, यह बाद की बात है। अभी की बात तो यह है कि मैंने ऐसा क्या कसूर किया है कि एकाएक ही 'तुम' से आप हो गया मैं ?"

"मुझे क्षमा माँगनी है आपसे। पर आप भी तो कम रहस्यमय नहीं लगते।"

"आपके लिए कोई रहस्य नहीं रहेगा। लेकिन पहले यह 'आप' सम्बोधन वापिस लेना होगा आपको।"

"तो फिर आपको भी वापिस लेना होगा। हम फिर तूतू-मैंमैं के लिए सहमत होते हैं।"

"अच्छी बात है मैं भी कोशिश करूँगा। लेकिन अभी तो इस टीकू का ही हाल कह सकता हूँ। है तो भारतीय ही यह। मलाबार प्रांत का रहने वाला है, पर बाद में बम्बई में किसी जहाज पर खलासी हो गया था। वहीं पर एक अमरीकी जहाज पर काम करते-करते अमेरिका पहुँच गया। क्रांति के इतिहास में लाला हरदयाल का नाम तो सुना होगा न ?"

"अमेरिका में जो अंग्रेज विरोधी अभियान चला रहे थे वही न ?"

"वेही। १९१३ में केलिफोर्निया में बाबा ज्वालासिंह, जगतराम, हरदयाल, कर्तारसिंह आदि ने मिल कर गदर पार्टी को जन्म दिया तो हरदयाल के साथ यह टीकमचन्द या टीकू भी था। पार्टी से इसका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं प्रगट किया गया था, बल्कि एक रेड इंडियन मिस्टर टिंकर के रूप में यह अपना कार्य करता था। इसीलिए जब अगले वर्ष अंग्रेजों के दबाव से अमरीकी सरकार ने हरदयाल को अमेरिका से निष्कासित कर दिया और वे पेरिस चले आए तब भी टीकू अमेरिका में ही रह गया था और अपना काम करता जा रहा था। भारत लौटा वह दूसरे साल, यानी १९१५ में जब अमेरिका से इन लोगों के प्रयत्न स्वरूप 'मेवरिक' जहाज वहाँ से भारतीय क्रांति के लिए शस्त्रास्त्र लेकर भारत आ रहा था। उस जहाज पर क्या बीती, यह तो एक लम्बी कथा है, इतिहास में भी उसका सच्चा-झूठा कुछ उलेख्ख तो है। वह फिर कभी सुनाऊँगा नवनीत बाबू। अभी तो यही बात है कि टीकू वगैरा उसके सब आरोही बटेविया उतर गए, वरना वे सब अंग्रेज सरकार के कोपभाजन होते, क्योंकि उसे इस जहाज की खबर लग चुकी थी। बटेविया, बर्मा, सिंगापुर जाने कहाँ-कहाँ भटक-भटका कर टीकू अपनी मातृभूमि भारत पहुँचा, तो उसे पता लगा कि उसकी गिरफ्तारी का वारंट देश में

प्रचारित है। अपने बचाव के लिए तभी से मातृभूमि से दूर, पर अपने ही देश में, बेचारा बेगाना होकर शांति की खोज में सिर छिपाए, देख ही रहे हो, कैसा दीन होगया है।"

"लेकिन दीन होने से तो सब किया किराया व्यर्थ नहीं हो जाता! इस आग को तो जलता रखना होता है। यह एक दो पीढ़ी का काम तो है नहीं।—और मैं यह विश्वास नहीं कर सकता कि टीकू इस बात को न समझता हो।"

टीकू की कथा में खोए हुए नवनीत ने अनुभव किया कि अधर लाल का स्वर कम से कम चौगुना हो गया था, तब भी क्या कहा उन्होंने, यह साफ सुनाई नहीं दिया। कारण जानने के लिए जब उसने सामने देखा तो अनायास ही उसे स्वीकार कर लेना पड़ा कि यदि कोई चीज नायाब हो सकती है मानपुर में, तो जरूर वह यही है, जहाँ किसी का भी मन हार कर बैठ जाता है।—टीकू की कथा नहीं-नायाब वह भी है ही, किन्तु यह सामने जो है!

चारों ओर विपुल विस्तार में फैला हुआ, पहाड़ियों से घिरा हुआ तालाब, जो बरसात के कारण आचूड़ान्त पानी से आप्यायित होकर छलक पड़ना चाह रहा है। इधर बाँएँ हाथ की ओर जिस पहाड़ी के सिरे पर वे खड़े हैं, उससे मिलने वाली दूसरी पहाड़ी के बीच जो एक संकीर्ण घाटी है उसके कंचुकि-बन्ध से खिसक पड़ने के लिए संहार और सर्जन की पुँजीभूत क्रांति के समान अशेष जल-राशि प्रलय की गति से एक दूसरी लहरों को दबाती, ढकेलती आगे बढ़ रही है, और कुछ ही गज आगे यन्त्रों के फाटक से मुक्ति का मार्ग पाकर लगभग ३० फुट की ऊँचाई से रोष-दीप्त कुपित सिंहनी की भाँति गम्भीर गर्जन से दिशाओं को कँपाती हुई चट्टानों के सिर को पदस्थ कर रही है। पक्के बँधे हुए बाँध से लगभग १५ फुट की ऊँचाई पर लोहे के फाटक खुले हुए थे। इस तरह २० फुट की चौड़ाई में १५ फुट की गहराई का बँधा हुआ जल-प्रवाह, जब सारे तालाब के कई वर्गमील फैले अनन्त जल का दबाव पाकर, तीस फुट की ऊँचाई से उन्मुक्त किया जाए, तो कितनी शक्ति वह उपार्जित करेगा, यह वैज्ञानिकों की खोज का विषय हो सकता है किन्तु ऐसे एक साथ भयंकर-प्रलयंकार और हृदय-रंजक राशि-राशि सौंदर्य के ऐश्वर्य का ऐसा उन्मुक्त वितरण नवनीत ने अपने जन्म में पहले नहीं देखा था। नवनीत अपने आपको एकदम भूल गया, अपने सारे वातावरण को टीकू की कथा को, जीवन के समस्त द्वन्द्वों को एकबार ही भूल

कर उसकी समस्त इंद्रियाँ इस जल-प्रवाह के दिव्य श्रम-सीकरों में सिक्त-आसिक्त हो गईं।

वे एक विशिष्ट मार्ग से आए थे, अतः जहाँ वे खड़े थे, वहाँ कोई नहीं था, किन्तु जरा नीचे की ओर उधर, प्रपात के ठीक सामने सहस्रों नर-नारी इस दृश्य को देखने के लिए आ जुटे थे। सभी मानपुर के रहने वाले थे, और कइयों को ये दोनों सूरत-शक्ल से पहचानते भी थे। एक छोटा-मोटा मेला ही आ जुटा था। पास ही में कुछ पान-बीड़ी-माचिस, पकौड़े-नमकीन आदि के चलते-फिरते खोम्चे भी आ जुटे थे।

इतने वेग, इतने विपुल-विस्तार और इतनी ऊँचाई से गिरने के कारण पानी की श्रम सीकरों की फुहारें आसपास कई गज तक फैल कर सारी पट-भूमि ही को नहीं, समवेत जन समुदाय को भी मन और तन दोनों से सिक्त-प्लावित कर रही थीं। प्रपात का एक क्षुद्र अंश सामने की पहाड़ी से निकली दीवार जैसी खड़ी एक सपाट चट्टान-श्रेणी के सिर पर फैल जाता, किन्तु त्वरा और वेग उसे एक कुचली नागिन की तरह लहर की शक्ल दे देते, और तब वह नागिन मानो फन फैला कर फुत्कार करती हुई एक दूसरी ही दिशा में भागी जा रही थी। दीवार के खड़े सपाट भाग पर पानी का जितना थोड़ा-बहुत भाग आ पहुँचता, वह उसकी सम्पूर्ण ऊँचाई में फैल कर इस तरह सीधा सामने गिरता था, मानो किसी ने उसे दैत्याकार पिचकारी में भरकर किसी अलक्ष्य में छितरा कर फेंक दिया है। आस-पास की हरी तृणभूमि और वृक्षराजि पानी से धुलकर अत्यन्त शुभ्र हरी हो गई थी, और वृक्षों के तने, तथा चट्टानों की तृणांकुर-हीन भूमि एकदम कृष्ण-काली हो उठी थीं। और इन सबके ऊपर था जल प्लावन का गम्भीर रौद्र-गर्जन, जिसमें सारी प्रकृति स्तंभित-सी हो गई लगती थी। वह मानव के क्षुद्र-आलाप के स्वर तथा पक्षियों के कलित-कूजन को कोई स्थान नहीं था। क्या आश्चर्य है कि प्रकृति के इस विराट समारोह में पहुँचकर क्षुद्र मानव की समस्त वृत्तियाँ अपने ही नीड़ में दुबक कर निस्तब्ध हो रहें।

किन्तु अधर लाल के लिए यह सौंदर्य इतना अपरिचित नहीं था। इस सौंदर्य के साथ ही वे एकत्र जन-समुदाय के प्रति भी कम उत्सुक न थे। इस कस्बे में काम करते उन्हें काफी बरस हो गए हैं। तो भी दावे के साथ यह तो नहीं कहा जा सकता कि कस्बे के सभी निवासियों को डाक से आए पत्र बाँटने का उन्हें अवसर

मिल चुका है, कस्बे में कई निवासियों ने अभी तक रेलगाड़ी देखी नहीं, यानी कभी सफर ही नहीं किया कि बाहर किसी से सम्बन्ध स्थापित हो सकता, और कोई उन्हें पत्र लिखता—हो सकता है कई लोगों ने डाकघर का नाम भी न सुना हो, पर तो भी कई चेहरों को वे पहचानते हैं, और उन चेहरों के नीचे जो भिन्न-भिन्न प्रकृतियाँ छिपी पड़ी हैं, उनमें से भी कई के साथ उनका परिचय है। मसलन, उधर खड़ा वह बड़ी पगड़ी वाला सेठ बुलाकीराम इस कस्बे में भी काला बाजार करके मुटाता जा रहा है, और वह बेचारा बनिया हरीकिशन अपनी ईमानदारी से मिट्टी के तेल के व्यवसाय में भी मिट्टी होता चला जा रहा है। उधर वह—अरे, वह तो नीलम है, और इसी ओर—नहीं, इस ओर नहीं, उनके साथ यह जो नया आदमी नवनीत लाल है, उसकी ओर उत्सुकता से देख रही है। यदि दोनों में परिचय कराया जा सके तो कितना अच्छा हो ? नवनीत भी राष्ट्रीयता के रंग में रंगा हुआ है, इसके स्पष्ट संकेत मिल ही चुके हैं। इस सभा-सोसाइटी-हीन देहाती जीवन में यह परिचय कुछ तो जड़ता दूर करेगा। दोनों बौद्धिक प्राणी शायद जीवन में कुछ प्राप्त भी कर सकें—क्या प्राप्त कर सकें ? अधर लाल हँस कर रह गए। जीवन में संयोगों का बड़ा महत्त्व है, पर संयोग पर किसी योजना की नींव स्थापित नहीं की जाती।

नवनीत के खोए हुए मन को खींचने के लिए अधर लाल ने उसके कंधे पर हाथ रखा और कान के पास मुँह लेजा कर कहा, "चलोगे नहीं क्या ? साँझ होने जा रही है।"

"सो तो है। पर प्रकृति का यह जादू क्या किसी की सुधि रहने देता है ?"

"सुधि नहीं रहने देगा, तब भी प्रकृति का दूसरा अंश कुछ समय बाद ही इसे अपने निबिड़ पंखों में छिपा लेगा। तब आँखें इसे नहीं देख सकेंगी और उन निबिड़ पंखों को देख कर तथा इस घोर गर्जन को सुन कर तब हृदय में स्तंभन-कारी भय पैदा हो जाता है। चलिए, कल फिर आ सकते हैं। यह दृश्य कम से कम एक हफ्ते अभी बासी नहीं होगा।"

"नहीं, सौंदर्य कभी बासी नहीं होता, प्रकृति तो कभी भी बासी नहीं होती। बासी होती हैं सिर्फ देखने वाली आँखें। सौदर्य का वह भाग कभी बासी हो जाता हो, जिसे वे सँजो कर रखती हैं।—आज सचमुच ही नायाब चीजें दिखाई हैं अधर भैया। यहाँ मानपुर में ऐसा तालाब हो सकता है, इसकी कल्पना ही नहीं थी।

इस एक ही अलभ्य सौभाग्य से इसका शेष सारा दुर्भाग्य धुल-पुँछ जाता है। नहीं क्या ?"

"हर वस्तु में एक भावमय सौंदर्य होता ही है नवनीत बाबू। चाहिएँ उसे देखने वाले नेत्र।"

दोनों ही नीचे उतर रहे थे, अवश्य ही यह वह मार्ग नहीं था, जिस पर चलकर वे आए थे। अधर लाल आगे, नवनीत पीछे था।

नवनीत कह रहा था, "और इतनी ही नायाब चीज तुमने दिखाई है टीकू के व्यक्तित्व की। उसे देख कर कौन कह सकता है कि इस राख में इतनी आग छिपी होगी।"

हँसकर अधर लाल ने कहा, "तो एक और ऐसी ही नायाब अग्नि और बतलाता हूँ तुम्हें। राख से छिपी हुई नहीं, किन्तु शीतलता-शालीनता और स्निग्धता से ढँकी हुई। देखे बिना यह विश्वास भी नहीं हो सकता कि ऐसी भी कहीं अग्नि हो सकती है।"

कुछ घूमकर जाना होता है आगे। चट्टानें इस पहाड़ी में इस तरह चस्पाँ हैं कि जो स्थान ऊपर से बिलकुल दस कदम दूर है, वहाँ पहुँचने के लिए सौ कदम चलना पड़ जाए और इसी बीच आँखें एक ही क्षेत्र में उलझ जाती हैं। बरसात की संध्या के कदम छोटे लेकिन तेज होते हैं। उमड़-घुमड़ कर छाए बादलों में वह प्रायः दिनभर ही इठलाती रहती है। जहाँ कहीं वृक्ष का कुंज हुआ कि वह पैर पसार कर अड़ गई। चट्टानों की गलियों में तो उसका कृष्णाँचल सारे वातावरण पर छाया रहता है। कुछ खुले में पहुँचते ही जहाँ उसे छूकर गुदगुदाने की इच्छा होती है, वह दूर भागकर मुस्कराने लगती है। नवनीत चट्टानों की एक ऐसी ही गली में मन से भटक रहा था, अधर लाल तब तक आगे बढ़ गए थे। नवनीत ने उन्हें कहते सुना, "लो, तुम्हारा परिचय करा दूं। हमारे यहाँ के पोस्ट-मास्टर, छः माह जरूर होने आए हैं, पर हैं अभी नए-नए ही, घर से बाहर भी अभी-अभी ही निकलने लगे हैं। नाम है मि० नवनीत लाल लखनऊ यूनिवर्सिटी के······"

अधर लाल जरूर दिखाई देने लग गए थे नवनीत को, किन्तु जिससे परिचय कराया जा रहा था, वह अब भी चट्टान की आड़ में था, और नवनीत स्वयं चट्टान की गली में से ही बाहर नहीं निकला था। तब भी सुन वह सब रहा था,

इसीलिए अधरलाल को बीच में रोक कर उसने कहा, "एक ब्राँच पोस्ट मास्टर पूरा पोस्ट मास्टर नहीं होता भाई। और लखनऊ यूनिवर्सिटी का मानपुर में मान ही क्या है। तलवार से अगर तरकारी काटी जाए तो उसे चाकू कहना क्या ज्यादा मौजूँ नहीं होता ? अरे, आप···"

अधर लाल ने कहा, "ये हैं नीलम कुमारी मानपुर की शोभा, साहित्य-संगीत कला की साक्षात् देवी !"

सामने खड़ी मूर्ति को देखकर नवनीत विस्मय-विमूढ़ हो गया। एक अनिन्द्य अद्भुत देह कांति, मानो गुलाब के रस से तैयार किए हुए मक्खन को गढ़ कर निर्मित की गई हो। अधर लाल की पत्नी आरती के अपवाद के साथ मानपुर में यों ही नवनीत को मानवीय सौंदर्य का कोई खास उदाहरण नहीं मिला है, कुछ हो भी तो ग्रामीण-रुचियों से वह दृष्टव्य और आकर्षक अवश्य नहीं रहा है। मानपुर की ही क्यों, यह तो सारे भारतवर्ष की शोभा होने योग्य है।

हरे रंग की साड़ी और हरे ही रंग के ब्लाउज में हरियाली की पृष्ठभूमि के साथ नीलम साक्षात् बनदेवी मालूम दे रही थी। आँखों की पुतलियाँ कुछ नीलाभ, किन्तु उनकी बरौनियाँ घनकृष्ण, भूरेखा अत्यन्त महीन किन्तु खिंचे धनुष की तरह कुंचित, सिर के कटे बाल पालिश किए हुए ताँबे के अत्यन्त सूक्ष्म तारों की तरह तमतमाए पीठ पर फैले हुए, लगता था कि यदि कहीं उन्हें जरा भी छू दिया तो एक अनन्त अनविद्य संगीत मुखर हो उठेगा। भरे हुए प्रवाल-अधरों पर मानो अत्यन्त यत्न से हलकी लिपस्टिक फेरी गई हो, किन्तु नहीं, वही उनका प्रकृत रंग था। ब्लाउज के गले की चौड़ाई में खुली गर्दन पर एक हरे मोतियों की लड़ मात्र ही उसका आभूषण थी। भालदेश पर लाल रंग की एक खड़ी पतली-सी रेखा। एक हाथ बिलकुल खाली, किन्तु दूसरे हाथ में सोने की दो पतली चूड़ियाँ और बँधी हुई घड़ी। नवनीत ने देखा और देखता ही रह गया। नीलम अधरों में मुस्कराहट भरे हाथ जोड़े खड़ी ही रही। नवनीत की बात का उत्तर देने के लिए ही मानो बोली :

"यदि आपके ही आदर्श का पालन करना हो तो मुझे यही कहना होगा कि अधर काका की बात एकदम अतिशयोक्तिपूर्ण है। मैं मानपुर की सिर्फ एक गायिका हूँ, पेशे से उतनी नहीं जितनी शौक से !" अवश्य ही यदि स्वर भी इतना मधुर और मोहक न हो तो सौंदर्य को पूर्णता कहाँ प्राप्त होती ? बिलकुल

शुद्ध भाषा, जिस तरह सौंदर्य में एक अतिप्राकृतिकता लगी है नवनीत को, उसी तरह स्वर-समुच्चय में भी उसे एक अतिप्राकृतिकता का आभास हुआ।

उत्तर में नवनीत ने भी हाथ जोड़कर मुस्कराते हुए कहा, "आप सचमुच मानपुर की शोभा हैं। यदि आपका नाम नीलम कुमारी और परिधान भारतीय न होता तो यह विश्वास करना भी कठिन होता कि आप इस देश की उपज हैं। तो भी आप इस कस्बे की रहने वाली तो शायद ही होंगी, आपकी शिक्षा-दीक्षा-संस्कार ही बता रहे हैं। कहाँ की रहने वाली हैं आप ?"

जवाब दिया अधर लाल ने "सारा ही भारतवर्ष इनकी मातृभूमि है भाई। लेकिन अब तो मानपुर में ही रह रही हैं। गुणीजन हैं। पढ़ी-लिखी तो खैर हैं ही, संगीत में जैसा कमाल प्राप्त कर सकी हैं वह अन्यत्र दुर्लभ है।"

"शायद तुमने कहा था न—नहीं नहीं, आपने ही कहा था कि आप गायिका हैं, अवश्य पेशे से नहीं, बल्कि शौक से !"

"जी नहीं। शौक तो खैर है ही, पर जीविका के लिए भी तो कुछ साधन आखिर चाहिए न !"

"तो यह धन्धा भी है आपका !" नवनीत के स्वर में सहसा ही परिवर्तन हो आया। अधर लाल भी चौंक उठे, किन्तु नीलम ने या तो लक्ष्य नहीं किया या वह इस परिवर्तन के लिए शायद तैयार थी।

नवनीत ने अधर लाल को लक्ष्य करके कहा, "अब लौट चलना चाहिए न ! अँधेरा बढ़ने लग गया है, गँवई गाँव में बरसात का मौसम और पथरीली पहाड़ी भूमि ! कहीं ठोकर-वोकर लग गई तो पैर तुड़वा कर बैठना पड़ेगा।"

"क्यों नीलम ? तुम्हारा प्रकृति-दर्शन समाप्त हो गया तो चलें !"

नवनीत ने कहा, "उन्हें क्यों अपने आनन्द से वंचित करते हैं ? वे अपना प्रकृति-दर्शन पूरा करके ही लौटें न !"

नीलम ने हँस कर कहा, "पैर तुड़वाने की सबसे अधिक हानि मेरी ही हो सकती है। मुझे तो अपने पैरों की सुरक्षा का खास ध्यान रखना पड़ता है न !"

नवनीत कुछ समझा नहीं। लौटने की राह में आगे बढ़कर बोला, "अपने पैरों चलने वाले सभी को अपने पैरों की खुशहाली का ख्याल रखना पड़ता है, इसमें किसी की अधिक चिन्ता का प्रश्न ही नहीं उठता !"

अधर लाल ने रास्ता दिया तो नीलम नवनीत के पीछे, और उसके पीछे

अधर लाल बढ़े। अधर लाल के पीछे ही नीलम का एक अनुचर हो गया। नीलम कह रही थी, "पैरों चलनेवालों की चिन्ता से कहीं अधिक चिन्ता नाचने वालों को होती है अपने पैरों के लिए। दूसरों के कन्धों पर चढ़कर अपने पैरों के कष्ट से छुट्टी पानेवाले साबित-कदम व्यक्तियों का जगत में अभाव नहीं है, और नकली पैर से या अंधे के कंधे पर चढ़कर चलने वाले लँगड़े भी कसरत से पाए जा सकते हैं। किन्तु पैरों के अभाव में या उनके सत्याग्रह बोल देने पर कौन नृत्य कर सका है ?"

नवनीत ने मुस्कराकर कहा, "यह तो मैं भूल ही गया था कि आपका व्यवसाय नृत्य और संगीत है। और हाँ, कहा था आपने पेशे से उतना नहीं, जितना शौक से ! माफ कीजिएगा मैं जरा मोटी खाल का आदमी हूँ, ललित कलाओं के ज्ञान से हीन, यानी पुच्छ-विषाण हीन-गधा ही कह लीजिए बस, विषाण तो उसके भी नहीं होते न !"

नीलम ने कहा, "संगीत से आपको रुचि नहीं है ? शेक्सपीयर ने तो—"

"शेक्सपीयर ही क्यों, अपने ही यहाँ के आचार्यों की बात मैं कह चुका हूँ न। अपने बादशाहों में एक मुगल बादशाह भी हो गया है, बबर-शेर के वंश का, आलमगीर औरंगजेब। और हर इतिहास पढ़नेवाला जानता है कि उसके राज्य में संगीतकारों ने ही संगीत को गहरा दफना दिया था।"

"बबर-वंश का कहा न आपने ? बर्बर लोग ऐसे ही हो सकते हैं।"

"आपका मतलब है मैं भी ऐसा ही बर्बर हूँ ? शुक्रिया। मैं तो समझ रहा था कि अपने आपको गधा मान लेने से कहीं आप गधे का अपमान न समझ बैठें। लीजिए अधर भैया, गधे से इन्सान तो हो गया, चाहे बर्बर ही सही।" अधर लाल पीछे रह गए थे और नीलम के नौकर से कुछ बातचीत कर रहे थे।

उत्तर नीलम ने ही दिया, "आपको अभी शायद सच्चे संगीत से काम ही न पड़ा हो, वरना देखती कि कैसे आप उससे अप्रभावित रह सकते हैं !"

"पढ़ा-लिखा लखनऊ में हूँ नीलम कुमारी, उस्तादों के बीच !"

"आप यह इतना बड़ा नाम क्यों बोलते हैं ? अधर काका ने कह दिया इसलिए क्या ? मेरा नाम तो सचमुच नीलम है, केवल नीलम !"

"अच्छा, अधर भैया को आप काका कहती हैं। क्या सचमुच वे आपके काका हैं ?"

"यही समझ लीजिए !"

"लेकिन, तो क्या आप इन्हीं दिनों यहाँ आई हैं ?"

"नहीं। काफी समय हो गया है मुझे तो यहाँ रहते-रहते !"

"अधर लाल के यहाँ देखा नहीं कभी आप को। बल्कि एक बार तो बीमार होकर मैं उनके यहाँ आठ-दस दिन तक रह भी चुका हूँ। यही पाँचेक महीने पहले !"

"मैं जानती हूँ। पर मैं अधर काका के साथ तो नहीं रहती न ! अलग रहती हूँ और वयस्क हो गई हूँ, क्यों किसी के ऊपर भार बनूँ ?"

"हाँ, सो तो आप कह चुकी हैं ! अच्छा, इस पेशे को स्वीकार करने की बुद्धि किसने दी आपको ? अवश्य अधर लाल ने तो नहीं दी होगी।"

"क्यों ? इस पेशे में ऐसी बुराई क्या है ? अगर मैं चित्रकला जानती होती, और उसे अपना पेशा बनाती तब भी क्या आप उसे बुरा ही कहते ? कला की दृष्टि से कह रहे हैं क्या आप ?"

"नहीं। और चित्रकला—खैर, अपनी-अपनी रुचि की बात है। नई से नई शिक्षा पाकर भी अगर हम अपने ख्यालों के दायरों को न फैला सकें तो शिक्षा का लाभ ही क्या ? मानपुर में क्या काफी गायिकाएँ हैं ?"

"जी नहीं। ले-देकर एक सिर्फ मैं ही हूँ !"

"तब तो आपके पेशे में आपका कोई प्रतियोगी नहीं है। काफी अच्छा चल लेता होगा ?"

"कहाँ चलता है साहब ? महीनों कोई ग्राहक ही नहीं जुटता। संगीत मानपुर में समझता ही कौन है ?"

अट्टहास-सा करते हुए नवनीत ने कहा, "चलो अच्छा हुआ। मानपुर में मैं अकेला ही गधा नहीं हूँ। लेकिन यह भी तो हो सकता है नीलम बाई, कि लोग संगीत तो समझते हों, लेकिन आपका संगीत उनके लिए कुछ ऊँचा पड़ता हो !"

नीलम ने कहा, "आपने फिर नीलम बाई कहा ? मैंने सुना है कि इधर 'बाई' शब्द का कुछ खास अच्छा अर्थ नहीं लिया जाता। इससे तो नीलमकुमारी ही अच्छा है। है न ?"

"जी। लेकिन इधर गाने-बजाने वालियों को यही कह कर पुकारा जाता है। खैर, मैं आपको जरूरत पड़ी तो नीलम देवी कह कर पुकारा करूँगा !"

नीलम ने बात को आगे बढ़ाना उचित नहीं समझा, और नवनीत के पहले

कथन के उत्तर में कहा, "जाने दीजिए इस संबोधन की झकझक को। संगीत की बात थी न! अच्छा, चलिए न आज सीधे मेरे ही घर! देख लीजिए मेरे संगीत का स्वरूप! अधर काका को भी साथ लिए लेते हैं।"

'लेकिन मैं तो गरीब आदमी हूँ नीलम जी। जेब खाली रहती है, और जब से पदावनत होकर यहाँ आया हूँ, बड़ा फूँक-फूँक कर कदम रखना होता है!"

हँस कर नीलम ने कहा, "नमूना मुफ्त में मिलता है महाशय!"

"यही तो संकट की बात है। बचपन में यार लोगों ने मुफ्त की सिगरेटें पिलाकर आदत डाल दी। अब देखिए दिल से छोड़ना चाहता हूँ, पर हाथ से ही नहीं छूटती!" नवनीत रुक गया ताकि पीछे रह गए अधर लाल नजदीक आजाएँ। पास आगए तो बोला, "लो भाई अधर लाल, इतना हुआ तो भी माचिस खरीदना भूल गए। कुछ आलम ही ऐसा था वहाँ का कि अपनी भी सुधि नहीं रही। याद न आए तो घंटों कोई बात नहीं, लेकिन एक बार याद आ जाने पर सिगरेट के बिना जैसे जान निकल जाती हो।"

नीलम ने कहा, "हमारा किशन छिपे-छिपे बीड़ी पीता है। जरूर होगी माचिस उसके पास। क्यों रे किशन?"

"बीड़ी कहाँ पीता हूँ बीबी जी, पर माचिस तो जेब में रखनी पड़ती है न!"

किशन ने माचिस आगे बढ़ाई तो नवनीत ने सिगरेट जला ली।

अँधेरा बढ़ने लग गया था। बादल छाए हुए थे ही, ऐसा लगता था कि बरसात फिर शुरू हो जाएगी। नवनीत सबसे आगे था। उसने जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाने शुरू किए।

अधर लाल ने कहा, "अरे भई, चल तो रहे हैं। इतनी जल्दी भी क्या! सैर के लिए निकले हैं तो सैलानी की तरह नहीं चलना होगा क्या?"

नवनीत कुछ धीमे पड़ कर बोला, अँधेरा बढ़ता जा रहा है। लगता है, बादल भी बरसे बिना नहीं मानेंगे। फिर इन नीलम बाई—मेरा मतलब है नीलम देवी के पैरों की हिफाजत इन लखनवी चप्पलों में कैसे बरकरार बनी रहेगी?"

नीलम ने कहा, "इनकी सार्थकता तो तब है जब आप जैसा कोई ग्राहक मिल जाए। आप तो नमूना देखने से भी डरते हैं। आप सचमुच लखनऊ में पढ़े

हैं या किसी गुरुकुल में ?"

अधरलाल हँस दिए। नवनीत ने कहा, "पता नहीं आप कहाँ पढ़ी हैं। लखनऊ में तो जरूर नहीं पढ़ी हैं। लाहौर में पढ़ी हों तब भी, अभी हिन्दुस्तान में ऐसी यूनिवर्सिटियाँ नहीं बनीं हैं, जहाँ लड़कियों को पुरुषों के लिए चारा डालने की शिक्षा दी जाती हो।"

इसके पहले कि अधर लाल कुछ कहें, नीलम ने कहा, "यह आपका दम्भ है जो आप सोचते हैं कि किसी नारी के लिए पुरुष चारा डालने योग्य वस्तु होता है।"

"दम्भ है तो रक्षा भी हो जाती है। वरना आपकी आँखें, आपका तनिक-सा इशारा पुरुष को ले डूबने के लिए काफी है—संगीत-नृत्य आदि की कला-बाजी की नौबत ही नहीं आ पाती। आखिर आपने ही तो बताया है कि संगीत का मानपुर में ग्राहक ही कौन है ? फिर भी आपका रोजगार मन्दा तो नहीं दीखता।"

अधर लाल ने कहा, "यह क्या कह रहे हो नवनीत लाल ? नीलम को तुम जानते नहीं। मैं तो सोचता था कि इस मानपुर के वीराने में तुम-जैसे दोनों पढ़े लिखे, नए विचार वाले व्यक्ति एक दूसरे के सम्पर्क से जीवन को कुछ सुगम बना सकोगे—"

हँस कर नवनीत ने कहा, "मैं क्षमा माँग लेता हूँ अधर भाई। पहले ही परिचय में कटु-आलोचना कर बैठना सभ्यता नहीं है। लेकिन तुम्हारी जो आशा है वह पूरी नहीं होती लगती।"

"क्यों ?"

"इसलिए कि नृत्य-संगीत से अपने राम को कुछ लगाव नहीं है। इसके अलावा, शौक जो भी हो, जैसा भी हो उसके लिए कोठे पर जा सकने जैसी मनोस्थिति मेरी कभी नहीं हुई है, न कभी होगी ही। यों, शायद किसी ठंडी अँधेरी रात—जाने दीजिए उसकी चर्चा से कोई लाभ नहीं है।"

अधर लाल ने कहा, "अपनी राय बनाने में तुम बहुत जल्दी कर रहे हो नवनीत। नीलम की पूरी कथा सुन लेने के बाद भी तुम्हारे मन में फाँस रह जाए तो तुम दोष दे सकते हो।"

"मैं कहाँ किसी को दोष दे रहा हूँ भाई ? और किसी की कथा सुनने क

मुझे जरूरत ही क्या है ? बल्कि मैं तो इस मानपुर में एक ठंडी-अँधेरी रात में बीमारी की अवस्था में किसी कोठे की शरण पाकर ही शायद जीवित रह सका। यही बात मैं कहना भी चाहता था, पर वह मेरी आसक्ति का परिणाम न था। विवशता ही का परिणाम था।"

"कोठा ? पर मानपुर में तो कोई कोठा नहीं है।" अधर लाल ने कहा।

"क्यों नीलम देवी अलग मकान में रह कर ही तो अपना रोजगार चलाती हैं। शायद वही मकान हो। और यदि नीलम देवी ही रही हों तो ये गवाही देंगी कि वह बीमार होश आते ही वहाँ से सिर पर पैर रखकर ऐसा भागा कि किसी से मिला भी नहीं, नृत्य और संगीत की देवी से भी नहीं।"

"जी हाँ, उसकी गवाही तो दी जा सकती है, किन्तु आप बीमार भी थे, यह तो कोई डॉक्टर ही साबित कर सकता था।"

"तो क्या आप यह कहना चाहती हैं कि नशा किए हुए था ? तब तो आप यह भी कह सकती हैं कि आपकी शाल भी चुरा कर चला गया था। हालाँकि आपकी शाल लौटाई भी जा चुकी है।"

नीलम ने कहा, "चुराई हुई वस्तु को लौटा देने से ही क्या कोई सुबुकदोष हो जाता है ? नशे की बात कह रहे हैं सो भी मैं क्या जानूँ ? जमीन पर पड़े महाभाग्यवानों को सूँघकर उनकी कुशलता जाननेवाले और प्राणी होते हैं। और आपकी दस्यु-वृत्ति के लिए भी मैंने आपको पुलिस के हवाले तो नहीं किया न।"

"कैसे करतीं ? शाल के साथ ही उसका किराया नहीं मिल गया था क्या ?"

"शाल का ही तो। रात बिताने का किराया तो बाकी रह गया न।" और नीलम ने नवनीत का हाथ पकड़कर कहा, "आइए, आज जरा उसी पुराने घर में भूले से ही चले चलिए ताकि हिसाब-किताब तो करलें। नहीं, इतनी घृणा की पात्र नहीं हूँ, जितना की समझे बैठे हैं आप। गाना गाती हूँ, कभी-कभी नाच भी लेती हूँ बस। इसके आगे की किसी बात की कल्पना कर बैठने के लिए आप ही को पाप लगेगा। क्या किया जाए, पहले मालूम ही नहीं हुआ था कि भारतीय संगीत इतना ऊँचा हैं, जिसके साधन से सूरदास, तुलसीदास, मीराबाई आदि ने परमात्मा को प्राप्त कर लिया, वह यहाँ वेश्याओं और गणिकाओं से सम्बन्धित हो गया है।"

नवनीत ने हाथ छुड़ाकर कहा, "तो क्या आप भारतीय नहीं हैं ?"

"क्यों नहीं हूँ ? बताइए तो भला ? मैं तो एकदम कट्टर-वैष्णव हूँ, परम भागवत, कृष्ण की राधिका। क्यों काका, आप तो कुछ कहते ही नहीं ?"

नीलम के वैदग्ध्य से नवनीत प्रभावित न हुआ हो सो बात नहीं, किन्तु उसमें दम्भ भी कम नहीं था। इसके अतिरिक्त निरायास जो वस्तु उपलब्ध हो सकती है, मन उसकी कामना नहीं करता। जो वह करता है उसे तृष्णा कहते हैं, जो कभी बुझती नहीं। अधर लाल न जाने किस कल्पना में खोए रहे। वे नवनीत को पूरी तरह नहीं जानते। आज ही तो उसके चरित्र का कुछ परिचय मिला है उन्हें।—कि वह भी इस नौकरशाही से खार खाए हुए हैं। टीकू की आधी कथा बता दी है नवनीत को। नीलम की और उनकी पूरी कथा बताने का समय अभी नहीं आया है। शायद नवनीत के संस्कार ही नीलम के प्रति उदासीनता पैदा कर रहे हैं, और जब तक वह नीलम का पूरा इतिहास नहीं जान लेता, नीलम के प्रति उसमें सहानुभूति नहीं हो सकती। तब भी अभी प्रतीक्षा करनी होगी। संकट अभी दूर नहीं हुआ है, और अभी भी उन्हें छिप-छिपकर ही काम करते जाना है। और कोई कारण नहीं कि इस गलतफहमी के बावजूद इसी भूमि पर दोनों में मेल क्यों न बढ़े। नीलम कम बुद्धिमती तो नहीं है।

मुख्य सड़क आते ही आसपास की दूकानों पर रोशनी से अँधेरा भाग गया है। मानपुर में बिजली नहीं हैं, इसलिए किसी-किसी दूकान पर गैस की बत्तियाँ हैं, बाकी दूकानों पर लालटेनें। कुछ सेठों की गद्दियों पर पुराने जमाने की पीतल की पिलसोंदे ही जल रही हैं। अब विदग्ध-बातचीत का और अवसर नहीं रहा। कुछ ही दूर जाने पर नवनीत का दफ्तर और घर आ जाता है। घर और दफ्तर एक ही है—दफ्तर नीचे है, घर ऊपर की मंजिल में।

"तो फिर आज्ञा दीजिए आज तो। और कुछ कहा-सुना है तो माफी की उम्मीद भी थी ही। आशा है, नाउम्मीद नहीं करेंगी।" और नवनीत अपने घर की ओर मुड़ने लगा।

"तो फिर आपकी कृपा का सौभाग्य नहीं मिलेगा आज ? नीलम ने कहा।

"आज ही क्यों…?"

लेकिन आपके घर पर तो कोई आपकी राह नहीं देख रहा है।"

"इससे क्या कहीं दूसरे घर पर कोई राह देखने वाला जुट जाता है ?"

"मैंने तो आपको निमंत्रण दे ही दिया है, और यों भी मेरा दरवाजा तो अपरचितों, असहायों के लिए भी खुला रहता है। आप अब न तो अपरिचित रह गए हैं न असहाय ही।"

"तब भी घर की दीवारें तो हैं नीलम जी। अच्छा नमस्ते। नमस्ते भाई अधर लाल। सचमुच आज की संध्या बड़ी अच्छी तरह कट गई। धन्यवाद।"

ऊपर से हरनाम ने आकर दरवाजा खोल दिया था। नवनीत ने किसी के उत्तर या प्रति-नमस्कार की भी चिन्ता नहीं की। वह सीढ़ियों पर चढ़ गया।

६ टीकमचन्द

यद्यपि सम्पूर्ण भौतिक सृष्टि स्थान के तीन, और चौथे काल के आयाम की दीवारों में कैद समझी जाती है, मन का साम्राज्य इन आयामों की कैद से परे है। न उसे स्थानीय लम्बाई-चौड़ाई-मुटाई के आयाम बाँध सकते हैं, न उसे काल का अदृश्य आयाम ही नियंत्रित कर सकता है। इसीलिए मन का कोई स्पष्ट आकार नहीं, और वह सभी भौतिक तत्त्वों के भीतर-बाहर अनायास इच्छानुसार घुस-पैठ कर सकता है। काल भी उसे बूढ़ा नहीं बना पाता। नीलम ने कितना समय लिया होगा सदस्यों को अपनी बीती कथा सुनाने में, नवनीत के मानस-साम्राज्य में अतीत की इस खुली जाती फिलम-रील के समय के साथ उसकी कोई तुलना नहीं की जा सकती। वर्षों लम्बी घटनाएँ वहाँ क्षणभर में घट जाती हैं, यद्यपि दृष्टा स्वयं इस भ्रान्ति में रह सकता है कि वह उस घटना में वर्षों बिता चुका है। पता नहीं, नीलम ने टीकू के बारे में क्या कहा, क्या नहीं, किन्तु नवनीत के स्मृति-दर्शन में टीकू ने प्रवेश करते ही उसके सम्पूर्ण ध्यान पर अधिकार कर लिया। अद्भुत व्यक्ति तो था ही वह। और आज भी अधर लाल के साथ उसके असामयिक अंत के लिए भी वही जिम्मेदार ठहराया गया है। सचमुच जिम्मेदार तो वह है, किन्तु उसकी सारी योजना में टीकू की कोई भूमिका नहीं थी। वह तो अनायास अधर लाल से बँधा होने के कारण उस जाल में आ फँसा है, और उसे बचाया भी तो नहीं जा सकता था। नहीं, भूल नहीं सकता नवनीत उस महा-मानव को भी—

तालाब की उस घटना के कुछ दिन-बाद ही की तो घटना है। शनिवार था

उस दिन रात को खूब बरसात हो चुकी थी। स्टेशन से डाक लेकर आने वाली बस अभी तक नहीं आ पाई है। तब भी आस-पास के गाँवों से हरकारों द्वारा लाई हुई कुछ डाक तो थी ही। अघर लाल उसे ही लेकर बस्ती में बाँटने चले गए हैं। खाना खाकर नवनीत ऊपर ही खाट पर लेट गया था, और दस दिन पहले आए हुए दैनिक हिन्दुस्तान टाइम्स के पन्ने उलट रहा था। कैसा हतभाग्य गाँव है। साथी-संगी की बात जाने भी दी जाए तो भी गाँव में एक छोटी-मोटी लाइब्रेरी भी नहीं कि कुछ उपन्यास-कहानी लाकर समय को उनके हवाले किया जा सके। एक कैसा तो भी क्लब खोलने का वह जरूर प्रयत्न करेगा। लेकिन अब की बार किसी सनीचर वह शहर तक चला जाएगा, और जरूर कुछ पुस्तकें खरीद लाएगा। वरना इस तरह निठल्ले बैठे रहने से तो वह दिन-ब-दिन घुलता ही जाएगा।

"सरकार।" हरनाम की आवाज थी। शाम को बाजार करने के पैसे माँगता होगा।

"क्या है? कल ही तो दस का नोट दिया था। खत्म होगया? बड़ा शाह-खर्च हो गया है।"

"जी नहीं, वह तो अभी सब बाकी है। खाली आठ आने की सब्जी तो आई थी कल।"

"अरे वाह, यार। तब तो तू वाकई गृहस्थि का पूरा वजन अकेला सम्हालने के लायक हो गया है। तो फिर और क्या कहना चाहता था?"

बड़े दबे स्वर में उसने कहा, "हुजूर बहूरानी को कब लिवा लाएँगे?"

नवनीत ने जैसे सुना ही नहीं। अखबार के विज्ञापन में एक लम्बी नग्न टाँगों वाली युवती विल्स का सिगरेट पी रही है। लेकिन नवनीत का मन कहीं अन्यत्र उड़ चला है हरनाम की बहूरानी में। सचमुच अगर वह आजाए तो अवकाश का यह दैत्य मुँह बाए उसे न काटता रहे, और नीलम जैसी ये गानेवाली तितलियाँ अपने पँखों को उसके इर्द-गिर्द फड़फड़ाने की कोशिश न करें। ना, आरती की बात अभी वह मन में नहीं लाएगा। उसके लिए जो कोना उसने मन में बना रखा है, वह किसी की छाया से छूना नहीं चाहिए। माया की छाया भी नहीं छू सकती क्या उसे? माया की अनुपस्थिति ने ही तो उसके लिए जगह खाली करदी है! और माया को भेजा ही किसने था? वह अपनी मरजी से गई

तो मरजी ही से उसे आना चाहिए! हरनाम को नवनीत ने उसके साथ भेजा ही इसलिए था कि वह उसे पिताजी से मिलाकर दो-चार दिन बाद वापिस लिवा लाए। पर दस दिन तक धरना देकर बैठे रहने पर भी उसे अकले ही लौटना पड़ा था न। खुद उससे अधिक इस बात को और कौन जानता है?

हरनाम ने मालिक का ध्यान खींचने के लिए खँखार भर दिया।

नवनीत ने मानो पढ़ते हुए ही कहा, "अँ? क्या कर रहा था तू?"

"जी बहूरानी को लिवाने की बात कह रहा था।"

"तू जाएगा?"

"हुकुम होने पर क्यों नहीं जाऊँगा, बल्कि सिर के बल भागा जाऊँगा। पर आप खुद ही जाते तो उनका मन भी रह जाता।"

"मैं खुद चला जाता। जैसे मेरे सिर पर कोई है ही नहीं। यह किसी ऐरे-ग़ैरे नत्थू-खैरे नवनीत लाल के घर की नौकरी नहीं है मिस्टर हरनाम, कि पैर में जरा खुजली चलते ही छुट्टी हाजिर, बैठो गाड़ी में, और दो की जगह दस दिन तक सुसराल में जाकर लम्बी तानों और मिठाई की थालियाँ साफ करो। यह गवर्नमेंट की नौकरी है गवर्नमेंट की, ब्रिटिश सरकार की। आदमी कहीं रहे, कागज पर उसके दस्तखत यहीं रहने चाहिए। समझे?"

हरनाम ने मुस्करा कर कहा, "इतनी बड़ी बातें हम कहा जाने सरकार? यहाँ कोई बहुत बड़ा काम तो दीखता नहीं। दो-चार दिन के लिए तो अधर लाल जी भी काम देख ही सकते हैं—"

"आहा एक पोस्ट मास्टर का काम अगर एक पोस्टमैन देख सकता है तो फिर पोस्ट मास्टर को क्या झाड़ू लगाने के लिए रखती है सरकार? तब तो तू भी मेरा काम देख सकता है। देख सकता है न?"

"नहीं हुजूर, मैं पढ़ा-लिखा कहाँ हूँ? आप जाते तो बहूरानी का और समधी जी का मन भी रह जाता। बस।"

"मन रह जाता कि मान रह जाता? और मेरी नाक कट जाती, यही न? जा काम देख अपना। न तो मुझे जाना है, और न तुझे ही जाना है अपनी किसी बहूरानी-फूहड़ानी को लिवाने। जरूरत ही क्या है मुझे? आना होगा तो खुद आएगी नाक रगड़ती हुई। मैंने भेजा है क्या सो लेने के लिए जाऊँ? मुझे गरज ही क्या है? तू है ही। खाना कितना अच्छा बनाता है तू? और खर्चा? खर्चा

भी तो खिंचे हाथ करता है। कल दस रुपया दिया था, अगर बीवी के हाथ में होता तो अब तक गल-गलाकर गायब हो चुका होता, लेकिन तेरे हाथ बरकत है दोस्त। कितना एक ही रुपया खर्च हुआ है न अब तक तो ?"

बुझे हुए मन से हरनाम ने कहा, "नहीं, साढ़े छः आने खर्च हुए हैं शाम को।

"सो ? जा जा, बरसात में थोड़ा घर के बाहर भी घूमा कर। मन लग जाएगा।"

हरनाम जा ही रहा था, उसे कहने की जरूरत नहीं थी। बहूरानी को भी वह ठीक तरह पहचानता था और नवनीत को भी समझ तो गया ही था। कठिनाई थी तो यही कि दोनों एक दूसरे को नहीं समझ रहे थे।

हरनाम के मन की दशा को नवनीत समझ सकता है। चार-पाँच वर्ष की उस लम्बी अवधि में हरनाम दिन भर ही माया के आगे काम करते करते ही उसे खुश रखता रहा है। फिर वह छोटी-सी छाया अपना एक नया ही संसार लेकर उस घर में उदित हुई थी। हरनाम को मानो अपने जीवन की सार्थकता ही मिल गई थी। सो, मोह होना तो स्वाभाविक है उसे, पर नवनीत करे तो क्या ?

नवनीत की मनोदशा ही यह हरनाम कैसे समझ सकता है ? उसका मन क्या माया के लिए नहीं तड़पड़ाता ? किन्तु नवनीत का दोष क्या है ? किस दोष की सजा दे रही है माया उसे ? यह ठीक है कि उसके पिता ने ही नवनीत की शिक्षा की व्यवस्था की। इस अहसान को नवनीत स्वीकार तो नहीं करता। किंतु यदि कोई ऐसा समझे कि इस अहसान के लिए उसे अपनी प्रतिष्ठा भी बेच देनी चाहिए तो वह गलती पर है। कमल किशोर की सहायता न मिलती तो दूसरा कोई उपाय अवश्य होकर रहता। प्रकृति किसी स्थान को शून्य, निर्वात नहीं रखती—दबाव भी अगर कम-अधिक हो जाए तो पास से वायु दौड़ आकर दोनों स्थानों में मेल बिठा देती है। नवनीत में यदि प्रतिभा थी तो उसका उपयोग होना लाजिमी था। कमल किशोर न होते तो दूसरा कोई नवल किशोर होता। इसके लिए ही इतना दम्भ क्यों ? वह भी माया केवल इस लिए करे कि वह उस बाप की बेटी है ?

और नवनीत ने आखिर कीमत तो चुकाई ही है। माया से विबाह किया है उसने बिना पहले से यह जाने कि उससे उसकी पटरी बैठेगी या नहीं। ठीक है कि वह बहुत सुन्दर है, पढ़ी-लिखी है, और उसके सर्वथा उपयुक्त है, किन्तु इसकी

जगह वह कुरूप, फूहड़ और झगड़ालू भी तो हो सकती थी। कमल किशोर ने भी किसी लड़के को नहीं, बल्कि अपने भावी जामाता की सहायता की है। इसमें अहसान ही क्या है ?

प्रकृति माया के पक्ष में शून्य छोड़ देती क्या ?–नहीं, सो कैसे हो सकता है ? माया ने ही शायद कहा भी था कि कोई लड़का कमल किशोर की दृष्टि में पहले था। नाम भी बताया था उसने। अब शायद वकालत करता है वहीं। सो ? जोड़-बाकी बराबर न।–न हमारा तुम पर कुछ अहसान, न तुम्हारा हम पर कुछ अहसान। लेन-देन बराबर। फिर मान का सवाल किस लिए और किस पर ?

नवनीत पैर पटक कर उठ बैठा। नहीं, अधिक नहीं सोचेगा वह। और करेगा क्या यहाँ बैठा-बैठा ? तालाब पर सुनते हैं, फिर वैसी ही चद्दर लग गई है। चद्दर—क्या लोग हैं ? चद्दर यानी पानी की चद्दर।—जगह खूब है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

नवनीत ने कमर में पेंट कस ली। सिगरेट के डिब्बे में से सिगरेटें निकाल कर अपने जेबी केस को भर लिया। एक ताजा नई पूरी माचिस भी टटोल कर जेब के हवाले की। इसी बीच एक और सिगरेट अधरों में फँसाकर जला ली। पैरों में पम्प शू पहन कर बिना हरनाम से कुछ कहे नीचे उतर लिया, तालाब की ओर बढ़ जाने के लिए ही।

सूरज ढल रहा था। भादों की मतवाली साँझ पानीदार बादलों से छेड़खानी करती रुक-रुक कर बढ़ती जा रही थी। कभी-कभी कोई गहरा बादल आया कि उसने अपना श्याम आँचल फैला दिया। पवन में सिहरन फैल जाती, और उसके गदकारे बदन को सहला कर बादल भी आगे बढ़ जाता। नवनीत का मन भी निबिड़ हो उठा था। किसी की याद की बिजली भी रह-रह कर उसके मन की निबिड़ता में तड़प उठती थी।

अभी उस दिन जन्माष्टमी का उत्सव था। तीन-चार दिन ही तो हुए हैं। क्या अजीब नाम है गाँव का भी। शायद पुराने पीपल के पेड़ की वजह से ही कहते होंगे उसे पीपलिया। गुसाँई जी का पीपलिया। मठ में कृष्ण जन्मोत्सव था। अधर लाल खींच ले गए थे नवनीत को भी ! वहीं तो देखे थे उसने नीलम के भावनृत्य और सुने थे कृष्णभक्ति के भजन ! मानना ही पड़ेगा कि संगीत की उसकी साधना और उपलब्धि अद्भुत हैं। रस में उतना तादात्म्य पाए बिना ऐसी

गहरी विभोरता से कोई भाव-प्रदर्शन कर ही नहीं सकता। श्रीकृष्ण की ब्रज-लीलाएं यों ही किसी के भी मन को लुभा सकती हैं, और वैष्णवों का पुष्टिमार्ग तो मधुर-भक्ति का सबसे आकर्षक सम्प्रदाय है। उस परम पुरुष की सनातन-खोज में प्रवृत्त विरह-विधुरा राधा की भूमिका यदि नीलम ने स्वीकार की हो तो क्यों न उस रूप में वह अनिन्द्य अप्रितम रूपवती हो उठेगी ? सचमुच प्रखर था उसका उस समय का रूप-सौंदर्य। किन्तु प्रखर होने से ही तो अग्नि से डरना उचित है। और उस अग्नि को सहेज रखना भी क्या हर किसी के लिए सम्भव है ?

विचारों में खोया हुआ नवनीत कब अपने उस परिचित तालाब पर आ पहुँचा, इसका उसे पता ही तब लगा जब गिरते हुए जल-प्रपात के भीम-गर्जन ने उसके कर्ण-कुहरों को भर दिया। चट्टानों पर उछल कर दिग-दिगन्त में बिखर जाने वाली फुहारों ने उसके सारे बदन में रोमाँच खड़े कर दिए। दर्शकों की भीड़ उतनी ही घनी थी। प्रकृति का सौंदर्य कभी बासी होना जानता ही न था, और देखने वालों का मन भी भरना नहीं जानता था। लेकिन नवनीत को अपनी आँखों का लोभ संवरण करना है। सौंदर्य में जो एक मादक प्रभाव है, चाहे वह प्रकृति का सौंदर्य हो या नारी शरीर का, वह मन को अवश-विवश कर ही देता है। आगे बढ़ कर वह एक दुरारोह पहाड़ी पर चढ़ कर बैठ गया। वहाँ कोई नहीं था, किसी की दृष्टि भी नहीं थी वहाँ। और उस छोटी-सी पहाड़ी के पद-प्रान्त को प्रक्षालित करती हुई नाले की एक क्षिप्र धारा बड़े वेग से बढ़ी चली जा रही थी।

बड़ी मन मोहक संध्या थी। बादलों से लदे-भरे पश्चिमाकाश में घना निर्विकार कुहरा-सा छाया हुआ था। भार से दबी-नमी हुई डाली की तरह गीली हवा रह-रह कर काँप तो उठती थी, पर मानों उस कम्प को प्रकट न होने देने के लिए उसका भरसक प्रयत्न भी चल रहा था। दूर आगे, वृक्षों की घनी निबिड़ता में मस्त होकर मोर कूज उठते थे और एक के बाद एक अनेक मयूरों की "मेह आओ" ध्वनि दिग-दिगन्त में छा जाती। पहाड़ी की कहीं-कहीं धूसरित पटभूमि और वृक्षों की घनकृष्ण नीलिमा के अतिरिक्त जहाँ तक दृष्टि जाती है, सद्यस्नाता हरियाली का शुभ विराट् आँचल फैला हुआ है। कितना मोहक, कितना नयन-रंजक है यह रूप !

लेकिन इतने मात्र से ही मानो प्रकृति की सार्थकता नहीं थी, इसीलिए क्या

नहीं उसने रंगभूमि में इस मनुष्य नाम के प्राणी को विकसित किया ? शरीर का विकास तो, कहते हैं, इसवी सदी के पहले ही सम्पन्न हो चुका था, जब ग्रीक सभ्यता अपने चरमोत्कर्ष तक पहुँची हुई थी। तत्कालीन कला में शरीर-सौष्ठव की सूक्ष्मतम रेखाओं का आकलन किया गया है। नारी-शरीर के अवयवों की गढ़न, प्रत्येक 'कर्व' की माँसल अनुभूति पता नहीं, पुरुष-शरीर में भी नारी के लिए वह स्पर्शानुभूति है या नहीं। माया कभी इस बात को मुँह पर नहीं ला सकती। शर्ली अपनी भावना निर्बन्ध व्यक्त कर सकती थी, पर नवनीत ने कभी उससे पूछा ही नहीं, और अब उसके लिए अवसर ही नहीं है। नीलम, आरती नहीं नहीं, ऐसी बातें सोचना बेकार है। ध्यान देने मात्र से मन जाने कैसा हो जाता है। और मन को लगाम नहीं लगाई जाए तो वह शहजोर हो ही उठता है।

—नवनीत की विचारधारा कि लगाम सहसा खिच गई। किसी ने पुकारा है क्या उसे ? कौन है यहाँ ? कोई भी तो दिखाई नहीं देता। अँधेरा बढ़ता जा रहा है। अब उसे भी चलना चाहिए। पर आवाज उसने किसी की सुनी अवश्य है।

नवनीत ने फिर चारों ओर दृष्टि फिराई। नीचे से आवाज आई, "ऐ! ऐ बाबू साहब! इधर जरा···"

अच्छा तो कोई व्यक्ति नीचे तीव्र धारा में मछलियाँ भी पकड़ रहा है। वाह रे दोस्त। सौन्दर्य के इस सारे मायाजाल में तू उलझा तो सिर्फ मछली पकड़ने में। उसने कहा, "क्या है?"

"तकलीफ तो होगी, पर जरा यह बोझ उठवा दोगे तो छोटे नहीं हो जाओगे।"

नवनीत ने जरा ध्यान से देखा तो लगा उसे यह तो वही समुद्र पार से लौटा टीकू है, मिस्टर टिंकर। इतनी शोखी से बात करना और ऐसा शरीर और हो ही किसका सकता है ?

"लेकिन दोस्त, बहुत ज्यादा लोभ करके तुम्हीं कौन बहुत मोटे हो जाओगे? जो जिन्दा बची हैं उन्हें तो छोड़ दो पानी में। बोझ हल्का हो जाएगा पाप का भी, और घर जाने का भी।"

"मेहनत की है और उस पर पानी फेर दूँ ? न हो, तुम्हें ही कुछ मिल जाएगा। लेकिन बातों से कुछ होगा नहीं बाबू साहब। जरा तकलीफ दीजिए न

अपने शरीर को।"

नवनीत उठ खड़ा हुआ और बोला, "तुम्हारी खातिर तकलीफ तो देनी ही होगी शरीर को। रहा सवाल मुझे मछलियाँ देने का, सो मछली खिलाकर क्या ब्रह्मराक्षस बनाना चाहते हो इस ब्राह्मण को? तब यहाँ तो तुम मछलियाँ पकड़ चुके—"

"तब ब्रह्मराक्षस को नहीं पकड़ूँगा क्या? फिर मछलियों की जरूरत ही क्या रहेगी?"

और नवनीत सचमुच ही उतरा ब्रह्मराक्षस की तरह ही। इसलिए कि जमीन गीली थी और अँधेरा बढ़ता जा रहा था, और उसका ध्यान था नीचे टीकू की ओर। पैर फिसला, और सम्हल पाए इसके पहले नियंत्रण खोकर वह प्रायः लुढ़क ही चला नीचे की ओर। ढाल काफी था ही, कुछ पत्थर भी खिसक कर साथ हो लिए।

टीकू ने भी बिजली की तरह काम किया। ठीक नवनीत के पतन की राह में वह अंगद का पैर रोपकर खड़ा हो गया, और नवनीत को पैरों के सहारे ही रोक लिया। वरना नाले में वह गिरकर जरूर वह फिर कोई हड्डी तुड़वाता। गिरते-गिरते ही उसके होश फाख्ता हो चुके थे। सारे सफेद कपड़े कीचड़ में सन गए थे, और बदन पर भी खराश-खरोंच लग ही गई थी।

टीकू ने देखा कि बाबू साहब के वेश की मजेदार फजीहत हो गई है। कम से कम उचले कपड़ों के बल पर ही अपने आपको सर्वश्रेष्ठ साबित करने की अब इनकी स्थिति नहीं रही है तो उसे नवनीत की दुर्दशा पर अफसोस के स्थान पर हँसी ही आई। यों नवनीत का हट्टा-कट्टा शरीर भी उसके लिए गर्व का कारण हो सकता है। गर्व की दुर्गति में आनन्द ही उठाया जा सकता है, उसमें करुणा नहीं जागृत हो सकती।

किन्तु अपनी दुर्गति से नवनीत स्वयं त्रस्त हुआ हो, ऐसा भी नहीं लगा। टिकू के अचल पैरों में अटके रहकर वह हँसा और बोला, "लो दोस्त, अब तो तुम्हारा बोझ और भी बढ़ गया है। टोकरी खाली करनी होगी अब तो।"

"क्यों?"

"अरे, मुझे भी तो कन्धा देना होगा।"

"वह तुम्हारा साहबजादा कोई दूसरा होगा। बल्कि इस गंगा के कन्धे चढ़

जाते तो ब्रह्मराक्षस के पाप से ही छुटकारा मिल जाता। लो अब उठोगे भी या यहीं लेटे रहने का इरादा है?"

"पैर में मोच आगई लगती है। सहारा नहीं दोगे तो कैसे उठूँगा? पड़ा रहूँगा यहीं, और जब तक कोई जंगली जानवर न उठा ले जाए, रात भर यहीं पड़ा-पड़ा तुम्हारा नाम जपता रहूँगा।" उसने उठने की चेष्टा की तो टीकू ने हाथ बढ़ाया और कहा, "क्या चोट सचमुच बहुत बुरी है?"

"चोट अच्छी भी होती है क्या?"

"क्यों नहीं। जवान आदमी हो, शहर के रहने वाले लगते हो। शहराती ही अच्छी लगने वाली चोटों को न जानेंगे, यह कैसे माना जा सकता है? अगर वह चोट खाए हुए हो तो बेचारी इस चोट की बिसात ही क्या है।"

नवनीत खड़ा हो लिया था, किन्तु पैर सीधा पड़ना नहीं चाहता था। हड्डी न टूटी हो तो भी मोच जरूर आगई है। इस ऊबड़-खाबड़ जमीन में कैसे घर तक चल सकेगा? प्रगट में नवनीत ने कहा, "उस चोट के बारे में बात करने की इस वक्त सूझ ही नहीं रही है, क्योंकि पैर साथ देना ही नहीं चाहता। मैं पैदल नहीं चल सकूँगा।" और वह बैठ गया।

लेट तो सकते हो न? ठंडी हवा भी आ रही है। घर पर ऐसी हवा कहाँ मिलेगी? टीकू के मुँह पर झुँझलाहट साफ झलक रही थी। गया था मदद माँगने रोजे गले पड़ गए।

नवनीत ने कहा, "नाराज होने से क्या लाभ होगा दोस्त? अधर लाल को हो सके तो खबर भिजवा देना। वे ही कुछ व्यवस्था कर देंगे शायद।"

"अधर लाल यहाँ के पोस्टमैन?"

"हाँ-हाँ वही अधरलाल, तुम्हारे अमरीका के साथी।"

"क्या मतलब? कौन हो तुम?" टीकू की आवाज में परिवर्तन ही नहीं, हिंसा भी स्पष्ट थी, और यही नहीं उसने अपनी कमर में से हाथ डालकर छुरा भी निकाल लिया। नवनीत को वह पहचान न सका था, और यदि उसका रहस्य किसी पर अवगत हो गया हो तो उसका समय रहते प्रतिविधान कर लेना चाहता था। खास कर इस समय जबकि अंग्रेज सरकार हर भारतीय पर संदेह करती है, और अपनी भावना में प्रतिहिंसक हो उठी है। नवनीत ने टीकू के स्वर परिवर्तन के साथ ही उसकी दूसरी कार्यवाही भी देख ली। संकट को समझ कर

उसने तत्काल उत्तर दिया।

'अजी मि० टिंकर। इतनी जल्दी भूल गए ? उस दिन अधर लाल के साथ माचिस लेने आया था न मैं तुम्हारे दौलतखाने पर ? मैं हूँ यहाँ का पोस्टमास्टर। तुम्हारे अधर लाल मेरे पास ही तो काम करते हैं। उन्हीं के मुख से सुनी है तुम्हारी कीर्तिगाथा भाई।"

"हूँ। समझा। तो अधर भैया ने तुम्हें सारा इतिहास सुना दिया है। चलने के लिए क्या कहते हो ?"

नवनीत ने लक्ष्य किया कि टीकू ने छुरा पुनः अपनी कमर की फेंट में खोंस लिया है, तो मुक्ति की साँस लेकर बोला, "तुम जाओ भाई। यदि हो सके तो अधर लाल को खबर भिजवा देना। वे घर से मेरे नौकर हरनाम को भिजवा देंगे। उसका सहारा लेकर गिरता-पड़ता किसी तरह घर पहुँच ही जाऊँगा। यानी उसके आने तक यदि कोई जंगली जानवर सूँघता हुआ आकर भी मुझे घर जाने लायक छोड़ दे।'

"जो काम वे आकर करेंगे, वह मैं यहाँ होकर भी नहीं कर सकता क्या ?"

"करें तो क्यों नहीं सकते, लेकिन तुम्हारे पास खुद ही यह वजन जो है।"

"तो जाओ, पहले तुम्हें ही घर पहुँचा दूँ।"

"और यह मछलियों का टोकरा ? गैरहाजिरी में ब्रह्मराक्षसों की क्या कमी है यहाँ, जो मछलियों को साफ न कर जाएं ?"

"तुम जैसी बड़ी मछली हाथ लग जाए तो इन छोटी मछलियों का क्या मूल्य है ? लो उठो।" और इसके पहले कि नवनीत कुछ प्रयत्न करे टीकू ने अनायास ही नवनीत को अपने हाथों पर उठा लिया और कहा, "बस, दीखने भर के ही डीलडौल के हो। अच्छा हो, तुम तो कन्धे पर ही चढ़ जाओ। हाथ में यह टोकरा भी उठा लूँगा। मेरी झोंपड़ी कोई ज्यादा दूर नहीं है। कहोगे तो वहीं कुछ लीद-चने गीले करके बाँध दूँगा। सबेरा होने तक पैर पहले जैसा हो जाएगा।"

टीकू के हाथों में नवनीत छटपटा रहा था, बोला, नहीं टीकू भाई, इसकी जरूरत नहीं है। हाथ का जरा सहारा दोगे, या कन्धे को पकड़ भर लेने दोगे तो मैं चल सकूँगा।"

"चल सकोगे ? अच्छा।"

और नवनीत को उसने आहिस्ता से नीचे खड़ा कर दिया। नवनीत ने चेष्टा की। खड़ा तो हो ही सकता है। सहारा मिल जाए जरा-सा, तो चल भी क्यों नहीं सकेगा वह! इतने में टीकू ने बिना किसी सहारे के टोकरा एक कन्धे पर उठा लिया। दूसरा कन्धा आगे बढ़ाते हुए उसने कहा, "लो, पकड़ो कन्धे को। ठीक?" टीकू ने अपना हाथ भी फैला दिया और नवनीत को कमर से पकड़ लिया। धीरे-धीरे दोनों उतरने लगे।

मार्ग में कोई बातचीत नहीं हुई। नवनीत टीकू के ही ध्यान में खोया हुआ था। आदमी है यह, या दैत्य है। तेवर बदल कर जब उसने छुरा निकाल लिया था, तब कितना भयंकर हो उठा था वह? आदमी के प्राण ले लेने में क्या उसे तनिक भी संकोच नहीं होता? हृदय को इतना पत्थर का बनाए बिना क्या देश की सेवा संभव नहीं है? अधर लाल देश-प्रेम में टीकू से क्या किसी तरह कम है? किन्तु तब भी दोनों में कितना अंतर है?

एकाएक ही नवनीत की तन्द्रा टूट गई। टीकू ने उसकी कमर छोड़कर तथा कन्धे को एक झटका देकर कहा, "यह आगई मेरी कुटिया। जरा रुकना होगा। मैं टोकरा जरा ठिकाने लगा दूँ। और क्या जानते हो? सीधे घर चलोगे या कुछ बाँध-बूँधकर इस मोच का इलाज करदूँ? देहाती इलाज है। पर बाँधने के बाद पैदल चलना जरा और कठिन हो जाएगा। या तो मुझे कन्धे पर ही उठाकर ले जाना होगा तुम्हें, या फिर···"

"या फिर?"

"घर पर अगर कोई राह देखने वाला हो तो वहाँ पर भी बाँधी जा सकती है दवा।" और टोकरा नीचे उतार कर उसने झोंपड़ी का दरवाजा खोलने का उपक्रम किया।

रात का काफी हिस्सा बीत रहा था। बदली से घिरी अँधेरे पाख की रात जंगल की सनसनाती हवा में बड़ी डरावनी लग रही थी। वृक्ष के नीचे झोंपड़ी के नाम अँधेरे का एक स्तूप ही दिखाई दे रहा था, और अन्य समस्त वस्तुओं की आकृतियाँ भी अंधकार की छाया ही लग रही थीं। अंधेरे ही अंधेरे में आखिर टीकू ने दरवाजा खोल लिया, और भीतर जाकर उसने रोशनी भी कर दी, तो अंधेरे में झोंपड़ी का मानो अन्तःकरण ही प्रदीप्त हो उठा। नवनीत बाहर ही खड़ा था तब तक अपने आप में खोया हुआ।

टीकू ने बाहर आकर कहा, "क्या कहते हो ?"

"राह देखने वाला जिसे कहते हैं, वह तो घर पर है नहीं, पर नौकर जरूर है। उसे समझा कर कह दोगे तो शायद बांध देगा वह। पर जरा सुस्ता लेना चाहता हूँ, तभी चल सकूँगा।"

"तो चलो, भीतर चलो न ! दौलतखाना तो नहीं, पर गरीबखाना जरूर है। शर्मिन्दा नहीं हूँ मगर इसके लिए। देश की हालत तुमने देखी नहीं है, वरना देखते कि लोग ऐसी हालतों में रहते हैं कि मैं तो उनकी तुलना में मानो राज सुख भोग रहा हूँ ! आओ !"

टीकू ने हाथ बढ़ाया तो नवनीत ने पकड़ लिया। झोंपड़ी काफी प्रशस्त थी। भीतर बीच में एक तीन-चौथाई दीवार खींच कर दो हिस्से कर दिए गए थे। पीछे वाले हिस्से में सामान पड़ा होगा। खाना-पीना भी शायद वहीं होता है। यह हिस्सा बैठक लगती है। जगह खूब साफ है। आधे से अधिक हिस्से में खजूर की चटाइयाँ बिछी हुई हैं। इधर एक खटिया पर चटाई बिछी हुई है, जिस पर बड़े से कम्बल का तकिया लगा हुआ है। कम्बल के नीचे एक चादर भी लिपटी हुई पड़ी है। झोंपड़ी में प्रकाश एक मिट्टी की ढिबरी से किया गया है। झोंपड़ी खूब है इसमें कोई सन्देह नहीं। किसी मल्लाह की नहीं लगती।

टीकू ने कहा, "बैठ जाओ—बल्कि एक काम करो न ! कुछ लेट लो तो मैं तुम्हारे लिए गुड़की राब बना लेता हूँ। खाओगे ? तुम लोगों में चालू ब्रांडी-व्रांडी तो मेरे पास है नहीं। पीता भी था तो किसी जमाने में, जब भारतीय नहीं रह गया था। तब रखता भी था मगर अब तोबा है ! और यह गुड़ की राब, अगर गरम-गरम पीलो, तो असर उससे भी ज्यादा करती है। बोलो, क्या कहते हो ? घर पर नौकर है तो उतना-सा काम मैं भी कर सकता हूँ। अगर नफरत न हो तो समझ लो मैं भी तुम्हारा नौकर ही हूँ।"

नवनीत बैठ लिया था तब तक, और थकावट इतनी महसूस कर रहा था कि अब और कहीं न जाकर वहीं लेट जाने का मन कर रहा था। फिर टीकू ने अपनी बात कुछ इस निरीहता के साथ और आत्मीयता के साथ कही थी कि खिंची हुई मूंज की खाट पर बैठते ही उसे लेट जाने की गुदगुदी अनुभव हुई और उसने कहा, "नफरत तुमसे करूँगा भाई तो मुझ जैसा अभागा कौन होगा। मैं तो तुम्हारी पूजा करता हूँ, पूजा ! लो, लेटता हूं मैं तो यहीं। लीद-चने का इलाज भी

तुम यहीं कर डालो न ! नौकर तो आखिर नौकर ही होता है। तुम तो सचमुच मेरे बड़े भाई जैसे बन गए हो। न हुआ, सबेरे पहुँच जाऊँगा घर। फर्क ही क्या पड़ता है ! पर तुम्हें तो कुछ दिक्कत नहीं होगी न ? और यह खाने-पीने की इल्लत क्यों कर रहे हो ? बस, तुम तो वही गुड़ की राब बना लो मेरे लिए ?"

"अच्छा, अच्छा ! तुम उसके लिए कुछ चिन्ता मत करो। लेटो आराम से। इसे अपना ही घर समझ सकते हो, और मैं—जो तुम समझना चाहो, भाई या नौकर !"

नवनीत ने इधर-उधर देखकर कहा, "नीचे लेट जाऊँ मैं ?"

हँस कर टीकू ने कहा, "क्यों ? साँप-बिच्छुओं का डर नहीं है क्या ? बरसात के दिन हैं और यह जंगल है भाई। साँप-बिच्छुओं के तो दिन ही यही हैं।"

"मगर तुम कहाँ सोओगे फिर !"

"अभी तो खाना-पीना तैयार कर रहा हूँ। सोने का जब वक्त आएगा तो उसका इन्तजाम भी कर ही लूँगा। यों साँप-बिच्छू भी मुझसे डरते हैं ! समझे न ?" और वह हँस दिया।

"कितनी तकलीफ दे रहा हूँ मैं तुम्हें ?"

"याद रखूँगा और किसी समय वसूल कर लूँगा। भूलने वाला मैं नहीं हूँ।"

नवनीत लेट गया तो टीकू अपने काम में लगा। नवनीत इतना थक गया था कि लेटते ही उसे नींद आ गई।

टीकू ने चूल्हे पर हँडिया चढ़ा कर सोचा कि जब तक राब उबले, कुछ बातें ही क्यों न की जाएँ ! अधर भैया बड़ी तारीफ कर रहे थे इस आदमी की। जितना मस्तमौला है उतना ही भोला और भला भी बताया था उन्होंने। मस्तमौला तो जरूर है, पर भोला भी होगा इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। पुकारे उसे, पर क्या कह कर ? उन्होंने नाम शायद कुछ बताया भी हो तो भी अब याद नहीं रहा। तो उसने कहा, "ऐ बाबू जी, ओ पोस्ट मास्टर जी !" तो उत्तर न पाकर उसे आश्चर्य हुआ। पास आकर देखा तो हजरत घोड़े बेच कर सो रहे हैं। "धत्तेरे की, जैसे माँ की गोद ही सोने को मिल गई है।" बेसाख्ता उसके मुँह से निकल गया। भोलापन नहीं तो क्या है यह ?—कुछ ही देर पहले उसने इसकी हत्या करने के लिए छुरा निकाल लिया था, यह भी समझ तो गया ही था, और अब इतता निश्चिन्त होकर उसी के आश्रय में इस

तरह सो जाए उसे भोला न कहा जाए तो और क्या कहना होगा ?—क्यों अब इतनी रात गए इसे ले जा कर इसके घर पहुँचाया जाए ? पैर में यहीं लीद-चने की पुलटिस बाँध दे और थोड़ी बहुत राब-रोटी खिला दे तो रात आराम से यहीं बिता सकता है खुशी से । खुद वह भी तो इतनी रात को वहाँ जाने और लौटने की जहमत से बच जाएगा ।

टीकू ने नवनीत के मोच खाए पैर में लीद और चने भिगो कर बाँध दिए । नवनीत गहरी नींद में सोया रहा । रह-रह कर टीकू उसकी निरीह मुद्रा की ओर देख लेता है । उस जैसे भयानक व्यक्ति के हाथों अपने आपको सौंपकर कैसी मीठी नींद में सोया हुआ है । कुछ देर पहले यमलोक की आभा देखी होगी इसने और इतनी जल्दी स्वप्नलोक में खो बैठा है अपने आपको । यमलोक और स्वप्नलोक मानो कोई मानी ही नहीं रखते इसके लिए । जाने क्या समझ कर अधर भैया इससे अपने राज की बात कह बैठे हैं । इतना भोला और भला आदमी दल के उपयोग का कैसे हो सकता है ? दल का शायद यह है भी नहीं । दल के लिए टीकू का जैसा फौलाद का दिल होना जरूरी है । जो व्यक्ति चाहे जिस पर विश्वास कर सकता है, उस पर सहज विश्वास कर लेना क्या संकट-जनक नहीं है ?

पर इससे क्या होता है ? जो व्यक्ति इस तरह मारने वाले का विश्वास कर सकता है, उसे मारना क्या सहज रह जाता है ? प्यार शायद विश्वास ही का तो दूसरा नाम है ! और जिससे प्यार करने को जी चाहे उसे मारने के लिए हाथ कैसे उठेगा ?

राब बन गई, तो आटा सान कर उसने कुछ टिक्कड़ भी सेंक लिए । शाक-सब्जी के चोचले उसके यहाँ नहीं चलेंगे । खाएगा तो एकाध टिक्कड़ गुड़ या राब के साथ खालेगा, नहीं तो सवेरे टीकू के काम आजाएंगे और उठकर नवनीत की खाट के पास जाकर उसने उसे झकझोर कर कहा,

"अजी ओ नवाब साहब के बेटे, थके हुए सिरफ तुम्हीं नहीं हो । और दूसरा जो थका हुआ है, उसे भी ऐसी ही गहरी नींद आ सकती है । चलो उठो । राब तैयार है, गरमागरम पीने से ही असर करती है वह । भूख-बूख कुछ है ? मर्दों के हाथ के टिक्कड़ हजम कर सकते हो तो वह भी तैयार हैं !"

आँखें मसलता हुआ नवनीत उठ बैठा । पुलटिस बँधा पैर उसे मानो सिर

पर रखा कोई वजन महसूस हुआ—यह झोंपड़ी, ढिबरी का यह क्षीण प्रकाश, और दैत्याकार देह यह टीकू—सारी परिस्थिति समझने में उसे कुछ समय लगा। आलस छोड़ कर उसने कहा,

"क्यों तंग करते हो भाई ?"

"यह खूब रही जी ! तंग मैं कर रहा हूँ कि तुम कर रहे हो ? चलो, उठो गरमागरम न खाने से राब गले के नीचे भी नहीं उतरेगी, और लाभ तो उसका कुछ भी न होगा।"

"और मछली-वछली भी कुछ पका डाली है क्या ?"

"तो तुम खाते हो ? मालूम नहीं था, वरना बनने में क्या देर लगती ! कितनी सारी पड़ी हैं। पर तुमने तो कहा था न कि खाकर तुम ब्रह्मराक्षस न बन जाओ कहीं, सो मैंने समझ रखा था कि तुम ब्राह्मण हो केवल घास खाने वाले।"

"घास खाने वाला ही हूँ टीकू भैया। मछली अगर सचमुच नहीं बनाई हो, तब तो भूख है ही। गरम न हो राब, तब भी पेट तो भर ही जाएगा न !"

"नहीं, नहीं; कहा न मैंने, मेरे हाथ के मोटे-मोटे टिक्कड़ भी हैं। चलेंगे ?"

"खूब चलेंगे ! पर, पैर तो जाने क्या बाँध-बूँध कर तुमने मूसल बना दिया है। एक पैर से चलूँ तो कैसे ?"

"कन्धा पकड़ लो। बस, यहीं तो बैठना है !"

नवनीत बैठ कर बोला, "कहते हैं नींद न माँगे बिछौना, और भूख न माँगे सब्जी। लेकिन जब दोनों ही एक साथ आदमी को लग जाएँ, और सामने बिछौना भी हो और भोजन भी, तो क्या यह मुश्किल नहीं हो जाता बेचारे के लिए ?"

"क्या मुश्किल ?"

"कि पहले खाट पर लेटे या पहले थाली पर बैठे ?"

"बारी-बारी से दोनों। एक तो कर ही चुके हो, अब थाली पर भी बैठ गए हो। भोजन से निपट कर फिर लेट जाना। अब घर जाने की जरूरत ही क्या है। कहा था न तुमने, घर पर जब राह देखने वाला ही कोई नहीं है, तो करोगे क्या वहाँ जाकर ? सवेरे तक तो अपने ही पैरों चलने लायक हो जाओगे !"

"तुम्हारे आसरे हैं। जो कहोगे सो ही करना पड़ेगा। और तुम नहीं

खाओगे ?"

"खाऊँगा क्यों नहीं ! उपवास थोड़े करना है ? पर तुम खालो, मैं धीरे-धीरे निपटूँगा ।"

"नहीं टीकू भाई। साथ ही बैठ कर खाएँगे। नहीं तो मैं भी नहीं खाता। यह लो।"

"अरे, तुम तो बच्चों जैसा हठ भी करते हो !"

"कुछ भी कह लो।"

"अच्छा जी तुम्हारा हुकुम ही सही। अधर भैया के मालिक, सो हमारे भी मालिक। तुम्हारा हुकुम क्या टाला जा सकता है ?"

जब दोनों का ही संक्षिप्त भोजन समाप्त हो रहा था, तभी बाहर से आवाज आई—

"टीकमचन्द जी ?"

रात के इस सुनसान में कौन हो सकता है बाहर इस समय टीकू को बुलाने वाला ? मानपुर पुराना कस्बा है। बस्ती प्रायः हिन्दुओं की है, और सभी आचार-परायण धर्मभीरू हैं। मछलियों की यहाँ कोई खास खपत नहीं होती। इतवार को पास के ही एक गाँव में हाट लगती है, वहीं टीकू कल जाकर मछलियाँ बेच लेगा। यहाँ जो छोटी जाति के लोग हैं, वे भी हाट से ही जाकर खरीद लाते हैं। पर कुछ हिन्दू हैं जो छिपे-छिपे अंडे-मछली उड़ाते हैं। वे दिन के वक्त खरीद नहीं सकते, इसलिए सनीचर की रात को ही वे टीकू को परेशान किया करते हैं। टीकू ने समझा ऐसा ही कोई खरीददार होगा, और झुँझलाकर वह कोई अच्छा-सा उत्तर देना ही चाहता था कि बाहर से फिर आवाज आई, "यह मैं अधरलाल हूँ टीकू !"

"अधर भैया हैं ? तो आ जाओ न ?"

एक अप्रत्याशित स्थिति का सामाना करने की कठिनाई से नवनीत कुछ अन्यमनस्क-सा हुआ। किन्तु वह जहाँ बैठा था, वहाँ आड़ थी। अधर लाल प्रवेश करके भी एकाएक नवनीत को नहीं देख सके। वे कहते-कहते ही भीतर प्रविष्ट हुए थे, "वे जो उस दिन मेरे साथ शाम को माचिस लेने के लिए यहाँ आए थे थे न, मेरे पोस्ट मास्टर साहब ! भई, आज दुपहर से ही उनका पता नहीं लग रहा है। जरा तालाब तक चलना होगा !"

कुछ और आगे बढ़े तो देखते हैं कि नवनीत निहायत इतमीनान के साथ थाली पर से उठने का उपक्रम कर रहा है "अरे, तुम यहाँ हो? लो, हरनाम ये रहे तुम्हारे राजा सरकार! आओ आओ, भीतर चले आओ। तुम भी नीलम!"

नवनीत ने आश्चर्य के साथ देखा कि लालटेन लिए हरनाम के पीछे नीलम, और उसके पीछे वही उसका सेवक किशन है। वाह, क्या बात है!

नवनीत ने कहा, 'अधर भैया और हरनाम की चिन्ता की बात तो समझ सकता हूँ पर आपने कैसे कष्ट किया नीलम देवी?"

इसके पहले कि अधर लाल कुछ कहें, नीलम ही ने कहा, "जी हाँ, आपको लेकर चिन्ता करने में मेरा सीधा साझा तो जरूर नहीं हो सकता, लेकिन पोस्ट मास्टर में तो सारे गाँव का साझा है ही। अगर कल पोस्ट ऑफिस बन्द हो जाए और कल ही मेरे किसी जरूरी पत्र को आना हुआ, तो उसकी चिन्ता तो मुझे होनी ही चाहिए। नहीं क्या?" और उसके साथ ही सभी उसकी वाक्-चतुराई पर हँस दिए।

लेकिन तब तक हरनाम को नवनीत का बँधा हुआ मूसल जैसा पाँव दिखाई दे गया था। लालटेन नीचे रखकर वह झुक गया और बोला, "यह क्या हो गया सरकार?"

"कल पोस्ट ऑफिस की छुट्टी करनी है न, इसलिए पोस्ट मास्टर के पैर में मूसल प्रकट हुआ है।"

लेकिन टीकू ने अधर लाल को लक्ष्य करके कहा, "लखनऊ की डामर की सड़क पर चलने वाले बाबू साहब को पहाड़ पर चढ़ने का शौक हुआ था। बस, जरा सा कंकड़ कहीं आया कि चारों खाने चित्त, और फिर पहाड़ से जमीन पर लोटन-कबूतर। कपड़े तो खैर बहुत कुछ सूख चले हैं।"

"तो क्या बहुत अधिक चोट लगी है?" सभी नवनीत को घेर कर बैठ गए थे।

टीकू ने कहा, "मामूली-सी मोच है। मगर लजवन्ती के लिए तो हाथ से छू देना ही काफी है न।"

तब तक नीलम भी अधर लाल के पास बैठ कर नवनीत के पैर को देख चुकी थी। बोली,

"अपने जैसा ही तो सबको पत्थर का बना समझते हो टीकू चाचा ! जैसे कठिन परिश्रम और जैसी क्रूर परिस्थितियों से तुमने समझौता कर लिया है, वैसा सब तो कर नहीं सकते ! और मोच ही होगी इसका भी क्या ठिकाना ! कहीं हड्डी ही टूट गई हो तो ?"

हँस कर टीकू ने कहा, "इतनी जल्दी आदमी की अगर हड्डियाँ टूटती होतीं तो संसार में आबादी बढ़ने पर इतनी चिन्ता नहीं की जाती। न तब कोई किसी को पराधीन करता, न ये बड़े बड़े युद्ध होते, और न इन एटम बमों का विकास होता। तुम तो लड़ाई के जमाने में अपने मुल्क में थीं नहीं, वरना देख पातीं कि आदमियों की हड्डियों में मेजिनों लाइन से भी ज्यादा सख्ती है या नहीं।"

नवनीत को नीलम की कथा का कुछ भी विदित नहीं था । अधर लाल ने टीकू की तथा अपनी कथा का नितान्त आवश्यक अंश ही उसे बतलाया था। उसे आभास तो पहली ही बार हो गया था कि नीलम जैसी लड़की भारत-भूमि में हर दृष्टि से अस्वाभाविक और पृथक ही दिखाई देगी, किन्तु आश्चर्यों का भी अंत कहाँ हैं ? उसने अपनी उत्सुकता को यथासाध्य छिपाते हुए कहा, "तो आप भी विदेश घूमी हुई हैं ?"

नवनीत के प्रश्न से टीकू को झुँझलाहट हुई, वह तो समझे बैठा था कि नवनीत सारा ही हाल जानता है। अधर लाल ने कितना उसे बताया है, कितना नहीं ? बात बताने के लिए उसने फिर कहा, "पहली लड़ाई के जमाने में तो हम विदेश में ही थे न। तब नीलम यही चार-पाँच बरस की बच्ची ही थी। हसरत थी कि इस दूसरी बड़ी लड़ाई में मेजिनों लाइन जैसे आश्चर्य पैदा हो गए, तो जरूर यह मनुष्य नाम का बिजली और फौलाद का बना कुछ तो कर दिखाता। और नीलम बिटिया, अगर तुम अपने आपको यहाँ रह कर भी हिन्दुस्तानी न समझो तो विदेश में तो हो ही।"

बात कुछ बनी नहीं तो अधर लाल ने कहा, "तुम्हें तो सारा ही किस्सा सुनाना है न नवनीत बाबू। नीलम तो कट्टर भारतीय बन गई है, भारतीय ही नहीं, कट्टर हिन्दू, परम वैष्णव, पुष्टिमार्ग में दीक्षित। उस दिन गुसाँई जी के पीपलिया गाँव में नहीं देखा था क्या ? लेकिन जन्म इसका फ्रान्स में ही हुआ है, उसी मेजिनों लाइन के देश में।"

"अच्छा, तब तो नीलम देवी, आपके साथ मैंने बहुत अविचार किया है।

मुझे क्षमा कर देना होगा आपको।" और बड़ी ही तृष्णाभरी दृष्टि से नीलम को देखकर उसने हाथ जोड़े। उसके मन में अचानक ही इस नारी का कुछ आतंक भी छा गया।

लेकिन नीलम ने हँसकर कहा, "किन्तु फ्रान्स का होने से ही कोई किसी के आदर का पात्र नहीं हो जाता। मैं एक महज गायिका ही तो हूँ मानपुर की। और सिर्फ जन्म ही लिया है उस विदेशी भूमि में, बीज-शिक्षा-संस्कार-दीक्षा-आसक्ति यह सब तो भारतीय हैं। अच्छा जाने दीजिए, ये बातें तो बाद में भी हो लेंगी। टीकू चाचा, अपने अड़क-उपचार का यह पट्टा खोलना होगा, मैं तसल्ली कर लेना चाहती हूँ कि वास्तव में कोई हड्डी नहीं टूटी है।"

नवनीत को लगा कि इस नारी में अभिमान की मात्रा भी कम नहीं है, तभी तो अवसर पाते ही अपनी श्रेष्ठता के दम्भ से सभी पर शासन करने से अपने को रोक नहीं पाती।

उत्तर में टीकू कह रहा था उसी तरह मुस्करा कर, "और मेरी तसल्ली को तुम तसल्ली ही नहीं समझोगी? हड्डी टूटी हुई होती तो हजरत घोड़े बेचकर कभी नहीं सो पाते, उसके बाद जिस तरह इन्होंने यह थाली साफ की है वह भी किसी हड्डी टूटे के बस का न था। और अब तो देख ही रही हो, इस तरह हँस-हँस कर बातें करना क्या हड्डी टूटने का लक्षण है? तुम जानो ही क्या, हड्डी टूटना कहते किसे हैं! कहीं फर्स्ट-एड पढ़ डाली होगी, उसी बूते पर मेरी कंजी आँखों को चुनौती दे देना चाहती हो?"

लेकिन मानो टीक की बात उसने सुनी ही नहीं, और वह नवनीत की पट्टी खोलने के लिए हाथ बढ़ाने लगी कि नवनीत ने पैर अपनी ओर खींचते हुए कुछ कहना चाहा।

—पर तभी टीकू ने कहा, "अब पैर क्यों खींच रहे हो नवनीत बाबू? मालूम देता है फ्रान्स की राधा को कृष्ण मिल गए हैं—"

पैर को छोड़कर गुस्से का अभिनय करती हुई नीलम बोली, "बड़े वैसे हो टीकू चाचा। नहीं बोलते तुमसे।" और उस ढिबरी के प्रकाश में भी उसके चेहरे का मक्खन जैसा रंग गुलाबी हो गया। अधर लाल मुँह दबा कर हँसने लगे। नवनीत को भी कुछ अजीब-सा लगा। आखिर बोलना उसे ही पड़ा, पर कहा उसने हरनाम को लक्ष्य करके ही, जो अभी भी पैरों के पास किंकर्तव्य-विमूढ़ बैठा

हुआ था।

"अरे कुछ नहीं है हरनाम, तुम लोग नाहक परेशान हो रहे हो। मामूली-सी मोच है, और अब तो बहुत कुछ आराम भी मालूम दे रहा है। मगर तुम यहाँ तक आ कैसे पहुँचे ?"

हरनाम ने एक बार नीलम की ओर, और फिर अधर लाल की ओर देख कर कहा।

"आप तो दुपहर के बाद ही चले आए थे वहाँ से। कहा भी नहीं, कहाँ जा रहे हैं, कब लौटेंगे। मैं पाँच बजे से चाय का पानी चढ़ाकर राह देख रहा था आपकी, कि तभी मैम···

नीलम ने उसे रोककर कहा, "किसने कहा कि मैं मेम साहब हूँ जी ? नीलम नहीं कह सकते ? मेरा नाम नीलम है समझे ? जी हाँ, मैं पहुँच गई थी तब आपके यहाँ। देखा कि आप तो हैं नहीं, और चाय का पानी उबल रहा है तो उसकी सद्गति ही क्यों न कर ली जाए।"

हरनाम ने कहा, "लेकिन इतना कहने पर चाय पी ही कहाँ ?"

"तो क्या तुम चाहते कि मालिक की गैरहाजिरी में उसके घर पर चाय-नाश्ते पर हाथ साफ करने की बदतमीजी आखिर मुझे ही करनी पड़ती ? पर हाँ, गई थी इसीलिए, और इसलिए भी कि पूछ लूँ कि मेरे नाम कोई पत्र-वत्र तो नहीं है।" और वह मुस्करा दी।

नवनीत ने कहा, "पत्रों का वरदान ले जाने वाले देवदूत अधर लाल तो आपके ही कैम्प के व्यक्ति हैं।"

"आप क्या किसी दूसरे कैम्प के हैं ?" नीलम ने पूछा।

पर तभी टीकू ने कहा, "अधर भैया कृष्ण कहाँ हैं ? वे किसी भी कैम्प के हों, पर यह तो मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि वे आप दोनों में से किसी के कैम्प के नहीं हैं।"

नवनीत ने नीलम की ओर देखा। इस बार उसके मुँह पर हरनाम की छाया बड़ी लम्बी होकर पड़ रही थी। नवनीत ने कहा, "मजाक छोड़िए। किस लिए कष्ट किया था आपने ?"

"इसलिए कि आपके साथ घूमने निकलकर गपशप में कुछ समय बिताया जाए। लेकिन देखती हूँ कि मुझसे अधिक कष्ट तो आपने ही उठा लिया है।"

टीकू ने कहा, "और नवनीत बाबू, पलड़ा बराबर करने के लिए नीलम भी अपनी टाँग तुड़वाना चाहती है। टाँग अगर नहीं टूटी तो दिल टूट जाएगा।"

हँस कर नवनीत ने कहा, "दिल का टूटना ही ज्यादा सहूलियत की बात है टीकू भैया। उसमें लीद-चने के पुलटिस बाँधने की परेशानी तो नहीं होती, और जल्दी ही दिल को जोड़ने का अच्छा-सा मसाला भी मिल जाता है। अगर पश्चिम की हवा बहती हो तो मामला और भी रंगीन तथा नाटकीय हो सकता है। मगर पैर को टूटकर मूसल तो होना ही पड़ता है, और रात भी ऐसे जंगल में मूँज की खटिया पर बितानी पड़ सकती है।"

नीलम की प्रतिक्रिया लक्ष्य नहीं की जा सकी। किन्तु अधर लाल ने कहा, "रात बिताने का क्या प्रश्न है भाई? अभी समय ही क्या हुआ है? कितने, साढ़े दस ही तो बजे होंगे।" और नीलम की ओर दृष्टि डाली उन्होंने। उसके हाथ में घड़ी बँधी हुई थी।

घड़ी देखकर नीलम ने कहा, "ग्यारह बजने में दस मिनिट शेष हैं।"

"तो उससे क्या अन्तर पड़ जाता है। घर पहुँचने तक अधिक से अधिक आध घंटा लग जाएगा। और क्या?"

नवनीत ने हँसकर कहा, "लेकिन यह मूसल तो चल नहीं सकेगा भाईजान। टीकमचन्द जी ने कहा था कि रात भर अगर यह पट्टी चढ़ी रही तो सवेरे तक अपने खुद के पैरों चल सकता हूँ। यों, चार के कन्धे चढ़कर जाने की अभी मेरी उमर भी नहीं है और साध भी नहीं है। हो भी तो भी स्त्रियाँ हमारे यहाँ कन्धा दें, ऐसा रिवाज तो नहीं है न।"

नीलम ने अधर लाल से कहा, "तो काका, हम सब रात को यहीं क्यों न रह जाएं? ग्यारह तो बज ही गया है। आप खाना खा ही आए हैं। किशन को मैं दौड़ा देती हूँ वह आरती काकी से कह आएगा।"

हरनाम ने कहा, "पर ऐसी जगह में रात बिताने की इनको तो बिल्कुल आदत नहीं है न अधर भैया। मानपुर में कोई इक्का दिखाई तो देता है कभी-कभी।"

"इक्का तो है। नीलम, हमीद कहाँ होगा अभी?"

"कुछ ठिकना नहीं है उसका काका। काम तो कुछ रहता नहीं है उसको। जब जरूरत होती है, दो घण्टे पहले से तलाश करवाती हूँ तब जाकर मिलता है।"

नवनीत ने कहा, "मालूम देता है आपका ही इक्का है। लेकिन हरनाम, मैं रात यहाँ क्यों नहीं बिता सकता ? टीकम भाई का आतिथ्य मैं पहले ही मंजूर कर चुका हूँ। तुम चाहो तो रह भी सकते हो, हालाँकि उसकी कोई जरूरत नहीं है, सवेरे मैं आही जाऊँगा। लेकिन अधर भैया, आप इन देवी जी को लेकर लौट जाएं। आप लोगों के रहने से मेरी तो सुविधा कुछ बढ़ेगी नहीं, टीकू भाई की असुविधा जरूर बढ़ जाएगी। आप लोगों को भी असुविधा होगी, और व्यर्थ में आरती भाभी को आप क्यों दुश्चिन्ता में डाल देना चाहते हैं ?"

"वहाँ की तुम चिन्ता क्यों कर रहे हो ?"

"उसका अधिकार तो नहीं है, पर ख्याल तो रखना चाहिए न। खैर, उनकी खातिर न सही नीलम देवी की खातिर ही आप घर लौट जाइए।"

नीलम ने कहा, "आप मुझे इतनी परावलम्बिनी क्यों मानते हैं ?"

हँसकर नीलम ने कहा, "आप दूसरों को अवलम्बन दे सकती हैं, यह मैं समझता हूँ। किन्तु अभी इस असामर्थ्य के बावजूद में काफी समर्थ हूँ अपने आप में। मुझे एकाएक अवलम्बन की आवश्यकता नहीं होगी। किन्तु आपका उपकार मैं हमेशा याद रखूँगा।"

अधिक बहस के लिए गुँजाइश नहीं थी। नीलम के मन को शायद आघात भी लगा। दृष्टि झुकाए वह दरवाजे की ओर बढ़ गई, ताकि अधर लाल जब छुट्टी ले लें तो वह दरवाजे से ही साथ हो जाए।

नहीं, नीलम ने यह सब कथा सभा के सदस्यों के सम्मुख इतने विस्तार से नहीं कही थी। किन्तु नवनीत का मानस जो उस समय की आकर्षक स्मृति से छलक पड़ा है। नीलम के ऐसे दुर्निवार आकर्षण की उपेक्षा कर जाना सामान्य बात नहीं है। सभा के सभी सदस्य भी नवनीत की दृढ़ता से प्रभावित हो गए थे। उसने विजय-दर्प से पहले सभा की ओर और फिर नीलम की ओर दृष्टि डाली। नीलम के चेहरे पर स्पष्ट एक अवसाद, एका थकान, एक निराशा छाई हुई थी। उसने अपना पसीना पोंछा, और फिर गवाक्ष की ओर दृष्टि डाल कर कहा,

"मेरे प्रेम की कहानी, उसकी निराशा बहुत अधिक महत्व की नहीं है साथियों ! शायद मैं इसलिए खिचती रही कि मेरी उपेक्षा हो रही थी, और वह

उपेक्षा मेरे अचेतन में मेरे लिए शायद चुनौती बन गई थी। मनुष्य की स्वीकृति चाहने की भूख बड़ी भयानक होती है, और उसकी तृप्ति के लिए वह क्या-क्या नहीं कर गुजरता ? लेकिन इसके पहले कि मैं आपको अपनी विजय की कहानी सुनाऊँ, आपके सामने अभियुक्त के एक दूसरे उपसर्ग का उल्लेख करना मैं आवश्यक समझती हूँ। उस कथा को भीतर लाए बिना मेरा आख्यान भी आगे नहीं बढ़ सकता। मेरी बगल में बैठी आरती देवी को तो आप भूल नहीं रहे हैं न ?"

और जब नीलम की दृष्टि का अनुसरण करके नवनीत ने उसके पास बैठी आरती की ओर दृष्टि डाली तो उसके पैरों तले से मानो धरती खिसकने लगी। नीलम ने क्या कहा, यह भी वह बराबर नहीं सुन सका। अतीत की दीवार भेदकर उसकी स्मृति उन पुराने दिनों में खेलने लगी जब वह शुरू-शुरू मानपुर पहुँचा था।

लेकिन तभी नवनीत ने आश्चर्य से देखा कि सामने सीट पर बैठी हुई महिलाओं में से मंजरी ने उठकर कहा, "अध्यक्ष महोदय, क्या आज की कार्यवाही यहीं स्थगित नहीं की जा सकती ? रात के दो बजने वाले हैं, और निश्चय ही सदस्यों को थकावट भी महसूस हो रही होगी।"

सुरेश नारायण ने हाथ पर बंधी घड़ी की ओर देखा, और अँधेरे गवाक्ष की ओर देखने के बाद सदस्यों के चेहरे पर उसकी दृष्टि फिर गई।

निकल्सन ने कहा, "टेम्पो तो फुल स्विंग पर है, और मैम्बर्स में, कम-से-कम मैं तो कोई खास टायर्ड नहीं फील करता। यों विप्लव दल तो रात से नहीं घबराता, बल्कि वही उसकी कारगुजारी का बेहतर वक्त होता है। लेकिन लगता है, महिलाएं सब थक गई हैं। उनका ख्याल तो हमें रखना ही चाहिए। वी कैन मीट टुमारो सेम टाइम।"

सुरेश नारायण ने एक बार और सबकी ओर देखा, फिर गवाक्ष की दिशा से कुछ परामर्श करके कहा, "ओ० के० नवनीत लाल को ले जाया जाए। कल हम सब फिर आज के ही समय मिल रहे हैं। आशा है, सब साथी अवश्य उपस्थित रहेंगे।"

मथुरा के भैरव-मन्दिर में पड़े नवनीत की भी तन्द्रा टूट गई। हरनाम को उसने आदेश दिया कि दवा की दूसरी खुराक का समय हो गया है।

७ आरती

सभा तो स्थगित हो गई उस रात, किन्तु आरती के नाम का आश्रय लेकर नीलम क्या नया गुल खिलाना चाहती है ? अवश्य ही आरती नवनीत के जीवन का एक बहुत ही कोमल इसलिए बहुत ही दुर्बल पहलू है। उस स्मृति में ही कितनी पीड़ा है उसके लिए। जीवन में यदि कहीं उसके लौह-पौरुष ने हार मानी है तो वह आरती के निकट ही तो ! उसी की मृगतृष्णा ने तो उसे इन काँटों में ला घसीटा है। क्या नीलम उसी गम्भीर और गोपनीय पीड़ा को छेड़ देना चाहती है ! क्या उस सभा का निकलसन जैसा हर आवारा उसकी निताँत व्यक्तिगत स्मृति का भागीदार बनेगा ? उस रात फिर अपनी सीलन भरी कोठरी में थकावट के बावजूद नवनीत को नींद नहीं आ सकी। वह जीवन क्या फिर जीने के लिए मिल सकता है नवनीत को ? कल्पना में वह पुनः उस अनुभव को जी सकता है, पर उसे अपनी गलती सुधारने का अवसर नहीं मिल सकता कल्पना के राज्य में ! कितनी मधुर है वह स्मृति ? कितनी मधुर है वह पीड़ा ?

प्रधान कार्यालय लखनऊ में अंग्रेज अधिकारियों का कोपभाजन होकर नवनीत तबादले पर मानपुर आने के लिए मजबूर हुआ था। मन की बड़ी विषम स्थिति थी। गए कई दिनों से उसकी मनोस्थिति ऐसी ही चली आ रही थी। शर्ली से प्रतारण पाकर माया पर उसे रोष हो आना स्वाभाविक था। और उसी माहौल में जिला कलेक्टर के भाई से वह झड़प हो गई। नतीजा यह हुआ कि उसे दफ्तर से भी उखड़ जाना पड़ा। खैर, वह तो जो होना था हुआ, पर इस नए गाँव में आज जिस दुर्दान्त यात्रा से वह निपट पाया है, वह किसी भी

स्वस्थ स्थिर मन को उखाड़ फेंकने के लिए काफी है।

स्टेशन से मानपुर कस्बा बीस मील दूर है। स्टेशन से जो सड़क मानपुर को मिलाती है, वह और भी आगे दूसरे कस्बों को मिलाती हुई दूर तक चली गई है। स्टेशन और मानपुर के बीच एक बस-सर्विस भी है। लेकिन सब कुछ होकर भी नवनीत के लिए कुछ नहीं था। मानो भाग्य ही उसके विरुद्ध षडयन्त्र किए बैठा था।

युद्धकाल की वजह से रेलगाड़ियाँ कम हो गई थीं, और समय पर चलना उनके लिए समय की बात नहीं थी। उसी तरह पैट्रोल की राशनिंग की वजह से सड़क पर मोटर-बसों में भी कमी कर दी गई थी। मानपुर सर्विस में चौबीस घंटों में केवल एक बस आती और जाती थी। भीड़ का यह हाल था कि भीतर भरे हुए आदमी आदमी न लगकर भेड़ें लगते थे। ऊपर छत पर तो सवारियाँ बैठती ही थीं, सामने मड-गार्ड पर भी दो-दो आदमी और डट जाते थे। तारीफ की बात यह है कि भीतर भीड़ की वजह से आदमी कोई बेहोश चाहे हो जाता, पर बस से गिरकर किसी के सड़क सूँघने का किस्सा सुनने में नहीं आया। युद्धकाल में मौत के ऊपर सवारी करके चलने की आदत तो डाल ही लेनी होती है!

उस दिन गाड़ी जब स्टेशन पर पहुँची तो दो घंटे और कुछ ही मिनिट लेट थी। बस में भीड़ इतनी हो चुकी थी कि किसी जगह दस मिनिट तक लगातार खड़े रहने के माने होते मुसाफिरों को दम घोट कर मार डालना। एक बार भीतर घुस लेने पर सवारियों को बाहर निकलने की न सुविधा होती है न इच्छा ही। लेट आने वाली ट्रेन के लिए बस राह देखकर उसकी सवारियों के लिए जगह भी कहाँ करती? इसलिए नवनीत जब हरनाम के साथ स्टेशन पर उतरा तो उसे कहा गया कि बस मानपुर के लिए काफी पहले ही रवाना हो चुकी है, और दूसरी बस की प्रतीक्षा करने के लिए उसे चौबीस न हों तब भी बाइस घंटे तो बिताने ही पड़ेंगे। अंग्रेज जिला कलेक्टर के भाई का प्रसाद माथे और पैर में पट्टियों के रूप में बँधा हुआ था, दुपहर का सूरज सिर पर चढ़कर भूख-प्यास को भी उग्र रूप से जाग्रत कर रहा था, जिसके समाधान की इस छोटे-से स्टेशन पर कोई व्यवस्था नहीं दिखाई दे रही थी। ट्रेन से उतरे अन्य यात्री आस-पास के गाँव के रहे होंगे। वे अपनी-अपनी गठरियाँ सिर पर रख कर धूप से

बचते हुए एक-एक चलते बने। नवनीत को मुसाफिरखाने में छोड़कर हरनाम सवारी की तलाश में निकला। आध-घण्टे की दौड़धूप के बाद जाकर कहीं एक भैंसागाड़ी मिली उसे। कोई चारा था नहीं, इसलिए उसी में सवार होकर दिन रात चलते-चलते अब कहीं जाकर वे मानपुर पहुँचे थे। पहुँच तो गए, पर कहाँ है पोस्ट ऑफिस ? बस्ती के बाहर पनघट पर पहुँच कर भैंसागाड़ी रुक गई है। जहां जाना चाहें जाएँ मुसाफिर। एक वृक्ष के नीचे गाड़ी उसने खोल दी। सामान और नवनीत को उतार कर पास के दूसरे वृक्ष के नीचे बिठाकर हरनाम चला गया था पोस्ट ऑफिस का पता लगाने।

दिन चढ़ आया था। हवा में ठंड भी कम हो चली थी। पनघट गाँव का एक महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। अंचल की सभी स्त्रियाँ सुविधानुसार बड़े तड़के से ही ही झुंड बनाकर पानी भरने के लिए आना शुरू हो जाती हैं। प्रौढाएँ पानी भर कर जल्दी-जल्दी घर लौट जाती हैं। किन्तु जो युवतियाँ हैं, वे पानी भरने क्या आती हैं, अपना मन भरने आती हैं। दूर-पास की सहेलियों का मिलन होता है। कल की अधूरी बातें आज पूरी होती हैं, और कल के लिए नया कार्यक्रम बनता है। चुहल होता है, चर्चाएँ छिड़ती हैं, चोचले चलते हैं! सास-बहू जैसी कोई प्रौढ़ा महिला मौजूद न हो तो छीना-झपटी, भाग-दौड़, आपस में पानी छिटकना, किसी की गगरी लुढ़का देना तो किसी का मटका फोड़ देना—एक नई ही सृष्टि होती है कस्बे के पनघट की। वहाँ सौंदर्य पानी भरता है। नवनीत ने पहले कभी अपने जीवन में ऐसी छटा कहीं देखी नहीं थी।

पक्का बँधा हुआ कुआँ, चारों ओर प्रशस्त पाल, किनारे-किनारे चारों ओर रहँट, और कमर तक ऊँची पत्थर की पट्टियों की दीवार ताकि पनिहारिनें पानी खींचते-खींचते कहीं गिर न पड़ें। पास के बाहरी किनारे पर पानी के निकास के लिए पक्की पत्थरों से चिनी हुई नाली, लेकिन पानी नाली की सीमाओं को पार करके चारों ओर फैल जाता। गनीमत थी कि कँकरीली जमीन होने की वजह से कीचड़ नहीं हो पाती थी। पनिहारिनें—वे पानी भरने की मजूरी करने वाली पनिहारिनें नहीं, वे अपने-अपने घरों की मालकिनें होती हैं—वे डोल, बाल्टी या घड़ा और रस्सी साथ लाती हैं। कुए से पानी ही नहीं खींचतीं वे, देखने वालों का मन भी अतल गहराइयों से खींच लाती हैं। रंग-बिरंगी साड़ियों में आठ-दस तो बनी ही रहती हैं वहाँ। नवनीत का मन किसी की डोल-रस्सी में

नहीं अटका था, किन्तु उसकी थकावट आप ही आप दूर होती चली जा रही थी। वह मगन हो गया था, पर समय के साथ ही साथ पनघट पर भीड़ भी कम होती जा रही थी।

भैंसागाड़ी के गाड़ीवान ने भैंसों को चारा-पानी डालकर थोड़ी देर विश्राम करने दिया। इसी बीच वह नित्यक्रिया से भी निपट लिया था। कुछ देर बाद उसने अपनी गठरी खोली और अपने जानवरों के पास ही बैठ कर उसने नाश्ता कर लिया। जब वह पानी पीने के लिए कुँए पर गया तो वहाँ केवल एक ही महिला पानी भर रही थी। नवनीत ने देखा और देखता ही रह गया।

लड़की ही कहना चाहिए, बीस-बाइस से अधिक नहीं होगी। विवाहित तो होगी ही, घेरदार घाघरा और धानी रंग की साड़ी—सामान्य गृहस्थि की ही लगती है, किंतु रँग मानों किसी राजकुमारी का है, बिल्कुल चंपे की कली-सा। और अंगों की सुघराई इतनी दूर से भी मन को बाँधे बिना नहीं रहती। सिर पर साड़ी का पल्लू है, किन्तु छिटके हुए उसके बालों की लट जाहिर करती है कि उसके बाल सुनहरी रंग के हैं। उभरा हुआ पुष्ट वक्ष और खम खाई हुई कमर के नीचे की गोलाई, मानों कामदेव का साकार पुष्प-धनु यही था। सचमुच युवती का सौंदर्य अप्रितम था, नवनीत अपने आपको भूल गया।

जिस वृक्ष के नीचे वह बैठा हुआ था, वह कुएँ से अधिक दूर नहीं था। जरा सा कान देने पर ही वहाँ से गाड़ीवान और उस युवती के बीच चल रही बात-चीत आसानी से सुनी जा सकती थी—खास कर इसलिए कि अब पनघट पर और महिलाएँ नहीं थीं कि उनकी चपरगट में किसी बातचीत का इतनी दूर से स्पष्ट अनुसन्धान न किया जा सके।

गाड़ीवान, जो बूढ़ा नहीं तो भी पचास के पार तो था ही, बोला,

"माँजी, तनी जल प्याय दइ है ?"

लड़की ने गाड़ीवान की ओर देखा। सम्बोधन से जरूर उसके मन में कुज-बुजी उठी होगी, यों, चेहरे पर स्वाभाविक अल्हड़ता तो थी ही। लड़की के कहा, "जल जरूर पिओ—तनिक नहीं, पूरे एक-दो घड़े, जितना चाहिए उतना। पर मुझे माँजी कहकर क्या अपने आप को वेटा कहलवाना पसन्द करोगे ? और तब वे तुम्हारे जो दरख्त के नीचे लेटे पड़े हैं—और बैठ लिए हैं अब तो। वे मेरे नाती हो जाएंगे, और पानी पीने का बहाना करके अगर मेरी गोद में खेलने को मचल

उठें तो ? ना बाबा, यह परमारथ अपने को नहीं सोहता। पानी पिओ और अपने रस्ते लगो। यह रिश्ता-फिश्ता अपने तक ही रक्खो।"

लड़की पानी खींचने लगी तो बूढ़े ने हँस कर कहा, "हमार रानी बिटिया अहौ तुम तो हम कहा जानी बहना ? तोहर तो पीठ हती न हमार दीदन के आगे। माफ करि देव बेटी।"

"अच्छा माफ किया बाबा, लो पियो पानी।"

बूढ़े ने अंजली बना कर पानी पिया, और हाथ धोकर उठ खड़ा हुआ तो लड़की बोली,

"तुम्हारे वे पाँचवे सवार भी पिएंगे क्या पानी ?"

बूढ़े को मजाक सूझा, "अपने नाती से तुम्हीं पूछ लेव बिटिया।" और वह मुस्करा उठा।

लड़की अप्रतिभ नहीं हुई, उसने कहा, "तो क्या मैं किसी से डरती हूँ ?" और फिर स्वर को जरा ऊँचा करके, मानो अब तक नवनीत ने उसकी बातचीत सुनी ही न हो, उसने कहा, "अजी ओ। पानी पिओगे क्या ?"

नवनीत का साहस न हुआ कि वह युवती से आँखें मिला सके। उसने दृष्टि फिरा ली, और ऊपर वृक्ष की पत्तियाँ गिनने लगा। मानो उसने कुछ सुना ही नहीं।

लड़की ने कहा, "अरे बाबा, तुम्हारा मालिक तो सीधे बादलों से पानी माँग रहा है। जरा कहदो उससे कि आसमान में तो एक भी बादल नहीं है। पीपल के पत्तों में जरूर कोई देवता होगा, पर कलियुग में पानी वह भी नहीं पिलाता।"

बूढ़े ने हँस कर कहा, "जाने दे बिटिया। विनकूँ प्यास लगेगी तो खुद दौड़े आवेंगे।"

लौट आकर बूढ़े ने एक दृष्टि नवनीत पर डाली और फिर अपनी गाड़ी जोत कर वहाँ से चल दिया।

आँखें चुराकर नवनीत ने देखा युवती ने अपने कलशों को रगड़-रगड़ कर इतना साफ किया कि वे चमकने लगे और फिर रहँट में रस्सी फँसाकर वह डोल कुएँ में उतारने लगी। शायद कुछ गुनगुना भी रही है। नवनीत का मन सचमुच प्यास से भर उठा। आसपास देखा उसने, जान-पहचान का तो वहाँ होता ही कौन। हरनाम का अभी तक ठिकाना नहीं था। वह उठा और धीरे-धीरे कुएं

के पास आकर बोला, "देवीजी, प्यास लगी है, पानी पिला सकेंगी ?"

युवती रहँट पर रस्सी समेट कर डोल को खींच रही थी, पीछे नवनीत की एकाएक आवाज सुन कर वह चौंक उठी, और रस्सी उसके हाथ से छूट गई। "ओ माँ।" और सम्हालने का प्रयत्न करे, तब तक तो रस्सी रहँट को घुमाती हुई यह जा-वह जा, और भरे हुए डोल के साथ भीतर कुएँ में समा गई। उसने तत्काल कुएँ में झाँक कर देखा तब तक तो एक छपाक के साथ रस्सी-डोल को अपने उदर में समा कर जल का स्तर नीरव हो गया था। युवती की परछांई पड़ी तो हिलकोरों ने उसे भी अपने हाथों में इधर-उधर करना शुरू कर दिया। दोनों हाथों को कमर पर स्थापित करके युवती ने नवनीत की ओर मुँह फेरा।

अपने आपको अकस्मात् ही एक दुर्घटना का कारण बन गया देख कर नवनीत भी कुछ लज्जा-सी अनुभव कर रहा था। जब उसकी ओर दृष्टि करके युवती तन कर खड़ी हो गई तो उसे हृदय में कुछ गुदगुदी-सी हुई और एक क्षण तक वह उस रोषारुण चेहरे की ओर देखता रहा। बड़ी ही मुग्ध छवि थी। बड़ी-बड़ी आँखें रोष और परिताप से और भी फैल गई थीं। मुँह पर रक्त दौड़ आया था सिर का आँचल कन्धे पर आ लगा था, और सिर के घने सुनहरी केश हवा के साथ हिलोरें ले रहे थे। कमर पर हाथ देकर खड़े होने का उसका ढंग भी इतना प्रिय था कि देखते ही रह जाना पड़े। रोष से युवती ने नीचे का ओठ दाँतों में दबा लिया था। कुछ कहना चाहती थी, पर नवनीत को देख कर वह कुछ कह नहीं पाई। क्या कहे ?

नवनीत ही ने मुस्करा कर कहा, "पानी माँग कर यह गजब तो किया ही। अब क्षमा माँगूँ भी तो किस मुँह से ?"

"क्यों ? विधाता ने यह गोरा-चिट्टा मुँह दिया तो है। पट्टी बँधी है तो इसी से कोई टूट तो नहीं गया। मैं कहती हूँ, जब मैंने पानी के लिए पूछा तो लाट साहब मुँह फुला कर आसमान की ओर ताकते रहे, जैसे माँ बैठी है वहाँ पर पानी पिला देने को। और अब पीछे चुपके से आकर और मुझे डराकर मेरी डोल-रस्सी ही गिरा दी भीतर।"

"कलश तो आपने भर ही लिए हैं। डोल-रस्सी निकलवाने का इंतिजाम मैं करवा दूँगा।"

"वाह परदेसिए वाह, इंतजाम कर देंगे भला। यह मुँह और मसूर की दाल

मैं घड़े चढ़ा कर जरा पीठ फेरूँगी, और अपना बोरिया-बसना समेट कर हुजूर ऐसे गायब होंगे कि गधे के सिर से सींग। मैं इंतजाम करवा दूँगा। कैसे ठाठ से कह दिया। जाओ, अपने रस्ते लगो। प्यास-व्यास का बहाना क्या बुरा है? देखा, लड़की अकेली है। न जाने इन निगोड़ो को शरम-हया कब होगी—"

गालियाँ सुन कर नवनीत दुःखित हुआ। प्यास उसे अवश्य नहीं थी, किन्तु यह लड़की तपाक के साथ उसके भीतरी इरादों का पर्दा इस तरह फाश कर देगी, इसकी उसे कल्पना नहीं थी। वह मुँह लटका कर उल्टे पैर जाने लगा तो लड़की ने टोक कर कहा, "हाय दैया, बहूरानी से कुछ कहना मत, नहीं तो पीहर पास है, भाग जाएगी। अरे भले मानस, पानी तो पी लो। पानी माँग कर खाली चले जाओगे तो नरक में कौन जाएगा?"

"मैं ही जाऊँगा, आप क्यों जाएँगी? और पानी तो, आपने कहा न, प्यास तो बहाना भर है। फिर आप क्यों पानी पिलाएँगी?"

"तो इतना कहने का भी हक नहीं है? मेरी रस्सी-डोल पानी में चली गई—यह तो भगवान की कृपा है कि घर में सास-ननँद नहीं है, वरना भुरता बन जाता, और इन्हें कुछ कह दिया तो अब पानी ही नहीं पिएँगे। वाह रे नखरे!"

"लेकिन डोल-रस्सी ही कुएँ में गिर गई तो—"

"ये घड़े तो भरे हुए हैं!"

"घर क्या आप खाली घड़े ले जाएँगी तब? ना ना, आप जाइए। मैं किसी दूसरी बहन से पानी पीलूँगा, और तब तक मेरा नौकर आजाए तो उससे कह कर पहले आपकी डोल-रस्सी निकलवाने का इंतजाम करके तब और कुछ करूँगा।"

"ओ माँ! जैसे अब उस डोल-रस्सी के बिना मेरी गृहस्थी ही ठप्प हो जाएगी! लो, चलो पानी पिओ।" और उसने एक घड़ा उठा लिया। स्वर की दृढ़ता से विवश होकर नवनीत ने हाथ की अंजलि बनाई, और युवती की ओर देखता हुआ पानी पीने लगा। पानी पिलाते-पिलाते दोनों की दृष्टियाँ टकरा गईं।

युवती ने कहा, "यों, दीदे फाड़ कर क्या देख रहे हो? पानी तो मुँह से पी रहे हो। औरतों की तरफ ताकते शरम नहीं आती क्या?" और नाराज होने के बजाय वह हँस दी।

नवनीत ने लजाकर आँखें बन्द करलीं। युवती को कुछ शरारत सूझी, उसने घड़े को कुछ ऊँचा किया। जल की धारा नाक और आँखों पर गिरने लगी। नवनीत ने अंजलि छोड़ दी, खड़े होकर कहा, "पट्टी में जो पानी लग गया तो ज़हर फैल जाएगा न!"

"अरे, ये माथे में क्या हुआ है? अकल का आपरेशन करवाया है?"

"यही समझ लीजिए।"

"कहाँ से आ रहे हो? शहर के लगते हो!"

"लखनऊ से आ रहा हूँ!"

"ओ माँ! और कौन जात हो?"

"सो तो मुझे पूछना चाहिए था। पर पानी तो पी चुका हूँ। मेरी जाति मारदी आपने।"

"मेरी डोल-रस्सी जो मारदी उसका कुछ नहीं?"

पर तभी एक और महिला कुएँ पर आ गई। नवनीत दृष्टि की अतृप्त-प्यास को अपने में संवरण करके लौट गया, यद्यपि धीरे-धीरे छिप-छिप कर युवती की ओर देखने से वह अपने को नहीं रोक सका। युवती ने नवागन्तुक महिला की डोल-रस्सी से फिर अपना घड़ा भर लिया। एक दृष्टि पीपल के पेड़ के नीचे बैठे बटोही पर डाली। नवनीत को अनुभव हुआ शायद वह मुस्कराई भी, और फिर सिर तथा बगल में घड़े उठाकर वह पनघट से चल दी। जब तक वह दिखाई दी, नवनीत उस ओर ही देखता रहा। पानी पिला कर वह उसके मन की एक नई ही प्यास जगा गई।

कुछ ही देर बाद हरनाम भी एक भद्र व्यक्ति के साथ आ उपस्थित हुआ, साथ में दोए-क मजदूर जैसे व्यक्ति भी थे। भद्र व्यक्ति ने आगे बढ़ कर नमस्कार किया। नवनीत ने उत्तर दिया और हरनाम की ओर परिचय के लिए देखा।

हरनाम ने कहा, "सरकार, आप हैं यहाँ के पोस्ट मास्टर।"

"पोस्ट मास्टर नहीं भाई, पोस्टमैन हूँ! कुछ दिनों से यहाँ कोई है नहीं, इसका यह मतलब नहीं कि मैं पोस्ट मास्टर हो गया। मेरा नाम अधर लाल है बाबू साहब!"

एक पोस्टमैन के रूप में अधर लाल को देख सकना नवनीत को कुछ बेतुका सा लगा—वह पर्याप्त सुशील, सुरुचि-सम्पन्न, और पढ़ा-लिखा भी काफी लगता

है। एक पोस्टमैन ऐसा हो इसकी कल्पना भी नहीं थी उसे। और अधर लाल कह रहा था, —"हरनाम भाई से ही आपके मार्ग के कष्ट की बात सुनी, बड़ा अफसोस है मुझे। आपके पत्र के अनुसार मैंने कल बस पर आपकी प्रतीक्षा भी की थी। लड़ाई क्या छिड़ गई, सारा जीवन का क्रम ही उलट-पलट गया है! न-कुछ बात के लिए कितना कष्ट हो गया आपको!"

—नहीं, नवनीत अधिक नहीं सोचेगा अधर लाल की सुरुचि संस्कार की बात। यहाँ नौकरशाही का राज है, और वह खुद भी उसी का एक पुर्जा भर है। उससे कहीं कम पढ़े-लिखे उजबक क्या उससे ऊँची कुर्सियाँ नहीं हथियाए हुए हैं? हँस कर नवनीत ने कहा, "देखिए न, पहले तो ट्रेन ने बदला लिया, और फिर लिया आपकी बस ने! रही-सही कसर भैंसागाड़ी ने पूरी करदी, बदन के सारे अंजर-पंजर ढीले करके। लेकिन आखिर आ ही पहुँचा हूँ। कस्बा तो खूब दिखाई देता है, थकावट मिट जाती है। पोस्ट ऑफिस कितनी दूर है?"

"बिल्कुल पास! आपके रहने की व्यवस्था भी ऊपर ही है। यानी घर और ऑफिस एक ही जगह। आपको इस बीमार अवस्था में ही सचमुच बड़ा कष्ट हुआ!"

हँस कर नवनीत ने कहा, "यमराज की सवारी पर चढ़ कर आया, तब भी लगता है मृत्यु के द्वार पर नहीं, जीवन के द्वार पर आ लगा हूँ। अच्छा देखिए, सामान तो खैर जा सकता है, किन्तु मैं यहाँ से चलूँ इसके पहले एक व्यवस्था कर देनी होगी।"

"आज्ञा दीजिए!"

"रस्सी-बिलाई की व्यवस्था करके इस कुएँ से एक भद्र महिला की डोल-रस्सी निकलवा दीजिए। मैं पानी पीना चाहता था। प्रार्थना की तो वे चौंक पड़ीं और इस तरह अचानक ही मेरी वजह से उनकी डोल-रस्सी कुएँ में जा गिरी। मैंने वादा किया है कि बिना उनकी डोल-रस्सी पानी से निकलवाए मैं यहाँ से नहीं हटूँगा!"

हँसकर अधर लाल ने कहा, "अच्छा, यह बात है? तो आपका दायित्व मैं लेता हूँ। आप चलिए, रस्सी-डोल कुएँ से निकल जाएँगे।" और उन्होंने साभि-प्राय हरनाम की ओर देखा। वह कुलियों को सामान सम्हलवा रहा था।

हरनाम भी मुस्करा दिया, बोला, "अधर भैया ठीक ही कह रहे हैं। आप

चलिए—"

"नहीं नहीं। मैं अपना वादा मिथ्या नहीं करना चाहता !"

अधर लाल ने मुस्कराते हुए ही कहा, "यह खबर भी मुझे लग गई है। रास्ते में आ रहे थे हम, तभी आपकी शिकायत मेरे पास पहुँची !"

"उन देवी ने आपसे कहा ?"

"जी हाँ ! उस देवी को नहीं मालूम था कि आप मेरे अधिकारी हैं, उसी तरह जिस तरह आपको नहीं मालूम कि आरती—जी हाँ उस देवी का यही नाम है, और वह आपके इस अनुचर की धर्मपत्नी है !"

"ओह, यह बात है। तब तो मैं आपके निकट भी दोषी हूँ !"

"स्वामी का दोष सेवक अपने माथे पर लेता है। अब आप स्वस्थ मन से चलिए। थके हुए हैं, नहाइए-धोइए। फिर आपके भोजन की व्यवस्था मेरे घर पर ही होगी !"

"आपके घर पर ? नहीं-नहीं। मैं वहाँ नहीं जा सकूँगा !"

अधर लाल नवनीत की लज्जा को समझ गए, मुस्करा कर बोले, "कोई बात नहीं। आप मेरे घर को पवित्र करना नहीं चाहते तो भोजन आपके ही घर पर पहुँच जाएगा। आपकी प्रसन्नता ही मेरी प्रसन्नता हुई।"

यह था नवनीत का आरती से प्रथम परिचय। दूसरे परिचय को भी बहुत दिन नहीं लगे। वह भी आकस्मिक ही हुआ, और ऐसे हुआ कि नवनीत को पता ही बहुत बाद में जाकर लगा।

जिस रात वह अनजाने ही नीलम के घर आतिथ्य लेने को विवश हुआ था, वह रात उसके स्वास्थ्य को एक बार और झकझोर गई। भयानक शीत में अपना जर्जर शरीर लेकर जब वह घर लौट रहा था तो प्रातःकाल की हड़कम्पी हवा मानों अपना शिकार ही ढूँढ़ रही थी। नवनीत की बीमारी शीघ्र ही निमोनया में बदल गई। घर पहुँचते-पहुँचते ही वह अवश होता जा रहा था। और दूसरे ही दिन से विना उपचार के उसकी अवस्था इतनी खराब हुई कि बेहोशी की अवस्था में उसे कुछ स्मरण ही नहीं रहा।

जब स्मरण हुआ उसे तो अपने आप को एक घने अंधकार में लिप्त पाए जाने पर उसे विशेष आश्चर्य नहीं हुआ। याद आया उसे, कि जब वह अचेत

होता जा रहा था तो उसकी साँस घुटती जा रही थी, मानो फेफड़ों में किसी ने बर्फ की शिला ठूंस दी थी। और जब साँस ही घुट रही हो तो समझने को क्या बाकी रह जाता है ? मृत्यु के दूत उसे चारों ओर से कसकर पकड़ रहे थे, और निपट अनिच्छा के बावजूद, वह अवश होकर उनके आलिंगन में जकड़ा जा रहा था। अच्छा ही हुआ कि उसके बाद नवनीत को कुछ याद नहीं रहा। वैतरणी नदी पार करना कोई खेल नहीं है। कॉलेज के प्रोफेसर के वृद्ध पिता की मृत्यु पर एक दिन उससे गरुड़-पुराण सुनी थी। और यह अन्धकार, क्या रौरव नामक नरक का या कुंभीपाक नरक का है ? स्वर्ग में उसके जाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। ईश्वर भी कोई शै है, वह सोचने की उसने कभी परवाह ही नहीं की। कंठ में आग-सी लग रही है, सो लगेगी ही। पीने को पानी यहाँ कहाँ ? कब उसने कोई प्याऊ बिठाई, या किसी प्यासे को दो घूँट पानी पिलाया ? वैतरणी पर वह तो रक्त-पीव···नहीं नहीं, कल्पना भी नहीं की जा सकती। उस अँधेरे में भी डर कर उसने आँखें बन्द कर लीं।

रह-रहकर छाती में एक तूफान उठ रहा था, मानो पर्वताकार लहरें उठ-उठ कर हर साँस के साथ गले के क्षीण तक को ढहा देना चाह रही थीं। मानो इसी तूफान को दबा देने के लिए उसने छाती पर हाथ रखा अरे ! छाती पर तो एक गुदगुदी-सी पट्टी बँधी हुई है। पट्टी, एक पट्टी सिर और घुटने पर भी तो थी! नवनीत ने उन्हें भी टटोल लेना चाहा। सिर पर तो पट्टी बंधी हुई है, किन्तु घुटने पर—लगता है पट्टी हट गई है, पर वहाँ कोई दर्द भी तो नहीं है ! नरक आखिर इतना बुरा तो प्रमाणित नहीं हुआ, जितना गरुड़-पुराण में कहा गया है। पानी की व्यवस्था न हो, किन्तु दर्द का उपचार तो किया जाता है यहाँ। पर आखिर भूलोक में भी फाँसी के कैदी की भी चिकित्सा तो की जाती है, उसके स्वास्थ्य का ध्यान रखा जाता है न।

इसी खोज बीन में उसके खिलाफ का कुछ अंश उठ गया तो प्रकाश की एक रेखा भीतर घुस आई। कई दिनों की बन्द आँखों पर वह खंड-प्रकाश बड़ा तीव्र लगा उसे। पर शीघ्र ही उसे स्पष्ट होगया कि नरक का यह महान्धकार उसके शरीर पर पड़े रुई के लिहाफ के कारण है। हाथ की सहायता से उसने मुँह पर से लिहाफ हटा लिया। अरे, वह तो एक अच्छे खासे कमरे में पलंग के ऊपर लेटा हुआ पड़ा है। दुपहर सिर पर बोल रही है। कमरा बड़ा साफ-सुथरा है।

ताख में कुछ दवाई की बोतलें, यह डिब्बा तो एंटीफ्लोजिस्टीन का लगता है। रबड़ की थैली—और यह बड़ा-सा लोटा। जरूर पानी होगा उसमें। क्या उठ कर पानी पिए वह ?

कमरा नरक का तो नहीं, पर स्वर्ग का अवश्य कहा जा सकता है। तो क्या यमराज के दूत भूल से उसे स्वर्ग में ले आए हैं ? सामने दीवार पर, यह तस्वीर राधा और कृष्ण ही की तो है। मुरली अपनी पीठ के पीछे छिपाकर राधा कह रही है कि वह क्या जाने कि मुरली कहाँ है ? किन्तु उसके अधरों की हँसी और आँखों की शरारत कृष्ण से कुछ दूसरी ही कहानी कह रहे हैं। कृष्ण परेशान से मिन्नत करते हुए खड़े हैं। भावों का सजीव उत्कर्ष सारे चित्र में मूर्त हो उठा है। इधर एक दूसरा चित्र भी है, पर उस पर दरवाजे से सीधा प्रकाश परावर्तित हो रहा है, इसलिए उसके विषय का पता नहीं चलता।

प्यास बहुत तीव्र है, कंठ जला जा रहा है, जीभ तालू से सट रही है, और लोटा है तो उसमें पानी जरूर होगा। गिलास नहीं है तो क्या हुआ ? लोटे से भी तो पानी पिया जा सकता है। उसने देखा है, मानपुर में किसान लोटे से बड़ी सरलता से पानी पी लेते हैं, मुँह को लगाते भी नहीं। मुँह के ऊपर थामे रहकर कुछ इस तरह झुका देते हैं लोटे को कि पानी की धारा सीधी खुले मुँह में गिरती है। कहते हैं पानी भी बड़ा स्वादिष्ट लगता है यों पीने से।

नवनीत उठ बैठा। बड़ी कमजोरी महसूस हो रही है। है कौन-सी जगह यह ? मानपुर में ही है या किसी अन्य बस्ती में ? अस्पताल में तो नहीं हो सकता। हरनाम—क्या पुकारा जाए उसे ? यदि किसी गृहस्थ का घर हुआ तो ? नहीं, वह पुकार कर किसी को व्यतिव्यस्त नहीं करना चाहता। उस रात का वेश्या का मकान भी यह कदापि नहीं है। जो हो, पानी तो पीले वह। लोटे में जरूर पानी होगा। खुला है तो क्या हुआ ? प्यास जो उसे आग की तरह लग रही है !

आगे बढ़कर उसने लोटे को हाथ लगाया। जरूर पानी है भीतर, तभी तो इतना भारी है। खींचकर उसने लोटे को उठा लिया, झाँककर देखा, पानी सामान्यतया साफ ही है। नहीं, मुँह के ऊपर उठाकर लोटे को वह साधे नहीं रख सकता। हाथ काँप रहे हैं। पानी इधर-उधर गिर गया तो बिस्तर गीला हो जाएगा। नवनीत ने एक हाथ मुँह को लगाकर छोटी अंजली बनाई, और दूसरे

काँपते हाथ से उसने पानी उड़ेलना शुरू किया। पानी क्या है, अमृत है, मानो युगों की प्यास बुझती चली जा रही है।

लेकिन लोटा अधिक समय तक काँपते शिथिल हाथ में स्थिर नहीं रह सका, उससे निकलने वाली धारा दिशा छोड़कर हाथ की संपुटि से बाहर बहने लगी। नवनीत ने चेष्टा की तो पानी नाक में घुस गया। नाक में तिलमिलाहट हुई। एक ही साथ छींक, खाँसी और शिथिल हाथ का असहयोग ! बनियान तो पहले ही तर हो चुकी थी, लोटा जो हाथ से छूटा तो बिस्तर पर ब्रह्मपुत्र की बाढ़ आ गई !

क्या करे क्या न करे, की हालत में दिग्मूढ़ नवनीत खाँसी और छींक से छुटकारा पाने की जी तोड़ चेष्टा कर रहा था कि दरवाजे पर एक छाया-सी दिखाई दी। लज्जा और शर्म के मारे उसने आँखें बन्द करलीं। कानों ने सुना, "अरे, यह क्या कर डाला ?"

बन्द आँखें किए ही नवनीत ने कहा, "पानी पी रहा था, पर लोटा हाथ से छूट गया। अगर हरनाम नहीं तो मैं ही कुछ उपाय करने की चेष्टा करता हूँ।"

युवती ने मानो पीछे की बात नहीं सुनी, "पानी पी रहे थे और आँखें बन्द करके क्या बिस्तर को भी पिला रहे थे ? वाह वाह, क्या हालत बना ली है। पर चलो, तुम्हें चेत तो आया। हे कृष्ण, हे परमात्मा, सुन ली तूने आखिर हमारी !"

साहस करके नवनीत ने आँखें खोलीं। युवती की तब इस ओर पीठ थी, वह राधाकृष्ण की युगल मूर्ति के सम्मुख भक्तिभाव पूर्ण प्रणाम की मुद्रा में लीन थी। युवती, सो तो स्वर से ही जान गया था वह, सामान्य-सी साड़ी सिर से खिसक कर कन्धे पर आ लगी है. बाल सुनहरी हैं, और श्लथ जूड़े में से एक-एक दो-दो करके चारों ओर फैले हुए हैं। और इसके पहले कि वह विशेष कुछ देख सके, युवती ने यह कहते-कहते ही मुँह फिराया।

"लेकिन प्यास ही लगी थी तो मुझे आवाज क्यों नहीं दे ली ?" किन्तु युवती ने जैसे ही मुँह फिराया, नवनीत आश्चर्यहत हो गया। उसके मुँह से केवल यही निकला, "आप—"

युवती को मानो फुरसत ही नहीं थी, उसने कहा, "हाँ हाँ, मैं ही हूँ।" और फिर लोटा उठा कर बोली, "ओ माँ, यह तो सारा ही बिस्तर गीला हो गया है

गनीमत हैं कि आज बाहर धूप चिलचिला रही है। अच्छा, रहो, मैं नीचे दूसरा बिस्तर कर देती हूँ ।"

युवती ने गीली रजाई उठाई। नवनीत उसी की ओर देख रहा था, यह तो वही युवती है जिसने मानपुर के उसके प्रथम प्रवेश पर पनघट पर पानी पिलाया था। अधर लाल की पत्नी, आरती, आरती देवी ही तो। बहुत व्यस्त है। बाहर से भी कुछ काम करते हुए ही भीतर आई है। हाथ भी शायद राख में सने हुए हैं—बरतन मल रही थी क्या? इस निराभरण रूप में ही कैसी दिव्य रूप-लेखा-सी दीख रही है।

"अरे, मेरी ओर इस तरह आँखें फाड़े क्या निहार रहे हो? मैं कोई पानी का लोटा नहीं हूँ कि जरा झुकाते ही रीतने लग जाऊँगी। अरे, यह बनियान भी गीली कर डाली? पहले क्यों नहीं कहा,? देखूँ, पट्टी तो गीली नहीं हो गई?" और आरती ने ठीक उसके मुँह के पास अपना मुँह लाकर हाथ बढ़ाया तथा नवनीत की छाती पर बँधी पट्टी को परखा, वह गीली होने से बच गई थी।

"लो" अब जल्दी से खोल डालो इस बनियान को। मैं तुम्हारी कमीज ले आती हूँ।" और वह तेजी से कमरे से बाहर हो गई।

विमुग्ध नवनीत केवल अपने सामने ही देखता रहा। यह युवती तो कल्पनातीत है। बरसात की पहाड़ी गंगा की तरह इसका यौवन, और उससे भी अधिक वेगवान मुखर उसका अंतरतम! परिचय है ही कितना-सा उन दोनों में? किन्तु लगता है जैसे बरसों से नहीं, जन्म-जन्मांतर से वह इसी तरह यहाँ रहता आया है, और यह युवती आरती उसकी देखभाल करती आ रही है। अपरिचित और वयस्क पुरुष के सान्निध्य में आने पर एक युवती में जो जड़ता-संकोच और लज्जा छा जाती है, कहाँ है वह यहाँ? और फिर यह तो घर का एकाकी कमरा है, जहाँ उन दोनों को छोड़ कर और कोई नहीं है!

आरती नवनीत की कमीज लेकर लौटी तो नवनीत तब भी उसी तरह हत-चेत अपने में खोया निश्चेष्ट बैठा था। आरती ने कहा, "ओ माँ, तुम तो ढाका के नवाब की तरह रईस बने बैठे हो। बनियान खोलने की भी सुध नहीं है तुम्हें। भई, ऐसी बाँदीगीरी तो अपने से हो चुकी।"

अप्रतिभ होकर नवनीत ने बनियान खोलने का उपक्रम किया कहते हुए, "मैं माफी चाहता हूँ।"

"पर माफी चाहने से ही तो किसी की चिन्ता कम नहीं हो जाती। यह क्या, रहो रहो, तुमसे नहीं होगा, मैं उतारे देती हूँ।" नवनीत ने हाथ मोड़ कर जब बनियान उठाना चाहा तो एकाएक दर्द की वजह से ओठों को दबाकर वह हल्की-सी चीत्कार कर उठा। आरती ने पास आकर बनियान अपने हाथ में ले ली तथा धीरे से उसके बदन से सटकर सिर की तरफ से उसे निकालने लगी। लज्जा और संकोच के मारे नवनीत के सारे बदन में रोंगटे खड़े हो गए, और गोरे सफेद मुँह पर रक्त दौड़ आया। आरती ने लक्ष्य कर लिया और चुटकी ली।

"हाय, मैं मर जाऊँ। तुम तो इस तरह शरमा रहे हो जैसे घर में कल की ब्याही नवेली, बहू हो। लेकिन न तो सुसरा यह बदन ही साड़ी-लँहगे के काबिल है, न ये हाथ ही चूड़ा-कंगन के लायक। इतना मोटा-सोटा बदन, और इतना संकोच। तो यहाँ परदेस में आकर बीमार पड़ने को किसने कहा था? साथ अगर बहू को ही लेते आते तो कम से कम मेरी शरम तो बची रहती। लो, अब कमीज भी तुम कैसे पहन लोगे? मैं पहना देती हूँ।"

हाथ ऊँचे करके कमीज पहनते-पहनते नवनीत ने कहा, "हरनाम कहाँ है?"

"हरनाम? वह तो ढाके के नवाब का मुसाहब ठहरा न। ऐसी फरमाबरदार बाँदी पाकर वह क्यों यहाँ बैठा रहेगा? गया होगा कहीं बाजार में सैर करने।" और आरती वहाँ ठहरी नहीं। शीघ्र ही नीचे फर्श पर उसने एक दरी बिछा दी और कहा, "लो, कुछ देर इस पर बैठ जाओ तो मैं यह गीला बिस्तर बदल दूँ। उठ भी नहीं सकोगे शायद? लो मेरा हाथ पकड़ लो, या कन्धे पर उठाकर बिठाऊँ? हाथी-जैसा इतना वजन उठेगा क्या मुझसे?"

"नहीं, मैं उठ जाऊँगा। आप तो मुझे लज्जित पर लज्जित कर रही हैं।"

"तो कौनसी महरिया हो कि आँचल पर दाग लग जाएगा। लो हाथ पकड़ लो। गिर-गिरा पड़े तो भुगतना तो मुझे ही पड़ेगा। यहाँ कौन दूसरी माँ बैठी है जो सहारा देगी?"

नवनीत ने कुछ नहीं कहा, आरती का कोमल हाथ पकड़ कर वह धीरे-धीरे उठ खड़ा हुआ और नीचे दरी पर आ बैठा। उस कोमल स्पर्श से उसके सारे बदन और मानस में हिलोरें उठती रहीं, पर मानो आरती इस सब कुछ से असंपृक्त अपना काम करती रही। खाट पर से गीला बिछौना उठाकर उसने दूसरा बिछौना कर दिया। फिर उसी तरह नवनीत का हाथ पकड़ कर उसने

उसे खाट पर ला बिठाया और बोली, "मुझे फुर्सत नहीं है कि तुम्हारे पास बैठ कर गप्पें हाँकूँ। गरीब पोस्टमैन का घर ठहरा। सारी गृहस्थी का काम मुझे ही तो करना है। और देखना, लेट जाना, जरा आराम करना। प्यास लगे तो—कुआँ मत खोदने लग जाना। जरा आवाज देने से ही सुन लूँगी। समझ गए न माँ के लाड़ले ?" और मुस्करा कर बिना उत्तर की राह देखे वह बाहर चली गई।

नवनीत खाट पर लेट गया। कई दिनों बाद आज उसे पूर्ण चेत हुआ था। कमजोरी बहुत थी, और उठने-बैठने के परिश्रम के अलावा, उसके मन पर एक नई सृष्टि हलचल मचा रही थी। बुरी तरह थक गया महसूस कर रहा था वह। यही नहीं, कुछ ठंड-सी भी लग रही थी, शायद हल्का-सा ज्वर भी हो आया हो। उसने लिहाफ से अपना सारा बदन ढाँक लिया।

अजीब नारी है। नवनीत ने कभी ऐसा व्यक्तित्व न देखा न सुना। कई नारियाँ उसके जीवन में आई हैं, इतनी नारियाँ आई हैं कि इस माने में वह एक अघावट, एक अपच-सी अनुभव करने लग गया है, किन्तु यह तो बिल्कुल ही नई किस्म है। पढ़ी-लिखी कितनी है, कहा नहीं जा सकता—बातचीत के किसी भी छल से यह प्रगट नहीं हो सका है, किन्तु नारी के सबसे अधिक शक्तिशाली दो आयुध, सौंदर्य और यौवन का ऐश्वर्य तो इसे प्राप्त है ही। चाहे जितनी ही शिक्षा क्यों न हो, एक वयस्क के सामने इतना मुक्त सहज व्यवहार नारी के लिए सम्भव नहीं है। इसने तो जैसे नवनीत के पौरुष को पहचाना ही नहीं, मानो वह आठ-दस माह का निरीह शिशु भर हो। क्या यह उपेक्षा सहज है? सहज है तो कितनी, कहाँ तक ?

अधर लाल की पत्नी, नाम आरती ही तो है। प्रौढ़ अधर लाल का यह दूसरा विवाह तो नहीं है? मिल कहाँ से गया ऐसा ऐश्वर्य अधर लाल को? क्या उचित सार-सम्हाल कर पाता होगा वह ? नहीं कर पाता, स्पष्ट ही है। वह खुद जो कह गई है, "गरीब पोस्टमैन का घर ठहरा, सारी गृहस्थी का काम मुझे ही तो करना है।" और अधिक कह ही क्या सकता है कोई ? बन्दर के गले में मुक्ता-माला इसी को नहीं कहते क्या ? और अधर लाल महज एक पोस्टमैन, उसके ही तो हाथ नीचे है।

परिचय के सूत्र कुछ और गहरे हुए जब घण्टे भर बाद ही अधर लाल खाना खाने के लिए दफ्तर का काम निपटा कर लौटे। नवनीत मुँह पर पतली-सी

चादर डाले सोने का बहाना किए लेटा रहा।

अधर लाल कह रहे थे, "होश तो खैर आना ही था, ईश्वर ने हमारी सुन ली। पर मुझे डर है, लड़का जिद्दी है, कहीं घर लौट जाने की जल्दी न करने लग जाए, वरना तुम्हारी सारी सेवा मिट्टी में मिल जाएगी।"

"जिद्दी है? कहते क्या हो? मुझे तो लगता है जैसे मुँह में दाँत ही न हों।"

"नहीं आरती, राख में छिपी रहने पर भी आग दबती नहीं, उसकी गरमी राख को फोड़ कर निकल ही आती है। मैं देखूँ?"

"सो गया मालूम देता है। अब क्यों तंग करते हो? जरा-से हाथ-पैर हिलाने से ही मुँह सूख आया था बेचारे का। आध घण्टे बाद तो जगाना ही पड़ेगा। अब तक तो इंजेक्शन से ही पेट भरा जा रहा था, पर अब तो दूध-वूध कुछ देना ही पड़ेगा न।"

"हाँ-हाँ। दूध भी तो तुम हमेशा ही इसी उम्मीद में तैयार रखती रही हो कि होश आते ही किसी भी समय दिया जा सके।"

"किसी भी समय नहीं जी, इंजेक्शन का असर खत्म हो जाने पर ही देना चाहिए, डॉक्टर की हिदायत भूल गए क्या?"

हँसकर अधर लाल ने कहा, "मेरे याद रखने की जरूरत ही क्या है। तुम जो मेरी याद-दाश्त पर धरना दिए बैठी हो। अच्छा होश में आए तो हजरत क्या कहने लगे? बड़ा आश्चर्य हुआ होगा।"

"मुझे न? सो तो हुआ हा।"

"तुम्हें क्यों? मैं तो इन हजरत की बात कह रहा था।"

"पहले तो मुझे ही हुआ जी। बरतन साफ कर रही थी। भीतर कुछ गिरने की आवाज सुन कर आई तो देखती हूँ कटोरी से पानी पी-पी कर पेट फोड़ रहे हैं।"

"अरे, यह कैसे भई?"

"कैसे क्या, वंश के भागीरथ जो ठहरे। कमीज, बनियान सब को जब तर कर चुके तो गंगा की दूसरी धारा को बिस्तर पर फैला दिया, और तीसरी धारा नाक के ऊर्ध्वलोक में पहुँच कर दिमाग के किस कूड़े-कर्कट का उद्धार करने में लग गई, सो कौन कह सकता है। और फिर खुद किंकर्तव्य-विमूढ़ बने बैठे अपने

गंगावतरण का दृश्य टुकुर-टुकुर देख रहे हैं। भला बताओ, किसे आश्चर्य नहीं होगा यह सब देख कर ?"

"पर पूछा नहीं, यह सब कैसे हुआ ?"

"पूछूँ क्या, मुँह से 'हाँ' 'जी' के अलावा कुछ निकले तब न। पता नहीं मुँह में जीभ भी है या नहीं।"

शायद कोट उतार कर अधर लाल ने आरती को थमा दिया और कहा, "यह तो खूब रही, कहा कुछ नहीं ?"

"कहा न, कि मुझे बनियान खोलना नहीं आता, कमीज पहनना नहीं आता। दूध पीता बच्चा ही तो हूँ।"

"तो तुम्हीं ने क्यों नहीं कपड़े बदल दिए ? आखिर अब तक तुम्हीं तो करती रही हो सब कुछ।"

"सो तो किया न। अब तक जो किया था सो तो हजरत होश में नहीं थे, इसलिए आज होश में आने पर कहाँ तो शरम मुझे आनी चाहिए थी, पर हाथ लगते ही लजवन्ती की तरह सिकुड़ गए खुद ही। उस माँ की हिम्मत ही-कैसे होगी ऐसे दूध पीते बच्चे को अकेले इस बीमारी छोड़ देने की।"

'ऊँचे खानदान के लड़के शर्मीले होते ही हैं आरती! पर दूध पीता कैसे कहती हो तुम ? यदि विवाह हो गया होता तो आश्चर्य नहीं, एकाध बच्चे का बाप होता!"

"विवाह ? होगी कहीं ऐसी गाय-जैसी लड़की जिसके हाथ में इस शिकारपुर के बुद्धू का हाथ पकड़ने को खुजली चल रही हो ?"

"क्यों, होगी कहीं क्यों नहीं ? आखिर तुमने मुझमें ही क्या देखा था ?"

"चलो, चलो। ऐसी बातें दूसरों के सामने करते तुम्हें लाज नहीं लगती ?"

"दूसरों के सामने ?"

"अभी थाली पर बैठे नहीं कि चिल्लाओगे, देर हो रही है। सरकार का काम तो सब तुम्हारे ही भरोसे चलता है न! लो, यह लोटा ले जा कर जल्दी हाथ-पाँव धो आओ, मैं खाना लगाती हूँ!"

—और फिर एक दिन बीमारी का अन्त भी आया, और नवनीत को घर लौट जाने के लिए विवश होना पड़ा। आरती चूल्हे के पास बैठी गरम-गरम चपातियाँ उतारती जा रही थी, और पास बैठे अधर लाल और नवनीत खाना

खा रहे थे।

नवनीत ने कहा, "भाई अधर लाल अब तो मैं भला-चंगा हो गया हूँ। घर जाने की इजाजत दे दो अब तो!"

अधर लाल ने आरती की ओर देख कर मुस्कराते हुए कहा, "मेरी ओर से इजाजत का सवाल ही नहीं उठता! जिसकी आप कैद में हैं, उसी से पूछिए!"

आरती ने बीच ही में कहा, "कैद? यह क्या तोहमत लगा रहे हो जी? ऐसे निखट्टू मर्द को कैद रखकर कौन औरत मुफ्त में बदनाम होना चाहेगी? लगता है तुम्हें ही कुछ जलन हो आई है, और सिखा-पढ़ाकर चोंच खोलने के लिए तैयार कर लिया है!"

दोनों के बीच ठठोली सुनकर नवनीत पहले तो घबरा गया और बोला, "जी नहीं, मुझे इन्होंने बिल्कुल कुछ नहीं सिखाया। सचमुच—"

खिलखिलाकर हँसते हुए आरती ने कहा, "तुम जानते नहीं हो इन्हें देवर! शिकारपुर के पास ही एक और गाँव है न, होशियारपुर, वहाँ तोतों को गंगाराम-गंगाराम रटाया करते थे।"

नवनीत ने बात काट कर कहा, "पर आप तो जानती हैं मैं शिकारपुर का—"

"एम० ए० पास हो, यही न? शिकारपुर अच्छी जगह हो सकती है, पर होशियारपुर भी कम अच्छी जगह नहीं है। और होशियारपुर के अध्यापक ही नहीं, ये हैं पुरुष-पुरातन—नहीं लगता तुम्हें देवर, जैसे मैं इनके दूसरे ब्याह की पत्नी हूँ? पर हूँ नहीं! हमारे ब्याह की कहानी—फिर कभी सुनना, लम्बी है, पर है मजेदार! पर तुम जाना क्यों चाहते हो? ये जलते हैं तो जलने दो। घर की मालकिन मैं हूँ, ये नहीं। दफ्तर में तुम आपस में कुछ भी कहो—समझो, पर यहाँ मेरा एक छत्र राज्य है," और उसने एक एक चपाती दोनों की थालियों में परस दी। नवनीत "ना" करता ही रह गया।

नवनीत ने कहा, "लेकिन भाभी, यह कौन कह रहा है कि ये मुझे जाने को कह रहे हैं?"

"मुझसे डरते हैं न इसलिए तुमसे कहलवा रहे हैं? पर मैं इन्हें खूब जानती हूँ। मन ही मन समझते हैं—तुमने भी तो पढ़ा होगा न, "पुरुष-पुरातन की वधू क्यों न चंचला होय?" पर हूँ क्या मैं चंचल? और फिर वह लक्ष्मी ही हो

सकती है, भला मुझ जैसी दरिद्र—"

मुस्करा कर अधर लाल ने कहा, "लक्ष्मी नहीं, तुम तो सरस्वती हो न आरती !"

"रहने दो अपनी चापलूसी। अगर सच्चे हो तो यह जिम्मेदारी तुम्हारी है कि इन्हें तब तक अपने घर न जाने दो जब तक कोई घर से इनकी देख-रेख करने वाली न आजाए !"

अधर लाल ने कहा, "आरती बात तो ठीक कह रही है नवनीत बाबू ! घर से आप अपनी श्रीमती जी को बुलवा लीजिए—"

आरती ने चुटकी ली, "श्रीमती जी ? तो क्या कोई श्रीमती जी भी हैं तुम्हारे ?—शिकारपुर के स्कूल में 'घर' सम्बन्धी कुछ शास्त्र भी पढ़ाया जाता है क्या ?"

नवनीत ने कहा, "शिकारपुर में न हो भाभी, मानपुर के इस अनाथाश्रम में तो आपने उसकी प्यास जगा दी है !"

"ओ माँ ! सुनते हो जी। यह अनाथाश्रम है ! हम-तुम दोनों अनाथ—"

"नहीं भाभी, नहीं। मेरा मतलब तो यह था कि मुझ अनाथ को आपने अपनी छाया में आश्रय देकर एक कितनी सुन्दर गृहस्थि की प्यास जगादी है मुझमें ? मैं घर-शास्त्र जरूर नहीं जानता, पर आपने ही तो यह सिखा दिया है !"

"तो पूरी तरह सीखो न ! अभी तो इब्तिदा-ए-इश्क ही है। इस बूढ़े की माया से बच सकी कोई देवी इस आश्रम में तो जरूरी नहीं है, पर प्रेम का पाठ तुम पढ़ सकते हो। किसी दिन काम आएगा। पर प्रेम का पाठ पढ़ने के लिए बड़ी तपस्या करनी पड़ती है। इन्हीं से पूछो न, कितनी साधना के बाद जाकर प्राप्त हुए हैं ये मुझे ! पार्वती की तरह जन्म-जन्म से तपस्या करती आ रही हूँ इनके लिए—"

अधर लाल ने कहा, "अब अपनी बड़ाई रहने दो। देखती नहीं, इन्होंने अपने हाथ धो लिए हैं ? ऐसा ही आतिथ्य करती रही तो रह चुका कोई तुम्हारे यहाँ। जब देखो तब अपनी ही बड़ाई !"

"ओ माँ ! बड़े शठ हो जी देवर ! मुझे मेरे पति की ही निगाहों में उतारना चाहते हो, नहीं नहीं, तुम्हें अभी रिहाई नहीं मिल सकती। बहू हो कि बहन

हो कि माँ हो, जब तक कोई तुम्हारी देख-रेख के लिए आ नहीं जाता, तुम मेरी कैद हो।"

"आपकी कैद तो मैं हमेशा के लिए हो गया भाभी !"

"आहा, बोलना तो सीख रहे हो देवर ! जनम भर की कैद भाभी नहीं देती, बीवी देती है। इनके सामने कहने में कोई डर नहीं, पूरे भोलेशंकर हैं, पर और किसी ब्याहता स्त्री को, उसके भर्तार के सामने ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए। यह पहला पाठ है तुम्हारा। समझे?"

हँस कर नवनीत ने कहा, "समझा भाभी, पर ऐसा मौका कभी नहीं आएगा। रहा सवाल मेरी माँ, बहन या और किसी का, सो भाभी, अभी तो हरनाम ही सब कुछ है मेरा" और वह थाली पर से उठा खड़ा हुआ। दूसरे ही दिन वह हरनाम के साथ अपने पोस्ट ऑफिस वाले मकान में लौट आया।

घर लौट तो आया नवनीत, पर उसका पूरा मन उसके साथ नहीं लौट सका—रह-रह कर वह आरती के निकट पहुँच जाता था। नवनीत ने अनुभव किया कि यह स्थिति तो अच्छी नहीं कही जा सकती। माया के प्रत्याख्यान के बाद उसने निश्चय कर लिया था कि नारी की आसक्ति को उसे कभी पास नहीं फटकने देना है, किन्तु क्या भाग्य का परिहास ही नहीं कहना चाहिए इसे? उस रात एक गायिका के आकर्षण को समाप्त करके जैसे ही वह विजय गर्व से घर लौटा, इस दुर्निवार रोग ने उसे ग्रस लिया, और एक दूसरी रमणी की शरण जाने के लिए उसे बाध्य कर दिया। हरनाम ने ही कहा था कि उसके आदेश के अनुसार नीलम देवी का कम्बल और उसके व्यवहार के किराए के रुपए देकर वह घर लौटा तो उसने देखा था कि उसका स्वामी तो भीषण ज्वर में अचेत पड़ा हुआ है। नए गाँव में वह और किसी को जानता ही कहाँ था? सीधा पहुँचा था वह पोस्टमैन अधर लाल के घर। नित्यक्रिया से निवृत्त हो कर वे पूजा में बैठे थे। उस समय उसकी पत्नी आरती देवी से इसी बीच उसका परिचय बढ़ता जा रहा था, गृहस्थी के हर छोटे-बड़े काम के लिए अधर लाल के घर तक ही तो उसकी दौड़ थी। आरती देवी तब तक अपने स्नान-ध्यान से निपट कर रसोई के लिए जाने वाली ही थीं। अधर लाल पूजा-पाठ से निवृत्त हों तब तक हरनाम ने आरती देवी से ही नवनीत की भीषण बीमारी का उल्लेख किया था। आरती देवी ने ही

उसे तत्काल कस्बे के डॉक्टर को लिवा लाने का मार्ग सुझाया था और उसने आश्वासन दिया था कि शीघ्र ही पूजा–निवृत्ति के बाद सबसे पहले अपने पति को वह ऑफिस भेज देगी। उसके बाद कस्बे के सामान्य डॉक्टर का उपचार, निमोनिया जैसी बीमारी, और आरती देवी तथा अधर लाल के आग्रह से नवनीत को उनके घर लिवा ले जाने की सारी घटना में यद्यपि नवनीत की चेतना की कोई भूमिका नहीं थी, किन्तु वही उसकी घोर आसक्ति का कारण बन गई। लौट आने पर भी मन रह-रह कर अधर लाल के घर जाने का बहाना ढूँढ़ने लगा, किन्तु नवनीत उसे दबाता रहा। यदि घर पर अधर लाल मिल गए तो ? और वे न भी मिले—वह ऐसे मौके पर जा सकता है जबकि अधर लाल डाक बाँटने कस्बे में जाते हैं, किन्तु यदि आरती देवी ने पूछ लिया कि वह क्यों आया है, तो वह क्या उत्तर देगा ?

आखिर एक दुपहर को वह साहस करके निकल ही पड़ा दफ्तर से। अधर-लाल डाक बाँटने के लिए बस्ती में जा चुके थे, और हरनाम जरूर ऊपर पड़ा हुआ सो रहा होगा। काम तो उसे कुछ रहता नहीं दिन को खाना-वना खा लेने के बाद। आदमी सोए नहीं तो करे क्या ?

अधर लाल के घर के निकट आते-आते नवनीत का मन जवाब देने लग गया। क्या समझेगी मन में आरती ? उसकी प्रतिभा, हाजिरजाबी और नस-नस को हिला देने वाली परिहास-प्रियता के सामने पैर टिका पाना असम्भव है। किसी भी नारी की आसक्ति को स्थान न देने की अपनी प्रतिज्ञा भी उसे स्मरण हो आई। फिर आरती तो विवाहिता है। पाप आदि के शास्त्रोक्त विधि निषेधों की बात नवनीत न माने तब भी नैतिकता का बोध तो उसमें है ही। लेकिन उसने देखा कि इसी ऊहा-पोह में घर तो वह पहुँच ही गया है। दरवाजा खुला हुआ है, यदि कहीं उसने देख ही लिया हो और उसने न देखा हो तब भी पास-पड़ोस के व्यक्ति क्या समझेंगे यदि वह अब उल्टे पैरों लौट जाए ?

लेकिन दरवाजे के भीतर कदम रखते ही नवनीत ने आश्चर्य के साथ देखा कि आंगन के पार आरती इधर ही मुँह किए एक दरी पर बैठी गेहूँ बीन रही है, और दरवाजे की ओर पीठ किए बैठा हुआ—हरनाम ही तो है ! इसके पहले कि इस नई परिस्थिति को समझने की वह चेष्टा करे, उसके पैरों की आहट से आरती का ध्यान खिच आया और उसे देखकर वह तत्काल चहक उठी, ‘ओ

माँ ! ये तो तुम्हारे वही शिकारपुर के स्नातक हैं हरनाम, आज तो रास्ता ही भूल गए लगते हैं !"

"नमस्ते भाभी जी ! रास्ता भूल गया होऊँ, पर आज पहले जैसा बीमार नहीं हूँ, और बेहोश भी नहीं। भला-चंगा, सोच-विचार के साथ अपने ही पैरों चल कर आया हूँ ! —और हरनाम, तू यहाँ बैठा है ! कह कर भी नहीं आ सकता था ?"

हरनाम उठ खड़ा हुआ था, बोला, "यूँ ही चला आया था मालिक। पाँच बजे तक तो कभी आप दफ्तर से उठते ही नहीं तो सोचा—"

"कि पाँच बजे तक तू ही मालिक है। मैं तुझे चारों ओर खोज आया, पर हो तो पता लगे। आखिर गप्पें हाँकने की आदत कब से हो गई है तुझे ?"

बात आरती ने ही सम्हाली। "अरे बाबा, तुम तो गुस्सा होना भी जानते हो ! तब तो तुमसे डरना भी पड़ेगा क्या ? मेरी ओर क्या देख रहे हो ? सुनो, इसमें अगर कसूर है तो मेरा है, और दंड भी देना चाहो तो हरनाम को नहीं, मुझे देना देवर ! अरे हरनाम, वह थैला बिछा दे न—खड़े क्यों रहेंगे ? और मैं इनका गुस्सा ठीक करती हूँ; जरा चाय का पानी चढ़ा दे तो—"

हरनाम ने एक टाट का थैला पास ही बिछा दिया, नवनीत को मन मार कर बैठ जाना पड़ा। आरती की आँख का इशारा पाकर हरनाम भीतर जाने लगा तो नवनीत को उसने कहते सुना, "आप इसे सिर पर चढ़ा रही हैं भाभी ! आप तो खैर घर की मालकिन हैं ही, पर मेरे घर में तो इसी को लेकर सारी व्यवस्था है।"

मुस्करा कर आरती ने कहा, "मैं क्या तुम्हारा घर फोड़ना चाहती हूँ, देवर ? बात यह है कि जब तुम बीमार थे न, तो अनायास ही हरनाम ने कहा था कि तुम्हारी देख-रेख का उसका काम अपने जिम्मे लेने के बदले इस गृहस्थी का दूसरा काम वह अपने सिर लेना चाहता है, नहीं तो वह धरना देकर बैठ जाएगा और अन्न-जल भी ग्रहण नहीं करेगा।"

"अच्छा ! यह तो महात्मा गाँधी का भक्त बन गया !" मुस्करा कर नवनीत ने कहा।

"सो उसकी हठ के आगे इतनी जमीन तो छोड़नी ही पड़ी कि बाजार-हाट का काम वह कर लाया करे। तब तक वह यह काम करना नहीं छोड़ना चाहता।

आज भी बैठा हुआ था कि मैं गेहूँ साफ कर दूँ तो पिसवा लाए। लेकिन देवर, यह अच्छा हुआ कि तुम ठीक वक्त पर आ गए। जरा अच्छी-सी घुड़की पिलादो न इसे, तो इधर-उधर ऐरों-गैरों के घर माथा मारता न फिरे।"

"एरे-गैरे ?"

"और नहीं तो क्या ? कहाँ राजा भोज का सेनापति और कहाँ गंगी तेलन की आटा-पिसाई ? मैं भेजे देती हूँ उसे।"

नवनीत ने अप्रतिभ होकर कहा, "नहीं भाभी, मेरी कसम है आपको, आप बैठिए। आप मेरी बात गलत समझ गई हैं।"

पर आरती ने हँस कर कहा, "यह कसम की बेगार तुम भी पालते हो क्या ? तुम जानते हो, एक मुल्क है, जहाँ कसम तो नहीं, पर "खसम' का मतलब ही कुछ दूसरा हो जाता है। सो उठूँगी नहीं, पर तुम्हारे लिए चाय जो बनानी है।"

"वह हरनाम जो बना रहा है। और तब आपको भी मालूम ही होगा, वैसे कोई खास बुरी भी नहीं बनाता। सच तो यह है भाभी, कि इसकी वजह से ही तो एक तरह से मैं कम से कम खाने-पीने के मामले में तो गृहस्थी का अभाव नहीं महसूस करता। मुझे सचमुच बड़ी खुशी हुई कि यह आपकी थोड़ी-बहुत मदद तो कर देता है—"

"अहँहँ ! मदद क्या कर देता है ? अजी, परेशानी ही बढ़ती है। लोग समझते हैं मदद मिलती है। सौदा-सुलुफ लेने जाता है तो जानते हो, कुंजड़िनें बासी सब्जी थमा देती हैं और आप आते हैं खुश होते हुए कि कितनी सस्ती लाया हूँ ! अब यह पिसाई का ही काम देख लो। अच्छा गेहूँ तो सब को मिलता नहीं, डाक बाँटने जाते हैं तो कोई भला मानस भीतर से अच्छा गेहूँ निकाल कर दे देता है। गई बार चक्की पर भेजा तो चक्की वाले ने बदल दिया और तीन कौड़ी का राशन के गेहूँ का आटा थमा दिया !"

"यह कैसे ? यह क्या सोता रहा था ?"

"सोता कहाँ से रहता बेचारा ? और चक्की की छक-छक में कोई क्या चाह कर भी सो सकता है ? हाँ, उस छक-छक में मुँह से भक-भक धुआँ छोड़ने की हविस जरूर जोर मार सकती है। जब चक्कीवाले ने एक बीड़ी पकड़ाई कि मन डोल गया। मरद का क्या मन कभी स्थिर रहता है ? बस, बीड़ी जलाने

के लिए कहीं आग ढूँढ़ने गए कि आटा इस हाथ दे उस हाथ ले ! सिगरेट तुम भी तो पीते हो न देवर ?"

"आपको कैसे मालूम ? आपके सामने तो कभी पी नहीं।"

"मेरे सामने रहे ही कब तुम ? जुमा-जुमा दो दिन तो रहे, सो भी तीन-चौथाई से ज्यादा तो बीमारी में बेहोश···"

"हरनाम ने कहा होगा !"

"वह कहे या न कहे, तुम खुद ही कहाँ छिपाते हो ? यह देखो न, अपने हाथ की पहली दो अँगुलियाँ कैसे जल कर पीली पड़ गई हैं।"

नवनीत ने अपने हाथ की तर्जनी और मध्यमा पर दृष्टि डाली। सचमुच वे अरसे से धुएँ के कारण पीली पड़ चुकी थीं। उसकी बीमारी के समय आरती ने अवश्य ही लक्ष्य किया होगा ? वह बोला, "तो भाभी, जब चोरी आपने पकड़ ही ली है, तो पीने की इजाजत देंगी ? याद आते ही ऐसी सनक सवार होती है सिर पर इसकी कि···"

हँसकर आरती ने बीच ही में कहा, "जैसे प्रेमिका की याद उससे मिलने के लिए व्याकुल कर देती है !"

"यह क्या कह रही हैं आप भाभी ?"

गेहूँ को सूप में से पास के डिब्बे में खाली करते हुए उसने उसी तरह कहा, "झूठ कहती हूँ ?"

"मैं कह रहा था यह अनुभव आपको कैसे हुआ ?"

"ऐसी बातें सबको बताई जा सकती हैं क्या ? माचिस तो होगी न जेब में, या भीतर से मँगवा दूँ ?"

"नहीं, नहीं। मैं अभी सिगरेट नहीं पिऊँगा ! आपका लिहाज तो रखना ही चाहिए।"

"मेरा लिहाज रखोगे ? कहाँ तक रखोगे भाई ? लेकिन इससे बहूरानी नाराज न हो उठेगी।"

"बहूरानी ?"

झटकते हुए सूप को गोद में रखकर आरती ने नवनीत की आँखों में देखा और हँस कर कहा, "कैसा पकड़ा चोर को ?"

गेहूँ से बीन कर फेंके हुए एक बड़े से कंकर को हाथ में उठाकर नवनीत ने

कहा, "देखता हूँ हरनाम से आपने चोरी-चोरी बहुतेरी बातें मालूम करली हैं।"

"चोरी की बातें तो चोरी से ही मालूम की जा सकती हैं न देवर।"

"चोरी क्यों! विवाह करना तो कोई चोरी नहीं है। नहीं तो फिर आप भी चोर हैं।"

"मैं अगर पीहर होती और कई दिन बीत जाने पर भी न आती तो जरूर चोर होती।"

"तो क्या आप चाहती हैं, मैं अपनी पत्नी को ले आऊँ?"

आरती फिर हँस दी, "लो सुनो इनकी बातें। कोई सुनेगा तो कहेगा जैसे मैंने ही तो तुम्हें रोक रक्खा है अपनी बहूरानी को यहाँ लाने से! मैं तो महाराज, जानती भी नहीं थी बल्कि सोच भी नहीं सकती थी कि तुम जैसे लाज के लाड़ले को किसी बहू का हाथ पकड़ने का हिया भी हो सकता है।"

"मगर हरनाम ने नहीं कहा क्या कि एक लड़की का हाथ तो पकड़ा ही है मैंने?"

"और पकड़ कर पीहर में छोड़ दिया। बड़े बहादुर हो न!"

"क्या कहूँ भाभी, कहते लज्जा लगती है।"

"कहो न, ऐसी क्या बात है कि लज्जा लगती है। क्या मुझसे प्यार करने लगे हो?"

नवनीत को काटो तो खून नहीं—सारा चेहरा लाल हो गया। उसे कुछ उत्तर नहीं सूझा, किन्तु तत्काल हँस कर आरती ने कहा, "लेकिन मैं तुमको नहीं, तुम्हारी बहूरानी को ही प्यार करूँगी। मुझे तो तुम्हारे भाई के सामने कोई निगोड़ा आदमी ही नहीं जँचता! जानते हो तुम? नहीं जानते, मेरा स्वयंवर हुआ!"

"स्वयंवर?"

"हाँ, हाँ! और जयमाला मैंने खूब घूम-घूम कर, खूब तलाश करके आखिर इन्हीं के गले में डाली थी।"

"तो भाभी, सुनाओ न अपने उस स्वयंवर की कथा!"

—लेकिन तभी हरनाम एक प्याले में चाय और एक तश्तरी में बिस्कुट ले आया और नवनीत के सामने रख दिए। आरती ने कहा, 'देखो भई हरनाम,

अपने मालिक इजाजत दें तो यह डिब्बा तैयार हो गया है। और देर हुई तो फिर आज पिसाई नहीं होगी, और डिब्बा अगर रात भर वहाँ रह गया तो गेहूँ के बदले क्या हो जाएगा- सो भगवान भी नहीं जान पाएगा !"

नवनीत ने कहा, "मेरी इजाजत की बात कहकर आप मुझे लज्जित कर रही हैं !"

"ओ हो ! मैं लज्जित कर रही हूँ कि तुम खुद ही लाज के लाड़ले हो ! जा हरनाम। जल्दी आना, नहीं तो तुम्हारे साहब ही नहीं, मैं भी नाराज हो सकती हूँ !"

हरनाम ने कुछ न कह कर डिब्बा उठाया, और वह चलता बना।

"आप चाय नहीं पीतीं ?" नवनीत ने कहा !

"पीती कहाँ से। कभी उन्होंने कहा ही नहीं ! वे नहीं पीते न।"

"तब भी यह सारा सामान तो आपने यहाँ जुटा रखा है।"

"तुम जैसे सन्तों की आवभगत तो करनी पड़ती है न।"

"अच्छा ! मैं तो समझता था कि भाई अधर लाल बहुत ही रिजर्व्ड नेचर—मेरा मतलब है—

मुस्कराकर आरती ने कहा, "अजी तुम जानते नहीं, पूरे तीसमार खाँ हैं। नाती-सगाती तो कोई नहीं, मगर यार-दोस्त और पिछलग्गू इतने हैं कि उनकी आवभगत में फुरसत ही नहीं मिलती।"

चाय का घूँट गले में उतारते हुए नवनीत को कुछ कष्ट हुआ। इस नारी की कृपा का प्रसाद पाने वाला वह अकेला ही नहीं, और भी कई हैं ! कप की सतह से निगाह उठाकर उसने देखा, आरती बड़े मनोयोग से फर्श पर बिखरे गेहूँ के दाने एक-एक कर बटोर रही थी।

"तो आपकी राय है भाभी, मैं अपनी बहू को ले आऊँ ?" कुछ न कहने से कुछ तो कहना ही था मानो उसे।

"इसमें मेरी राय की क्या जरूरत है जी ?"

"बात यह है कि—आपने कहा न कि मैं बड़ा लजीला हूँ। वैसे ही मैं शांतिप्रिय भी हूँ, भाभी यदि आकर बहू लड़े तो ?"

हँसकर आरती ने कहा, "तो तुम भी लड़ना उससे !"

"मगर—मगर मैंने कहा न, मैं लड़ना-झगड़ना नहीं चाहता !"

"प्यार करना तो चाहते हो! वही करना। बहू खुश ही नहीं, निहाल हो जाएगी।"

"और अगर वह प्यार न करे ?"

"तो ब्याह ही क्यों किया ? नहीं नहीं, ऐसी कोई बात नहीं। आखिर वह तुमसे लड़ेगी ही क्यों ?"

"अगर उसकी आदत ही रही हो तो ? लड़ती ही तो रही है वह! यहाँ आकर भी अगर लड़े तो ?"

"तो मैं समझा दूँगी। तुमसे लड़कर कोई पा ही क्या सकता है ?"

"सो तो वही जाने भाभी।"

"तुम भी उससे जरूर लड़े होगे। अच्छा! हो तो तुम शिकारपुर के स्नातक ही, मगर सच कहना, कहीं कोई और लड़की तो तुम्हारा ध्यान नहीं बँटा बैठी है ?"

"आप भी क्या बात करती हैं भाभी ? यहाँ पर तो कोई नारी ही नहीं आपके सिवा, जिसे मैं जानता भी होऊँ !"

"यानी मैंने ही तुम्हारा ध्यान बँटा लिया है क्या ? भई वाह, तब तो तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर! आखिर कोई तो गुण-ग्राहक मिला। तुम्हारे भाई की बूढ़ी आँखें तो मुझे भी बुढ़िया समझने लग गई हैं। आज खोलूँगी उनकी आँखें!"

"अरे भाभी! आप क्या उन्हें यह सब कह देंगी ?" और वह भय के मारे उठ खड़ा हुआ!

हँस कर आरती ने कहा, "अरे तो जाते क्यों हो ? बैठो तो, तुम्हारी कसम, कुछ नहीं कहूँगी तुम्हारे भाई से! बस ?"

"लेकिन मुझे भी देर जो हो रही है भाभी। फिर कभी आऊँगा, अभी तो इजाजत दीजिए।"

और नवनीत पैरों को जल्दी-जल्दी चप्पलों में डालकर मानो सिर पर पैर रख कर वहाँ से बाहर निकल पड़ा। आरती उस ओर देखती ही रह गई।

८ नीलम कुमारी

चेष्टा करके भी नींद नहीं बुलाई जा सकती। आरती का उल्लेख करके नीलम ने नवनीत के हृदय के समस्त तारों को झंकृत कर दिया है। और उसकी स्मृति इतनी मधुर है नवनीत के लिए कि नींद की कोई इच्छा ही नहीं रहती, चाहे कितना ही थका हुआ वह क्यों न हो। सभा फिर से आरम्भ हो तब तक कल का पूरा दिन पड़ा हुआ है, पर दिन नवनीत के होश में नहीं बीतते। हमेशा ही उसे कुछ पिलाया जाता है ताकि वह दिन भर सोता रहे, और किसी प्रकार कोई ऐसा काँड न कर बैठे जिससे विप्लव-दल को किसी मुसीबत का सामना करना पड़ जाए। प्राण बचने की कोई आशा नहीं है। नवनीत को प्राणों की चिन्ता की अपेक्षा आरती की स्मृति ही क्या बुरी है? उस दिन के बाद कई दिनों तक नवनीत को साहस नहीं हुआ कि आरती से मिल सके, यद्यपि मन उसका इसके लिए बराबर उससे विद्रोह करता रहा। इसी बीच नीलम का उपसर्ग भी तो बढ़ता जा रहा था। रह-रह कर दो-दो नागपाश उसे उलझाने के लिए बेचैन थे। बचता तो कैसे वह?

जिस दिन तालाब पर पैर में मोच खाकर नवनीत को रात टीकू की झोंपड़ी में बितानी पड़ी थी, उसके बाद का दूसरा दिन रविवार था। टीकू के उपचार से सवेरे तक ही उसकी मोच ठीक हो गई थी, और पूरी तरह न हो, तब भी भली प्रकार चलने-फिरने लायक तो वह हो ही गया था। अपने ही पैरों चलकर अकेला ही तो वह घर लौटा था सवेरे।

रविवार को यों तो दफ्तर की छुट्टी रहती है, किन्तु आई हुई डाक बाँटने

का काम तो रविवार को भी बादस्तूर रहता था। इसके अतिरिक्त रास्ते की नदी में जो गए कई दिनों से बाढ़ आई हुई थी, वह उतर गई थी। अतः पाँच-छः दिन की डाक आज इकट्ठी ही आ टपकी थी। अधर लाल डाक के थैले खाली करते जा रहे थे, हरनाम उसके पास नीचे ही बैठा उनसे बातचीत करता जा रहा था। थैले खाली हो जाने पर वह चिट्ठियों पर पोस्ट ऑफिस की मुहर लगाकर अधर लाल का इतना-सा काम तो हल्का कर ही सकता है। और नवनीत ऊपर अपने कमरे में खाट पर पड़ा गई संध्या के बारे में ही सोच रहा था।

कैसा अजीब गोरखधन्धा है! जिससे डर कर वह दूर से दूर भागना चाहते हैं, वह नीलम उसके पीछे ही पड़ गई मालूम देती है, और जिसकी कृपा-कटाक्ष का एक अंशमात्र पाने के लिए उनका मन छटपटाता रहता है, वह आरती हँस कर, मुस्कराकर, क्षणमात्र में बिजली चमका कर उतनी ही जल्दी दूर अदृश्य हो जाती है। यह भी तो नहीं कहा जा सकता कि उसके व्यवहार में निमंत्रण है या बहिष्करण? निष्कंप-कण्ठ से वह कह जाती है "मैं तुम्हें प्यार करती हूँ" पर उसे माँ का अपनी सन्तान के प्रति कथन न मानकर प्रेमिका का प्रेमी के प्रति कथन क्यों माना जाए? व्यवहार में इतनी स्पष्टता क्या और अधिक गहरा रहस्य-जाल नहीं बुन देती उसके चारों ओर? रमणी रमणीय है प्रच्छन्नता के कारण, किन्तु जब वह प्रच्छन्नता स्वेच्छया ही स्पष्ट हो उठे तो उस नवीनता का विश्वास कौन करेगा? तब उस जैसी रहस्य की पहेली और क्या होगी? और कहीं यह अतर्क व्यवहार ही तो नवनीत को आरती की ओर नहीं खींच रहा है?

नहीं, आरती ने नवनीत की कभी उपेक्षा नहीं की। उपेक्षा की होती तो शायद नवनीत का मन इस तरह रस्सी न तुड़ा बैठता। आरती सुन्दर है किन्तु ऐसी नहीं कि नवनीत इसीलिए विवश हो उठे। माया उससे किसी तरह कम सुन्दर नहीं कही जा सकती, और यह नीलम? इसके रूप की ज्वाला के आगे तो सबका रूप पानी भरता है। किन्तु आरती का जो लोभनीय है, वह है उसका व्यक्तित्व। मानस की गहराई से उठा हुआ उसका उत्फुल्ल-हास्य, जो किसी को भी बाँध सकता है। और यह जो वह सहज ही कह देती है कि "मैं तुम्हें प्यार करती हूँ" और करके भी दिखा देती है, क्या किसी के हृदय में प्यास नहीं जगा देती? बीमारी में उसकी वह सेवा माँ या पत्नी के सिवा और कर ही कौन सकता है? पुरुष को तो सदा वैसी ही सेवा चाहिए न! क्या यह मरुस्थल

में एक चुल्लू ठंडा जल पिलाकर गले की आग को और भी भड़का देना नहीं है ? अधर लाल उसके हाथ के नीचे एक सामान्य-सा पोस्टमैन ही तो है, उसका यह ऐश्वर्य ? राजमुकुट की मणि पर दृष्टि पड़ने पर उसके लिए प्रशंसा का ही भाव जगता है, किन्तु एक भिखारी के पात्र में उस मणि को देखने से क्या लोभ और उसको झपट लेने की भावना नहीं जाग उठती ? आरती गड़ती जा रही है उसके मन में चुनौती बनकर।

नवनीत मन की इसी हालत में गोते लगा रहा था कि अधर लाल आ धमके,

"लीजिए पोस्ट मास्टर साहब, आपका पत्र। चूँकि आपका पत्र है, इसलिए लगता है देश में जितने भी पोस्ट ऑफिस हैं, सबने अपनी छाप के पुष्प इस पर समर्पित करने में अपना गौरव समझा है। है न ?"

अजीब शक्ल हो गई थी उस पत्र की। कई दिनों से कई जगहों की यात्रा करता रहा है वह। पता इतनी बार और इस तरह बदला गया है कि किसी का इस तरह लगन के साथ पीछा करने का पोस्ट ऑफिस को पुरस्कार मिलना चाहिए, चाहे नवनीत स्वयं उसी ऑफिस की मशीन का पुर्जा क्यों न हो ? कई जगह अक्षर पानी, हवा तथा समय के हाथों धुल-पुँछ कर तथा एकाकार होकर अनेकाकार हो गए हैं। तब भी प्रयत्न करके नवनीत का नाम तो पढ़ा ही जा सकता है

पत्र को काफी देर तक इधर-उधर उलट कर देखने के बाद नवनीत ने कहा, "लगता तो है कि पत्र मेरा ही है।"

"आपका न होगा तो होगा किसका ?"

"क्यों किसी का भी हो सकता है। मेरा कभी कोई पत्र आया याद आता है ?"

"सो तुमने ही कहाँ किसी को कोई पत्र लिखा है ?"

"कोई अपना हो तो। क्या डाक छाँटने से अभी निपटे नहीं ?"

"कहाँ ? ढेर तो लगा हुआ है। बेचारा हरनाम मदद दे रहा है मुहर लगाने में। चलूँ इतवार है, इसलिए आज ही निपट जाना चाहिए।" और अधर लाल नीचे उतर गए।

नवनीन ने लिफाफे का जीर्ण मुँह फाड़ा। हाथ लगाने की ही देर थी कि भीतर से पत्र बाहर खिसक आया। अरे, यह तो मथुरा से लिखा हुआ है, माया

का । और मानो युगों के प्यासे को कहीं पानी का घड़ा मिल गया, एक ही साँस में सारे पत्र को पी डालने के लिए वह मचल उठा। माया के पत्र की कल्पना ही इतनी अचिन्त्य थी और पत्र का आगमन ही आप में इतना महत्त्वपूर्ण तथ्य था कि पत्र में क्या लिखा है, एक बार तो इस पर भी वह ध्यान नहीं दे सका। किन्तु पत्र के शेष भाग तक पहुँचते-पहुँचते उसकी चेतना लौट आई। उसने पत्र को फिर पढ़ा, फिर पढ़ा, और पढ़कर रख दिया। पत्र की तारीख सात माह पहले की थी। मूलत: पता शायद लखनऊ में उसके घर का था, वहाँ से जगह जगह की खाक छानता हुआ डाईरेक्ट-रिडाईरेक्ट होता हुआ खैर पत्र मिला तो सात माह बाद, सात माह में क्या से क्या नहीं हो जाता ? किन्तु तब भी एक प्रमाण तो है, सात माह पुराना सही, उससे प्रमाण का महत्व कम नहीं हो जाता।

माया को मथुरा पहुँचाकर हरनाम को अकेले ही लौट आना पड़ा था। आरजू-मिन्नतों के साथ, दो-चार दिन की जगह पूरे एक माह तक धरना देकर बैठे रहने पर भी माया टस से मस नहीं हुई। करने को तो हरनाम ने यह प्रतिज्ञा भी कर ली थी कि यदि बहूरानी लखनऊ न लौटेगी तो वह खुद भी वहाँ से नहीं टलेगा, किन्तु महीना बीतते न बीतते उसे लखनऊ में अकेले पड़े अपने राजा बाबू का ध्यान सताने लगा, और आखिर उसने अनुरोध किया कि यदि बहूरानी नहीं लौटेगी तो कम से कम उसके साथ अपने कुशल समाचार का पत्र तो दे दे। माया ने तब उसके अनुरोध की रक्षा के लिए एक पत्र दिया था, पर वह था बारूद से भरा हुआ। माया की उपेक्षा के लिए शिकायत कमलकिशोर ने इसलिए नहीं की थी कि उन्हें उन दोनों के बीच मन-मुटाव की खबर किसी ने नहीं दी थी। नवनीत ने माया के उस बारूद भरे पत्र का कोई उत्तर नहीं दिया था। देने से लाभ ही क्या होता? वह जानता था कि आखिर कुछ दोष तो उसका है ही। और यदि सम्बन्ध अधिक बिगड़ने के अवसरों से बचा जा सके तो शायद माया जल्दी से लौट भी आए। किन्तु साल भर बीतते न बीतते नवनीत को लखनऊ में ही मथुरा की डाकमुहर का एक गुमनाम पत्र मिला था, जिसमें माया की गुजर-बसर के लिए दो सौ रुपया माहवार भेजने के लिए वकील की धमकी भरी हिदायत दी गई थी। नवनीत को क्रोध हो आना स्वाभाविक था। उसने स्पष्ट ही समझ लिया था कि पत्र का लेखक चाहे जो हो, माया या कमलकिशोर का

हाथ उसमें अवश्य रहना चाहिए। उसने ईंट का जबाव पत्थर से दिया माया को पत्र लिखकर गुजारे के लिए कुछ भी रकम देने से उसने साफ इनकार कर दिया, किन्तु लिखा कि पूर्ण प्रतिविधान के लिए वह तैयार है। माया चाहे तो अपना पुर्नविवाह कर सकती है। देश में तलाक की प्रथा अवश्य नहीं है, किन्तु यदि पति-पत्नी दोनों ही उसके लिए दावा न करें, तो कानून का प्रश्न ही नहीं पैदा होता। यदि उसका पुर्नविवाह हुआ और निमंत्रण मिला तो मित्र के तौर पर वह स्वयं उत्सव में सम्मिलित होने में गौरव अनुभव करेगा। पत्र में उसने माया को आश्वस्त किया कि जहाँगीर की तरह वहाँ वह बन्दिनी नूरजहाँ का दावा करने के लिए नहीं, बल्कि एक अन्यतम मित्र के नवजीवन-प्रवेश के समारोह में प्रसन्नता से सम्मिलित होने के लिए जाएगा, आदि-आदि। उसके बाद ही तो लखनऊ होटल में उस रात उस अंग्रेज से उसकी गुत्थमगुत्था होगई थी, और उसके तत्काल बाद ही तो उसे तबदील होकर मानपुर आजाना पड़ा था। उसी पत्र का जवाब है यह, पत्थर का जबाव ढेले से। सात महीने तक बराबर चलते रहने पर भी उसकी काट उतनी ही तीखी है।

नवनीत ने पुनः पत्र खोला। पुर्नविवाह की बात पर माया ने लिखा है, "अवश्य ही निमन्त्रण-पत्र भेजकर मैं आशा नहीं करूँगी कि अयोध्या के राजा ऋतुपर्ण के साथ, सारथी के रूप में दमयन्ती का नल भी आ उपस्थित हो। सौतिया-डाह जैसी कोई चीज आदमी में नहीं होती, सो तो ठीक है, जिसमें स्व-पत्नी-प्रेम ही न हो, वह डाह या ईर्ष्या जैसी वस्तु लाएगा ही कहाँ से? सौतिया-डाह स्त्री ही में होता है, तो इसकी परीक्षा भी क्यों न करली? तलाक की प्रथा देश में नहीं है, नारी के पुर्नविवाह की प्रथा भी नहीं है, किन्तु पुरुष तो धड़ल्ले से एक-दो नहीं, कई-कई विवाह एक साथ कर सकता है। उनका आदर्श श्रीकृष्ण जो हिन्दुओं में प्रसिद्ध है। जहाँ हुजूर मुकीम हैं, वहीं पर तो जनाब वाजिद अली शाह रंगीला अपने रंगीन कारनामों से तवारीख की रौनक अफजाह कर चुके हैं। सो देख लीजिए न, आपके पुर्नविवाह के अवसर पर मैं ही कौन से सौतिया-डाह का इजहार करती हूँ। नूरजहाँ के बारे में भी उसने लिखा है, शेर खाँ को मारकर जहाँगीर ने नूरजहाँ को जहाँ कैद किया, वह कैद उसके प्यार की, उसकी आत्मीयता की थी, जिसे नूरजहाँ अपने दिल की गहराइयों में जान चुकी थी। नारी बंधन ही तो चाहती है, पर मुझे तो बंधन से आजादी मिली है। और

तब मुझे हुजूर को यह आजादी तो देनी ही चाहिए कि जिस लड़की को भी आप चाहें, उसकी कैद खुशी से स्वीकार कर लें, आपके लिए वही तो पुनर्विवाह है। और मेरा उसके लिए अभी से अभिनन्दन।

चुनौती ही तो है उसके लिए एक तरह की। अभिमानिनी नारी, क्या जाने तू कि इस गवँई गाँव में भी इन्द्र की अप्सरा जैसी दो-दो नारियाँ उसकी अभ्यर्थना के लिए उत्सुक हैं। चुनौती है, तो क्यों नहीं देखे वह कि दोनों कितने पानी में हैं ?

नवनीत ने हरनाम को आवाज दी। शीघ्र ही आकर उसने कहा, "आपने बुलाया हुजूर ?"

"थोड़ा पानी पिला दे। अधर बाबू हैं नीचे ?"

"वे तो अभी गए हैं चिट्ठियाँ बाँटने।"

"तुझे कहीं जाना तो नहीं है ?"

"मुझे ?"

"हाँ हाँ, तेरे लिए ही पूछ रहा हूँ। मेरा मुँह क्या देखता है ? मेरा मतलब है क्या आज भी अधर बाबू के यहाँ कुछ बाजार-वाजार का काम है ?"

"नहीं, आज तो वैसे कुछ नहीं है। मैं पानी लिए आता हूँ।"

गिलास हाथ में थमा कर हरनाम ने साहस करके कहा, "सरकार, मेरे वहाँ जाने से क्या आप नाराज हैं ? मैं तो उनका अहसान बस इसलिए मानता हूँ कि बीमारी में उन लोगों ने आपकी सेवा माँ-बाप की तरह की है—"

गिलास बढ़ाते हुए मुस्कराकर नवनीत ने कहा, "तो क्या पूछना भी गुनाह हो गया ?"

"आप अच्छा नहीं समझते हों तो नहीं जाया करूँगा।"

"अरे वाह, खामुखाँ मेरे ऊपर क्यों ढोलना चाहता है। ना, अहसान तो मेरे ऊपर है न! मुझे खुद ही कहना चाहिए था कि उनको हर तरह की मदद पहुँचाना हमारा फर्ज है। तू वहाँ जाता है, सो यह तो खुशी की बात है भाई। अभी तो मैं यह कह रहा था कि मैं जरा बाहर जा रहा हूँ। अधर बाबू से भी कुछ काम है, शायद उनके घर भी चला जाऊँ। यहाँ कोई नहीं है, तू कहीं जाना मत।" और नवनीत माया का पत्र जेब में डाल कर आरती से मिलने के लिए चल पड़ा।

किन्तु उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, जब उसके घर पहुँच कर नवनीत ने देखा कि वहाँ तो ताला लगा हुआ है। यानी अधर लाल की अनुपस्थिति में आरती घर बन्द करके कहीं गई है। कहाँ गई है ? अधर लाल से कभी उसने सुना तो नहीं कि उनकी किसी से इतनी घनिष्टता हो कि आरती का वहाँ आना-जाना हो। गाँव में डाक बाँटते हैं, इसलिए दुआ-सलाम तो हर किसी से हो सकती है, किन्तु वह इतनी गाढ़ी हो उठे, यह तो कोई बात नहीं। हाँ, उस नर्तकी गायिका से उनका परिचय कुछ गहरा लगता है—अधर काका कहकर पुकारती है वह। पर यह भी चिट्ठी-रसानी से बढ़कर कुछ हो, ऐसा क्या हो सकता ? उमर है अधर लाल की, इसलिए काका वह सहज ही सब किसी के हो सकते हैं। लेकिन इसीलिए आरती किसी गायिका-बाइका या नाच-करतब दिखानेवाली बाजारू औरत के यहाँ जा सकती है, इसकी कल्पना भी नहीं करनी चाहिए। फिर ?

लौटा जाए। बन्द मकान के सामने किसी अजनबी को इस तरह बेकार खड़ा देख कर कोई मन में क्या कहेगा ? अजनबी न हो, पर पोस्ट मास्टर होना तो और भी बुरा हो सकता है। मानपुर जैसे कस्बे में पोस्ट मास्टर भी एक बड़ा अफसर होता है। यहाँ के समाज में वह चाहे बहुत घुला-मिला न हो, फिर भी कई लोग उसे पहचानने तो लग ही गए हैं। वह मुड़ा, और जैसे ही चलने को हुआ कि सामने देख कर उसके बदन का खून ही सूख गया। हाथ में लिए किसी पत्र का पता पढ़ने की मुद्रा में खुद अधर लाल चले आ रहे थे। शास्त्र सज्जित पहरेदार को देखकर जो मनोदशा चोर की होती है, नवनीत ने उस दशा को आज अनुभव किया। पत्र पर पड़ी उनकी दृष्टी से बचना अब किसी तरह सम्भव नहीं है। छुटकारे का कोई उपाय न देख कर खुद ही आगे बढ़ते हुए नवनीत ने कहा, "अधर भैया—"

"अरे आप ? पोस्टमास्टर साहब। इधर किधर रास्ता भूल गए ?"

"आप नहीं 'तुम'। भूल गए ?"

मुस्कराकर अधर लाल ने धीमे से कहा, "भूला नहीं, पर यह बाजार है, यहाँ तूतू-मैंमैं नहीं चल सकती। समझ गए न। खैर, मगर इधर—"

"तुम्हारी ही तालाश में आया था भाई।"

"मेरी तालाश में ?"

"हाँ, हरनाम से पता लगवाया तो उसने कहा कि तुम डाक बाँटने निकल गए हो।"

मुस्कराकर अधर लाल ने कहा, "यह तो संयोग से शाहजी चरणदास जी का एक पत्र था, इसलिए इधर आ निकला। वरना चिट्ठीरसे का कोई एक ठिकाना होता है?"

अधर लाल की आवाज में अविश्वास का पुट स्पष्ट था, किन्तु नवनीत ने हँस कर कहा, "चिट्ठीरसे के पास कई ठिकानों की कई चिट्ठियाँ होती हैं, इसका मतलब यह तो नहीं होता कि उसका एक ठिकाना हो ही नहीं। आखिर यह मान-पुर का मुझ जैसे अनाथों का आश्रम—" और नवनीत ने हाथ बढ़ाकर अधर-लाल के घर की ओर इशारा कर दिया।

अधर लाल ने भी हँस कर उत्तर दिया, "और वहाँ ताला पड़ा हुआ है। है न? आरती गई होगी नीलम के यहाँ। नहीं जानते नीलम को? रात को टीकू की झोंपड़ी में मेरे साथ नहीं आई थी? अकेली तो है ही, घर पर कोई खास काम नहीं होता और जी उकता जाता है तो कभी वह यहाँ आ जाती है, कभी आरती वहाँ चली जाती है। आइए, उधर की भी एकाध चिट्ठी है, आपको उधर छोड़ता चलूँगा। राह में अपने आने का प्रयोजन भी बता दीजिएगा।"

नवनीत के चेहरे पर असमंजस और दुराव का भाव तो अधर लाल को पक-ड़ाई दे गया था, किन्तु उसके कारण की कल्पना नहीं थी उन्हें। नवनीत ने बगलें झाँकते हुए कहा, "नहीं, नहीं मैं कहीं जाना नहीं चाहता। तुम से काम था, तुम मिल ही गए। कहीं जाकर करना ही क्या है मुझे? बात यह है कि तुमने जो ऊपर लाकर मुझे पत्र दिया था न।"

अधर लाल ने जैसे बात सुनी ही नहीं। आगे बढ़ते हुए कहा, "आइए भी। पत्र बाँटने का तो हमारा काम ही ठहरा, इसमें नई बात ही क्या है। और नीलम का निमन्त्रण तो आप को मिला ही हुआ है। देखिए, जरा उसके जीवन-यापन का ढंग भी तो।"

"नहीं अधर भैया। मैं किसी बाजारू औरत के यहाँ जाना पसन्द नहीं करता।"

"बाजारू औरत?"

"और नहीं तो क्या? गाने-बजाने का पेशा किस औरत को बाजारू नहीं

बना देता चाहे, वह विद्यालय की ही क्यों न हो ? मेरा इरादा तुम्हारे मन को चोट पहुँचाने का नहीं है अधर भैया, किन्तु अगर मेरा मन न माने तो तुम्हें भी आग्रह नहीं होना चाहिए।"

"तब तो आपको जरूर चलना होगा। आपकी यह गलतफहमी जितनी जल्दी दूर हो जाए उतनी ही जल्दी मेरे मन का बोझ उतरेगा।" और अधर लाल ने नवनीत का करीब-करीब हाथ ही पकड़ लिया। नवनीत पकड़े हुए चोर की भाँति नितान्त अनिच्छा से उनके पीछे चलने को विवश हुआ, तो अधर लाल ने कहा, "अब कहिए, मुझ से क्या सेवा हो सकती है ?"

नवनीत को अपने बहाने की याद बनी हुई थी। ठीक उत्तर नहीं सूझ पा रहा था। ललकारा जा चुका तो कहना पड़ा, "तुम्हारे मानपुर तालाब के इस सौंदर्य की प्रसिद्धि सुन कर मेरे एक मित्र यहाँ आना चाहते हैं। उनके लिए प्रबन्ध करने की समस्या है।"

"पर आपके मित्र अगर यह जानने हैं कि आप मानपुर में हैं—" अधर लाल रुक गए। नवनीत को भी अपनी गलती महसूस हो गई। मित्र को अगर यह मालूम हो कि वह मानपुर में ही है तो ऐसा पता क्यों लिखता वह कि पत्र को कई जगहों की ठोकर खानी पड़े। इसके अतिरिक्त इन कई जगहों की सैर करने में पत्र को काफी समय तो लग ही जाना चाहिए। यानी जब पत्र लिखा गया तब क्या मानपुर का तालाब इस तरह लबरेज भर चुका था ? पर जो तीर छूट चुका था वह तो वापिस आने से रहा। और अधर लाल ने बात भी दूसरे ही ढंग से पूरी की, "मेरा मतलब है, मानपुर में रहने के लिए मकानों की व्यवस्था के बारे में तो उन्हें मालूम होना चाहिए न। होटल, क्लब दरकिनारा, एक धर्मशाला भी तो नहीं है यहाँ। लोग आते हैं तो मन्दिर में रात बिता लेते हैं किसी तरह। खैर, आ कब तक रहे हैं ? तालाब के उस किनारे एक डाक बंगला है तो, पर बड़ी शिकस्त हालत में है। उसे सुधरवा कर ठीक करने में तो बरसात ही बीत जाएगी। कब आ रहे हैं वे ?"

नवनीत ने सम्हल कर कहा, "यों तो अगले इतवार के पहले आ ही कैसे सकते हैं ? पर न हुआ तो मैं लिख दूंगा कि यहाँ ठहरना हो तो मेरे साथ ही ठहर जाना। पता नहीं अकेला आना चाहता है या बीवी बच्चों के साथ। पर तब तक

अगर यह नाला-वाला बन्द हो जाए तो फिर ठहर कर ही क्यों न आए ? लिख दूँगा सब बातें समझा कर उसे।" लेकिन स्पष्ट ही नवनीत अप्रतिभ हो गया था। बात बन नहीं सकी। यह तो अधर लाल की महत्ता है कि उसे शर्म में न डाल कर बात बचा गए हैं। अधर लाल ने सचमुच यह प्रसंग ही उड़ा दिया और कस्बे की अन्य बातें शुरू कर दीं।

नीलम का घर बस्ती के एक सिरे पर था, पक्का बँधा हुआ दो मंजिला तो था ही। ऊपर खुली छत भी थी। नीचे दो कमरे एक-दूसरे से लगे हुए, उसके बाद और दो कमरे उसी तरह, फिर कुछ खुला चौक, बाजू में कमरे से सटा रसोई घर, उसके बाद बरामदा, जिसमें अगर हो तो गाय-भैंस बाँधी जा सके और उसके बगल में स्नानघर वगैरा। सामने बगल से ही ऊपर जाने के लिए जीना है। ऊपर आगे के दो कमरों के ऊपर एक बड़ा कमरा है और उसके आगे बारहदरी। तीसरी मंजिल पर खुली छत के अलावा कुछ नहीं है। शुरू-शुरू में तो मकान किराए पर ही लिया गया था। जीर्णोद्धार बाद में हुआ है उसका। लोगों का खयाल है कि नीलम ने उसे खरीद लिया है, तभी तो इतना रुपया खर्च किया गया है उस पर। कौन किराएदार मुफ्त में इतना रुपया खर्च करने लगा ?

उस दिन पहले पहल जब नवनीत यहाँ आया था तो महफिल ऊपर के बड़े हाल में लगी हुई थी। ले जाया भी उसे ऊपर ही गया था। पर अभी अधर लाल सीधे नीचे के कमरे में ही घुस गए, जब कि नवनीत दरवाजे में ही खड़ा रहा। भीतर जाते ही मुड़कर उन्होंने कहा, "अरे रुक क्यों गए भले आदमी ? चले आओ, किसी गैर का घर मत समझो इसे।"

भीतर के कमरे में फर्श पर गलीचा बिछा हुआ था। नवनीत भीतर आकर बाहर वाले कमरे में ही खड़ा रहा। भीतर आरती और नीलम बातों में मशगूल थीं।

दरवाजे पर अधर लाल की छाया देखते ही आरती ने कहा, "ओ माँ ! यहाँ भी पीछा नहीं छोड़ा न ! खत तो मेरा कोई हो नहीं सकता। अपना चाहने वाला कोई है ही कहाँ ? और सभी तो जानते हैं कि खत ले जाने वाले बूढ़े मियाँ ही तो खसम बने बैठे हैं !"

लेकिन नीलम ने कहा, "आओ न काका, और कौन है ?"

दरवाजे की आड़ में खड़ा नवनीत सब कुछ सुन रहा था। कैसी मुसीबत में

फँस गया है वह अनायास ही ? अधर लाल हँस कर कह रहे थे, "अरी भाग्यवान, चाहने वाले का खत न सही, चाहने वाले को ही पकड़ लाया हूँ।"

नवनीत ने सुना तो उसके चेहरे पर सिन्दूर पुत गया। क्या उसके मन की चोरी इतनी स्पष्ट हो गई है ? नीलम खड़ी होकर आगे बढ़ आई थी। नवनीत को पहचान कर उल्लास भरे स्वर में बोली, "अरे पोस्ट मास्टर साहब है। जहे किस्मत ! कनीज आदाब बजा लाती है।" और उसने झुक कर फर्शी सलाम किया। देख कर आरती और अधर लाल दोनों हँस दिए।

नवनीत को बढ़कर आगे आना पड़ा। आरती तब भी बैठी हुई ही थी, बोली, "हूँ, तो बहाने के तौर पर इन्हें पकड़ लाए हो। भई नीलम। क्या कहूँ, बूढ़े की पत्नी भी भगवान किसी को न बनाए। और पत्नियाँ पति की झिड़कियों से मरती हैं तो बूढ़े की पत्नी उसके लाड़-दुलार से मरती है। अच्छा पोस्ट-मास्टर जी, जरा यह तो बताओ, दफ्तर में ये ठीक वक्त से काम भी करते हैं या नहीं ?"

लेकिन नीलम ने कहा, "आइए न ! अब बाहर ही क्यों खड़े हैं ?"

अधर लाल ने कहा, "इन्हें बिठाओ नीलम, मैं तो तुम्हारी काकी की फबतियों से जरा कान की खुजली और मन की गुदगुदी मिटा लूँ तो चलूँ ! देखती नहीं हो, चहेतों की कितनी चिट्ठियाँ मुझे ठिकाने पहुँचानी हैं ?"

अप्रतिभ नवनीत ने कहा, "चला तो मैं भी इनके साथ ही जाना चाहता हूँ। मुझे इनसे कुछ काम भी है। मेरे एक मित्र—"

अधर लाल ने बीच ही में टोकते हुए कहा, "उनकी तनिक भी चिन्ता मत करो भाई। उनके लिए प्रबन्ध की जिम्मेदारी मुझ पर ! बस ?"

"लेकिन···" नवनीत ने कहने की चेष्टा की।

अधर लाल उसके कंधे को पड़क कर जबर्दस्ती एक गाव तकिए के निकट तक खींच लाए और नीचे बिठाते हुए बोले आरती को लक्ष्य करके, "देखो जगदम्बे ! मेरी ढाल ये हैं। तेरे भरोसे इनकी खातिर-तवाज्जह छोड़कर मैं तो चला। जो वार मुझ पर करना है वह तो बाद में कर लेना। मैदान में डटे रहने वाला वीर मैं ही हूँ। अगर कहीं इन्हें छेड़ा तो ये मैदान छोड़कर भाग जाएंगे और इसकी जिम्मेदारी तुझ पर होगी !"

अधर लाल जाने को हुए तो नीलम ने कहा, "चाय पीकर जाओ न काका !"

"चाय मैं पीता ही कहाँ हूँ ? और अब तो देर भी हो रही है भई ! अच्छा टा-टा !" और अधर लाल दरवाजे से बाहर हो लिए, उनकी पद-ध्वनि क्षीणतर होती हुई विलीन हो गई।

नवनीत ने कहा, "देखिए, मेरा भी यह कोई चाय पीने का समय नहीं है। आप इसके लिए कष्ट न करें। अधर भाई से कुछ आवश्यक बातें करता चला आ रहा था, वे ही यहाँ घसीट लाए हैं मुझे !"

आरती ने कहा, "और यह नहीं कहा उन्होंने कि किसी गैर का घर मत समझो इसे ? फिर मुझे तो जिम्मेदारी भी सौंप गए हैं न ! अरी नीलू, चाय के साथ नाश्ता भी होना चाहिए तगड़ा-सा। नहीं तो तेरे काका मुझे कच्चा चबा जाएंगे।"

नीलम ने कहा, "काकी, तुम हमेशा मेरे देवता-जैसे काका की बदनामी ही करती हो। उनकी कभी तारीफ भी तुम्हारे मुँह से निकली है ?"

"जो चीज रोम-रोम से निकलती हो उसे क्या जीभ से कहना होगा ? प्रेम का पहला पाठ, पगली, यह है, सीख ले—जो चीज रोम-रोम से व्यक्त होती हो, उसे हमेशा जीभ से अस्वीकार करना चाहिए। फिर खसम खूसट हो तो उसे जवान बनाए रखने के लिए—अरे समझती है ? बूढ़े घोड़े को भगाने के लिए कोड़े की जरूरत पड़ती है न ! नहीं समझी ? ये जबान के कोड़े हैं जिन्हें खाकर बूढ़ा घोड़ा दौड़ता रहता है। पर तू ही भाग्यवान है अपनी काकी से तो चुड़ैल ! खसम करे तो अपने से छोटी उमर का ही करना। नवनीत बाबू, तुम्हारी उमर क्या है ?"

हँस कर नवनीत ने कहा, "नीलम देवी से जरूर बड़ा होऊँगा !"

"अरे इस छैल-छबीली को तुम नहीं जानते। औरत की काठी और उठान का कभी भरोसा नहीं करना चाहिए। मैं कहती हूँ पचास की बुढ़िया हो जाने पर भी यह ऐसी ही गुड़िया-जैसी लगती रहेगी !"

"लेकिन आप ही कहाँ इनसे उमर में अधिक दिखाई देती हैं, चाहे आप इनकी काकी ही क्यों न हों !" नवनीत ने उत्तर दिया !

आरती कहकहा लगा उठी, "अरे वाह देवर, आगए न चक्कर में ! अरे बुद्धूराम, अगर मैं इससे उमर में छोटी दीखती हूँ तो छोटी तो हूँ ही। रहा सवाल काकी होने का, सो काका की पत्नी को और तो कुछ कहा नहीं जाता न ! है

वाकई यह ही मेरी काकी, बल्कि मेरी नानी ! लेकिन कहे रखती हूँ, बुढ़िया इसके पहले मैं ही होऊँगी, जबकि यह तब भी इसी तरह आफत की पुड़िया बनी रहेगी। मेरी सिफारिश मानो तो इसी से शादी रचा लो देवर।"

नीलम का मुँह लाल होता जा रहा था, उठ कर उसने कहा, "काकी-वाकी कुछ समझूँगी नहीं काकी, मैं गाली देने लग जाऊँगी !"

"अरे, जा कहाँ रही है ? गाली तो तू दे ही रही है। किसी जवान औरत को माँ कह कर तो देख, गाली समझती है कि नहीं वह ! मुझे तो तू कहती ही नहीं, बना भी दिया है तूने काकी-माँ। बैठ न ! सुन तो ले, शिकारपुर के शाहजादे साहब क्या फरमाते हैं ?"

"मैं चाय के लिए जा रही हूँ !" और वह पीछे चौक में भाग गई।

नवनीत को मुस्कराते देखा तो आरती ने कहा, "मजाक नहीं कर रही हूँ देवर ! लड़की लाखों में एक न निकले तो नाम बदल देना !"

हँसते हुए ही नवनीत ने उत्तर दिया, "उससे आपका ही क्या बिगड़ जाएगा भाभी ? आरती देवी न सही, भारती देवी सही ! नाम तो हर औरत का ब्याह के बाद बदल ही जाता है। पर मुझे बड़ी हँसी आ रही है भाभी !"

"हँसी ? किस बात की ? नीलम की उमर तो हो गई है, पर ब्याह कहाँ कया है उसने अब तक ? माँ-बाप नहीं हैं न बेचारी के। पर अब मैं जो आ गई हूँ इसके जीवन में। देखती हूँ कब तक कुआँरी रहती है !"

"अहद आपकी जरूर मजबूत हो सकती है, पर मजाक ही मजाक में आप क्या क्या कह जाती हैं ?"

"ऊल-जलूल बे-सिर पैर का सभी कुछ बक जाती हूँ, यही न ! पर इस बात को सिर-पैर वाली ही समझो। मजाक बिलकुल नहीं है यह !"

"क्या बात आपकी मजाक होगी और क्या गंभीर, यह क्या सहज मालूम हो सकता है ?"

"क्यों, क्या मैं कभी झूठ बोली हूँ ?"

"मजाक को झूठ कहता ही कौन है भाभी ? पर सच भी अगर मजाक ही में कहा जाए तो क्या हो ? बल्कि मुझे तो डर लगने लग गया है आप से !"

"डर ? किस बात का ?"

"कहीं आप मुझ से यही न कह बैठे कि मैं आपसे शादी कर लूँ !"

नवनीत ने सोचा था कि इतनी गहरी चोट आरती को अवश्य ही एक क्षण के लिए तो अप्रतिभ कर ही देगी, किन्तु सुनते-सुनते ही आरती ने बड़े जोर से कहकहा लगाया और काफी देर तक हँसती रहकर बोली, "सच कहो देवर, क्या मैं ऐसा कह सकती हूँ ?"

अप्रतिभ नवनीत ही हुआ। बोला, "यानी, कब आप मजाक कर रही होती हैं और कब गंभीर चर्चा, यही तो समझ में नहीं आता !"

"लेकिन तुम कौनसी बात मजाक में कहते हो और कौनसी गंभीरता में, यह मैं कह सकती हूँ !"

नवनीत का हृदय और भी धकधक करने लगा। क्या आरती इसी कथन को गंभीर मान कर यहाँ नीलम के घर में, शायद उसके सामने ही उसके मन का चोर पकड़ा देगी ? अगर ऐसा हुआ तो कितना विद्रूप हो उठेगा सारा कांड ! उसने बगलें झाँकते हुए कहा,

"यह तो साफ ही मजाक है भाभी। कहीं इसे गंभीर मत समझ बैठिएगा, नहीं तो मेरे अपराध की सीमा नहीं रहेगी !"

"गंभीर हो तो भी अपराध क्यों होगा ? गरीब की जोरू यों ही सबकी भाभी होती है, फिर अगर वह बूढ़े की जोरू भी हो तो—"

"पर अधर मैया को बूढ़ा कौन कहता है ?"

"मैं जो कहती हूँ। और तुम तो जानते होगे, माता पार्वती को भी शंकर बाबा की तपस्या से डिगाने वाले प्रलोभन क्या कम थे ?"

"जाने दो इन बेकार की बातों को भाभी ! आप तो यह बताइए कि आपने नीलम से मेरे ब्याह की बात कैसे कह दी ? आप जानती हैं मैं शादी शुदा हूँ ?"

"हाँ हाँ, जानती हूँ। और यह भी कि तुम्हारी बहू ने तुमसे कुट्टी कर रखी है। इसीलिए तो तुमने उस बेचारी को एक तरह से छुट्टी ही दे डाली है ! रंग-ढंग से लगता है शायद हमेशा के लिए तुम उसे छुट्टी देना चाहते हो ! अगर ऐसी बात हो तो मैं तुम्हें जमाई बना लूँ, इससे बढ़ कर क्या बात हो सकती है ?"

हँस कर नवनीत ने कहा, "शादी-ब्याह की बात फिर कभी करनी पड़ेगी, यह तो मैंने कभी सोचा भी नहीं। लेकिन भाभी, शादी-ब्याह क्या यों ही हो जाती हैं ? लड़की कौन है, माँ-बाप कौन हैं, कहाँ की है, सामाजिक स्तर क्या है,

क्या यह सब जानने की कोई आवश्यकता ही नहीं ? आपका भी तो ब्याह हुआ है !"

"हाँ जी, हुआ तो है, पर सच कहती हूँ, ये सब सवाल पूछे ही नहीं गए, और न ही इनका किसी के पास उत्तर था ! रहा सवाल नीलम के बारे में इन सब प्रश्नों का, सो क्या तुम्हारे भैया ने तुम्हें कुछ नहीं बताया ?"

—लेकिन तभी नीलम ने भीतर प्रवेश किया। उसके हाथ में हाथीदाँत के कामवाली एक बड़ी ही कलापूर्ण लकड़ी की ट्रे थी, जिसमें पाश्चात्य ढंग में चाँदी के चमचमाते पात्रों में अलग-अलग चाय का सामान था। उसके पीछे किशन उसका नौकर, वह एक दूसरी ट्रे लिए आ रहा था। उसमें तीन-चार प्लेटों में बिस्कुट, नमकीन और कुछ मिठाइयाँ थीं। किशन वह ट्रे रख कर फिर एक और ट्रे ले आया, जिसमें फल सजे हुए थे।

नवनीत ने कहा, "अरे, आपने तो बहुत ही कष्ट कर डाला। पर—यहाँ मानपुर में यह सब फल-फूल, मिठाई वगैरा मिल जाते हैं क्या ?"

आरती ने ही उत्तर दिया, "यह नीलम जादू भी जानती है। जाने कहाँ-कहाँ से चीजें मँगवा लेती है सो यह जाने, पर इसकी मेहमानदारी का लोभ कभी कम नहीं होता। देख भई नीलू, चाय तो हम पिएगे नहीं। मिठाई भी अपने चहेते मेहमान के लिए ही ठीक रहेगी। पर फल जरूर कुछ खाऊँगी। क्यों देवर, इसमें तो तुम्हें आपत्ति या मजाक नहीं लगता न ?" और एक संतरा उठाकर वह मुस्करा दी।

नवनीत ने कहा, "भाभी, सेब आपके लिए मैं तराशता हूँ।" और उसने छुरी लेकर सेब छीलना शुरू कर दिया।

आरती ने चुटकी ली, "अरे यह घास छीलने का काम तो हमीं लोगों के लिए रहने दो न। नीलू, देख क्या रही है, इन्हें सेब पसन्द है। अगर इस तरह इशारे नहीं समझेगी तो क्या खाकर शादी करने चली है तू ?"

नीलम ने नवनीत के कप में चाय बना दी थी, उसे आगे बढ़ाते हुए उसने कहा, "आप चाय लीजिए, सेब मैं छीलती हूँ !"

नवनीत ने छुरी और सेब नीलम को लौटाते हुए कहा, "भाभी तो चाय नहीं पिएँगी, पर क्या आप भी परहेजगार हो गई हैं ?" ट्रे में चाय के लिए एक ही कप था !

नीलम ने कहा, "जी नहीं। लेकिन बुजुर्गों के सामने अदब रखना पड़ता है न ! अभी काकी और कुछ झिड़क बैठेंगी !"

"हाँ री, झिड़कती ही हूँ न मैं तो तुझे। कभी दुलारती नहीं न ! पर क्या गोद में बिठाकर पुचकारूँ तभी समझेगी तू दुलार को ? हथिनी को कोई गोद में बिठाए भी तो कैसे ? मरी को बदनाम करना भी अभी सूझा है। अरे किशन, सुनता है ? अपनी मिस साहबा के लिए एक कप और ले आ। चम्मच लाना मत भूलना। गोद में लिटा कर पिलाना पड़ेगा इस टुनियाँ को !"

"मुझे डर है भाभी, आपकी टुनियाँ इसे ज्यादती समझ कर कहीं विद्रोह न कर बैठे !"

"यही तो मुझे भी डर है ! इसीलिए तो इस आफत को किसी गैर के पल्ले बाँध कर मुक्त हो जाना चाहती हूँ !"

"यों क्यों नहीं कहती काकी, कि तब उस गैर को भी अपना बना लोगी।" नीलम ने पहली बार मानो अपने समस्त संकोच को चुनौती देते हुए कहा।

किशन एक कप-प्लेट और दे गया। उसमें चाय डालने के लिए नवनीत ने केतली की ओर हाथ बढ़ाया तो नीलम ने कहा, "आप क्यों कष्ट कर रहे हैं ? सच तो, चाय प्रस्तुत करने का अधिकार तो महिलाओं का ही है !"

"और पुरुष क्या उस अधिकार में डाका डाल देते हैं ? लीजिए, मेरे लिए भी एक और कप बना दीजिए। देखता हूँ पाश्चात्य महिलाएँ तो अपने अधिकारों के लिए जागरूकता का आदर्श हैं !"

आरती ने कहा, "अरे वाह री गुन-आगरी। कैसी सफाई से बातों का तार ही अपने हाथों में ले लिया ! लो भाई, मियाँ-बीवी राजी, तो क्या करेगा मुआ काजी ! लाओ, घास छीलने का काम रह गया मेरे जिम्मे !" और वह प्लेट में से सेब उठाकर छीलने लगी।

चीनी मिलाते हुए नवनीत ने कहा, "उस बार कहा था न आपने कि आपको संगीत से बेहद शौक है ! निमंत्रण भी दिया था उस दिन तो आपने। भाग्य की मार, अवसर ही नहीं मिला।"

आरती ने कहा, "फूटे करम फकीर के भरी चिलम ढुल जाए। और संगीत ही क्या, नाचना भी इतना अच्छा जानती है देवर, कि इन्द्र की अप्सरा भी पानी

भरने लग जाए। इसीलिए तो कहती हूँ कि ऐसी गुन-आगरी से तो चट मँगनी पट ब्याह कर लेना चाहिए। पता नहीं, अवसर निकला कि हाथ ही मलना रह जाए।"

नीलम की लज्जा मानो अब जाती रही थी। उसने हँसकर कहा, "काकी, चाय पिलाकर और सेब छीलकर ही क्या किसी को किसी अनजान लड़की से विवाह के लिए विवश किया जा सकता है ?"

"अनजान लड़की? अरे, आसमान पर चढ़े सूरज को बताने के लिए कहीं दिए की जरूरत पड़ती है ? अलबत्ता, आँख रहते भी जो दिन को देखना ही पसन्द नहीं करते, उनके बारे में तेरी बात सच हो सकती है नीलम। पर कहे रखती हूँ, मेरे देवर उनमें से नहीं हैं। इतराने मत लग जाना, वे भी किसी सूरज से कम नहीं हैं।"

नवनीत ने कहा, "तब भी भाभी, जब सूरज चमकता है तो और सब सूरज छिप ही जाते हैं। चमकता एक ही सूरज है, और अँधेरा भी उसी से हटता है।"

हँसकर आरती ने कहा, "देखा लड़की, कैसी तारीफ कर रहे हैं तेरी ?"

"लेकिन काकी। कहना तो नहीं चाहिए, पर स्यानी लड़की हूँ इसीलिए कह देती हूँ कि तुम्हारी आशा पूर्ण होती नहीं दीखती। न मानो तो साफ-साफ पूछ लो।" और नीलम ने कनखियों की ओट नवनीत की ओर देखा और अपनी चाय का कप उठाकर ओठों से लगा लिया।

इसके पहले कि आरती कुछ कहे, नवनीत ने कहा, "साठ हजार सेंटीग्रेड की सूरज की गर्मी में बेचारा जीवित ही कौन बचेगा। मेरा मतलब है भाभी, सूरज कितना गर्म है। पिघली आग का गोला है। अपने देवर को कौन भाभी आग में झोंकना चाहेगी ?" और उसने भी नीलम की ओर देखकर चाय का कप ओठों से लगा लिया।

अपने हाथ की संतरे की फाँक मुँह में डालते हुए आरती ने कहा, "आग लगे मेरे मुँह को ही, जिससे इस चाँद जैसी उजली नीली बिटिया को सूरज कह बैठी। अरे, सूरज तो तुम हो देवर। ये सेंटीग्रेड जैसी अंट-शंट बातें मेरी समझ में न आएं, पर यह तो तुम जानते ही हो कि सूरज के घर में जब चाँद पहुँच जाता है तो चाँद की फिर अलग हस्ती नहीं दिखाई देती। लेकिन यह सब बहस तो खतम कभी नहीं होगी। तुमने नीलम को देख लिया है, मेरा खयाल है, परख भी लिया

ही होगा। यही कह रही थी कि तुम्हें शायद इसी बात से एतराज है कि यह खुले तौर पर नाचने-गाने का काम करती रही है। नाच तो इसने सिवा भगवान कृष्ण की मूर्ति के सामने कभी किसी के सामने किया नहीं और गाना भी यहाँ शुरू-शुरू पैर जमाने के लिए ही किया था। अब तो देवमन्दिर में मीरा की तरह भगवान को छोड़कर और किसी के सामने गाती भी नहीं। पढ़ाई-लिखाई की बात—सो तुम्हीं दोनों जानो भई। अपने निरच्छरों को ऐसी मोटी बातें समझने का दिमाग नहीं। देखने-सुनने में, कोई एक-दूसरे से कम नहीं है—"

"पर भाभी, शादी-ब्याह के मामले में पहले से कुछ सोचने-समझने की जरूरत नहीं ?"

"सो नहीं सोचने को कौन कहता है ? अगर तुम्हारे बड़े-बूढ़े यहाँ होते तो यह काम उन्हीं का था। पर नई रोशनी के लड़के-लड़की हों तो, सुनती थी, कि एकाध बार मुँह-दिखाई हुई कि बस बात बन गई।"

"आप जो हम दोनों की बड़ी-बूढ़ी हैं।" मुस्करा कर नवनीत ने कहा।

"इसीलिए तो रह-रहकर मेरी जीभ में खुजली चल उठती है। यों तो देखो—अरे जाती कहाँ है री ? सयानी लड़की के सामने ही तो सब बात कर लेनी अच्छी होती है—"

नीलम ने उठकर कहा, "जरा देख लूँ। किशन को कुछ बता न दूँगी तो वह चूल्हे के पास पल्थी मारे योगी की मुद्रा में बैठा रहेगा। अब तो शाम भी हो रही है न। खाना खाए बिना जा कैसे पाओगी ?"

"भई बात तो बहुत बढ़िया कही तूने। ऐसी बात सुनकर ही जीभ से पानी टपकने लग जाता है। पर तू भी तो एक ही काइयाँ है। जानती है कि खा न सकूँगी तो एहसान लाद देने से क्यों चूकेगी ? हाँ, इन मेहमान के लिए जरूर मन भर कर तैयार कर तू।"

"पर तुम क्यों नहीं खाओगी ?"

"तेरे काका वहाँ फाकाकशी करते दरवाजे पर मेरी राह नहीं देखेंगे ? अगर ऐसा ही था तो तभी उन्हें भी क्यों नहीं कह दिया यहीं खाने को ?"

नवनीत ने कहा, "और मैं भी नहीं खा सकूँगा नीलम देवी। घर पर मेरा नौकर भी धरना दिए बैठा मिलेगा, पर फाकाकशी लेकर नहीं, गरम-गरम खाना चूल्हे पर रखे हुए। मेरी इतनी देख-रेख और परवाह करता है कि मुझे ब्याह

करने की कभी सूझती ही नहीं। भाभी के साथ मैं भी चल दूँगा। बल्कि भाभी को यदि देर हो तो मुझे आप अभी ही छुट्टी दे दीजिए। सही बात तो यह है कि मैं तो अधर भैया से ही मिलने के लिए घर से निकला था—"

"अरे सुन लिया न। कौन कह रहा है कि तुम मुझसे या मेरी इस लाड़ली बिटिया से मिलने के लिए खुद चलकर यहाँ आए हो ? हालाँकि सही बात कह दोगे तब भी कोई तुम्हें दोष नहीं देगा। मैं तो खैर, बूढ़े के साथ ब्याह करके बुढ़िया हो गई हूँ, पर यह जो अनसूँघा फूल है न। पहले तो दूर-दूर से आकर भँवरे मँडराया करते थे यहाँ और रात-रात भर तक। क्यों री, झूठ कहती हूँ क्या ?"

नीलम ने उत्तर नहीं दिया, और कमरे के बाहर चली गई।

नीलम के पीठ फेरते ही नवनीत ने कहा, "भाभी उस दिन तो आप कह रही थीं कि मैं अपनी बहू को बुलवा लूँ, मगर आज तो आप मानो उस बात को बिलकुल ही भूल बैठी हैं।"

"नहीं देवर, भूली नहीं हूँ। और जिस दिन तुम से कहा था कि अपनी बहू को बुलवा लो तब भी इस नीलम की वकालत की बात भूली नहीं थी। उस दिन तो देखना चाहती थी कि अपनी बहू से तुम्हारा रिश्ता आखिर है किस तरह का ? अगर उसमें गहराई हो तो मेरी क्या मजाल है कि मुझे तुम्हारे सामने किसी प्रस्ताव को रखने का साहस भी होता। नारी के अधिकारों की हिमायती नारी ही न हो, यह कैसे हो सकता है ? लेकिन ताली तो एक हाथ से नहीं बजती न। इसके अलावा सबसे बड़ा दावा है मन की संगति का। अगर मन के बीच ही दरार हो तो अधिकार क्या कर सकता है, बल्कि विवशता से लादा हुआ अधिकार का दावा तो जीवन को लँगड़ा बना देता है। मैंने तुम्हारी प्रतिक्रिया से भी और हरनाम से भी पूछ देखा है और पाया है कि तुम दोनों के बीच खाई गहरी है। गहरी न भी हो तो भी उसे पाटने का उत्साह न तुम में है न तुम्हारी बहू में।"

"आपका कहना सही हो सकता है, पर क्या इसीलिए आप मुझे जिस-तिस के गले बाँध देना चाहती हैं ?"

"जिस-तिस के गले में ? नीलम क्या मामूली लड़की है ?"

"गायिका के तौर पर प्रसिद्ध होना तो आप स्वयं कह चुकी हैं। आखिर यह

तो आप जानती ही हैं कि बद होना अच्छा, पर बदनाम होना अच्छा नहीं।"

"हाँ जी, हाँ। तुम सीख दोगे तभी सीखूँगी। जो सही बात नहीं जानते उनके जानने से ही अगर दुनिया चलती होती तो यहाँ आदमी नहीं, जानवर दिखाई देते। दुनिया का क्या है ? जितने मुँह उतनी बातें।"

"तब भी, यही क्या भरोसा है कि इस नए रिश्ते में भी मन के बीच कोई खाई न होगी ?"

"यही तो तुम्हें तोल देखना है। अच्छा, एक काम करो न। मुझे तो जल्दी घर लौटना ही है। तुम ठहरो न। एक-दूसरे के मन को विलायत में इसी तरह परखते हैं न ? विलायत न सही, विलायती-शिक्षा से विलायती तो तुम हो ही गए हो। और जब वह विलायती मेम तुम्हें ही वरण करना चाहती है तो…"

"मुझे ही वरण करना चाहती हैं वे ? ऐसा उन्होंने मुझमें क्या देखा है भाभी ?"

"अपने मुँह मियाँ-मिट्ठू बनने की जरूरत नहीं। तुम्हारी कितनी वकालत करनी पड़ी है मुझे, अगर कोई दूसरा सुनता तो कहे बिना नहीं रहता कि मेरा ही तो तुम पर कहीं लोभ नहीं है।" और वह मुस्करा उठी।

नवनीत ने नत दृष्टि ही कहा, "लोभ तो है ही आपका मुझ पर, नहीं तो जीवित ही कैसे रह पाता।"

"उस बीमारी की बात कह रहे हो ? शहर में कुछ रुपया खर्च करने से ही अस्पताल में बहुत बढ़िया नर्स मिल जाती है, उसमें मेरी क्या बड़ाई हो गई। पर हाँ, नीलम से मैंने तभी कह दिया था कि तुम्हारे जैसा अहमक और बुद्धू, साथ ही दिखनौटा आदमी और कहीं उसे चिराग लेकर ढूँढ़ने से भी नहीं मिलेगा।"

"मैं अहमक और बुद्धू हूँ भाभी ?"

"हाँ हाँ—खसम करके औरत को सुख पाना हो तो हमेशा ऐसे ही आदमी की तलाश करनी चाहिए। यह वह समझ गई है और इसीलिए तुम पर मर-मिटने के लिए तैयार हो गई है।"

"पर आपने तो अपने लिए ऐसा पति नहीं चुना, और तारीफ यह कि आप इसे स्वयंवर भी कहती हैं।"

"ओ हो। मुझसे जलन हो रही है क्या ? पर मैंने तो इसीलिए बूढ़ा आदमी चुना है न। खास दिखनौटा भी नहीं। लो, मैं सिफारिश कर देती हूँ।

अरी ओ नीलम। कहाँ रह गई?"

भीतर से नीलम ने उत्तर दिया, "आई काकी।"

किन्तु नवनीत ने खड़े होकर कहा, "नहीं भाभी, अभी नहीं। मुझे आपसे अभी बहुत बातें करनी हैं। बल्कि चलिए न, आप भी तो घर जाने को उतावली हो रही हैं। घर छोड़ता चलूँगा?"

तभी नीलम ने दरवाजे पर प्रवेश किया तो नवनीत ने उससे कहा, "आपको बहुत कष्ट दिया नीलम देवी। खास कर आपकी यह चाय इतनी स्वादिष्ट और स्नेहपूर्ण रही कि मैं अपनी कृतज्ञता शब्दों में नहीं व्यक्त कर सकता। आज्ञा लेना चाहता हूँ, काफी देर हो गई है।"

आरती ने कहा, "कौन कहता है कि शब्दों में व्यक्त करो? दूसरा विकल्प भी है।"

"उसके ऊपर विचार का अवसर तो आपने दिया है न। चल रही हैं न आप भी?"

आरती ने कहा, "तुम चलो देवर। यहाँ बाजार में तुम्हारे साथ मुझे अकेली देखकर लोग कुछ का कुछ सोच सकते हैं। यों उनके सोचने की मैं परवाह तो नहीं करती, किन्तु बेकार किसी दुर्वाद को फैलने देने से भी क्या लाभ?"

"तो मैं चलूँ। एक बार और धन्यवाद नीलम देवी, आपकी इस कृपा के लिए।"

नीलम ने हाथ जोड़कर कहा, "यह मेरा आतिथ्य कहाँ था? यह तो काकी का आतिथ्य था। इन्हीं के बहाने तो आए हैं आप। मैं तो मात्र एक विघ्न ही बन सकी हूँ। है न?" और वह सहज ही मुस्करा दी।

"सुनते हो?" आरती ने कहा—"इसका खुद का आतिथ्य ग्रहण करने आना होगा जल्दी ही, नहीं तो यह हमेशा मुझे ही पक्षपात का दोष देती रहेगी।"

हँसते हुए नवनीत ने कहा, "आपकी आज्ञा तो माथे पर रखनी होगी। अच्छा।" और वह मुस्कराता हुआ बाहर हो लिया।

९ फिर आरती

अधर लाल का मकान बस्ती के बीच में है, और यद्यपि पहाड़ी जगह के निकट होने से प्रायः सभी मकान पत्थरों से चिने हुए हैं, किन्तु दीवारों पर पलस्तर चूने-मिट्टी की जगह गोबर-मिट्टी का है। आँगन भी उसी तरह गोबर-मिट्टी से ही पुते हुए हैं। हर साल बरसात के बाद दशहरे और दिवाली के बीच मकानों की सफाई-सजाई होती है। बरसात में बहे-उखड़े परिवेश को गोबर-मिट्टी से सुधार कर फिर पाँडु या रंग और चूने के मिश्रण से दीवारों को रँग कर चकाचक कर दिया जाता है। गोबर से लिपे आँगन को लाल मिट्टी से रँगा जाता है, और फिर गृह लक्ष्मियाँ उन पर पांडु या चूने से अलपना के कई तरह के माँडने माँड कर घरों की साज-सज्जा चौचन्द कर देती हैं। बस्ती के बाहर मिट्टी की खानों से खोद-ढोकर मिट्टी लाना, उसमें गोबर और स्थायित्व के लिए सूखी कुचली घास मिलाकर पलस्तर के लिए उचित मिश्रण तैयार करना, दीवार-आँगन छापना-पोतना-लीपना-रँगना, सब काम घर की स्त्रियाँ ही करती हैं, और कठिन परिश्रम की दृष्टि से वर्ष का यह समय उनकी कठिन परीक्षा का समय होता है। पीली या लाल मिट्टी की खदानों में कभी-कभी भयानक दुर्घटनाएँ भी हो जाती हैं, और हाथ-पैर तुड़वा बैठने से लेकर ऊपर से गिरी मिट्टी में दब कर प्राण गँवा बैठने जैसी घटनाएँ भी कम नहीं होतीं। नवनीत ने यह सारा व्यवहार निकट से जब अधर लाल के घर अपनी आँखों देखा तो पहले तो उसे अपनी आँखों पर ही विश्वास नहीं हुआ। और इसके साथ ही जब विश्वास हुआ तो आरती के प्रति उसकी श्रद्धा सौगुनी और आसक्ति सहस्र गुनी बढ़ गई।

अधर लाल ने कहा था कि आरती इन दिनों घर को लेकर बहुत व्यस्त है,

इस वर्ष वह उसकी एकदम से काया ही पलट देना चाहती लगती है, और अपनी व्यस्तता में वह किसी की सहायता, जिसे वह बाधा ही समझती है, स्वीकार करना नहीं चाहती, स्वयं अधर लाल की भी नहीं। गई शाम को दोनों ही घूमने निकल गए थे। टीकू की कथा का कुछ भाग सुन लेने के बाद नवनीत स्वयं अधर लाल की कथा सुनने को व्यग्र हो रहा था, किन्तु अधर लाल टालते ही जा रहे थे। शाम को नवनीत ने सहज ही पूछ लिया,

"अधर भैया, तुम्हारा सुसराल किस गाँव में है ?"

"यह कैसा सवाल है आज ? मेरी ससुराल की लड़कियों के बारे में कुछ शिकायत है क्या ?"

"हाँ, वे आदमियों का मन बड़ी जल्दी वश में कर लेती हैं !"

"सो तो है ! देखो न, कितना मजबूर हो जाता हूँ मैं खुद ? आरती से ही क्यों नहीं पूछ लिया ?"

"पूछा था उनसे, किन्तु बताया नहीं ! कहा था कि ब्याहता स्त्री को सुसराल ही याद रखनी चाहिए हमेशा, पीहर नहीं।"

"कहती तो पते की है न ! सुसराल में पीहर की बातें याद रखने से हाथ दुःख ही लगता है, और तब गृहस्थी में शांति नहीं रहती। है न ?"

"सो कैसे ? यह तो अजीब बात हुई !"

"अजीब कुछ नहीं है इसमें भाई। लड़की और बाप के बीच का रिश्ता तो तुम जानते ही हो किस तरह का होता है ! बाप कैसा भी दीन-हीन क्यों न हो, लड़की की आसक्ति और श्रद्धा उसके प्रति प्रायः अटूट ही होती है, और सचमुच तो स्त्री के लिए संसार में पुरुष का आदर्श उसका पिता ही होता है। यहाँ तक कि जान या अनजान में वह पति को भी इसी कसौटी पर कस कर देखने लग जाती है।"

"तुम तो फ्रॉयड के भी कान काटने लग गए भाई !" हँस कर नवनीत ने कहा।

अनजान बन कर अधर लाल ने कहा, "यह फ्रॉयड कौन बला है ?"

"गोली मारो उस मनहूस को। एक लम्बी दाढ़ी वाला डॉक्टर हुआ करता था, जिसके लड़कियाँ ही लड़कियाँ थीं, लड़का-वड़का कोई नहीं ! सो तुम कह

की शांति का क्या लेना देना है ?"

"अब लो। पति-पत्नी और पिता-पुत्री के सम्बन्धों में कहीं समानता है ? पिता अपनी पुत्री को केवल संरक्षण देता है और उसके अपराधों को सदा क्षमा की दृष्टि से देखता है। इसके विपरीत पति रक्षा चाहे पत्नी की करता हो, पर संरक्षण तो वह पत्नी से ही चाहता है, और वह भी बराबरी के स्तर पर ! और पत्नी के अपराधों को क्षमा करने की तो वह सोच ही नहीं सकता ! इसलिए जहाँ लड़की ने पति को पिता की कसौटी पर कसा कि उसे निराशा ही हाथ लगती है, और तब इस नई गृहस्थी में उसके लिए पुरुष मात्र घृणा के पात्र तथा हर वस्तु आदर्श से च्युत दिखाई दे सकती है। लेकिन तुम यह सब बातें कैसे समझोगे ? ब्याह तो अभी तक किया नहीं, और समझना चाहते हो गृहस्थी के गंभीर रहस्य !"

नवनीत ने हँस कर बात टालते हुए कहा, "सो, भाभी ने तुम्हारी गृहस्थी में जो शांति की अजस्र धारा बहा रखी है वह इस तरह ! अच्छा, इसका यह मतलब तो नहीं न, कि तुम्हारी पहली शादी से तुम्हें शांति नहीं मिली ?"

"मेरी पहली शादी ? क्या मतलब ?"

"यह तुम्हारा दूसरा विवाह है न ?"

"दूसरा विवाह ? किसने कहा ? मेरा तो यह पहला ही विवाह है भाई। आरती ने कहा है क्या ?"

अधर लाल की स्पष्ट हैरानी से नवनीत को अपनी गलती स्पष्ट हो गई। आरती ने परोक्ष रूप से अधर लाल को मजाक में चाहे पुरुष-पुरातन, बूढ़ा, खूसट आदि कुछ कहा हो, किन्तु उससे यह निष्कर्ष निकालना कि यह उनका दूसरा विवाह होगा, सरासर ज्यादती है। नवनीत ने बगलें झाँकते हुए कहा, "नहीं, ऐसा किसी ने कहा तो नहीं, किन्तु यों ही···"

अधर लाल ने हँस कर कहा, "हम दोनों के बीच उमर का इतना गहरा अन्तर देखकर शायद सोच लिया हो। हाँ, अन्तर तो है। पर सच कहता हूँ, मैंने आरती को किसी भी तरह विवश नहीं किया था। वह तो इस विवाह को स्वयंवर कहती है ! मुझे तो स्पष्ट कभी उसने शिकायत महसूस करने तक का अवसर नहीं दिया है। पर हाँ, मैं इसे उसका त्याग ही मानता हूँ, और अगर कभी मेरे बारे में वह शिकायत करे भी, तो यह उसका उचित अधिकार ही होगा।" और

मालूम दिया अधर लाल कुछ गम्भीर हो आए।

नवनीत ने कहा, "नहीं, यह बात तो कभी नहीं है भैया! मेरा तो सिर्फ ख्याल ही ख्याल था। बल्कि स्वयंवर की बात तो भाभी खुद कई बार बड़े गर्व और आत्मसंतोष के साथ मुझे भी कह चुकी हैं।"

"यही तो है, जब तुम साफ समझते हो कि तुमसे अपराध हुआ है, और उसका तुम्हें दंड मिलना ही चाहिए, लेकिन जब सामने वाला ही मुस्करा कर या तो उस अपराध को अपने सिर ले ले, या फिर उसे अपराध ही न मान कर वरदान के रूप में अपने सिर माथे लगा ले, तो फिर उसे क्या कहा जाए? मैं जानता हूँ कि नारी बहुत ओछी भी हो सकती है, किन्तु समर्पण की इतनी ऊँचाइयों पर भी नारी ही पहुँच सकती है। शायद ऐसे ही अवसर के लिए हमारे शास्त्रकारों ने लिखा हो कि स्त्री का चरित्र और पुरुष का भाग्य देवता भी नहीं जान सकते, फिर मनुष्य तो हस्ती ही क्या है!"

हँसकर नवनीत ने कहा, "प्रेम का पारस ही आदमी को कंचन बना देता है भैया चाहे वह नारी हो या पुरुष!"

"पुरुष के भाग्य का उदय भी शायद ऐसे ही प्रेम की संप्राप्ति का नाम हो!"

"यह बात जरूर सही हो सकती है। तो भाई, अपनी न सही, कम से अपने स्वयंवर की कथा तो सुनाओ न!"

"अपनी कथा भी सुनाऊँगा नवनीत बाबू एक दिन! एक जमाना था जब कि गर्व के साथ ही नहीं, आत्मसंतोष के साथ, कहना चाहिए प्रचार-प्रसार की दृष्टि से भी, अपनी आत्म-कथा नवयुवकों को सुना-सुना कर अपनी ओर आकर्षित करता था, किन्तु आज तो देश में हवा ही दूसरी बह रही है। गाँधी की आँधी कहते हैं न उसे? पुराने सब मान-मूल्य सूखे झड़े पत्तों की तरह उड़े जा रहे हैं। नवयुवक ही क्या, मुझ जैसे बूढ़े भी, जिनकी जड़ें पाताल में गड़ी हैं, उस आँधी में डगमगाने लग गए हैं। हमारी कहानी प्रेरणा तो उन्हें अब भी देगी, पर डर है कि वह रास्ता उनके लिए, और उनके लिए ही क्यों, हम सबके लिए, सारे देश के लिए गलत न भी हो, लेकिन अधिक व्ययसाध्य और समय-साध्य हो सकता है!"

"कहते क्या हो? तुम्हारा जीवन भी क्या राजनीति से सम्बन्धित रहा है?"

"इस युग में राजनीति से सम्बन्ध क्या, उसी में तो जनमना-पनपना और मरना होता है न। जिस देश की स्वाधीनता को लोग बरसों से भूल चुके हों उसमें जनता जरूर राजनीति को किन्हीं खास आदमियों का विषय समझने लग जाती है, लेकिन देख तो रहे हो—आज आदमी न चाह कर भी क्या कहीं राज-नीति से बच सकता है ? अपने ही को लो—सचमुच मुझे तो बहुत ही प्रसन्नता हुई है कि तुम जैसा पढ़ा-लिखा ऊँचे विचार का व्यक्ति यहाँ पोस्ट हुआ है, किंतु यह पोस्ट क्या तुम्हारे उपयुक्त है ? तुम जैसे प्रतिभावान मेधावी युवक का कार्य-क्षेत्र प्रधान कार्यालय में किसी ऊँची कुर्सी के इर्द-गिर्द होना चाहिए ! अवश्य ही किसी अधिकारी का स्वार्थ इसमें टकराया होगा, तभी तो तुम अपनी प्रतिभा नष्ट करने के लिए परिवार-परिजन तथा अपने उपयुक्त वातावरण से काट-फेंक कर यहाँ डाल दिए गए हो ! और यही क्या आज की राजनीति नहीं रह गई है ?"

"हाँ, अधर भाई। कहते तो सच हो। कैसे भिजवाया गया मैं यहाँ, सुनाऊँ इसकी कथा ?"

"कथा तो जरूर होगी ही। तुम्हें आपत्ति न हो तो जरूर सुनाओ !"

"इसमें आपत्ति क्या है ! गुलाम देश में और नौकरशाही में एक नागरिक का इसके सिवा भाग्य हो ही क्या सकता है !" और नवनीत ने अधर लाल को लखनऊ के जिला कलेक्टर के भाई के साथ लड़ाई और अपमान तथा अपने तबादले की सारी घटना सुना दी, और फिर हँस कर कहा, "अच्छा अधर भैया, तुम भी क्या पोस्टमैन किसी ऐसी ही नौकरशाही की विडंबना से नहीं बन बैठे हो ?"

"नहीं नवनीत बाबू, नौकरशाही की विडम्बना या प्रमाद से नहीं, बल्कि मैं तो उसके प्रसाद से ही पोस्टमैन बन सका हूँ। वरना तुम्हारी आरती भाभी मुझे प्राप्त ही नहीं होती। जहाँ इतना बड़ा जगत का ऐश्वर्य मुझे मिला हो उसे प्रसाद न कहूँ तो क्या कहूँ ?"

"बस पहेलियाँ ही बुझाते जा रहे हो, कहोगे नहीं वह बात ! हरि-कथा सुनने से भी तो पुण्य मिलता है न !"

"हरि-कथा ?"

"महान व्यक्तियों की कथा हरि-कथा ही तो होती है। फिर पावन प्रेम की पारस-कथा श्रोताओं को भी शायद कंचन बना दे, यह लोभ तो रहता ही है न !"

अधर लाल ने हँस कर कहा, "चाहता था कि आरती ही सुनाए वह कथा अगर उसका मन चाहे। आखिर उसका ही तो अधिकार है उस पर। पर तुम भी भाई, गैर नहीं हो। बात है पटना की, तब मैं पटना में ही पोस्टमैन था।"

"लेकिन पोस्टमैन कैसे हुए यह तो बताया नहीं !"

"यह फिर कभी बताऊँगा। अभी तो यही समझ लो कि पोस्टमैन की नौकरी मैं बड़े ही उत्साह और आत्मसंतोष के साथ करता जा रहा था—आत्म-संतोष के साथ तो अभी भी कर रहा हूँ। बात भी कोई बहुत पुरानी नहीं, यही पाँच-छ: बरस पहले। पटना में तब मेरे हलके में एक लखपति सेठ नवजीवन लाल का मकान पड़ता था। इनाम-इकरार के मामले में बहुत उदार थे। हर त्यौहार पर मिठाई और फल-फूल ही नहीं, नकद पैसा तथा वस्त्रादि भी बाँटा करते थे और पोस्ट ऑफिस के कारिन्दों तथा अधिकारियों तक को खुश रखने में वह अपनी शान-शौकत समझते थे। अधिकारियों के लिए दावत-पार्टियों की भी भरमार रहा करती थी उनकी कोठी में !"

"काश, मैं भी तब पटना होता !" हँस कर नवनीत ने कहा।

अधर लाल ने भी हँस कर कहा, "जरूर उनकी पार्टियों में शरीक होते तुम भी, पर मेरे जैसा सौभाग्य शायद ही मिलता। पोस्टमैनों पर उनकी कृपा का कारण यह था कि उनकी देश से ही नहीं, विदेश से भी काफी डाक आती थी। धीरे-धीरे लेकिन शीघ्र ही मैंने लक्ष्य किया कि सेठजी के नाम खासकर केलि-फोर्निया, अमेरिका से जो पत्र आते, वे बहुत भारी और मुहरबन्द होते, और उनको पाते ही सेठजी पोस्टमैन को विशेष पुरस्कार देते !"

"यानी सेठ तुम्हें रहस्यमय लगा !"

"केलिफोर्निया के नाम से मुझे भी, समझ लो, कुछ लाग-लपट है, और यह ख्याल करके कि कहीं सेठजी अमेरिका में किसी राजनीतिक दल से तो गठबंधन नहीं किए हुए हैं, मैंने एक दिन उनका एक पत्र अनायास ही खोल डाला !"

"और उसमें से अमरीकी करेन्सी का एक बड़ा-सा बंडल छिटक पड़ा। हैं ?"

"नहीं जी। वह होता तो मुझे आश्चर्य नहीं होता ! किन्तु उस पत्र में लिखे हुए समाचार से मुझे सेठजी पर एक ही साथ क्रोध और दया दोनों उदय हुए। सेठजी चोरी-चोरी कोकीन और अफीम का व्यापार करते थे, और इसी तरह लखपति बनकर अब करोड़पति होने का सपना देख रहे थे। कोकीन देश के

नवयुवकों के चरित्र और भविष्य पर कैसा बुरा असर डालती है, यह सोच कर मैं क्रोध नहीं दबा सका और वैसी ही खुली चिट्ठी लेकर मैं सेठजी के पास पहुँच गया। कहना न होगा, सेठजी मेरे अपराध की बात तो भूल गए और भय से एकदम पीले पड़ गए, और इस तथ्य को छिपाए रखने के लिए मुझे दस हजार रुपए तक देने को तैयार हो गए!"

"अच्छा!"

"दस हजार ही क्यों, मैं चाहता तो वह मुझे एक लाख तक देने पर विवश किए जा सकते थे, किन्तु रुपये-पैसे की तो मुझे प्यास नहीं थी न। मैंने उनसे कहा कि भविष्य में यदि वे इस मार्ग को छोड़ देने का वादा करें तो मैं मामले को अपने तक ही रख कर दबा दूंगा। सेठजी ने मान लिया, उनके सामने और कोई चारा ही नहीं था। जो रुपया वे मुझे देना चाहते थे वह मैंने नहीं लिया तो उन्हें कुछ शक हुआ कि शायद मैं बात गुप्त न रख सकूं। सेठजी के मन की यह अवस्था देख कर मैंने उन्हें प्रेरणा दी कि उस पैसे से वे शहर में गरीबों की मुफ्त चिकित्सा के लिए एक अस्पताल खुलवादें। अगर कभी पटना जाना हो तो तुम्हें नवजीवन दातव्य औषधालय अभी भी सुचारू रूप से कार्य करता हुआ मिलेगा।"

"अच्छा! तो वह सेठ अभी वहीं है?"

"नहीं। सेठ नहीं रहा, केवल उसकी कीर्ति रह गई है। उस अस्पताल के रूप में ही नहीं, और भी अधिक वैभवमय और चमत्कारी रूप में। पर वह बाद की बात है। उस दिन के बाद से ही सेठजी का मुझ पर गहरा अनुराग हो गया। उनका सन्देह निवृत्त करने के लिए मैंने भी अपना हलका बदल लिया, पर वे यदा-कदा मुझे बराबर अपनी कोठी पर बुलाते। उस अस्पताल के व्यवस्थापक-मण्डल में मुझे भी रखना चाहते थे, पर मैं नहीं रहा, यद्यपि मूल में अपनी भूमिका के कारण उसका सारा दायित्व मुझ पर ही आ पड़ा था। और तो सब कुछ ठीक था, किन्तु सेठजी पूंजीवाद के विष-चक्र से अपने आपको बचा नहीं सके। लक्ष्मी का लोभ स्वयं भगवान ही नहीं त्याग सके तो बेचारे सेठ नवजीवन लाल की क्या हस्ती थी? पटना के स्थान पर उन्होंने चुपके ही चुपके अपने गुप्त व्यापार की शाखा भागलपुर में स्थापित करदी, और वहीं से उनका कारोबार फिर निर्बाध चलने लगा। पोस्ट-ऑफिस के सम्बन्धित कर्मचारी-अधिकारी वर्ग को चारा डालकर अपने वशवर्ती बनाए रखने की नीति जाल बनकर वहाँ भी फैल गई। पर इस

बार भाग्य ने उनका साथ नहीं दिया। धोखा देने वाले व्यक्ति को आखिर धोखा खाना पड़ता है। धोखे के साथ जो उचित क्रियापद लगना चाहिए वह 'देना' नहीं 'खाना' है।"

"हाँ, यह बात तो है।" नवनीत ने कहानी में उत्सुकता दिखाते हुए कहा।

"उस घटना-कांड के दूसरे वर्ष की बात है, एक शाम मैं जब सेठजी से औषधालय के सम्बन्ध में कुछ परामर्श करने के लिए पहुँचा तो देखता हूँ कि सेठजी बहुत ही परेशान-बदहवास हैं। पूछने पर उन्होंने भागलपुर का सब किस्सा पूरा और सच-सच मुझे कह सुनाया। रहस्य वहाँ पर भी सबसे पहले पोस्टमैन को ही मालूम हुआ था। और नीयत साफ नहीं थी उसकी, इसलिए एक मोटी मुर्गी को फँसाने के उद्देश्य से पोस्ट मास्टर को भी उसने रहस्य में भागीदार बना दिया। सेठजी को अवश्य मालूम नहीं था कि पोस्टमास्टर भी इस राज में शरीक है। सौ रुपए से प्रारम्भ होकर दस-दस हजार तक उसके पेट में समाने लगे, लेकिन पैसे की भूख किस की सन्तुष्ट हुई है कि उसकी होती ?"

"अधर भैया, आपमें तो यह भूख नहीं है न ?"

"मुझ में है भी नवनीत बाबू, और नहीं भी है। पर मेरा किस्सा अलग है, सुनाना वह भी है तुम्हें। पर फिर किसी दिन सुनाऊँगा। आखिर मैं भी तो एक सामान्य मनुष्य ही हूँ। सो कह मैं यह रहा था कि आखिर उस पोस्टमैन की माँग जब बीस हजार तक पहुँच गई तो सेठ का माथा ठनका। आखिर कहाँ तक वे उसे तरह देते जाते ? और फिर यह भी तो नहीं था कि उतना रुपया पाकर वह चुप बैठ जाता ? सेठजी भागलपुर पहुँचे, रुपये के लिए पोस्टमैन को अपने घर बुलाया, और चुपके से उसकी हत्या करवा दी।"

"सोने की जीभ पर खून जो लगा हुआ होता है। हत्या उसके लिए बहुत ही सामान्य बात है नवनीत बाबू। और सोना ही क्यों, व्यसन किसी भी चीज का साधन नहीं देखता। दुनिया के ये भयंकर विनाशकारी युद्ध ही आखिर क्यों होते हैं ? क्या इनके मूल में किसी सनकी की कोई ऐसी ही असम्भव या दुस्संभव सनक नहीं होती ? पैसे की सनक, प्रेम की सनक, यहाँ तक कि जन्मभूमि के प्रेम की सनक भी ऐसी ही होती है, जो साधन की चिन्ता नहीं करती, फलाफल की चिन्ता नहीं करती, केवल लक्ष्य को निष्कंप दृष्टि से देखती हुई पथ-अपथ में बढ़ती ही चलती है। सेठजी को पता न था कि वहाँ का पोस्टमास्टर भी उस

षड़्यंत्र में शामिल है। सेठजी के ऊपर अब दो-दो अपराध थे। भीतर-ही-भीतर मामला दबाने में सेठजी को एक लाख के नीचे आजाना पड़ा था। व्यापार उनका ठप्प हो गया था, पर मुक्ति नहीं थी उनकी। धीरे-धीरे भागलपुर से सारा कारोबार उठा लेने पर भी मन को शाँति नहीं थी। उस दिन सवेरे भागलपुर से वही पोस्ट मास्टर फिर आ धमका था और पचास हजार की माँग कर बैठा था। सेठजी यदि न दें, तो कानून की शरण में जाने के लिए वह तैयार था। वह कारोबार सेठजी बन्द कर ही चुके थे, उनकी माली हालत भी अब ऐसी नहीं रह गई थी कि पचास हजार सरलता से दे सकते। और आखिर इस पचास हजार के बाद भी क्या प्रमाण कि वह फिर भविष्य में आकर ऐसी ही माँग और न कर बैठेगा ? यही सेठजी की चिन्ता का विषय था और वे सोच नहीं पा रहे थे कि क्या उपाय करें ? सत्य के स्वीकार में उनके लिए अब कोई आश्वासन नहीं रह गया था। कितनी दूर जाने पर आदमी की आँखें खुलती हैं। पाप का मार्ग ऐसा ही तो होता है।"

"पर सेठजी ने जब कारोबार बन्द ही कर दिया था तो वहाँ रहने की उन्हें क्या जरूरत थी ? अवसर देखकर कहीं दूसरी जगह चले जाते जहाँ उन्हें कोई पहचानता न हो।"

"उस समय उपस्थित विपत्ति से छुटकारा पाने पर ही तो यह सम्भव था। फिर उन्होंने तो सोचा था कि भागलपुर से पटना चले आने पर ही उनकी मुक्ति हो गई है, और काफी पैसे भी खर्च कर ही चुके थे लोगों का मुँह बन्द रखने के लिए। और अकेले भी तो नहीं थे। गृहस्थी पूरी नहीं तब भी उनकी सयानी लड़की थी, नौकर-चाकर थे, मकान था, और आखिर जिस सब कुछ के लिए यह किया गया था वह चल-अचल कुछ दौलत तो थी ही। नवजीवन लाल इतने व्याकुल हो गए थे कि आत्महत्या से भी उन्हें मुक्ति नहीं दिखाई दे रही थी ! मैं भी आखिर क्या करता। साहस बँधा कर चला आया। मुझे इस पापी व्यक्ति पर उचित तो क्रोध ही हो आना था पर आई मुझे दया ही। पापी कैसे अपने ही जाल में उलझता जाता है।"

"साहस बँधा कर चले तो आए तुम, पर क्या तुम्हें यह आशंका नहीं हुई कि कहीं वह अपने आपको अकेला पाकर आत्महत्या न कर बैठे ?"

"हुई थी, पर मैं कर ही क्या सकता था ? उनको बचाने का उपाय ही क्या

था मेरे पास ? यह भी मैंने देखा कि जो व्यक्ति पैसे के लोभ में किसी व्यक्ति की जान ले सकता है, वह अपनी जान दे देने का साहस कभी नहीं कर सकता। और आखिर पीछे मुड़ कर देखने को उसे एक जवान कुआँरी लड़की भी तो थी, बे-माँ की लड़की। तब भी रातभर मैं उस दिन सो नहीं सका। चाहे जितना बुरा रहा हो, पर भलाई की मात्रा भी तो कम नहीं थी न उसमें। मेरी तो अस्पताल की सारी ही योजना चौपट हो जाने वाली थी।"

अधर लाल ने देखा कि नवनीत की उत्सुकता चरम सीमा पर पहुँच गई थी। उन्होंने कहा, "दूसरे दिन सवेरे ही डाक बाँटने के समय चिट्ठियों का थैला लिए उनके दरवाजे जा पहुँचा। खबर पाते ही सेठजी ने भीतर बुलवा लिया। बताया कि रात को पोस्ट-मास्टर तो नहीं, किन्तु उसका आदमी आया था। पोस्ट-मास्टर भी तो चालाक था, पोस्टमैन का हश्र वह देख ही चुका था। सेठजी ने कहा कि वे पोस्ट-मास्टर से ही मिलना चाहते हैं, सवेरे आठ बजे अगर वह आजाएँ तो उनको रकम दे दी जाएगी। इस तरह रात भर के लिए तो उन्होंने अवसर माँग ही लिया था। पोस्ट-मास्टर भी आकर जा चुका था तब तक। सेठजी ने उससे रुपए की व्यवस्था करने के लिए कुछ और मोहलत चाही थी। पोस्ट-मास्टर चला तो गया था पर उसके तेवर देखकर उन्हें आशा नहीं थी कि वह अब और सेठजी से कुछ उम्मीद रखे। क्या करें क्या न करें, इसी ऊहापोह में वे मुझे भी बुलाना चाहते थे, पर मैं ही क्या सलाह दे सकता था ? जब हम इसी तरह अपने आपमें खोए बैठे थे कि नौकर ने आ कर सूचना दी कि पुलिस का थानेदार कुछ सिपाहियों के साथ उन्हें ही पूछ रहा है।"

"अच्छा ! बड़ी जल्दी की पोस्ट-मास्टर ने। शायद बेवकूफी ही की उसने। जो कुछ वह मार सकता था सेठ से, वह भी वह खो रहा था ! नहीं क्या ?"

"पहले मैं भी ऐसा ही सोचता था नवनीत बाबू। किन्तु यह बाद में पता चला कि पोस्ट-मास्टर ने पुलिस को भी अपने साथ मिला लिया था साझेदारी में। थानेदार वहाँ सेठजी को धमका कर रुपए वसूलवाने के लिए ही आया था, पर हम इस चाल को न समझ कर उसे सच्चा प्रकरण ही मान बैठे थे। रुपया देने से उस समय छुटकारा मिल जाता, पर सेठजी मानो अपने आपको अब हर परिस्थिति के लिए तैयार कर चुके थे। चिन्ता अब थी उन्हें तो केवल अपनी पुत्री की। रोते हुए ही कहा था उन्होंने मुझसे कि सिवा मेरे कोई उन्हें अपना

नहीं दिखाई दे रहा था, और उनके बाद मुझे ही उनकी कन्या का दायित्व उठाना था। समय था नहीं, मेरी स्वीकृति-अस्वीकृति का भी प्रश्न नहीं था। उनके सामने बुलवाया तभी अपनी कन्या को। बेचारी वह भी इस विपत्ति को समझ गई थी। डरती-काँपती आई बैठक में। पहले कभी मैंने उसे देखा नहीं था। नितांत निराभरण, रात भर रोते रहने और जागने से आँखें या तो सूज गई थीं, या वे सचमुच ही बहुत बड़ी थीं, किन्तु इसके साथ ही थानेदार भी भीतर प्रविष्ट हुआ।"

"अच्छा।"

"थानेदार के इशारे से ही सबसे पहले एक सिपाही ने आगे बढ़कर सेठजी के हाथ में हथकड़ी डाल दी। एक दूसरा कर्मचारी उनकी कन्या की ओर बढ़ा, और मैं तो डाक बाँटनेवाला पोस्टमैन ठहरा। इंस्पैक्टर ने कहा, 'यह तुम्हारी लड़की है न ?' सेठजी को और तो कुछ सूझा नहीं, उन्होंने तत्काल उत्तर दिया-'जी नहीं, ये तो इन पोस्टमैन साहब की बीवी हैं।' सुनते ही मेरे तो पैरों तले की धरती ही खिसक गई। थानेदार ने मेरी ओर देखा तो मुझे भी कहना पड़ा, 'इसी से पूछ लीजिए न थानेदार साहब। मुफ्त में तो कोई किसी की बीवी नहीं बन जाती न।' और अपने हृदय के भीतर की आँसुओं की उमड़ती हुई बाढ़ को दबाकर उस लड़की को कहना पड़ा 'हाँ'। थानेदार ने जिरह की, 'तुम तो खैर डाक बाँटने के लिए आ सकते हो, पर तुम्हारी यह बीवी यहाँ क्यों है ?' और मुझे सफाई देनी पड़ी, 'देहात के रहने वाले ठहरे न सरकार। सुना था सेठजी की बहुत बड़ी देखने लायक कोठी है। इसने जिद की, देखूँगी। दूसरे ब्याह की जोरू ठहरी, इतना भी मन न रखूँ तो छोड़ कर न भाग जाए ? सेठजी से यही निहोरा कर रहा था।' फिर उस लड़की को भी कुछ खरी-खोटी उनके सामने सुनाई, 'ले और देख सेठ साहब की कोठी। रोती फिर अब थाने में। बड़े लोगों ने ठीक ही कहा है, बालहठ, त्रियाहठ और राजहठ किसी को कहीं का रहने नहीं देता। ले अब तो जी ठंडा हुआ न तेरा। देख, अभी थानेदार साहब तेरे और मेरे दोनों के हाथों में हथकड़ियाँ जड़ देते हैं कि नहीं।' लड़की की आँखों में आँसू तो भरे हुए थे ही। बस बड़ा अच्छा नाटक हो गया। थानेदार ने हँस कर जान बख्श दी। सेठजी की आँखों में एक चमक छा गई। मैं उनकी लड़की का हाथ पकड़ कर शीघ्र ही वहाँ से चलता बना। बाद में सुना, सेठजी बहाना करके बाथरूम में घुसे तो वहीं अवसर देख कर एक बहुत तेज विष गटक लिया,

जो वहाँ उन्होंने पहले से ही ऐसे अवसर के लिए छिपा रखा था। पुलिस उन्हें घूस के बारे में कुछ कहना चाहती थी कि सेठजी की हालत बिगड़ गई। इसके पहले की पुलिस उन्हें अस्पताल पहुँचाने की व्यवस्था करे वे इस लोक से चल बसे। मानवी-अदालत से उन्हें छुटकारा मिल गया। उनकी सारी चल-अचल सम्पत्ति जब्त करके ही सरकार को सन्तोष करना पड़ा।"

"और सेठजी की वह लड़की ?"

"उसका रोना-धोना कुछ कम हुआ तो एक दिन मैंने पूछा, 'देखो भाई, तुम सयानी हो, पढ़ी-लिखी भी हो। तुम्हारे ब्याह के लिए वर तलाश तो कर रहा हूँ पर तुम्हारी राय ले लेना भी तो जरूरी है न। तुम्हारी रुचि-मति के बारे में मैं तो कुछ जातता नहीं।' लड़की ने कहा, 'आप जानते नहीं, मेरा तो विवाह हो चुका है।' मैंने कहा, 'यह तो बड़ी अच्छी बात है, चलो मुझे चिन्ता से छुटकारा मिला। मेरा अनुमान था, शायद तुम्हारे पिता ने ही मुझे कभी कहा था कि तुम्हारे विवाह की ही चिन्ता उन्हें सबसे अधिक थी। कहाँ है तुम्हारी ससुराल? वहीं पहुँचाकर जिम्मेदारी से मुक्त होऊँ। उसने जवाब दिया, 'इतने सस्ते जिम्मेदारी से मुक्त हो जाएँगे ?' मैंने कहा, 'ब्याह के बाद खुद पिता ही जिम्मेदारी से मुक्त हो जाता है तो मैं ही क्यों न हो जाऊँगा? तो क्या कहती है लड़की ? 'पिता की भाँति क्या पति भी जिम्मेदारी से बरी हो जाता है ?—"

नवनीत ने रुकी साँस को छोड़कर कहा, "आरती भाभी ही थीं न ?"

"हाँ भाई, उसके सिवा और हो ही कौन सकता था। कहने लगी, 'मेरी बात नहीं समझे क्या ? सबूत दूँ ? अग्नि और शास्त्र का सबूत तो इस जमाने में मानता ही कौन है ? पर पुलिस की आँखों में तो कोई धूल नहीं झोंक सकता न।' क्या कहता मैं ? तब से वह मेरे ही पल्ले बँधी हुई है, और मैं उसके पल्ले। अपनी सारी अमीरी भुलाकर मेरी गरीबी में सिर से पैर तक रँग गई है, और पढ़ाई-लिखाई भी एक पोस्टमैन की पत्नी को कहाँ छजती है ? वह सब कुछ ही अनायास ही भुला बैठी है। जानती है तो सिर्फ जिन्दगी को, जिन्दादिली को। दुःख-वेदना किसी को पास नहीं फटकने देना चाहती। है न ?"

जिस दिन वह अधर लाल के घर पहुँचा, यही सारी बातें उमड़-घुमड़कर नवनीत के मस्तिष्क में छाई हुई थीं। शास्त्रोक्त सम्पन्न समारोह को ही यदि

विवाह कहा जाता तो उनका यह विवाह नहीं हैं। रजिस्ट्रेशन भी कहीं नहीं हुआ, और पुलिस के वे प्रमाण भी अब कहाँ होंगे ? स्वयंवर यह है भी और नहीं भी है। परिस्थितियों की विवशता ही तो थी तब ? अधर लाल के स्थान पर यदि उस समय नवनीत होता तो वही उसका वर हो चुका होता। और आरती जो अधर लाल में इतना अधिक उत्साह, अमन्द आनन्द दिखाती है, वह क्या अस्वाभाविक नहीं लगता कहीं ? किसी गहरी खाई को ढाँक रखने, दबाए रखने का प्रयत्न नहीं कहा जा सकता उसे। परन्तु, नहीं, नहीं नवनीत का मन भी तो एक आग्रह को पकड़े हुए है, और इसीलिए तो नहीं वह औचित्य खोज रहा है ? नवनीत को याद आया, शायद डॉ० जॉन्सन ने ही तो कहीं कहा है कि कोई तथ्य ऐसा नहीं है जिनके पक्ष में औचित्य का प्रबल प्रमाण नहीं प्राप्त किया जा सके खैर, नवनीत को इसकी प्रतीति तो करनी है ही।

दशहरा धूम-धाम से बीत चुका था। दिवाली के अभी भी पाँच-छः दिन शेष थे। गृहणियाँ घर को लेकर बहुत व्यस्त थीं। अधर लाल का घर लिप-पुत कर जगमगा रहा था। आरती आँगन के किनारों को हिड़मिची के गहरे लाल रंग से रंजित कर रही थी। काम समाप्त प्रायः था। उसकी वेशभूषा अस्तव्यस्त थी। बुद्धिमानी इसी में रहती है कि पुराने फटे वस्त्रों से किसी तरह काम चला लिया जाए। काम की व्यवस्था में यों ही सुधि नहीं रहती, फिर घर की पुताई का काम तो ऐसा है कि सावधानी बरतने पर भी वस्त्रों की खैर नहीं रहती। नवनीत को दरवाजे पर देखकर आरती कुछ अप्रतिभ तो हुई ही, किन्तु शीघ्र ही भरे हुए रंगीन हाथों से ही उसने अपनी पुरानी साड़ी को ठीकठाक कर आँचल को सिर पर टिकाया और कहा, "आजाओ देवर जी, अब झिझकने से क्या होगा ? उधर से दरी उठा लो। जरा यह लाइन पूरी करलूँ बस। मैं हाथ धोकर आई।"

हँसकर नवनीत ने कहा, "अपराध हुआ कि इस समय चला आया। किसे पता था कि आप भी मामूली औरतों की तरह इस तरह के काम में अपने आपको ही भूल उठेंगी। चमकते हुए कपाल पर यह लाल रेखा कितनी अच्छी लगती है भाभी।"

"ओ माँ। लगता है लग गया हाथ कपाल पर।" और फिर साड़ी का आँचल पकड़कर कपाल पोंछने की कोशिश की तो गली हुई साड़ी खिचने से तंग आकर

फट पड़ी। हँसकर आरती ने कहा, "बला से फट गई तो। तार-तार न हो जाए तब तक मैं भी छोड़ने वाली नहीं हूँ इसे। और कपाल पर लाल टीका तो सुहाग की निशानी होता है न, फिर क्यों डरूँ इससे ? बैठो न मेरी ओर इस तरह दीदे फाड़कर क्या देख रहे हो ? तुम्हारे भैया तो किसी जरूरी मीटिंग में जाने की कह कर शाम की छुट्टी ही ले गए हैं।"

"मीटिंग ? वे तो डाक बाँटने गए होंगे न ?"

"सुसरी डाक बाँटने में लगता ही क्या है ? पर चिट्ठी देने जाएँगे किसी के यहाँ तो बात किए बिना टलते कहाँ है ? किसी निरच्छर की चिट्ठी पढ़ दी सो तो ठीक है, पर बिना पढ़े ही जान लेते हैं कि चिट्ठी किसकी होगी, और फिर पूछते हैं, 'ताऊ जी, जरा पढ़ो न। हेमेन्दर ही की है न चिट्ठी ? मजे में तो है। कब आ रहा है घर, और तब ताऊ जी के साथ दो बात इधर की, एक बात उधर की सुख-दुख की, ऊधो-माधो की न करें, तब तक रोटी कैसे हजम हो ? अगर अपना कोई काम हुआ तो आनन-फानन में डाक बाँटी और निपट लिए। यह लो, यह तो पूरी होगई किनारी। अरे, तुम अभी तक तो खड़े ही हो ? हाय रे तकदीर, बेचारी नीलम की तो मुसीबत ही हो जाएगी। मैं तो यही कहूँगी उससे कि किसी अंधे-लूले-लँगड़े का हाथ पकड़ ले, पर तुम्हारी छाया छूकर तो वह पागल हुए बिना नहीं रहेगी।"

नवनीत ने दरी बिछाते हुए कहा, "आपकी भतीजी नीलम जाने कब पागल होंगी, अभी तो यह सब काँड लेकर आप लोगों ने मुझे ही पागल बना डाला है। सूत न कपास, जुलाहे से लठालठी। आइए, स्वस्थ होकर आइए, तब सब बातें सुस्ता कर करेंगे।"

"अच्छा जी ! लगता है कमर कसकर लड़ने आए हो। पर बाबा, मैं तो पहले ही तुम से हार मान लेती हूँ।" और हाथ जोड़कर माथे के निकट लाकर वह भीतर हाथ-मुँह धोने और कपड़े बदलने चली गई।

नवनीत दरी पर बैठ गया। मकान जहाँ से शुरू होता है, उसके आगे खुला चौक है, और चौक के सीमान्त पर एक चौकोर चत्वर-स्तम्भ पर तुलसी की क्यारी लगी हुई है। तुलसी के स्तम्भ के चारों ओर बीच में छोटे-छोटे मन्दिरनुमा ताल बनाए हुए हैं, जिनके भीतर देवताओं की मूर्तियाँ हैं, और संध्या के बाद जिनमें घी के दिये जलाए जाते हैं। पास-पड़ोस के लोग भी दिये जला जाते हैं।

इस समय सफेद पांडु से पुती हुई तथा मंदिराधारों में हड़मिची के चमकदार लाल रंग से कोरी हुई तुलसी की यह पूजाशाला बड़ी ही भव्य और नयनाकर्षक लग रही है। आरती इसी चौक की किनारी को रंग रही थी। सारा आँगन भी कुमारी कन्या की तरह निराभरण किन्तु एक अनविद्य सौन्दर्य से भरा मन को मुग्ध कर रहा है। चौक के बाद ही पूरी चौड़ाई में फैला हुआ कमरा है, जिसकी ऊँची छत खपरेल से छाई हुई है। ऊपर के रंध्रों से पश्चिमाभिमुख सूर्य का प्रकाश लम्बी पतली सीधी नली-सा फर्श पर वलयाकार गिर रहा है। छत के ऊपर ही छाए हुए बबूल के पेड़ की हवा में थिरकती हुई शाखाओं की छाया इन्हीं रंध्रों से छन आकर प्रकाश के साथ ही फर्श पर नाच रही है। नवनीत के लिए सारा ही दृश्य बड़ा ही अजीब-सा है, पर वह इससे काफी परिचित हो चुका है, और आज तो वह एक नए परिचय के लिए व्यग्र है। उसने जेब से निकाल कर सिगरेट जला ली। उसके धुएँ में उसे तरह-तरह के चित्र दिखाई देने लगे।

अधर लाल किसी मीटिंग में गए हैं, सारी शाम की छुट्टी लेकर। यही तो अवसर है। आरती वकालत कर रही है नीलम की, पर उस व्याज से कहीं अपनी ही वकालत तो नहीं कर रही है? आरती ही ने तो कहा था उस दिन कि नारी के लिए स्वाभाविक और उचित यह है कि जिसे रोम-रोम से चाहो उसे प्रगट जीभ से अस्वीकार करो। आरती अशेष बुद्धिमती है इसमें तो उसे सन्देह कभी नहीं था, किन्तु जब से उसने आरती की पूरी कहानी सुनी है तब से उसका लोभ कुंडली खोल सौ फन फैलाकर उद्‌ग्रीव हो उठा है। कैसा संयोग, कैसा अवसर मिल गया अधर लाल को। नवनीत को कहानी स्मरण हो आई, किसी देश के निपूते राजा के एकाएक मर जाने से जब उसके वारिस का फैसला न हो सका तो तय किया गया कि कल प्रातःकाल राजद्वार पर जो भी पहला व्यक्ति पाया जाए उसे ही राज्य और राजकुमारी सौंप दी जाए। निश्चय ही अधर लाल भाग्य का धनी है, किन्तु धन को, ऐश्वर्य को सहेज रखने की क्षमता भी तो होनी चाहिए।

अधर लाल की पात्रता के बारे में भी वह काफी कुछ सुन चुका है। टीकू के साथ बातचीत में उसने बहुत कुछ मालूम कर लिया था और तब अधर लाल को शायद विवश होकर ही सारी कथा सुना देनी पड़ी थी। नहीं, दुराव नहीं, आत्मश्लाघा की संभावना ने ही उनको वह कथा कहने से विरत कर रखा होगा। इतना न्याय तो उनके साथ करना ही पड़ेगा। नीलम के समस्त रहस्य से भी

अब वह अवगत है। फ्रान्सीसी रक्त के अभाव में इतना ओज, इतना दर्प और साथ ही हृदय तथा शरीर की भी इतनी सुघराई और कोमलता अन्यत्र कहाँ मिलती ? अवश्य ही कोई राजनीतिक सभा होगी, और नीलम भी गई होगी उनके साथ। नहीं, अधर लाल को आरती नहीं, नीलम से विवाह करना चाहिए था। दोनों की गति-मति एक, रुचि एक, नृत्य-संगीत में दोनों ही विभोर, भावना एक। भक्ति और अध्यात्म में दोनों ही मुग्ध हो जाते हैं, उस दिन जन्माष्टमी के दिन गुसाँई-जी के पीपलिया गाँव के वैष्णव-मठ में अपनी आँखों देखा है उसने। और फिर देश-विदेश में जिस भावना और लक्ष्य के लिए अधर लाल जन्म से ही घूमते फिरते रहे हैं, उसी भावना और लक्ष्य को जन्म से ही अपनी घुट्टी में पीकर नीलम भी सहज ही यायावर हो गई है। उमर का व्यवधान भी आरती की अपेक्षा उसका ही कम होगा। और तब आरती नवनीत के लिए, केवल नवनीत के लिए अपने प्रेम-देवता की शुभ्रज्योति पवित्र आरती रह जाती है! आरती, नीलम, और स्वयं अधर लाल भी इसे महसूस न करते हों, ऐसे मूर्ख वे नहीं हैं। पर लोकाचार तो निभाना ही पड़ता है न। अधर लाल तो फिर आस-पास में एक छोटे-मोटे नेता ही माने जाते हैं। यहाँ की जनता में विश्वास जमाए रखने के लिए यह आवश्यक भी है। यों, क्या पता, नीलम और अधर लाल के मन में एक दूसरे के प्रति कोमल भाव की व्याप्ति हो, और अतिरिक्त सतर्कता से दोनों उसे छिपाए रखना चाहते हों ? क्या पता नवनीत से नीलम का परिणय संभव करने में ऐसे ही किसी कोमल भाव को तृप्त करने की ही दुरभि-संधि हो !

आरती को दरवाजे पर आया देखकर नवनीत जैसे ही सिगरेट मुँह से निकालकर बुझाने लगा तो आरती ने कहा, "अब मेरे लिए ही बेचारी अधजली सिगरेट की दुर्दशा क्यों करते हो ? मेरी पसन्दगी की बनिस्बत तो तुम्हें अपनी पत्नी ही की पसन्द का खयाल रखना अधिक लाभदायक होगा। समझे ?" और आगे आकर उसने एक कप-प्लेट चाय और एक प्लेट में बिस्कुट उसके सामने रख दिए।

नवनीत ने फर्श पर रगड़कर सिगरेट को बुझा दिया और कहा, "अरे, आप तो चाय भी ले आईं।"

"नीलम जैसा अतिथि-सत्कार इस गरीब के घर में संभव नहीं है देवर। न वह विलायती टीमटाम, न वे सलीके। सीख भी लेती, पर सीखूँ ही किसके लिए?

तुम्हारे भैया जो मिले हैं वे तो बिलकुल मिट्टी के माधो—शरीर से ही नहीं, मन से भी, किसी भी बात का शौक नहीं।" और वह भी जरा हटकर आँगन पर ही बैठ गई। अवश्य ही उसने इतनी-सी देर में शायद नहा भी लिया था और वस्त्र भी बदल लिए थे। गजब की फुर्ती ही कहनी चाहिए। इसी बीच नहाते-नहाते ही उसने चूल्हा लगाकर चाय के लिए पानी भी कर लिया होगा। कौन कह सकता है कि दिन-रात घर गृहस्थी के मोटे-महीन सभी कामों में मन पर बिना एक खरोंच लाए अनवरत, स्वेच्छा से पिसती जा रही यह अतुल सौन्दर्यशालिनी बुद्धिमती लड़की बचपन से अभी तक संस्कृति और संपत्ति से अटूट ऐश्वर्य में खेलती रही है।

"उनकी मीटिंग तो कोई राजनीतिक होगी ?" नवनीत ने पूछा।

"मैं तो तंग आगई इस राजनीति से देवर। कोई समझाता भी तो नहीं उन्हें। कठिनाई यह है कि जो समझाने चलता है वही उनका चेला होकर लौटता है। गए महीने जब से अंग्रेज सरकार ने असहयोग आन्दोलन के इन नेताओं को गिरफ्तार कर लिया है, तबसे ही इनकी सक्रियता बढ़ गई है, जैसे गाँधी बाबा सारी जिम्मेदारी इन्हीं पर सौंप गए हों। और देख रहे हो न, सब तरफ तो आग-सी लगी हुई है। कहीं डाकखाने-स्टेशन जल रहे हैं, कहीं बिजली के तार कट रहे हैं, कहीं रेलें उखड़ रही हैं। लखनऊ से भी तो लूटखसोट और आगजनी की खबरें आई हैं। गोलियाँ चलीं और खून-खराबा भी कम नहीं हुआ सुनते हैं। क्या सरकार ऐसे में चूड़ियाँ पहनकर चुप बैठी रहेगी ?"

"आपकी वे नीलम कुमारी भी तो साथ ही होंगी ?"

"चोर-चोर मौसरे भाई। उसके भी आगे-पीछे कोई नहीं। माँ-बाप भी इसी सनक में जान गँवा बैठे थे। पर इनके तो आखिर, बाल-बच्चा नहीं हुआ सो तकदीर की सिकन्दरी ही समझो, होते तो क्या निहाल हो जाते। पर तब भी घर में खाती-पीती जवान जोरू तो बैठी है।"

"नीलम कुमारी तो उन्हें समझा सकती हैं।"

"वह समझाएगी ? वह तो, उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे। मुझे ही समझाती है वह। कहती है मुँहजली, 'काकी, गृहस्थी का क्या खटराग लिए बैठी रहती हो यह हमेशा ? जो काम कुछ ही रुपयों के बदले हर कोई मामूली-सी औरत कर सकती है उसमें क्यों अपनी शक्ति खपा रही हो ? तुम्हें काका के कंधे

के साथ कन्धा भिड़ाकर देश का महानकाम करना चाहिए। वह काम तो तुम्हारे सिवा और कोई कर नहीं सकता।"

"कहती तो सच ही हैं वे भाभी।"

"खाक सच कहती है। क्या जाने वह विलायती मेम, कि पति की सेवा का काम मामूली नहीं, जनम-जनम की तपस्या के बाद मिलता है। और ऐसे पति को भिड़ाने के लिए कंधे की नहीं, युद्ध के मैदान से थके-माँदे लौटने पर नवजीवन प्राप्त करने के लिए प्यार भरी सेवा की एक संजीवनी की जरूरत होती है, और वह अपनी गृहस्थी में प्रतिष्ठित रात-दिन पति की हित-कामना में व्यस्त पत्नी के सिवा और हो ही कौन सकती है?—तुम्हीं कहो न, घर के लिए दीवार तो होनी चाहिए, पर उससे भी अधिक जरूरी क्या नींव नहीं है?—नजर नहीं आती, क्या इसीलिए उसे भूल जाना चाहिए?—तब दीवार टिकेगी ही कैसे!"

नवनीत का हृदय धकधक करने लगा। कैसे दृढ़ किले पर आक्रमण की सोच रहा है वह! उत्तर देता ही क्या? चाय के प्याले में ओठ डुबोकर वह अपने मन को संयत करने में लग गया।

आरती ने कहा, "छोड़ो इस-प्रपंच को देवर, अब! ऊखल में सिर दिया तो मूसल से कब तक कोई डरेगा?—तुम तो अपनी कहो! उस दिन तो नीलम सामने थी, न तुम ही साफ बात बता सकते थे, न मैं ही तुमसे पूछ सकती थी। और अब तो तुम उसके बारे में राई-रत्ती सब कुछ जान भी चुके हो। जात-पाँत का बखेड़ा तुम मानते हो, यह मैं यकीन नहीं करूँगी। चाहे शिकारपुर के स्नातक ही क्यों न बने रहो तुम।"

"पर भाभी मैं तो शादी करना नहीं चाहता न! आप तो जानती हैं, मेरा विवाह भी हो चुका है।"

"वह मैं खूब जानती हूँ। पर तुम्हीं तो कह चुके हो कि तुम्हारी उससे बनती नहीं है। वह तुम्हें फूटी आँखों देखना पसन्द नहीं करती।"

"पर आप ही तो कहती हैं, शादी-ब्याह तो जनम-जनम का रिश्ता है।" नवनीत हँसा।

"जनम-जनम का होता हो, क्या इसीलिए वह घड़ी दो घड़ी का नहीं हो सकता? कोई रिश्ता पुराना है तो स्पष्ट है कि वह नया भी था कभी किसी दिन, और उसको जनम-जनम का बनाने के लिए जनम बिताने पड़े हैं। अब इसमें क्या

आश्चर्य कि जनम-जनम का होने के पहले ही कई छोटे-मोटे रिश्ते न बनें-बिगड़ें।"

"तो आप तलाक, पुनर्विवाह आदि प्रथाओं को उचित समझती हैं ?"

"उचित-अनुचित का सवाल तो तब उठता है भाई, जब किसी बात का होना न होना उस पर निर्भर करता हो। जो बात है उससे कैसे इनकार किया जा सकता है ?—तुम्हारा ब्याह हो चुका है यह मुझे हरनाम ने ही बता दिया था। यह भी बताया उसने कि तुम्हारी बहू ही तुम्हें छोड़कर पीहर चली गई। भीतर क्या बात है सो मैं नहीं जानती, जानने की जरूरत भी नहीं है। इतना जानती हूँ कि जो रिश्ता मान-मनौवल तक हो, वह तो पति-पत्नी का है, पर मान-अपमान की भावना से ऊपर न उठ सके, वह विवाह के बावजूद पति-पत्नी का रिश्ता नहीं हो सकता।—कितने बीमार हो गए थे तुम, यह मैं ही जानती हूँ, पर एक दिन एक क्षण के लिए भी तो तुमने अपनी पत्नी को स्मरण नहीं किया। तुम्हारा उस पर अनन्य-निर्भर विश्वास ही नहीं है न। और न उस अभागिन ही ने स्मरण किया तुम्हें। इस बीच कभी कहीं से कभी एकाध पत्र का व्यवहार भी नहीं।"

"आपने तो भाभी, सारी समस्या को दो टूक करके रख दिया !—एक दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक और डॉक्टरी तीनों भूमियों से परखने पर जिस तरह कोई भी वेदना, आध्यात्मिक, मानसिक या शारीरिक कैसी भी क्यों न हो, छिप नहीं सकती, उसी तरह।—आपकी प्रखर-मुखर बुद्धि का परिचय तो परिचय के पहले ही क्षण में हो गया था—हाँ, उसी क्षण जब मैं पहली बार मानपुर में प्रवेश करना चाह रहा था, और आपने पनघट पर पानी पिलाकर मेरी प्यास मिटानी चाही थी। किंतु अधर भैया से आपका विस्तृत-परिचय पाकर भी यह पता न था कि आपकी अन्तर्दृष्टि इतनी गहरी, पैनी और स्पष्ट है।—पत्र मेरी पत्नी का एक मुझे मिला है। बताना चाहता था आपको। उस दिन आपके यहाँ गया भी इसीलिए था, पर आपसे भेंट हुई नीलम देवी के यहाँ। यह देखिये···" और नवनीत ने जेब से निकाल कर माया का पत्र आरती की ओर बढ़ा दिया।

फर्श पर पड़े पत्र की ओर आरती ने केवल दृष्टि-भर डाली और मुस्कराकर कहा, "मैं गैरों के पत्र नहीं पढ़ती देवर ! यह काम तुम्हारे भैया को मुबारक हो। लिफाफा देखकर मजमून भाँप लेने की जरूरत और सुविधा भी उन्हें ही है।—फिर पति-पत्नी के पत्र पढ़ने का तो कभी मन ही नहीं करता। इससे पत्र पानेवाले का चाहे न हो, पर लिखने वाले का तो अपमान होता ही है।"

"लेकिन मैं तो भाभी, गैर नहीं हूँ। देवर का अधिकार आपने दे ही रखा है। इसके अलावा पति-पत्नी की बात ही कहाँ रह जाती है जैसा कि आप कह चुकी हैं? यह पत्र रिश्ता बनाने वाला नहीं, बिगाड़ने वाला जो है।"

"वह तो मैं पत्र देखने के पहले ही समझ गई थी।"

"फिर भी डॉक्टर को रोग के हर लक्षण से परिचित तो होना चाहिए न। तभी तो रोग का सम्यक उपचार हो सकेगा।"

मुस्कराकर आरती ने कहा, "कुछ वैद्य जो नाड़ी देखकर ही सब कुछ जान लेते हैं, रोगी के मुँह से कुछ सुनना नहीं चाहते। रोगी सब कुछ तथ्य या सत्य ही कहेगा, इसका ही क्या भरोसा है? फिर मैं तो रामबाण औषधि बता रही हूँ न, एक दम रामबाण।"

"लेकिन आपकी रामबाण औषधि रामबाण साबित न हो तो?"

उसी तरह मुस्कराती रहकर आरती ने कहा, "इसमें रोगी की राय नहीं चलती!—और फिर अगर एक औषधि व्यर्थ हो जाए तो दूसरी औषधि का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्या?"

"यानी फिर विवाह?"

"हर्ज क्या है? आदमी को सुख पाने के अधिकार से कोई वंचित कर सकता है क्या?—जहाँ-जहाँ यह हठधर्मी की जाती है, वहीं समाज और जीवन में गन्दगी नहीं आ इकटठी होती?'

"किन्तु व्यक्ति हमेशा तो जवान नहीं बना रहता?"

"और उसकी आकांक्षाएँ भी एक जैसी नहीं रहतीं।"

"तब तो आपके मत से उसे एक ही साथ एक नहीं, अनेक विवाह करने होंगे।" वह हँस पड़ा।

"समाज ने यह भी जरूर कर देखा है देवर। पर सही हल यह नहीं था, और इसीलिए उसे छोड़कर समाज को आगे बढ़ जाना पड़ा है। एक ही साथ दो नावों पर कोई सवार नहीं हो सकता, भिन्न-भिन्न दिशाओं में जाने वाली नावों की सवारी तो उसके व्यक्तित्व को ही तोड़-फोड़कर खंड-खंड कर देगी। पर हाँ, जरूरत के मुताबिक एक नाव को छोड़कर दूसरी नाव में सवार हो जाने से यात्रा सहज, शीघ्र और सुविधाजनक हो ही सकती है।"

"जरूरत पड़ने पर आप भी नाव बदल लेंगी?"

"यही तो जीवनक्रम है देवर।—कितने आत्म-परितोष के साथ बिना किसी आशंका के पिता के घर में अपनी चारदीवारी को सारा साम्राज्य समझे मैं निश्चिंत राज्य कर रही थी कि एक ही झटके में तूफान की लहर ने उस बड़े भारी महापोत को आत्मसात कर लिया और जब तुम्हारे भैया ने यह छोटी-सी नाव सामने करके डूबने से मुझे बचा लिया तो इनकार कहाँ कर सकी?—खास बात नाव नहीं, खास बात जीवन जो है।"

"और अब अगर आपके सामने फिर कोई महापोत या बड़ी नाव आ जाए तो?"

आरती ने ठमक कर नवनीत की ओर देखा। नवनीत ने शीघ्र ही दृष्टि नीची करके प्लेट से एक बिस्कुट उठा लिया। आरती ने कहा, "लेकिन देवर, बात मेरी नहीं, तुम्हारी है। नाव की ज़रूरत भी तुम्हें है। मैं कह सकती हूँ कि नीलम सर्वथा तुम्हारे उपयुक्त पात्र है, और उसे पाकर तुम सुखी ही होओगे।" आरती ने बात को बढ़ाना उचित नहीं समझा।

लेकिन नवनीत ने जैसे कुछ सुना ही नहीं। उसने कहा, "बात टालिए मत भाभी।—आपकी बुद्धि का लोहा मैं मानता हूँ। बौद्धिक-स्तर पर बात करने की तृप्ति पहली बार मुझे यहाँ मिल रही है।"

हँस कर आरती ने कहा, "अपने पोस्टमैन से बौद्धिक स्तर पर बात करने में पोस्टमास्टर की ज़रूर इज्जत नहीं रहती। पर मेरी तो अक्ल का सारा खजाना वहीं का है देवर। मेरा अपना कुछ नहीं है, मैं चाहती हूँ, तुम इसी पर विश्वास कर सको।"

नवनीत अप्रतिभ हो गया। हृदय के भीतर जमीन कुछ बैठती-सी मालूम देने लगी, जेब से सिगरेट निकाल कर उसने कहा, "भाभी, माफ करना होगा, सिगरेट की तलब बड़ी जोर की हो गई है।"

आरती मुस्करा दी, "मैंने मना ही कब किया है?—पर सिगरेट कैसे किसी को अच्छी लगती है, मुझे तो यही ताज्जुब रहता है देवर। धुआँ फेंकना चाहे अच्छा दिखता हो, पर नाक और आँखों से दूर रहे तब तक ही, पास आने पर दोनों बहने लग जाते हैं। और पियक्कड़ हैं कि धुएँ को मुँह-नाक-आँख सब में भरे बड़े मजे से छोड़ते रहते हैं।—आँख से धुआँ निकाल सकते हो या नहीं देवर?"

"आज्ञा देंगी तो क्यों नहीं निकाल सकूँगा ?—पर इसमें भी साधना और तपस्या करना पड़ती है। देखिए—"

"ना ना, रहने दो। मैं, न तपस्या की और न उसके फल की ही कायल हूँ।"

नवनीत ने एक लम्बा कश खींच कर पीठ की ओर धुआँ निर्गत कर दिया। फिर सिगरेट की राख को चाय की प्लेट में झाड़ते हुए कहा, "आपने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया।"

"बड़ी नाव पा जाने पर छोटी नाव का क्या होगा, यही न ?—उत्तर तुम नहीं जानते, यह मैं नहीं मानती। लेकिन पूछते हो तो बताने में मुझे क्या एतराज हो सकता है ? पर तब भी वह मेरी ही बात होगी, दूसरे की नहीं भी हो सकती है।" और फिर नाखून से फर्श कुरेदती हुई कहने लगी—"मेरे सामने समस्या या सवाल नाव का नहीं है देवर।—सवाल है संतरण का, जीवन का, इस समुद्र में सतह पर तैरते जाने का, ताकि जीवन जीने योग्य बना रहे। नाव तो साधन भर है। नाव पा लेने के बाद सवार के लिए नाव की अहमियत नहीं रह जाती, अहमियत हो जाती है नाविक की, खिवैया की। उसकी पतवार, उसकी माँसल बलिष्ठ भुजाएँ, सागर की दुस्तर लहरों के बारे में उसकी अभिज्ञता, और उस अलीक-विस्तार में निष्कंप खेते रहने की उसकी सूझबूझ, साहस,—ये ही आरोही के विश्वास बन जाते हैं। और तुम नहीं समझ सकोगे देवर, यह समझ सीखी नहीं जा सकती, केवल अनुभव की जा सकती है कि तब सहसा ही अपनी भुजाओं पर भी सवार को विश्वास होने लग जाता है, तब वह खिवैया के साथ खुद भी उस नाव को खे ले जाता है।—पर हाँ, यह मैं मान लेती हूँ कि कुछ व्यक्ति नाव के लोभ को रोक नहीं पाते, पर तब वे अपनी भुजाओं का विश्वास भी कभी नहीं, पाते।—नीलम को मैंने भीतर-बाहर से खूब परख देखा है। उसे पाकर उसकी चाहत के पुरुष को और किसी स्त्री की कभी अपेक्षा नहीं रहेगी, यह मैं दावे के साथ कह सकती हूँ। और यदि यह कभी संभव न भी हो तो उससे विच्छेद कोई कठिन बात नहीं है।"

"आप कहती हैं कि कठिन बात नहीं है, इसलिए कि वह फ्रान्स में जन्मी, पली, बड़ी हुई है। उसके लिए न हो, पर मेरे लिए तो कठिन होगी ही। मैं तो भारतीय वातवरण की उपज हूँ न। फिर आपने ही तो उस दिन कहा था कि वह विलायती मेम आपकी जैसी प्रतिनिष्ठा को कहाँ से समझ पाएगी ?"

"किस प्रसंग में कही होगी यह बात मैंने, मुझे याद नहीं रहा देवर, किंतु नीलम को अब विलायती नहीं, भारतीय पैमानों से नापजोख सकते हो। इतनी भारतीय है वह, और इतनी गहरी तथा पैनी हो गई है उसकी भारतीय आध्यात्मिक रुचि, कि वह तो समस्त जीवन कृष्ण की मधुर भक्ति ही में बिता देने का संकल्प कर चुकी थी। कितना कठिन परिश्रम करना पड़ा है हमें उसके जीवन के भौतिक-प्रणय में विश्वास पैदा करने में। तुम नहीं जानते किन्तु इस कल्पना से ही मेरा अन्तर भर उठता है देवर, कि उसका प्रणयपात्र अनायास ही उसका आराध्य, मीरा का भगवान कृष्ण हो उठेगा।"

"पर वैसा शुभ स्फटिक का शालिग्राम होना तो मेरे लिए मुमकिन नहीं होगा न।—मैं मनुष्य हूँ और मनुष्य ही बना रहना चाहता हूँ। भगवान या ईश्वर के प्रति मुझमें न कोई लोभ है न कोई आग्रह ही।"

आरती ने एक लंबी साँस ली और चुप हो गई।—क्या कहे वह? विवाह के लिए कैसे किसी को विवश किया जा सकता है, और फिर प्रेम करने के लिए?—आखिर प्रेम-रहित विवाह की बात तो आरती स्वयं नहीं चाहती न।

कुछ समय नीरवता में बीत गया और नवनीत के विपुल धूम्र-संभार से भी नहीं भर सका तो वही बोला, "आप तो चुप हो गईं। कुछ कहती नहीं?"

"क्या कहूँ?—बड़ी कठिनाई से नीलम को तैयार किया था। सहज ही उसकी आसक्ति को मोड़ सकने का प्रयत्न इसलिए सफल हो गया था कि तुम उसे एक उपयुक्त पात्र जँच गए थे, और यह आशा उसमें जाग्रत करने का दोष ले बैठे।—पता नहीं, तुम्हारी विरक्ति का समाचार उसे कितनी गहरी चोट पहुँचाएगा। हो सकता है न भी पहुँचाए, और इसे वह सहज स्वीकार कर ले। पर तब भी मैं एकाएक उसे यह खबर नहीं दे सकूँगी। उसे अभी संन्यासिनी होने से बचाए रखना है।—तुमने तो देखा था न जन्माष्टमी की उस रात को वैष्णव-मठ में?—उसकी वह विभोरता किसी भी क्षण उसकी सारी चेतना को छा ले सकती है। यदि तुम भी साफ-साफ उसे तत्काल कुछ न कहो तो हम सबके ऊपर तुम्हारा उपकार होगा देवर। एक दिन धीरे-धीरे वह स्वयं सब कुछ जान ले यही ठीक रहेगा।"

"पर मेरी विरक्ति से आपको निराशा क्यों होनी चाहिए भाभी?—आखिर मैं विवाहित हूँ। हिन्दू होकर भी मेरे मन को आप न समझेंगी यह मैं नहीं मानता।

भारतीय आदर्श में तो प्रतिदान की भावना से मुक्त एकांगी-प्रेम की भी कम महत्ता नहीं है न।"

"बल्कि उसकी ही अधिक है देवर। तुममें वैसी उत्कट-भावना हो तो तुम जैसा पुरुष मेरे लिए श्रद्धा के योग्य है। पर मुझे लगता है तुममें वह उत्कट-भावना प्रेम की अनन्य प्रतीति नहीं है।"

"किस आधार से ऐसा कहती हैं आप?"

"ऐसी बातों का कोई भौतिक-आधार होता है क्या? और जैसे यह भाव आध्यात्मिक है, उसकी प्रतीति भी तो आध्यात्मिक होती है। पर जाने दो, आध्यात्मिकता के ऊपर कैसे विश्वास कर लिया जाए, यह सवाल भी तुम खड़ा कर सकते हो, और तब मुझसे जवाब नहीं बनेगा।"

"आपसे और जवाब न बने? तब तो यही कहना पड़ेगा कि आप जवाब देना नहीं चाहतीं।"

"देना क्यों नहीं चाहती, पर जहाँ जवाब ही नदारद हो वहाँ क्या किया जाए? अध्यात्म का कोई भौतिक आधार नहीं, और जब भौतिकवादी उसके बारे में सवाल करने लग जाए तो?"

सिगरेट का मानो अंतिम-सा कश खींचते हुए नवनीत ने कहा, "खैर, मुझे अपनी ही प्रतीति के लिए प्रमाण नहीं चाहिए। चाहे इसे मेरी कायरता कहें या अप्रगतिशीलता, विवाह मैं अब और करना नहीं चाहता। हाँ, अगर मेरी पत्नी दूसरा विवाह कर ले तो मैं शायद अपने मन को तैयार कर भी सकूँ!"

"तो अपनी पत्नी को क्यों नहीं बुला लेते? इस मिथ्या अभिमान में क्या रखा है?"

"यदि आप इस पत्र को पढ़तीं तो आपको स्पष्ट हो पाता कि यहाँ न कोई अभिमान है और न कोई मिथ्या ही। बस, सीधी-सी बात है कि मन नहीं मिला। और मन यदि स्वतः नहीं मिलता तो जबर्दस्ती ब्याह करके भी उसे मिलाया जा नहीं सकता। मानती हैं न?"

"मेरे मानने की बात जाने दो देवर! खैर, तुम्हारी समस्या तो हल हो गई, बल्कि तुम्हारी तो कोई समस्या थी ही नहीं। समस्या नीलम की भी नहीं थी, पर हमने एक झूठा सपना दिखाकर खड़ी जरूर करदी। दूर उसे भी करना ही होगा, पर इसमें भी यदि तुम्हारा सहयोग मिल सके तो कठिनाई

कम हो जाएगी।"

"मेरा सहयोग ?"

"सिर्फ इताना-सा, कि तुम अपना स्पष्ट इनकार उस पर एकाएक प्रकट न होने दो ! इसी बीच उसके मन को पुनः उसके पूर्व परिचित पथ पर लाने का प्रयत्न करना होगा। तुम बैठो, मैं जरा दिया लगा लूँ। आज तो यों ही बदली फैल गई है आसमान में, वरना वक्त तो इतना नहीं हुआ है कि दिया-बत्ती करदी जाए।" पर वह बैठी रही। शायद अब नवनीत बिदा लेने का प्रस्ताव करे। समय का ख्याल आखिर उसे भी तो होना चाहिए।

नवनीत ने हाथ घड़ी देखकर कहा, "कहाँ, सात ही तो बजा है अभी ? यों, पूरब के प्रान्तों में दिन कुछ जल्दी ही अस्त होता है, लेकिन इन दिनों तो हम आलोक-रक्षक समय का भी तो पालन कर रहे हैं !" और मुस्करा दिया।

आरती ने भी हँसकर कहा, "और व्यर्थ की बातों में आलोक-रक्षा की जगह इस तरह बरबादी करते हैं। यह तो गनीमत है, अच्छा-बुरा, सस्ता-महँगा मिट्टी का तेल मिल तो जाता है, वरना अँधेरे का राज्य सचमुच साकार बना रहता !"

नवनीत ने एक और सिगरेट निकाली तो आरती ने कहा, "लालटैन लिए आती हूँ मैं।" और उठकर वह और भी भीतर के कमरे में अदृश्य हो गई।

चाय का प्याला और बिस्कुट की प्लेट अभी भी रखे हुए थे। बिस्कुट की प्लेट में अब भी दो-चार बिस्कुट शेष थे, और चाय की प्लेट को ऐश-ट्रे की भाँति प्रयुक्त किया जा रहा था। सिगरेट लगा कर नवनीत ने ओठों में दबाया और पैर फैलाकर आराम की मुद्रा में बैठ गया। यदि आज के अवसर का उसने उपयोग नहीं किया तो फिर शायद अन्य अवसर उसे नहीं मिलेगा। अनायास ही आरती भी आज नीजम के प्रसंग से कुछ गम्भीर हो उठी है। अपनी बात कहने के लिए ऐसी ही पृष्ठभूमि तो चाहिए उसे !

एक पुराना कपड़ा और लालटैन लाकर आरती पुनः अपनी उसी जगह पर बैठ गई और लालटैन की धुँआई चिमनी खोल कर साफ करने लगी।

नवनीत ने कहा, "लेकिन भाभी, सच-सच कहिएगा, आपने मुझमें ऐसा क्या पाया कि नीलम के निकट आपने मेरी सिफारिश कर दी !"

"काँच में अपनी शकल कभी नहीं देखते हो क्या ?"

"काँच ही में क्यों, आपकी आँखों में भी तो देखता हूँ अपनी शकल !"

लालटैन की हँडिया पर आरती के हाथ सहसा थम गए। दृष्टि उठाकर उसने कहा, "मेरी आँखों में ? भ्रम तो नहीं हुआ कहीं तुम्हें देवर ?"

नवनीत ने उत्तर देने के पहले सिगरेट का कश खींचा और कहा, "भ्रम क्यों नहीं हो सकता, लेकिन भ्रम भी तो किसी का विकल्प ही होता है ! मेरा मतलब है—"

"जरा माचिस देना, मैं भीतर ही भूल आई !"

जेब से माचिस निकालकर आगे बढ़ाते हुए नवनीत ने कहा, "भूली नहीं हैं आप। वह उस पोंछने वाले कपड़े के नीचे छिप गई है !"

"ओ माँ ! पागल हुई जा रही हूँ न !" और उसने बढ़ाई हुई माचिस न लेकर कपड़े के नीचे से माचिस निकाली, फिर हँडिया को लालटैन में फँसाकर उसे जलाया, और नवनीत की ओर देखकर हाथ जोड़ती हुई बोली, "तुम्हारा मुँह देखा है देवर !"

"इससे क्या होता है ?"

"भय से और बुराई से रक्षा होती है ! अच्छा कहो, खाना बना लूँ ? अब यहीं खा लेना न।"

"नहीं भाभी। हरनाम को जवाब देना कठिन हो जाता है। हाँ, आप अपने लिए बनाइए। मैं चौके में बैठकर ही गपशप करूँगा ! आपका भी मन लग जाएगा !"

"नहीं। हम लोगों के लिए तो बनाया हुआ रखा है।" उठकर उसने लालटैन को जरा दूर रख दिया और फिर माचिस वहीं छोड़कर गन्दा कपड़ा उठा भीतर चली गई। जब लौटी तो उसके हाथ में कुरते की सिलाई के लिए खद्दर का कपड़ा और एक छोटा-सा बक्स था जिसमें सुई-धागा-फीता-कैंची आदि सिलाई का सामान था।

नवनीत ने कहा, "अरे, भैया के कपड़े क्या आप ही सीं लेती हैं ?"

नीचे बैठकर आरती ने लालटैन अपने पास सरका ली और कहा, "उनके ही क्यों ? अपने खुद के कपड़े भी मैं ही सींती हूँ। पास-पड़ोस का कोई आ जाता है तो उसका भी काम कर देना पड़ता है। इनकार तो किया नहीं जा सकता न ! क्या करूँ, मशीन खरीदना चाहती थी, पर ये तो मशीन का सिला कपड़ा पहनना नहीं चाहते, हालाँकि तुम्हारी सरकारी वर्दी न तो स्वदेशी कपड़े की होती

है न हाथ की सिलाई की !"

"यहीं तो हमारी मान्यताएँ खोखली साबित हो जातीं हैं ! प्रायः ही हमें अपनी इच्छा के प्रतिकूल काम करना पड़ जाता है न ?"

"मजबूरी से मान्यताएँ क्यों खोखली होने लगीं ? अपने सिद्धान्तों को कार्य-मय करने के लिए भी जीवित तो रहना ही पड़ता है, और तब जीवित रहने के लिए जीवन की आवश्यकताएँ जुड़ानी ही होती हैं !" और उसने सामने कपड़ा बिछाकर कैंची चलाना शुरू कर दिया।

कश खींचकर नवनीत ने पूछा, "भाभी, जीवन में आपको कोई अभाव नहीं महसूस होता ?"

"अभाव महसूस करने की फुरसत ही कहाँ है मुझे देवर !"

"यानी महसूस नहीं करतीं आप, पर अभाव है जरूर !"

नवनीत की ओर दृष्टि उठाकर उसने कहा, "मेरे अभावों को तुम महसूस करते हो क्या ?"

"मैं ही क्यों, जो भी आपको जान लेगा वही महसूस करेगा !"

"जैसे ?" मुस्कराकर आरती ने पूछा।

आरती की मुस्कान ने नवनीत को निरस्त्र कर दिया, पर उसने साहस करके कहा, "बच्चों के बिना यह गृहस्थी सूनी नहीं लगती आपको ?"

आरती कहकहा लगा उठी. "बच्चों के बारे में भी जानते हो तुम ? नहीं जानते। सुनी-सुनाई बात कहने से कोई लाभ नहीं। पर यह किसने कहा कि बच्चों के बारे में मुझे लोभ है ?"

"क्यों ? हर नारी के लिए यही तो स्वभाविक है !"

"पर मैं हूँ कितनी-सी बड़ी ? जानते हो ? सत्रह और छः, कितने तेइस हुए न ? यह भी कोई पिल्ले-पिल्ली पालने की उमर है ? फिर बेचारी औरतें खाएँ-पिएँ कब ?"

"जरूर खाने-पीने के दिन हैं आपके ! किन्तु यह सवेरे का बना हुआ खाना, हाथ का सिला मोटा कपड़ा पहनना—और फिर आपकी सूरत पर तो बड़ी-बूढ़ियों की गम्भीरता छाने लगी है।"

"सचमुच छाने लगी है क्या ? चलो, मेरी मेहनत सफल हुई। तुम बच्चों की कहते हो देवर, अब नीलम और तुम जैसे बड़े-बड़े बच्चे जिसे अनायास मिल

जाएँ, उसे कमी ही किस बात की ?"

"यह तो मन बहलाने की बात है भाभी !"

"तो मन बहलाने की बात कौन सी नहीं है दुनिया में ? सारा जगत ही तो गोरखधन्धा है !"

"आप ही कह चुकी हैं, मेरी दृष्टि इतनी सूक्ष्म नहीं है। मैं इस जगत को गोरखधन्धा नहीं मानता !"

"तो क्या हुआ ? जिसे और लोग मन बहलाना कहते हैं उसे तुम सच मानते हो न। तो फिर मेरे मन बहलने की बात ही को तुम मिथ्या क्यों मानते हो ? तुम्हीं क्या, तुम्हारे भैया में भी तो एक निपट शिशु की सरलता है। तुमने महसूस नहीं की ?"

नवनीत ने कहा, "अगर ऐसा है तो आपको पुरुषार्थमय पति-भाव का अभाव होगा !"

"क्या मतलब ? जरा साफ कहो !" आरती की वाणी में सहसा एक चमक जाग उठी।

सिगरेट का कश खींचकर नवनीत ने कहा, "माफ कीजिएगा, बुरा नहीं मान सकेंगी। बात के लिए ही बात है। आप कई बार मजाक में खुद बड़े रस के साथ कहती हैं कि आपके पति बूढ़े हैं !"

"सो ?"

अचकचाकर नवनीत ने कहा, "मनोविज्ञान कहता है कि मजाक में वे ही बातें मुँह से निकलती हैं जो अर्धचेतन मन में चेतना द्वारा दबा दी जाती हैं !"

"लेकिन मैं तो चेतन मन से मन की गहरी से गहरी परतों को उधेड़कर अपने ही सामने नहीं, सबके सामने रखती फिरती हूँ ? मेरे बचपन का हाल तुम नहीं जानते, पर मैं जानती हूँ। वह सब ऐश्वर्य से भरापूरा, पूर्ण और एक तरह कहना चाहिए राजसी ही था। कभी किसी वासना को मन की गहराइयों में गाड़ देने की मुझे जरूरत ही नहीं हुई। अपने पति को मैंने किसी प्रतिक्रिया या परिस्थिति की विवशता से नहीं, अपने मन के अमन्द उत्साह और काफी परीक्षा के बाद चुना है ! तुम नहीं जानते शायद कि परिस्थितियाँ बीत जाने पर मुझसे पूछा गया कि मैं किसके साथ विवाह करना पसन्द करूँगी !"

"मैं जानता हूँ वह प्रसंग भाभी ! और आपने भैया को ही पसन्द किया।

पर तब आपकी उमर ही कितनी थी ?"

"यही सत्रह-साढ़े सत्रह की ! और उसके बाद छ: वर्ष बीत गए हैं। अपने निर्णय पर हर क्षण मेरा संतोष और सुख गहरा ही होता चला जाता है। मेरे मन की शांति का प्रमाण तुम्हें नहीं मिलता ?"

"पर वह बानवटी भी तो हो सकती है !"

"तुम कहना क्या चाहते हो देवर ? साफ कहो न !"

"साफ कहूँ ? बुरा तो न मानेंगी न ?"

"बुरी बात न होगी तो बुरा क्यों मानूँगी ?"

"तो मैं कहना चाहता हूँ कि आप अपने मन को, अपने आपको धोखा दे रही हैं !"

"कैसे जरा सुनूँ तो ?" बड़ी शांति के साथ आरती ने कहा।

नवनीत की परीक्षा की घड़ी थी। जीवन का दाँव था, अभी या कभी नहीं ! सिगरेट का एक लम्बा कश खींचकर धुआँ उछालते हुए उसने कहा, "आप विश्वास कर सकेंगी ?"

"तुम जब धुएँ तक का विश्वास कर सकते हो, तो दूसरों के विश्वास की बात तुम्हें नहीं करनी चाहिए। तुम अपने ही विश्वास पर जो कुछ कहना चाहते हो निस्संकोच कहो।" और आरती ने कटे हुए कपड़ों की तह करके एक ओर रखना शुरू कर दिया।

नवनीत ने मानो कुछ नहीं सुना। चुटकी बजाकर उसने सिगरेट की राख तश्तरी में झाड़ी और कहा, "शहर में कुछ दरवाजे देखे होंगे भाभी आपने, जिन्हें खींचने या ढकेलने से ही खोला जाता है और जिन पर लिखा भी रहता है "पुल" या "पुश" !"

"सो ?" आरती रोशनी के सामने सुई के छेद को खड़ा करके धागा पिरोने लगी।

"क्या नारी का जीवन वैसा ही दरवाजा नहीं होता ?" आरती धागा पिरोने में व्यस्त रही, और उसने जब उत्तर नहीं दिया तो नवनीत ने कहना जारी रखा, "दरवाजा नहीं, मेरा मतलब है वैसे ही दरवाजे वाला कमरा ! दरवाजा तो वह पुरुष है जो हर नारी के जीवन में उसके बाहरी सम्पर्क का साधन बना हुआ है। सम्पर्क का साधन या असम्पर्क का साधन कह लीजिए,

क्योंकि स्प्रिंग के कारण वह स्वभावतः बन्द ही रहता है। खींचे बिना या ढकेले बिना वह खुलता नहीं !"

"यदि नारी का जीवन चारदीवारी है तो दरवाजा क्या वरदान नहीं है उसके लिए ?" पिरोए धागे के एक छोर को चुटकी में थामकर खींचते हुए आरती ने उत्तर दिया।

"बाहर की ताजी हवा का स्पर्श जब तक उसे नहीं मिलता तब तक तो अपनी निबिड़-जड़ता में वह उसे वरदान समझे रहती है—और भारतीय नारी की तो यह ट्रेजिडी ही है कि वह अभिशाप को ही वरदान समझ लेती है !"

हँसकर आरती ने कहा, "मैं तो इसीलिए तुम्हारा सम्बन्ध एक फ्रान्सिसी युवती से कराना चाहती थी कि तुम उसके जीवन-प्रकोष्ठ को एक खुला दरवाजा बना रहने देने का श्रेय लाभ कर सको, पर हाँ, संस्कार उसके भी अब भारतीय हो चले हैं पर यह तो कहो देवर, इसे अभिशाप मानता कौन है ?"

"सभी आधुनिक प्रगतिशील विद्वान्, समाज-शास्त्री कहते हैं, अब नारी चारदीवारी में बन्द नहीं रहने वाली है !"

"यानी समाज की सभी लड़कियाँ उच्छृंखल तितलियाँ, जैसे तुम्हारी मित्र शर्ली है, वैसी बन जाएँगी ?"

"शर्ली ? आप उसे कैसे जानती हैं ?"

कुरते की पट्टी को ठीक करते हुए मुस्कराकर आरती ने कहा, "जानने का क्या है ? महापुरुषों या महान नारियों को कौन नहीं जानता ?"

"मालूम देता है हरनाम आपसे बहुत कुछ सच-झूठ बकता रहा है। सिर चढ़ गया है !"

आरती ने नवनीत की वाणी के परिवर्तन को लक्ष्य किया और कहा, "कसूर उसमें हरनाम का नहीं, मेरा है; मैंने ही उसमें यह विश्वास जमाया था कि वह मुझे अपनी एक बहन मान सकता है। और फिर जिरह करके भेद की बात मालूम करने की जिम्मेदारी तो जिरह करने वाले पर है। अगर कुछ सजा हो तो वह उसे नहीं, मुझे मिलनी चाहिए !"

हँसकर नवनीत ने कहा, "आप जैसे वकील मिलने पर कौन उसे सजा दे सकता है भाभी ? खैर, आप जब शर्ली की सारी कहानी जान ही चुकी हैं तो यह भी जान लीजिए कि उसका अब तो विवाह भी हो चुका है। शायद इसी

महीने।"

"यानी उसने भी अपने जीवन पर एक 'पुश' और 'पुल' वाला दरवाजा लगा ही लिया ?"

"और हाथ से उसे खींच-ढकेल कर पकड़े रहने पर कोई भी बाधा नहीं रह जाती।"—

"किसी भी अन्य पुरुष के प्रवेश के लिए न !" आरती ने बात पूरी की मानो, 'और इस खींचने-ढकेलने के न्याय पर भरोसा करके ही तुम शायद अब और विवाह करना नहीं चाहते।—और क्या इसीलिए नहीं तुमने अपने बचपन में हुए विवाह को झुठला देना चाहा है ?—पर नवनीत बाबू, जंगल का न्याय भी इसी को कहते हैं। खैर, तुम्हारी बुद्धि तुम्हें मुबारक रहे।" और उसने कुरते की सिलाई में मन लगा दिया।

"कहा था न मैंने कि आप बुरा मान जाएँगी ?—कड़वी हो तो सच बात बुरी लगती ही है। दासता के संस्कार जड़ीभूत जो हो गए हैं नारी के।—पिंजरे में जीवन बिताने वाले पक्षी को जरा छोड़ दीजिए मुक्त आकाश में, घबरा कर वह पुनः उसी पिंजरे में आ बैठेगा। यदि दरवाजा बन्द हो तो उसकी सलाखों पर ही चोंच मारता बैठा रहेगा वहाँ, पर टलेगा नहीं।"

"उस बेचारे को झपट्टा मार कर नोच खाने वाले बाज का ही नहीं, अपने ही सगोतियों का भी भय जो है। सहायता और रक्षा कहाँ मिलती है उसे ?—बेचारी भेड़ जैसी नारी के लिए भी तो समाज में भेड़िये कम नहीं हैं।"

"लेकिन भाभी, सृष्टि का नियम है कि जीवित वही रहता है जो शक्तिशाली है। प्रकृति शक्ति की पुजारिणी है, वह भेड़ को नहीं, भेड़िये को ही जीवन के लिए चुनती है।"

"सृष्टि के नियम का अर्थ तुम्हारा शायद गलत है देवर।" मुस्करा कर आरती ने कहा, "सृष्टि-क्रम में भेड़िया शायद उस युग की उपज है जब जंगल के न्याय का प्रकृति में बोलबाला था। भेड़ विकास के क्रम में भेड़िये से आगे की कड़ी पर है, जब जंगल के न्याय के स्थान पर दुर्बल की संरक्षा का मानवी-न्याय प्रकृति में चलने लग गया था।"

"आपका मतलब है कि मानव-प्रजाति में विकास-क्रम में नारी नर के बाद की कड़ी है ?"

"विकास-क्रम की जटिल बातों को भला मैं अज्ञ नारी क्या जानूँ देवर ? जो कुछ सीखा है तुम्हारे भैया के चरणों में बैठ कर। कह सकते हो, एक पुरुष के रंगीन चश्मे से वही देखा है जो वह दिखाना चाहता था और उसी पर विश्वास किया है। नहीं, नारी और नर पैदा तो एक ही सीढ़ी पर हुए हैं किंतु केवल शारीरिक दृष्टि से। शायद शरीर की दृष्टि से तो विकास की सीमा मिल भी गई है। किंतु उसके विकास का क्रम, आगे का क्षेत्र यदि मन या अध्यात्म हो तो जरूर नारी एक क्रम आगे ही रहेगी।"

"आपके ज्ञान के आगे तो श्रद्धा से सिर झुक जाता है भाभी और उसका श्रेय चाहे, आप अधर भैया को दें या अपने अध्ययन और मनन-प्रियता को, किन्तु जीवन से इस ज्ञान का क्या उतना ही संबंध नहीं, जितना एक बड़ी लाइब्रेरी और जीवन में हो सकता है ?—लाइब्रेरी में वह समस्त ज्ञान भरा हुआ है, किन्तु प्रकृत-जीवन से उसका क्या संबंध है ?"

'यानी तुम्हारे भैया का मेरे प्रत्यक्ष जीवन से कोई संबंध नहीं ? तुम कहना क्या चाहते हो देवर ?—यह सारी बहस केवल बहस के लिए तो नहीं है और इसे अगर केवल अन्धी-अवरुद्ध गलियों में जाकर खत्म हो जाना है तो समय बरबाद करने से क्या लाभ है ?"

"आप ही तो इस बहस को अन्धी गलियों में मोड़ देती हैं।—और कहना मैं क्या चाहता हूँ ? आप और तो बहुतेरी बातें अनायास ही समझ जाती हैं, मेरे मन की बात ही आपसे क्यों छिपी रह गई ? क्या यह मेरा दुर्भाग्य नहीं है ?"

"मेरा दुर्भाग्य है कि वह मुझ से छिपी नहीं है, किंतु मैं मानव की सदाशयता की कायल हूँ नवनीत बाबू।—मानव मूल में पशु है, भेड़िया है, किंतु विकास करके अपने पशु को वशवर्ती करता हुआ वह दिन-ब-दिन मानव बनता चला जा रहा है, इनसान बनता चला जा रहा है। यही उसकी सभ्यता है और इसी में उसका गौरव है। मैं तुम्हारे मुँह की बात तुम्हारे ही मुँह से सुनना चाहती हूँ।"

"हैवान हो या इन्सान, पुरुष सदा पुरुष है, और नारी सदा नारी ही। सभ्यता की कितनी ही परतें उन पर क्यों न चढ़ती चली जाएँ, ज्ञान-विज्ञान के कितने ही आड़े-बाड़े उनके चारों ओर क्यों न लगा दिए जाएँ, उनके बीच का संबंध उसी आदिम प्रेरणा पर परखा जाता है। मैं आपको प्यार करता हूँ भाभी, शरीर के निचले स्तर पर नहीं, मन या आत्मा के ऊँचे से ऊँचे स्तर पर, आप उसे जिस

किसी भी स्तर का नाम दे सकें उस स्तर पर। और मेरा यह साहस इस आधार पर है कि आप भी मुझे प्यार करती हैं चाहे आपने कितने ही बलपूर्वक अपनी इस अन्तरतम की भावना का गला क्यों न घोट दिया हो।—जबसे आपने मेरे जीवन को स्पर्श किया है, मेरे जीवन के शून्य में आप इतनी व्याप्त होती गई हैं कि उसमें से मेरी पत्नी का रहा-सहा मोह भी रीतने को विवश हुआ है, और नीलम देवी क्या, किसी भी देवी की वकालत वहाँ काम नहीं कर सकती।"

"कह चुके अपनी बात? शेष मत रखना। फिर कभी शायद इतना मुखर होने का अवसर न मिले।"

"शायद न मिले।" और उसने हाथ की सिगरेट को तश्तरी में चकनाचूर करते हुए कहा, "पौरुष और नारीत्व का एक विराट् समारोह हम दोनों मिल कर प्रस्तुत कर सकते हैं भाभी। मेरी क्षमता को यदि आप जैसी साथिन के पंख मिल जाएँ तो किस अतीन्द्रिय लोक को हम विजय नहीं कर सकते? विवाह के जीर्ण और रूढ़ि-जर्जर बंधनों को आप भी नहीं मानतीं, मैं भी नहीं मानता। यदि आपको यहाँ रहने में संकोच होता हो तो हम यहाँ से कहीं पर भी अन्यत्र जा कर अपनी गृहस्थी बसा सकते हैं, मैं आपकी सुविधा और सुरक्षा की सारी जिम्मेवारी अपने कंधों पर बड़े आत्मविश्वास के साथ लेता हूँ। आप इस तरह किसी हीन, अभावग्रस्त गृहस्थी की दिन-रात पिसने वाली दासी नहीं, एक सभ्यजनोचित सुविधा और ऐश्वर्य से भरीपूरी गृहस्थी के विपुल साम्राज्य की राजरानी बन कर रहेंगी। आपको पाकर अगर जीवन में मेरी कुछ आकांक्षा शेष न रह जाएगी, तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मुझे पाकर आपको और कुछ पाने का लोभ न रह जाएगा।"

आरती अपनी सिलाई में व्यस्त रही और सुनती रही। अगर उसे आघात पहुँचा हो तो उसने उसे व्यक्त नहीं होने दिया। एक ओर की सिलाई समाप्त होने पर उसने सुई-धागे को दाँतों के बीच दबा लिया और कुरते के दूसरे बाजू को सींने के लिए सामने फैला दिया।—जैसे सामने कोई बैठा ही नहीं, कुछ हो ही नहीं रहा है।

नवनीत को ठंडी हवा के बावजूद पसीना छूट रहा था। आरती की इस ठंडी-ठोस-प्रतिक्रिया से वह और भी उत्तेजित होकर बोला, "आपके पति आपके अभाव को अधिक महसूस नहीं करेंगे। मुझे आश्चर्य न होगा यदि आपके आसन छोड़ते

ही नीलम देवी उस पर बैठ जाएँ। राजनीति से उन दोनों का खून का रिश्ता है, और आन्दोलन की इस आँधी में वे दोनों ही अपनी सुध-बुध भूल कर व्यस्त हो जाने वाले हैं। यदि उन दोनों में कोई शारीरिक या मानसिक संबंध-स्पर्श रहा भी हो और आप और मैं यदि उसे लक्ष्य न कर पाए हों, तब भी कोई आश्चर्य की बात न होगी भाभी।"

आरती ने कहा, "तुम मेरे पति का अपमान कर रहे हो नवनीत बाबू।" और सिलाई का कपड़ा उसके हाथ से नीचे गिर पड़ा।

"आपने कहा न, शायद कहने का फिर कभी अवसर न आए। कितने दिनों से साहस संचित करता रहा हूँ, तब कहीं जाकर आज कहने का अवसर पाया है।"

"यही तुम्हारी कायरता का प्रमाण है। और इस बात का भी कि तुम कितने अपदार्थ हो। तुम्हारी इस वृत्ति को मैं बहुत पहले से पहचान गई थी—उस पहली मुलाकात के दिन ही जब उस पनघट पर मेरे सामने तुमने अपनी प्यास बुझाने का नाटक किया था। मैं जान गई थी, तुम्हारी वह प्यास कभी बुझने वाली नहीं है। नारी चाहे जितनी अज्ञ क्यों न हो, भेड़िए की हिंसक दृष्टि को पहचानने में वह कभी गलती नहीं करती। और इतने पर भी मैंने जो तुम्हें प्रश्रय दिया वह इसलिए नहीं कि मुझे तुम्हारे प्रति कोई लोभ था, बल्कि इसलिए कि मैं नारी हूँ और सेवा करना नारी का कर्तव्य है। हिंसक और भूखी दृष्टि से मैं कभी डरती नहीं, मुझे अपने दृढ़-वर्म पर अटूट विश्वास जो है। इसीलिए रात्रि की इस एकांत बेला में तुम्हारी भूखी दृष्टि का परिचय पाकर, निरीह गाय की तरह निस्सहाय अकेली भेड़िए के पंजे में बैठकर भी मैं भय अनुभव नहीं करती। क्रोध भी मुझे तुम पर नहीं होता, नहीं तो आँखें लाल करके तत्काल यहाँ से चले जाने का आदेश मैं तुम्हें दे सकती थी। तुम जैसे कायर को एक घुड़की काफी है ताकि तुम फिर कभी इधर मुँह न कर सको। नहीं, क्रोध नहीं, मुझे तुम पर दया आती है। तुम अपनी शारीरिक शक्ति के मद में अन्धे एक आबोध बच्चे हो, नितांत बच्चे, जिसकी बेवकूफी भरी तुतलाहट और चीख-चिल्लाहट बुजुर्गों के दिल बहलाव का कारण बनती है। क्रोध करके तुम अपनी ही हानि करोगे, उससे मेरा कुछ बिगड़ेगा नहीं। समझे?"

नवनीत को सचमुच क्रोध हो गया था, पर अपने ही ऊपर। उसने सहसा ही उठते हुए कहा, "आपने प्रत्यक्ष न सही, परोक्ष रूप से तो कह ही दिया कि

तत्काल मुझे यहाँ से चले जाना चाहिए। ठीक है चला जाता हूँ। आपने मुझे चुनौती दी है भाभी। आप चाहे जितने बल से अपने मन के चोर को दुबका दें, वह एक दिन कब्र फोड़ कर उठ खड़ा होगा और आपसे विद्रोह करके अपने उत्पीड़न का बदला लेकर रहेगा। यदि आप पागल न हो उठें तो देखता हूँ किस तरह अपने व्यक्तित्व की गरिमा को बनाए रख सकती हैं? अच्छा नमस्ते। शायद अब और नमस्ते करने का अवसर न आए। जाते समय एक बात और कह जाना चाहता हूँ भाभी। मेरे प्राण बचाकर आपने मुझ पर अहसान किया था। शायद आप उस बेला मुझे मर ही जाने देतीं तो अतृप्ति का यह गहरा दंड मुझे न भुगतना पड़ता। आज आपने मेरे दिल के रहे-सहे आधार को भी तोड़ दिया है। जहाँ से मुझे एक दिन प्राणों की स्फूर्ति मिली थी, वहीं पर आज मैं अपने उन्हीं प्राणों का समग्र सार छोड़कर जा रहा हूँ। अब आपका मुझ पर कोई अहसान नहीं रह गया है भाभी। इस घर का दरवाजा तो अपने लिए बन्द हो गया ही समझूँ न!"

"यह तुम्हारी ही इच्छा का फल होगा। मुझे अपने ऊपर इतना विश्वास है नवनीत बाबू कि तुम्हारी सब बातें मेरे लिए एक बच्चे के व्यर्थ प्रलाप के समान भूल जाने के लिए हैं। आओगे तो तुम्हारा सदैव के समान स्वागत है। यह दरवाजा "पुल-पुश" वाला नहीं है।"

नवनीत ने उत्तर नहीं दिया। बाहर दरवाजे पर रखे पम्पशू में पैर डाले, और वह सड़क पर हो लिया।

नवनीत की मूर्छा टूटी तो हरनाम को गीली पट्टी सिर पर रखे सिरहाने बैठे देखकर उसने पूछा, "कौन?"

"मैं हूँ सरकार, हरनाम।"

"हरनाम? ओह। यह तो मथुरा का भैरव मंदिर ही है न।"

"वहीं तो हैं मालिक। आपकी तबीयत अब कैसी है?"

"क्यों? क्या हुआ मेरी तबीयत को हरनाम?"

"बहुत तेज बुखार हो आया है न। सबेरे जब से लौटा हूँ—"

"सबेरे! अभी क्या साँझ हो गई है?"

"साँझ तो नहीं, पर दूसरा पहर बीतने को है। दवा की खुराक ले लीजिए

न एक ?"

"अभी ! पर वह तो सोने से पहले लेनी है न ?"

"अगर आपको बुखार न आता। कितना तेज बुखार था ? सारा दिन बर्राते रहे हैं न मालिक ?"

"बर्राता रहा हूँ !"

"बहुत तेज बुखार में यही तो होता है। गीली पट्टी पर पट्टी बदलने से भी कम नहीं हुआ था न। डॉक्टर बाबू को खबर कर आने की भी सोची थी, पर आपको अकेला ही इस हालत में कैसे छोड़यर जा सकता था।"

"पर तू तो चिट्ठी लेकर गया था न।"

"हाँ मालिक। महरी को दे आया था, कह आया था कि बहूरानी के आते ही उन्हें दे दे ! उनके पतिदेवता बहुत बीमार हैं यह भी कह दिया था उसको।"

'पतिदेवता!' नवनीत को स्मरण हुआ, हरनाम ने कहा था। सवेरे गया था। अब साँझ होने जा रही है। पतिदेवता वह अगर होता तो कोई उसकी चिट्ठी की, उसकी बीमारी की चिन्ता में अपनी व्यस्तता अनुभव करता। देवता उसने अपने आपको कभी नहीं माना किन्तु पति ? माया ही जाने। और उस रात आरती के घर से गहरी फटकार के द्वारा निकाला जाकर कहाँ रहा वह पति भी ! पति ! इन्सान भी रह गया क्या वह ! वही तो उसके पतन की पहली रात साबित हुई। गीली पट्टी पर रखे हरनाम के हाथ को अपने कपाल पर अपनी हथेली से दबाकर उसने फिर अपनी आँखें बन्द करलीं।

हरनाम ने साहस करके कहा, "हजूर, एक बात कहूँ !"

"कह, क्या कहना चाहता है !"

"आरती बहन और नीलम देवी जी भी यहाँ मथुरा में ही मौजूद हैं।"

"हुआ करें। मेरा और तेरा इससे क्या बनता बिगड़ता है ! मथुरा में कौन कौन नहीं रहता ? कि इन दोनों का यहाँ रहना ही सब कुछ हो जाएगा ?"

हरनाम नवनीत की बात का तात्पर्य नहीं समझा। अपनी ही रौ में कहता रहा, "खत देकर लौट रहा था तो गोपाल जी के मन्दिर में दर्शन करने के लिए चला गया। वहीं दोनों से भेंट हो गई थी। आपके बारे में पूछा भी था।"

"कह नहीं दिया कि भैरव के चरणों में चढ़ा ही दिया गया हूँ। पूछने को तब क्या होगा ?"

हरनाम ने साहस करके कहा, "मैंने जब आपकी इस बीमारी की खबर सुनाई तो आरती बहन तो रोने लग गईं—"

नवनीत ने उसे बीच ही में रोक कर कहा, "चुप भी रहेगा अब! मैं भी जानता हूँ तेरी आरती बहन को। जिसका डसा न जी सकता है, न मर सकता है, वह नागिन होती है स्त्री। औरतों के आँसुओं की लीला काफी देखी है मैंने। मेरे सामने किसी आरती-फारती का अब नाम न लेना। अगर तुझे यह घर पसन्द न हो, तो यह रास्ता पड़ा है तेरे लिए जाने को।" और मानो इतना बोल-बोल कर ही वह थक गया। हरनाम की हथेली पर से उसने अपना हाथ उठा लिया किन्तु हरनाम ने दूसरे हाथ से नवनीत की मुट्ठी थाम ली। यदि नवनीत की आँखें खुली होतीं तो देखता वह कि हरनाम की आँखें इस व्यर्थ के अभियोग से भर आई हैं।

हरनाम ने किया ही क्या है?—बेचारा हरनाम, क्या जाने वह कि आरती उसके मालिक के जीवन का कितना बड़ा अभिशाप बनी है?—उसी की फटकार खा कर तो नवनीत उस रात मिट्टी हो गया।—वह रात—नवनीत की आँखों में फिर तैर आई।

आरती के घर से फटकार खाकर दुतकारे हुए कुत्ते की तरह नवनीत बाहर निकला तो बाहर के विराट् अंधकार ने उसका स्वागत किया था।—लड़ाई के दिनों में रात को रोशनी नहीं की जाती थी। अंधेरा भी मानो मुखर होकर अपना ही गीत गाता चलता है, और हवा उसको ताल देती है। किन्तु दिवाली नजदीक थी। जनता को न तो देश की विषम स्थिति से सीधा परिचय था, न ही युद्ध की विभीषिका से, सिवा इसके कि हर चीज का दाम बाजार में बढ़ गया है और कई वस्तुएं जिन्हें वे रोज काम में लाते थे, बाहरी मुल्कों से आती हैं। देहातों की जनता बच्चों की मनोवृत्ति के समान होती है, न उसे सक्रिय राजनीति से वास्ता रहता है, न सीधे अर्थशास्त्र से।—कस्बे का वह भाग जिसे बाजार कहते हैं, जरूर चहल-पहल से भरा हुआ था। आतिशबाजी की दुकानें सजने लग गई थीं, और इधर-उधर पटाकों के धमाखों से बच्चों का उल्लास फूट पड़ता था। कई घरों में दशहरे के दिन से दिवाली तक एक-एक दो-दो दिए जलाने की प्रथा है। किन्तु नवनीत की वृत्ति दिवाली के अनुकूल नहीं रह गई थी। उसे

अपना परिप्रेक्ष्य खिसकता हुआ अनुभव हो गया था। वह किसी भी तरह के वास्तविक या प्रतीकात्मक प्रकाश से बचना चाहता था। बाजार से बच कर वह गलियों में निकल पड़ा, और अनजाने ही कस्बे के उत्तर-पच्छिम छोर से समानान्तर एक नीरव सुनसान मार्ग पर उसके पैर पड़ गये।

मानपुर में जब उसने पहले पहल कदम रखा था, तब सब कुछ अंधकार ही अंधकार तो था। माया का प्रत्याख्यान था, शर्ली ने भी उसे निराश कर दिया था और कार्यालय ने भी एक अत्याचारी अंग्रेज का पक्ष लेकर, उसे अवनत कर दिया था। सभी कुछ उसे केन्द्रच्युन करने के लिए काफी थे, किन्तु तब भी उसका परिप्रेक्ष्य बना रह गया था, बल्कि मानो किसी क्रूर-परीक्षा से सफल निकल आने से उसका परिप्रेक्ष्य और भी निखर आया था—जरा मानसिक और शारीरिक स्फूर्ति पाले तो वह नौकरी से त्यागपत्र देकर किसी शहर में नए सिरे से जीवन प्रारंभ करेगा। पर यहीं मानपुर में ही अनायास कैसे कहीं से मकड़ी का जाला उसके चारों ओर अलक्ष्य तनता चला गया कि उसकी गति-मति ही कुंठित हो गई। जाले के मनमोहक शिल्प और आवरण से मुग्ध हो कर उसने चाहा था कि किरणों की इस सेज को अगर वह बाहर से समेट ले तो वह उसका एकच्छत्र उपभोक्ता हो सकता है। किन्तु जरा-सा खींचते ही किरण का प्रकाश तो परावर्तित हो गया, और रह गया चारों ओर लसलसे गन्दे धागों से तना हुआ यह निर्जीव जाला।—तोड़ फेंक सकता है उसे वह, पर वह तो उसके सारे बदन से जो चिपक गया है।

नहीं, मानपुर में उसके जीवन को सफलता नहीं मिली। वह यहाँ एकदम व्यर्थ हो गया है। अवश्य मानपुर उसके जीवन का लक्ष्य नहीं था, किन्तु एक तूफान से बचने के लिए कुछ समय के लिए ही सही, उसने यहाँ के तट से अपनी नाव की रस्सियाँ अटका दी थीं, लंगर डाल लिया था, ताकि मौसम अनुकूल होते ही वह अपने अनन्त विस्तृत मार्ग पर लग जाए।—बीच में मौसम अनुकूल हुआ भी, किन्तु इसी बीच कुछ और रस्सियाँ नाव से आ बँधी थीं। एक तरह से भूल ही गया था वह कि उसकी मंजिल यहाँ नहीं, कहीं दूर है।—और इधर यह भीषण तूफान उसकी सभी रस्सियों को काट गया, वे समस्त लंगर जिन्हें वह भारी अडिग समझता था, तृणांकुर की तरह बह गए और यह सब कुछ कर दिखाए एक नारी ने।—एक सामान्य-सी क्षुद्र नारी ने।

सामान्य-सी क्षुद्र नारी ? आरती क्या सचमुच सामान्य क्षुद्र नारी है ?—कौन कर सकता है उससे समता ? और मनोविज्ञान के सामान्य अवरुद्ध सिद्धान्तों से, क्लोज्ड सिस्टिम से परखने चला था वह उसको। वही असाधारणता तो अधर लाल से उसके विवाह का कारण है।–विवाह चाहे न हुआ हो, इसीलिए तो वह उसे स्वयंवर कहती है। तभी उसकी असाधारणता नवनीत पर व्यक्त हो जानी चाहिए थी। और अधर लाल ही कौनसा सामान्य व्यक्तित्व है ? जिस तरह नितांत साधारणता की आग में लिपटी आरती निकली, उसी तरह पोस्टमैनी की अत्यंत ठंडी भस्मी से आवृत सारे विश्व में अपना तेज फैला देने वाली आग का गोला नहीं है वह ?—तभी तो नीलम जैसी जोन ऑफ आर्क, टीकू जैसा रॉबिन हुड उनके प्रभाव में उन्हीं के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहे हैं। स्वयं वह भी क्या एक अति-परवलीय वृत्त में निरुद्देश्य घूमते हुए धूमकेतु-सा नहीं इस सूर्य के गुरुत्वाकर्षण-कक्ष में विवश हो गया था ?—उसका निजका महत्व ?—चमकती रह कर भी धूमकेतु की लांगूल किस मर्ज की दवा है ?—चमकती भी तो वह सूर्य की विपरीत दिशा में ही है, और मजे की बात यह कि उसी से प्रकाश पाकर चमकती है न वह।

कहाँ आ पहुँचा यह वह ?—पनघट.........नहीं, वह पनघट नहीं है। है वैसा ही, पर परिवेश सारा दूसरा है। कहाँ है वह सड़क ?—कहाँ है वह वृक्ष जिसके नीचे वह विश्राम कर रहा था।—सारा ही परिप्रेक्ष्य बदल गया है, उसी तरह जिस तरह स्वयं नवनीत अपने परिप्रेक्ष्य को खोकर आज नितांत अपरिचित हो उठा है अपने ही लिए।—बस्ती पीछे रह गई है। कच्ची डगर भर है गाड़ियों के आने-जाने की। दोनों ओर खेतों की पंक्तियाँ हैं, सियालू-फसल से खेत लहलहाते रहे हैं, अवश्य ही अँधेरे में उनकी हरियाली नहीं दिखाई देती। उसके हृदय की सहज रंगीनी पर भी तो रात की इस कालिमा का पर्त चढ़ा हुआ है।—झिल्ली की झंकार और इधर-उधर मालिक के बंधन की अवज्ञा करके खूँटा तुड़ाए हुए कुछ पशु, उसके हृदय में अनायास अधिकार जमा बैठनेवाली पशु-प्रवृत्ति के समान ही, पराए खेतों में मुँह मार रहे हैं।

संध्या को जो कुछ शरद के बादल आकाश के मैदान में हवा की ताल पर नाच रहे थे, अब थक कर सो गए हैं। सारा आकाश घन-नील निरभ्र हो गया है, और चारों ओर छोटे-बड़े असंख्य तारे टिमटिमाने लग गए हैं। सामने—

नहीं, सप्तर्षि अभी क्षितिज के नीचे ही होगा। ध्रुव नक्षत्र अवश्य वह वहाँ है, छोटे सप्तर्षि या छोटे भालू की पूंछ में टिमटिमाता हुआ। सप्तर्षि की जगह ले रखी है इस कश्यप-राशि ने।—कितना साफ है सारा वातावरण कि विपुल ब्रह्मांड के लाखों प्रकाश-वर्ष दूर के नक्षत्र-लोक देखे जा सकते हैं, केवल नवनीत का हृदय ही धूमिल मटमैले रजकण से इस तरह छाया हुआ है कि गहराई तो गहराई, सतह की भी कोई चीज साफ नहीं दिखाई देती।—कई छोटे-मोटे भूकम्प, कई ज्वालामुखी उसके हृदय को झकझोर गए हैं, और इसके फलस्वरूप कई हिमालय, कई महासमुद्र, कई अँधेरी गहरी कंदराएँ वह अपने व्यक्तित्व के दृढ़ कवच के नीचे छिपाए जीवन का विस्तार नापता चला आ रहा है। किन्तु आज का यह आरती का अपकर्षण, लगता है, एक ऐसे भूमिकम्प का कारण हुआ है कि उसके भीतर के विशाल हिमालय तो धराशाई हो ही गए हैं, और उसके व्यक्तित्व के दृढ़ वर्म को फोड़ कर भीतर की अग्नि भी जगह-जगह उबल पड़ी है, पर अंतरिक्ष की इस विपुल यात्रा पर वह कहीं केन्द्र-च्युत तो नहीं हो गया है? तभी तो अनायास ही वह एक ऐसे स्थान पर आ पहुँचा है जहाँ कभी वह आया ही नहीं।

आगे बढ़ने की राह विशद नहीं है। पनघट तक लोगों का आना-जाना बना रहता है। पैर स्वयं अपना मार्ग बना लेते हैं। पैरों की प्रखर धारा बाधाओं को नहीं मानती। पनघट के आगे विरल जन-संचार के कारण चारों ओर से बढ़ती आ रही खेतों की बाढ़ ने बीच में केवल बैलगाड़ी के आने-जाने योग्य संकीर्ण मार्ग ही रहने दिया है। मार्ग के दोनों ओर कँटीली बाड़ लगी हुई है ताकि कोई नवनीत जैसा उच्छृंखल-तत्व मेहनत से खेतों में पैदा की हुई कोमल पौध पर मुँह न मार बैठे।

किसी अंतः प्रेरणा से परिचालित नवनीत पनघट की जगह पर जा पहुँचा। उसने देखा कि कुआँ केवल पनघट का ही काम नहीं देता, वह किसी खेत का भी भाग है और उससे खेत की सिंचाई भी होती है। जहाँ चारों ओर पानी भरने-वालियों के लिए पत्थर की आड़ लगी हुई है, खेत की दिशा में बँधी हुई है पक्की जगत! दिन को खेत की सिंचाई के लिए चरसा चलता है। अँधेरे में भी नवनीत को लगा कि पास ही रंग-बिरंगे फूलों के पौधों पर अफीम की फसल लहलहा रही है।—हवा में फैली एक मादक गंध से विभोर होकर वह कुएँ के ढाने पर

रहँट के नीचे बैठ गया। पैर उसने कुएँ में लटका दिए, जरा झुक कर देखा, कुएँ की अचंचल शुभ्र सतह पर नीलाम्बर का शीर्ष भाग तारों की बारात के साथ जगमगा रहा था।

ऊपर रहँट है, जिसमें रस्सी के लिए खाँचा प्रयोग के साथ चिकना और सपाट होता गया है, नीचे भ्रमणशील बेलन में ऐसे कोई खाँचे न होने पर भी रस्सी के निशान बन गए हैं। और लकड़ी पर ही क्यों, इधर पत्थर पर भी तो घर्षण के कैसे गंभीर निशान बन गए हैं ?—बोपदेव के समस्त जीवनक्रम को ही मोड़ देने वाले घर्षण के इन चिह्नों में इस गंभीर कूप का ही समस्त रस नहीं छिपा हुआ है, बल्कि गाँव के इस अंचल की रमणियों के समस्त आमोद-प्रमोद, आशा-निराशा, उनके हृदयों का अमृत-विष सभी तो भरा हुआ होगा।—हाथ से उनका गुदगुदाने वाली सफाई का स्पर्श करके ही नवनीत का अचेतन तक रोमांचित हो उठा।

लगभग ऐसा ही तो था वह पनघट भी जहाँ से उसके मानपुर के जीवन की एक दुराशा उदित हुई थी।—आज इस पनघट पर उसका अवसान हो रहा हो तो यह क्या उचित नहीं है ? उस पनघट का वह प्रभातकालीन रंगीन इंद्रजाल उसकी स्मृति में आज भी धुँधला नहीं हुआ है। आरती की रूपच्छटा में यौवन के भोलेपन का उन्माद छाया हुआ था। उसी उन्माद के पीछे तो तब नवनीत का मन पागल हो उठा था। किन्तु उस भयानक बीमारी में आशीर्वाद की उसकी अशेष क्षमता से ही तो वह आश्वस्त और लुब्ध हुआ था—उसके अहेतुक विशाल स्नेहांचल के नीचे आश्रय पाकर उन्मत्त पौरुष भी क्या निरीह शिशु नहीं बन जाता ? क्या जानता था वह कि जिस शोखी ने अपना डोल कुएँ में गिरा दिया था, अपनी मन्द मुस्कान से उसी शोखी ने नवनीत के मन को भी किसी अँधेरे कुए में डाल दिया था। डोल कुएँ से निकल ही गया होगा, किन्तु नवनीत का मन तो और भी अँधेरी गहराइयों में उतरता चला गया है।

कुएँ की अंधेरी गहराइयों में ?—नवनीत ने फिर झुक कर देखा। अगर अपनी बैठक से वह शिथिल होकर जरा भी खिसक जाए तो इस अंधेरे कुएँ की गहराई का पता लगाया जा सकता है। प्रतिभासित आकाश-खंड की चमक से पता नहीं लग पाता कि पानी की सतह कितनी नीचे है। दीवार की परछाईं में पानी की सतह का दीवार छूता हुआ किनारा दिखाई नहीं पड़ता। पर गहराई

तो उस सतह के नीचे है।—गिर पड़े वह ? तैरना जानता है वह, डूबेगा नहीं। पर डूबना ही हो तो तैरना भूल जाया जाए। बस।—पर तैरना भूलजाना क्या इतना सहज है ? हाथ-पैर हिलाने का नाम ही तो तैरना नहीं है। बिना हाथ-पैर हिलाए वह भी तो तैर लेता है। पर, तब भी डूबा तो जा सकता है। डुबकी लगाकर ऊपर आने की चेष्टा ही न की जाए, भीतर ही भीतर गहरे चलते चला जाए, साँस घुटने लग जाए तब भी। एक बार चेतना लुप्त हुई कि फिर सब कुछ आप ही आप सम्पन्न हो जाएगा। ऊपर आएगा, पर वह व्यक्ति नहीं, उसकी लाश होगी। कुएँ की गहराई का ज्ञान चाहे उसमें न हो, पर छूकर उससे संपृक्त होकर ही तो उठेगा वह।

और सहज ही उसके सारे विद्रूप का अन्त हो जाएगा। अन्त हो जाएगा क्या ? सवेरे तक अवश्य उसकी लाश पानी पर तैर आएगी। बड़े सवेरे पनिहारियों को वह दिखाई न दे, पर उसकी सड़ाँध तो दूर-दूर तक फैलने लग जाएगी। कुए का सारा पानी अपवित्र करार दे दिया जाएगा। इधर की जनता का सारा अभिशाप उसकी लाश पर केन्द्रित हो उठेगा। आत्महत्या की सस्ती-सी चादर ओढ़ाकर उसे निकाला जाएगा। अस्पताल में चीर-फाड़ होगी। सारा गाँव पोस्ट मास्टर की आत्महत्या की चर्चा से मुखर हो उठेगा। क्या आरती भी नहीं सुनेगी वह सम्वाद ? समझेगी कि हृदय के दारुण-पश्चात्ताप की अपने हाथों खोदी खाई में गिरकर मैंने उससे अपने पाप की क्षमा चाही है। पाप की क्षमा, जीवित या मृत नवनीत जाएगा उससे माँगने ? इस रमणी को इतना गौरव देगा वह ?

कुएँ में लटके हुए नवनीत के पैर आप ही ऊपर उठ आए। जगत के किनारे से हटकर वह इस सिरे पर आ बैठा। कुएँ की ओर अब उसका मुँह नहीं, पीठ थी, और कुएँ की गहराई तथा उसके बीच सारे जगत का पाट था। पाप ? संसार में पाप है क्या ? और नवनीत ही पाप करेगा ? पाप की परछाईं भी उसको छू नहीं सकती है ? वह इतिहास का विद्यार्थी रह चुका है। इतिहास के चिरन्तन प्रवाह में पाप की कोई संज्ञा नहीं है। स्थूल समाज-व्यवस्था के हित में व्यक्ति को नियन्त्रित करने का पाप तो एक अस्थाई विधान मात्र है। आचार-शास्त्र में जिसे पाप कहते हैं, समाज-शास्त्र में जिसे कानून की संज्ञा मिलती है, वह क्षण-कालीन राजनीति का विषय हो सकता है। व्यक्तित्व की समस्या वहीं तक तो

है। इतिहास व्यक्ति की चिन्ता कहाँ करता है ? उसके चिरकालीन प्रवाह में बड़ी से बड़ी चट्टान भी कुछ ही दूरी तक तो व्यतिक्रम प्रस्तुत करती है, किन्तु शेष में तो उसका प्रवाह अपने पूर्वनिश्चित क्रम के अनुसार सम्पूर्ण पाट में निर्बाध बहता रहता है। चट्टान के आस-पास की सौ-पचास वर्ष की दूरी जिसमें धारा के प्रवाह से पाप-पुण्य की शाखा-फट सकती-प्रशाखा मिल सकती है, सामयिक राजनीति का विषय हो सकती है, सनातन इतिहास का नहीं। इस क्षणकालीन मलिनता के लिए नवनीत अपने जीवन को होम नहीं देगा।

नवनीत ने जेब से सिगरेट निकालकर ओठों में दबाई, पर जलाने का उसे ध्यान ही नहीं रहा। आरती भी तो इतिहास की धारा में कोई ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना नहीं है कि उसके जीवन का स्थाई अवरोध हो जाए। क्या अद्भुत है उसमें जिसके पीछे दौड़ना ही उसका लक्ष्य होगया था ? ज्ञान-विज्ञान ? वह स्वयं कम पढ़ा-लिखा नहीं है। रूप-सौन्दर्य ? यदि नीलम का सौन्दर्य उस पर प्रभाव नहीं डाल सका तो आरती का सौन्दर्य ही कौनसा ज्वलन्त है ? स्वयं माया क्या उससे कम तेजस्विनी और ओजस्विनी है ? शायद वह नारीत्व के प्रति पौरुष की एक सहज प्यास ही थी, सहज प्यास, जो मरुस्थल में मरीचिका को देखकर उदग्र हो उठती है। फिर भी यह संध्या अगर उसके जीवन से निकाली जा सकती। काश ! आज के इस लेख पर लाल स्याही से रेखा खींचकर इस मजमून को व्यर्थ किया जा सकता। किन्तु प्राणों का रक्त भी क्या कारगर लाल स्याही हो सकता है अब ? इसे कोई दुस्वप्न की एक भ्रान्ति नहीं बना सकता ?

मानव कितना क्षुद्र तत्व है इस भू पृष्ठ पर ? सृष्टि के आदि से कितने प्राणी यहाँ नहीं जन्मे और नष्ट हो गए ? दैत्याकार सरीसृप और दीनासुरों के कितने युग बीत गए, जिनके सामने मनुष्य एक चूहे से भी गया गुजरा होता। कितनी प्रजातियाँ प्राणियों की पनपीं, विकसीं और नष्ट होगईं। और कितनी और नहीं भविष्य के गर्भ में पनपेंगी, नष्ट होंगी। प्राणियों के इस पैमाने में मनुष्य से नीचे के स्तर पर ही कितने असंख्य जीव हैं ? पर मनुष्य को छोड़कर, और वह भी शायद इस अभागी हिन्दूजाति को छोड़कर, नर-नारी के सम्बन्धों पर इतने विधि-निषेध और अंकुश और कहीं न होंगे !

ब्रह्मांड के इस विराट प्रस्तार में यह पृथ्वी ही कितना क्षुद्र पिंड है। और नवनीत की दृष्टि सिर पर फैले विराट नीलाकाश में बिखरे अनन्त नक्षत्रों पर

जा टिकी। नहीं इन नक्षत्रों में नर या मादा की कोई संज्ञा नहीं है। यह भेद तो प्रकृति के प्रजनन को सहज करने के लिए प्राणियों के, एककोशीय शरीर को विकसित करने के लिए शायद इस भूखण्ड पर ही नए प्रयोग के रूप में अंगीकार किया था। किन्तु तब भी प्रजनन या अणुगुणन का मूल उत्स, वही आकर्षण तो सर्वत्र इन नक्षत्र-पिंडों में भी उसी तरह व्याप्त है और उसी आकर्षण से एक दूसरे के चारों ओर चक्कर काटते हुए ब्रह्मांड-युग इन्होंने बिता दिए हैं और बिता देंगे। चन्द्रमा पृथ्वी के चक्कर काट रहा है, यह पृथ्वी ऐसे ही अन्य ग्रहों के साथ प्रभंजन-वेग से सूर्य का चक्कर काट रही है, और यह सूर्य भी तो उससे कई गुने अधिक वेग से सारे सौर-मण्डल के साथ अपनी आकाश-गंगा गैलेक्सी के केन्द्र में स्थिति धनुष-राशि के नक्षत्र के चारों ओर चक्कर काट रहा है। आकर्षण से विवश होना तो इस जगत का सामान्य-सा नियम है, फिर नवनीत ही ने ऐसा क्या पाप किया है ? और आरती ही को इस तरह क्यों सिर पर आसमान उठा लेना चाहिए था ? हिन्दू-समाज की व्यवस्था व्यक्ति को इस सहज आकर्षण के दमन की शिक्षा देकर उसे मुर्दा करती जा रही है। आकर्षण सीमा से दूर होने पर इन आकाश-पिंडों में भी तो गति शिथिल होती जाती है और वे मुर्दा हो जाते हैं। यह चन्द्रमा इसीलिए तो अपनी कमर ही तोड़ बैठा है। और जिस समाज ने प्रकृति के इस सहज नियम को स्वीकार किया है, वहाँ सहज प्राण का प्रवाह सरलता से लक्ष्य किया जा सकता है। तुलना के लिए शर्ली ही को लिया जाए। और तो और, उसने डॉ० रेडियर जैसे अपदार्थ के आकर्षण तक को अस्वीकार नहीं किया।

रेडियर, तुझसे तो नवनीत, वही लाख दर्जे महत्त्वशील व्यक्ति है। अपने हताश प्रेम के प्रतिविधान के लिए कितना व्यग्र है वह ? प्राणों का मूल्य चुकाने से भी नहीं हिचकिचाएगा वह, पौरुष इसे कहते हैं। यह नहीं कि एक क्षुद्र-नारी ने प्रतारणा की, और भीगी बिल्ली की तरह कुएँ के किनारे आकर सोच लिया कि इस जीवन से मर जाना अच्छा ! तू भी बदला ले नवनीत। उठ, और अपने पौरुष की चुनौती स्वीकार कर। व्यक्ति का परिप्रेक्ष्य व्यक्ति के साथ छाया की तरह चिपटा रहता है, वह कभी खोता नहीं और उसे हर बार जरा प्रकाश में आकर ही छाया की तरह ही प्राप्त किया जा सकता है।

रेडियर प्रतिशोध अवश्य लेगा। अद्भुत जीवट का व्यक्ति है वह। देश-

भक्ति की सनक भी कम नहीं हैं। इंग्लैंड जाकर आइ० सी० एस० का बलिदान कर आना हाँसी-खेल नहीं हैं। मिथ्या भी हो तो भी देश-भक्ति के उसके उत्साह को तो स्वीकार करना ही पड़ेगा। नवनीत सावधान चाहे रहा हो उसके साथ व्यवहार में, पर प्रभाव तो पड़ा ही है उसका। शर्ली से बदला लेने का उसका कारण चाहे जितना व्यक्तिगत क्यों न हो, उसकी राष्ट्रीय-महत्ता भी कम नहीं है। कोई सरकारी इमारत जला दी गई, समाज की आवेशात्मक मनोवृत्ति हो, यह तो प्रतीक है समूह के उस निर्बल निष्फल क्रोध का, जिसे इस तरह प्रगट करने के सिवा उसके पास और कोई चारा नहीं है। किन्तु सशक्त सत्ता के मद में अंधे व्यक्ति का समूह से इस तरह बदला, जैसा कि इस किट्सन ने निरपराध जुलूस पर गोली चलाकर लिया है, कभी क्षमा किए जाने योग्य नहीं हैं। नहीं, रेडियर कायर नहीं, बहादुर है वह। कायर तो नवनीत है जिसने अपनी गुलामी की दुहाई देकर उसने वादा लिया है कि वह कोई ऐसी हरकत न करे कि उसकी नौकरी को आँच आ जाए। रेडियर अपना काम नवनीत के दायित्व-क्षेत्र से एक-दम बाहर अंजाम देगा। और देश में फैली अंग्रेज-विरोधी भावना की पृष्ठभूमि में यह सारा काँड एक साधारण घटना ही तो मानी जाएगी। रेडियर ने तो यहाँ तक कह दिया है कि यदि नवनीत उन्हें इस षड़यन्त्र की सूचना भी पहुँचा कर यहाँ आने से विरत करदे तब भी उसके कार्यक्रम में कोई विशेष तूल-अरज न होगा। मानपुर का यह प्रसंग तो उसके लिए केवल एक अवसर और सुविधा है। विकल्प के रूप में उसके पास और सुविधाएँ तथा अवसर हैं, और आवश्यकता-नुसार निर्माण भी कर सकता है वह। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इसके पीछे वह अकेला व्यक्ति नहीं, बल्कि देश-प्रेम के मतवालों का एक पूरा गिरोह है, गिरोह जो किसी बाधा की चिन्ता नहीं करेगा, और कभी कोई बाधा यदि उपस्थित हो जाए तो उसे नष्ट करने में नहीं हिचकिचाएगा, चाहे वह नवनीत ही क्यों न हो। वे साधन नहीं देखते, उनका लक्ष्य केवल सिद्धि रखता है। तो नवनीत ही को क्या पड़ी कि वह एक व्यर्थ बाधा बने।

अच्छा, ये अधर लाल भी तो एक क्रान्तिकारी रह चुके हैं। टीकमचन्द मल्लाह भी यहीं छाया की तरह उसके साथ लगा हुआ है। राजनीति में भी उसकी दिलचस्पी किसी से कम नहीं लगती। देश का यह आन्दोलन नहीं, गाँधी-जी की अहिंसा से यह मेल नहीं खाता। वे जेल में बन्द हैं। असहयोग युग के

पहले ही क्रान्तिधारा का प्रवर्तन तो नहीं है यह आज का आन्दोलन ? नवनीत स्वयं इतिहास का विद्यार्थी है, अवश्य ही यह उस युग की राष्ट्रव्यापी सशस्त्र क्रान्ति की सोई हुई लहर का पुनर्जागरण है, और यदि नवनीत की यह धारणा सही है तो अधर लाल का इसमें क्या सक्रिय सहयोग नहीं होगा ? नीलम और वे आज किसी राजनैतिक सभा में ही तो गए हुए हैं। वह सभा और होगी ही क्या सिवा असहयोग और क्रान्ति के कार्यक्रम के ? क्या पता रेडियर के पीछे जो दल है वह भी ऐसा ही कोई दल या यही दल न हो ? अधर लाल तो किट्सन दम्पति के दौरे के कार्यक्रम से परिचित ही नहीं, उसके इंचार्ज ही हैं। अधर लाल की भूमिका पर तब तो बात बड़ी ही उलझनपूर्ण है। जो भी हो, नवनीत के लिए तो अधर लाल एक ढाल ही प्रमाणित होंगे। रेडियर से जरा-सी आत्मीयता जता कर ही यह तो बड़ी सरलता से पता लगा सकता है कि अधर लाल का दल उसका दल है या नहीं !

अच्छा, यदि नवनीत का अनुमान सही प्रमाणित हो जाए, और नवनीत इस सारे भेद को अधिकारियों के निकट खोलकर रखदे, गोपनीय ढंग से ही, तो कैसा लुत्फ रहे ? सरकार विरोधी एक अच्छे खासे गुट का सरकार को पता लग जाएगा, रेडियर, अधर लाल, टीकू, नीलम सब हवालात में जकड़ दिए जाएँगे, उनके पुराने कारनामों का भंडाफोड़ हो उठेगा। स्पष्ट किसी हत्या के आरोप में रेडियर और नीलम न पाए जाएँ तो भी छुट-पुट कैद की सजा तो उन्हें होकर रहेगी। शायद नीलम की राष्ट्रीयता का झगड़ा पेश हो तो उसे देश-निकाला भी हो सकता है। किन्तु अधर लाल और टीकू को तो मौत की सजा तक मिल सकती है। आरती का पतिव्रत कहाँ तक रक्षा करेगा अधर लाल की ? जिसे वह बुद्धूराम, शिकारपुर का स्नातक, जाने क्या-क्या कहकर मखौल उड़ाती आई है, देखे वह भी क्या कर सकता है नवनीत ?

लेकिन क्या आरती टूट जाएगी इससे ? टूट जाए, पर बिखरने वाली नहीं है वह। उसका मन नवनीत के प्रति और भी घृणा से भर उठेगा। सब कुछ करके भी करेगा तो वह यही कि सारी दुनिया उन पर थूके, और क्या उसका खुदका मानस ही नहीं उससे घृणा करने लग जाएगा ? नहीं मनुष्यता के साथ, मातृ-भूमि के साथ वह द्रोह नहीं कर सकता। सक्रिय सेवा यदि उससे नहीं हो सकती तो देशसेवा के अन्य मार्ग में वह कैसे बाधा बनकर दूना अपराध कर सकेगा ?

और अधर लाल ? जब से उसने अधर लाल का पूर्व-वृत्तान्त सुना है, नहीं क्या मन ही मन वह उनकी भक्ति करने लगा है ? अगर उसका कुछ रोष है भी तो वह आरती के साथ है। अधर लाल को क्यों साना जाए इसमें ?

और सक्रिय सेवा भी क्यों नहीं कर सकता वह देश की ? देश कोई किसी एक की बापौती तो नहीं है। देश उसके व्यक्तित्व का ही स्थानीय विस्तार तो है। देश पर किए गए अत्याचारों, उत्पीड़न को जो व्यक्ति अपने ऊपर महसूस न करे वह भावना हीन पशु ही तो है। और नवनीत तो स्वयं अंग्रेजों की ज्यादती का फल भुगत चुका है। जो भूमिका ग्रहण करके रेडियर इन लोगों के सम्मान का पात्र बनेगा, वह भूमिका नवनीत स्वयं भी तो ले सकता है। तब आरती भी देख लेगी कि यह बुद्धूराम, शिकारपुर का स्नातक भी उतना ही बड़ा काम कर सकता है जितना उसका पति अधर लाल। और रेडियर का ही अनुकरण हो तो शर्ली से प्रतारणा उसे भी मिली है, किट्सन से उसे भी उतना ही पावना वसूल करना है जितना रेडियर को। पर अनुकरण क्यों ? वह क्या देश-प्रेमी नहीं है ? अंग्रेजों की दासता क्या उसे नहीं खलती ?

सहसा ही एक धमाके की आवाज से नवनीत की तन्द्रा टूट गई। अपने विचारों की निबिड़ता में उसने लक्ष्य ही नहीं किया था कि कुएँ से कुछ ही दूर हटकर एक खपरैल का मकान है जहाँ धुएँ से काली मटमैली लालटैन का प्रकाश जाहिर करता है कि वह एक दूकान है, और वहीं से इस धमाके की आवाज आई है। अरे, यह तो कलाल की, शराब की दूकान मालूम देती है। हाथापाई पर तुले उन दो जन की चेष्टाएँ साफ जाहिर करती हैं कि वे पिए हुए हैं।

शराब की दूकान मानपुर ही क्यों अपवाद होने लगी ? प्रयोजन ही क्या था नवनीत की इस अभिज्ञता का ? जहाँ मन और शरीर को सदा पिसना पड़ता हो, और भारत के गाँवों के किसानों से ज्यादा मानव की पिसाई, शारीरिक और मानसिक, अन्यत्र होती ही कहाँ है ? वहाँ और कोई दूकान हो या न हो, चोरी-छिपे शराब की दूकान तो खुल ही जाती है। बस्ती से बाहर ही है एक तरह से। लगता है, इधर ऐसे ही मेहनत-मजूरी पर गुजर-बसर करने वाले तथाकथित असभ्य देहाती रहते हैं। पनघट भी शायद बहुत ज्यादा चलता हुआ नहीं है। वरना, दो-ढाई घन्टे से वह बैठा हुआ है, कोई उसे दिखाई ही नहीं दिया।

लगता है, दूकान अभी ही खुली है। पहले न तो उसे रोशनी ही दिखाई

दी थी, न उसने हल्ले-गुल्ले को ही लक्ष्य किया था। बस्ती ऊँचे तबके के बनिए-ब्राह्मणों की है। स्थानीय समाज में उन्हीं का बोलबाला है। आधुनिक सभ्यता तक न पहुँची हुई प्रणालियों में कानूनी-व्यवस्था की उतनी चिन्ता नहीं की जाती, जितनी सामाजिक-व्यवस्था की। कानूनन शराब की दूकान खुली रहने में कोई बाधा न हो, पर गाँव का सामाजिक विधान यदि यह स्वीकार नहीं करता तो यही उसके लिए कानून से कड़ी व्यवस्था है। इसीलिए रात में देर से ही यह दूकान खुल पाती होगी।

छत से लटकी हुई लालटैन की हँडिया बिलकुल ही साफ नहीं हैं। सफाई के लिए क्या शराब की ही दूकान होगी? मन की सफाई को भी जहाँ शराब के धुएँ से छा देने की व्यवस्था हो, वहाँ लालटैन के काँच को ही क्यों साफ किया जाए? कितनी नीची छत है? बिना सिर झुकाए कोई भीतर प्रवेश ही नहीं कर सकता। सिर पर किसी आघात की, बदनामी के आघात की भी जो चिन्ता न करे, वही इसमें प्रवेश कर सकता है। सिर के अच्छे खासे भाग को, विवेक, आत्म-सम्मान, आत्मचेतना तक को घर पर रख कर ही आना होता है न यहाँ।

लालटैन के नीचे ही चीड़ के बक्सों से बनाई एक टेढ़ी-मेढ़ी टेबल है जिस पर तीन-चार बोतलें रखी हुई हैं। लालटैन के नीचे अँधेरा, दिये तले अँधेरा, उस टेबल पर रखी बोतलों पर ही पड़ा हुआ है। यह शायद उचित ही है। दिखाई नहीं देता, लेकिन जाहिर है कि टेबल के असमान पायों के नीचे ईंट-पत्थर के सहारे वैसे ही टेढ़े-मेढ़े आँगन पर टेबल को जमा जरूर दिया गया है, किन्तु वह किसी सामान्य से मदहोश नहीं, बा-होश ग्राहक के धक्के को भी सहन नहीं करेगी। करे भी क्यों? उसकी टूटी कमर पर क्या कम बोतलों का नशा छाया हुआ है? सामने वैसे ही चीड़ के बक्सों के छोटे-मोटे तख्तों को जोड़कर बनाई हुई एक बेंच रखी है, जिसे दूकानदार सीधी कर रहा है। किसी ग्राहक के बेकाबू पैरों ने शायद उसे उलट दिया था, शायद उसी का वह धमाका था। दूकान के भीतर भी जरा-सी आड़ में छीपी वैसी ही एक बेंच यहाँ से भी देखी जा सकती है, जिस पर बैठे दो-तीन ग्राहक मिट्टी के कुल्हड़ों में अपनी प्यास बुझा रहे हैं। और अपनी सारी हस्ती भूलकर मस्ती में दुनिया के मसलों पर गरमागरम बहस कर रहे हैं।

यह शराबखोरी, नहीं ऐश्वर्य यह हर्गिज नहीं है। पहनने के कपड़े तक

कितने लागर-जर्जर हैं, सुई-धागे की पहुँच से दूर। वह आदमी तो लगभग नग्न ही है, केवल दो हाथ लम्बे चिथड़े को कमर से लपेटे है, और माथे पर भी वैसी ही एक पट्टी लिपटी हुई है। लेकिन इस ठंड में उनकी बहस का कोई भी भाग इस दारिद्र्य के प्रभाव से ठंडा पड़ा नहीं मालूम देता।

शराब का प्रबन्ध नवनीत ने स्वयं किया है आने वाले आंग्ल-दम्पति के स्वागत के लिए। लखनऊ से ऊँचे दर्जे की शराब आएगी। स्वयं अधर लाल जाकर ले आएँगे। वह गरीब तो शराब की किस्मों को ही नहीं जानता। अधर लाल ने शराब कभी छुई न हो, पर देश-विदेश में घूमे हुए हैं वे। बाहर तो सुरापान सामाजिक-सभ्यता का ही एक अंग बन गया है, इसलिए इतनी जानकारी तो उन्हें अवश्य होनी चाहिए। पश्चिम में सुरापान अवश्य ही एक विलास है। हाहाकार से भरे अपने दैन्य की चेतना को दबाने की चेष्टा की इस शराबखोरी की उस सुरापान से समता नहीं की जा सकती, कोई समता नहीं की जा सकती। होश व्यक्ति उसमें भी खोता है, पर भूलने को कौनसा दैन्य है उनके जीवन में? वे तो शुद्ध-रूप से अपने विवेक को उतार फेंकना चाहते हैं ताकि पशु के स्तर का उच्छृंखल निर्बन्ध भावावेग अनुभव कर सकें।

और क्यों नहीं किट्सन-दम्पति की इस मदहोशी का लाभ उठाया जाए? अपने जाल में तब वे खुद सरलता से फँस जाएँगे। और यदि किसी दुर्घटना की भ्रांति पैदा की जा सके, जैसे शिकार की व्यवस्था या मनोरंजन की और कोई व्यवस्था—क्यों नहीं नौका-विहार का बहाना किया जाए? और तब सारी योजना के कर्तव्य का सेहरा उसके सिर होगा। राष्ट्र-सेवकों की पंक्ति में उसके नाम की भी गणना हो जाएगी। और कितना सरल होगा, स्वाभाविक होगा सारा कार्यक्रम? रात्रि का समय, चाँदनी रात—और यह गहरा तालाब मगर-मच्छों से भरा हुआ, उनके मद-मात्सर्य से भरे कलुषित हृदय की निबिड़ता के समान ही।

नवनीत ने देखा कि दोनों ग्राहकों ने अपना अन्तिम कुल्हड़ समाप्त कर लिया और दोनों ही साथ घर चलने के लिए दुकान से उठ खड़े हुए। जैसे दूकान से निकलने को हुए, एक का उठा हुआ सिर छत से टकरा गया। दूसरे ने देखकर सिर झुका लिया। बाहर आते ही पहले शराबी ने मुड़कर शायद छत को संबोधित करके कुछ कहा। शायद वह छत के अप-व्यवहार का बदला लेना चाहता था,

दूकानदार ने उसे कुछ समझा-बुझाकर बिदा किया। दोनों वहाँ से आगे बढ़े। लेकिन लगता है, सिर में चोट खाए हुए आदमी का क्रोध शांत नहीं हुआ था। सामने छत नहीं थी तो क्या हुआ, जीता-जागता एक आदमी तो था ही, उसी से उलझ पड़ा वह। सामने वाला व्यक्ति भी कोई निर्जीव छत नहीं था। जोड़ी बराबर की हो गई। लड़खड़ाती जीभ के बाद पैर बढ़े, फिर हाथ, दोनों में गुत्थम-गुत्था, हाथापाई—मानों कठपुतलियाँ अलक्ष्य धागों द्वारा स्टेज पर हिलाई जा रही थीं। लड़खड़ाते पैरों पर कभी एक काँप उठता, कभी दूसरा। पर किसी और ने उन पर ध्यान नहीं दिया। शायद ध्यान देने वाली गम्भीर बात भी नहीं थी। और इस तरह पैंतरेबाजी करते-करते—अरे, वे तो इधर ही बढ़ते चले आ रहे हैं। कहीं कोई किसी को कुएँ में ही न धकेल दे। पर नहीं, कुएँ की पाल पर चढ़ने जैसी हालत उन कदमों में नहीं है। आवाज सुनाई तो देती है, पर क्या बोल रहे हैं यह समझ में नहीं आता। लो, वह एक तो नीचे गिर ही पड़ा। उठने की कोशिश कर रहा है पर नहीं, अब नहीं उठ सकता। दूसरा, पास जाकर क्या कह रहा है?

"खूब तकदीर है बाच्छा। हियाँई सोगिया राजा के जवाँई की तराँ। अपणे तकदीर की क्या कहवे है रे? जिण रंडी के बाप का जवाँई हूँ, वो बी सुसरी दरवाजा नईं खोलेगी। नईं खोलेगी इयार, तो तेरे माथे की कसिम, राँड का माथाई फोड़ गेरूँगा आज।" और वह पीठ फिरा कर बस्ती की दिशा में मानो पैरों से नहीं, कमर से चलकर बढ़ने लगा।

अरे, सूँघता हुआ वह कुत्ता तो इस लेटे पड़े शराबी के मुँह से मुँह लगा रहा है। क्या कह रहा है वह? नवनीत ने कान खड़े करके सुना, "अरे इयार जमादार ऐसा बी किया? पेहराई देणा है तो बारणे पर बैठ कर दे न, सिर पर ई क्यूँ चढ़ा चल्या आता है? राजा का जवाँई हूँ तो किया हो गिया? सोणे बी नईं देगा किया? जा, राजकुँवरीजी को भेज दे। कब्जी नईं आती। आज उसकी चोटली पकड़ कर खींच लूँगा राँड को।" और भी कुछ बड़बड़ाता रहा वह। आवाज भी क्षीण होती जा रही है। अंधेरा तो—अरे, दूकान शायद बन्द हो रही है। तभी तो दूकानदार ने छत से कन्दील उतार ली है।

सियार खेतों के इस पार तक आ गए हैं, और बस्ती की ओर मुँह करके "हुआं-हुआं" चिल्ला रहे हैं। उनके माथे में शराब का असर नहीं है। बस्ती की

गली का कोई मनचला कुत्ता भी मानो किसी सियार की ललकार का कभी भौंक कर जबाब दे देता है। क्या नवनीत रातभर यहीं बैठा रहेगा ? क्या किया है उसने ऐसा कि उसकी विषादमई छाया उसे घर जाने का उत्साह भी नहीं दे रही है ? भूल जाए वह, पर क्या ? और क्यों ?

उठा नवनीत आखिर वहाँ से। रास्ता भी तो नहीं जानता। किधर से जाना होगा ? दूकानदार से पूछ ले ? और कोई दिखाई भी तो नहीं देता। और कुछ ही देर में तो दूकानदार भी शायद चल देगा। बाहर की बेंच उसने भीतर समेट ली है। बाद में वह पूछेगा ही किससे ?

नवनीत आगे बढ़ा। जमीन पर लुढ़का हुआ शराबी अब भी कुछ बड़बड़ा रहा था। एक हसरत भरी दृष्टि उधर डालता हुआ नवनीत दूकान के करीब पहुँचा। दूकानदार ने लालटेन ऊँची करके देखा, "कौन भाई ? अरे, पोस्ट मास्टर सा'ब। पाँय लागूँ सरकार। कुछ हुकुम होवे है ?"

—यानी दूकानदार उसे पहचानता है। शायद सोचता होगा कि पोस्ट मास्टर साहब भी कुछ पीने के लिए आए हैं। नवनीत को कुछ मजाक सूझा। उसने कहा, "बढ़िया किस्म भी है। या सब कुछ देहाती ठर्रा ही है।"

हँसकर दूकानदार ने कहा, "हिया तो सरकार, बिक्री ठर्रे की ही होवे है। पर हुकुम हो तो तनी ऊँची जात भी निकर जाएगी।"

"ऊँची जात की भी रखते हो ? यह क्या ऊँची जाती वालों के लिए है ?"

"जी ऊँचा दाम है हुजूर, हमार खातिर वोई ऊँची जात है। ऊँची जात बनिया-बाह्मन तो चोरी-छिपे बी नई पी सकत हैं। अलबत्ता, सरकारी अमलों की खातिर तो कुछ रखना पड़ता है न। दूँ सरकार, एक पेक ?"

कुल्हड़ में व्यापार करने वाला भी पेग को समझता है। नवनीत ने पूछा, "सरकारी अमलों के कौन कौन हैं जी तुम्हारे ग्राहक ?"

खीसे निपोरकर दूकानदार ने कहा, "हजूर, ऐसी बात कहीं कहन की तो होत नहीं। पर सवासेर सोंठ तो सरकारी अमलों की महतारी ही खात है और किसमें इत्ता हियाब होवे है !"

"क्या मतलब ?" नवनीत की उत्सुकता बढ़ती जा रही थी। कौन-कौन से सरकारी अफसर यहाँ से शराब खरीदते हैं ?

"सबरेई तो पीवत हैं हुजूर। बगैर पिए अपसरी कैसी ? दरोगा सा'ब

डाग्दर सा'ब, वकील..."

"क्या डॉक्टर साहब भी पीते हैं ? वे दाढ़ी वाले सरदारजी ?"

हँसकर दूकानदार ने कहा, "खुदई नई पीवत हैं सरकार, दवाई कहकर दूसरों को भी पिलावत हैं। वो ही दूं सरकार, जो वे पसन्द करे हैं ?"

"उससे क्या खूब नशा आता है ?"

"नशा क्या सरकार, हल्का-सा सरूर होवे है। मन ऐसा हलकान होइ जात है जैसे पवनवेग-घोड़े पर असवार होकर हवा में सरपट उड़ा जा रहा हो।"

"धरती पर कब गिरता है ?" हँसकर नवनीत ने पूछा।

"धरती भी असमान से जा लगी लगे है सरकार। धरती का सबरा गम, सबरी चिन्ता फिकिर छूमन्तर करन की खातिर ही तो लोग पीवत हैं। चिन्ता-फिकिर भी सबरे से जास्ती अपसरोंई कूं रहबे करै। सबरी रइत का खयाल रहना हँसी-खेल नई है न।"

"लेने के कितनी देर बाद तुम्हारा यह सरूर शुरू होता है ?"

"हुजूर, ये तो पीने वाले पर है, और कित्ता पीवत है वो ?"

"अगर मुझ जैसा कोई नौसिखिया हो ?"

हँसकर दूकानदार ने कहा, "हजूर हमार संग मखौल करत हैं, परिच्छा लेत हैं हमार। इत्ते बड़े अपसर नौसुखुवा कैसे होय सकत हैं !"

"क्यों ! कभी तुम्हारे यहाँ आया हूँ पहले ! कोई कभी एक बूंद भी मेरे नाम से ले गया है !"

"नहीं सरकार, झूठ काहे कहूँगा ? कालीमाई साच्छी है। हमार ई टपरिया भी कोई दूकान है सरकार ? पर आप जैसा बड़ा आला अपसर कभी बिना पिए रह सकत है ? आपके इसारे पर बिलैती सराब के पीपे के पीपे पार्सल से आय पहुँचे हैं। मुझ गरीब के ऐसे भाग कहाँ कि आप जैसा अपसर मेरी टपरिया पर पधारे ?"

नवनीत ने इधर-उधर देखा, कहीं कोई दिखाई नहीं दिया। एकाएक उसके मुँह से बेसाख्ता निकल पड़ा, "अच्छा, बढ़िया जो तुम्हारे पास हो, एक पेग दो।"

जीवन में किसी भी प्रथम वस्तु का बड़ा महत्व होता है, और जीवन-काल तक उसकी तथा उस अनुभव की स्मृति बनी रही है। उस रात्रि का वह प्रथम

सुरापान भी नवनीत की स्मृति में इस तरह जम कर बैठा है कि भुलाए नहीं भूलता। विचार-भवन की कार्यवाही के बाद रात्रि की इस निबिड़ता में उसकी चिन्ता का विषय केवल एक ही हो सकता है, प्राणरक्षा का। महिला सदस्यों की यह किस्सागोई जबकि उसे जबर्दस्ती अपने अतीत के पन्ने खोलने को विवश कर रही है, पर मौत की छाया तो रह-रह कर चेतना के छोटे से रन्ध्र से ही कौंध जाती है न। अपना किस्सा, आरती का किस्सा, नीलम का किस्सा—आखिर यह किस्से बाजी स्मृति में ही कहाँ खत्म होती है ? नीलम कल आरती का किस्सा शुरू कर रही है ? आरती का किस्सा नीलम के किस्से से अलग ही कहाँ है ? पर नीलम का किस्सा, वह नवनीत की विजय की कहानी है, आरती का किस्सा क्या उतनी ही पराजय की कहानी नहीं है वह ? उस दिन अनायास ही अपने समस्त जीवन के संस्कारों को क्षण भर में तोड़ कर शराब पीने के लिए जो वह प्रवृत्त हो उठा था वह क्या आरती के प्रत्याख्यान की हर क्षण कुरेदने वाली याद को भुलाने के लिए ही नहीं था ?

कैसी भयानक काल-रात्रि थी ! ऊपर से कितनी नीरव, शांत, स्वच्छ, तारों की धवल रदन-पंक्ति में मुस्कराती हुई ? प्रकृति का मानो कण-कण उसके विरुद्ध षड्यंत्र में लगा हुआ था—आरती की तरह ही ऊपर अमित सौंदर्य, स्थैर्य, शांति और प्रतिभा तथा वरदान के भोलेपन से भरा हुआ, किन्तु भीतर ही भीतर घोर घृणा, नितांत उपेक्षा और अनायास ही उसे केन्द्र से भ्रष्ट कर देने की उदग्र भावना से ओतप्रोत। केन्द्र से छिटक पड़ने का क्या तात्पर्य है ! कोई नभ के नक्षत्रों से पूछे, अणु के गर्भ में विद्युदणु, इलेक्ट्रोन से पूछे, या नवनीत से पूछे।

दूकानदार ने उसे आड़ में भीतर बुला लिया था, और कहीं से बरामद किए काँच के गिलास में लालपरी उस अन्धकार में भी उसकी ओर मानो मुस्करा दी थी। ओठों से लगते ही एक अनिर्वचनीय सुगन्धि से उसकी नाक भर गई थी, किन्तु वह मानो तरल आग का दरिया ही था ! जहाँ-जहाँ भी उसने छुआ, एक आग-सी लग गई थी। पहला घूँट कितना कड़वा था ! नशे की हर वस्तु के साथ यही तो होता है। शायद उस आग के कारण ही भीतर की आग सौ गुनी बढ़ जाती है। तभी तो एक पेग के साथ ही शराब की वितृष्णा के साथ ही साथ दूसरे पेग की वितृष्णा भी मचल उठी थी। आज तो याद करके भी काँप उठता है वह। पता नहीं, दूकानदार ने कुछ सोडा-वोडा भी मिलाया था या नहीं।

तीसरे पेग के लिए शायद दूकानदार ही इनकार कर गया था। समझ तो वह पहली ही बार गया होगा कि नवनीत सचमुच नौसिखिया है। पता नहीं दूकानदार को क्या दिया उसने, पर दूकानदार ने जिन्दगी भर की कालिख उतार दी उसके गले के नीचे उस दिन।

नवनीत दूकान से चला तो सचमुच उसके पैर आसमान से जा लगे, दिमाग धरती पर आ टिका। दिमाग के भूरे पदार्थ में आलोड़न के साथ ही सामने के कोशों को ठेल कर पीछे के कोश सामने आने लगे। प्रत्यक्ष धुँधलाता गया, स्मृति उभरने लगी। आवेगों के हाथों अवचेतन के कोश चिन्तन में, चेष्टा में और व्यवहार में भी स्पष्ट परिलक्षित होने लग गये।

मार्ग में कुछ खुराफात हुई हो उससे तो उसे पता नहीं। कहाँ-कहाँ पथ-कुपथ में, गलियों-मुहल्लों में उसके पैर उसके अवश मन को घुमा लाए, उसे कुछ भी पता नहीं। किस-किस ने उसे इस हालत में देखा—नहीं, समय बहुत हो गया था इसलिये सम्भव तो नहीं है कि किसी ने उसे खास लक्ष्य किया हो। पर इससे क्या ? याद है तो इतना ही कि चेतना के उस क्षिप्र प्रवाह में जब कभी प्रत्यक्ष चेतना के कोश ऊपर सतह पर आ जाते, वह सीधे घर की ओर मुड़ जाने को होता, ताकि बिना किसी के लक्ष्य में आए घर पहुँच कर पड़ रहे। पर उसके बाद शीघ्र ही दूसरे कोश इन कोशों को ठेल कर स्थानापन्न हो जाते, और वह तेली के बैल की तरह घूमता रहा, घूमता रहा।

उसे याद है वह क्षण, जब चेतना की ऐसी ही क्षणिक विद्युत्-प्रभा में उसे अपने अन्तःकरण से मानो अपनी सारी सृष्टि उठती हुई अनुभव हुई थी। कलेजा मुँह को आ लगा था। आँखों के आगे कुछ दिखाई नहीं देता था और मुँह से मानो कुत्ते की लपलपाती जीभ से, रह-रह कर लार टपक पड़ती थी। किसी खेत में पड़ी गाड़ी से अनायास ही टकरा गया वह।—नहीं कोई शारीरिक चोट नहीं आई, पर मानो गति के साथ ही साथ चेतना का बड़े वेग से बहता हुआ प्रवाह एकाएक रुक गया। ऐसा तीव्र वेगवान प्रवाह जब रुक जाता है तो ?—रुकावट के स्थान पर इकट्ठा हुए प्रवाह से दबाव बढ़ता जाता है। नवनीत की छाती में मानो कोई गठीली वस्तु आकर अटक गई, और दबाव बढ़ता गया। गले में एक भीषण ऐंठन-सी हुई, और ओह ! मानो आसमान फट पड़ा। वह दुहरा होकर गाड़ी के पहिए के पास बैठ गया। भीषण विस्फोटक-वमन से उसके कपड़े

और सारा शरीर सन गया।

और एक भयानक हिचकी के साथ मथुरा के भैरव-मंदिर में खाट पर आँखें बन्द किए सपनों में खोए नवनीत की छाती में भी उसी तरह का भूकम्प उठा। सिर पर हाथ फिराता हुआ हरनाम सम्हल सके उसके पहले ही भीतर की लहर से नवनीत मानो आप ही आप खाट पर उछल गया, और ठीक तरह से बैठ सके, उसके पहले ही स्मृति के उस वमन का प्रत्यक्ष संस्करण सम्पन्न हो गया।

१० नीलम-आरती

इस तरह एकाएक नवनीत की अवस्था बिगड़ती देखकर हरनाम के हाथ के तोते उड़ गए। ज्वर अवश्य कुछ कम हो गया था। इसीलिए सिर पर पानी की पट्टियाँ चढ़ाना उसने बन्द कर दिया था। बल्कि उसे सोया देखकर कुछ समय पहले भीतर रसोई में जाकर उबलते हुए दूध में वह कुछ साबूदाना डाल आया था ताकि नवनीत की नींद उड़ जाए तो निहोरा करके उसे कुछ गरम पेट में डाल लेने के लिए मजबूर कर सके। पेट में बिना कुछ ताकत के आखिर शरीर भी बीमारी से लोहा ले तो कैसे ? उसके लिए भी खिचड़ी पक रही है, अगर नवनीत कुछ पेट में डाल ले तो वह भी कुछ खिचड़ी अपनी काया की भेंट कर सकेगा। आखिर पेट को तो भाड़ा चुकाना ही पड़ता है न।—और एकाएक ही यह क्या हो गया ?

बहूरानी अभी तक नहीं आई।—नहीं, चिट्ठी मिलने पर भी न पसीजे ऐसा बजर का हिया औरत जात का नहीं हो सकता। मानपुर से बुलाए जाने पर जबसे उसे यहाँ कुछ दिन रहने का मौका मिला है, जरूर बहूरानी के रंग-ढंग उसे बदले हुए मालूम दिए हैं। सवेरे-शाम उस वकील सुरेश नारायण का आना-जाना भी उसे खास अच्छा नहीं लगा है। नहीं, बहूरानी के चाल-चलन पर वह कभी अविश्वास नहीं कर सकता। बाप की मौत के बाद सभी कुछ भार उसी पर तो पड़ गया है। नौकरी न करे तो करे क्या ?—नवनीत के नाम से हरनाम को मानपुर से बुला भेजने का तार भी तो बहूरानी ने ही दिया था। पूछने पर बहूरानी ने जरूर उसे यह कह कर टाल दिया था कि नवनीत को पुन: किसी जरूरी सरकारी काम से दिल्ली चले जाना पड़ा है। विश्वास करने के सिवा उसके पास

चारा ही क्या था ? मन ही मन मगन था वह तो कि अब सरकार के दिल्ली से लौट आते ही फिर से यह उजड़ी गृहस्थी बस जाएगी, और नवनीत के बच्चों-कच्चों में ही उसका शेष बुढ़ापा आराम से बीत जाएगा।

क्या हो गया इसी बीच इसका हरनाम को कुछ पता ही नहीं। उस रात बहूरानी ही उसे लाकर यहाँ छोड़ गई थीं, यह कह कर कि उसका मालिक यहाँ बीमार पड़ा हुआ है, कि दिल्ली से तो वह कुछ दिन पहले ही लौट आया था पर आते ही फिर माया से लड़ाई ठान ली थी। कहा कि दिल्ली से ही किसी नई बँदरिया को साथ लाए थे, तब माया कैसे उनके साथ रह कर निबाह कर सकती थी ? बाहर इसी मकान में रह रहे थे कि उन्हें बीमार पाकर एक रात वह बँदरिया सब कुछ बटोर कर सोया छोड़ नौ-दो-ग्यारह हो गई थी। भुगतें अब किए का। कब तक और कोई पत्नी किसी का साथ दे ? नाम भी तो बताया था बहूरानी ने उस बँदरिया का—मरजली या मरगरीट, ऐसा ही कुछ नाम तो था। पूछने पर नवनीत ही ने जब हँस कर टाल दिया था तो भरोसा क्यों नहीं करता वह ? आखिर उसके सरकार के ही रंग-ढंग इन दिनों कहाँ समझ आ रहे थे उसे ? मानपुर से चला भी तो वह किसी ऐसी बँदरिया के साथ था। कहीं यही तो नहीं थी वह मुँहजली मरगरीट ? बहूरानी को तब दोष दे भी वह तो कैसे ?

लेकिन इस बीमारी से बढ़ कर तो और कुछ हो नहीं सकता। अच्छा ही हुआ कि खुद सरकार ने आज सवेरे पाती लिख कर भेज दी। घर के आदमी से मान-अभिमान कैसा ?—नहीं बहूरानी को घर लौटने में देर हुई होगी। स्कूल की नौकरी जो है। आखिर नौकरी करना भी ऐसी बहू के भाग में बदा था। घरवाला ही ऐसा मिल जाए तो कोई करे भी क्या ?—पर, सुबह का भूला शाम तक भी घर लौट आए तो वह भूला नहीं कहलाता। अब भी कुछ बिगड़ा नहीं है। बहूरानी आ जाए, अपने घरवाले की सेवा अपने हाथ ले ले तो वह भी जिसकी अमानत है उसे सौंप कर निश्चित हो जाए। बाबू भी चंगा होते देर न लेगा तब। आखिर, बीमारी शायद यही तो है।

नीलम और आरती बहन से क्यों इत्ती चिढ़ हो गई सरकार को ? मानपुर में ही इन लोगों से मिलना-जुलना बन्द कर दिया था। कोई कहता है अधर भैया को फाँसी भी इन्हीं की वजह से हुई, पर किसी के कहने से ही क्या किसी को फाँसी हो सकती है ? वह अंग्रेज तो नाव उलट जाने से मरा था न। कोई कहता

है कि टीकू और अधर लाल पुराने राजबन्दी थे। कानून की बारीकियों को बेचारा बेपढ़ा हरनाम क्या जाने। कौन हत्यारा है, कौन नहीं, यह देखना कानून ही का तो काम है।—पर वे दोनों ही अपना घरबार उठाकर यहाँ क्यों चली आईं ?—तार पाकर वह गया था मानपुर में उनके यहाँ मालूम करने, पर तब वे दोनों ही रवाना हो चुकी थीं। उस दिन गोपालजी के मन्दिर ही में जब मिल गई थीं और पूछा था उसने तो कहा तो यही था उन्होंने कि यात्रा पर निकली हैं, और अब तो यहीं गोकुल-वृन्दावन में ही वास करने का इरादा है। मानपुर में रहा ही कौन है उनका ?—एक विधवा, और एक जनम कुआँरी।—क्या करें बेचारी अबलाएँ ?

यही सब कुछ सिनेमा की तस्वीर की तरह हरनाम के अंतर में चल रहा था और उसका हाथ धीरे धीरे नवनीत के मस्तक को सहला रहा था कि एकाएक एक भयानक हिचकी के साथ नवनीत उठ बैठा, और मुँह से वमन क्या हुआ, उसका सारा अन्तर ही बाहर आ टपका। तमाम बिस्तर ही नहीं, दूर तक फर्श खराब हो गया। और पेट से निकलता भी क्या ?—खाया तो उसने था नहीं गए कुछ दिनों से। केवल दूध और दवा पर जीवन चल रहा था। किन्तु पानी के साथ ही जो निकला वह हरनाम को बेकाबू करने के लिये काफी था। उस द्रव पदार्थ में रक्त की काफी मात्रा थी। नवनीत की आँखें मानों फटी पड़ रही थीं। छाती धौंकनी की तरह चल रही थी, साँस सीने में समा नहीं रहा था, और सारे बदन में पसीना छूट आया था। आँखों में पानी भर गया था।

छाती दबाते हुए हरनाम ने कहा, "क्या हुआ है मालिक ?"

नवनीत ने केवल उसकी ओर दृष्टि घुमा दी।—स्मृति के पटल पर घुमड़ती हुई वह रात, जीवन में पहली बार शराब चखकर किधर निकल पड़ा था वह ? बस्ती की मटरगश्ती के बाद हनुमानजी के मन्दिर की ओर पास के खेत में पड़ी गाड़ी से टकरा गया था न। वहीं उसे उबकाई के साथ वमन हुआ था। पिछले पहर जब उसका नशा कुछ कम हुआ था तो खैर मनाई थी उसने कि इस दुरवस्था में किसी ने उसे देखा नहीं था, और अपने शरीर का परिष्कार करके वह मुँह अँधेरे ही घर लौट आया था। पूछने पर हरनाम से उसने कुछ कहानी गढ़कर सुनादी थी। लेकिन अभी क्या उत्तर दे वह ? उसकी जीभ ही ऐंठी जा रही है। गले में मानो किसी ने तारों का सख्त ब्रुश फेर दिया है, ऐसी है कहाँ जलन और

खराश।

हरनाम ने नवनीत को सवाल से और अधिक परेशान करना उचित नहीं समझा। लपक कर भीतर से वह एक लोटे में पानी और उपयुक्त बर्तन के अभाव में थाली ही उठा लाया। नवनीत ने दो घूँट पानी पीकर कुल्ला किया। कुल्ले के साथ भी भीतर छाती में जमे रक्त और बलगम के थक्के बाहर आ निकले। हरनाम ने साहस नहीं खोया, कहा, "कपड़े बदलने पड़ेंगे मालिक। मैं खुलवा देता हूँ।"

हरनाम ने नवनीत के कपड़े बदलवाए। उसके बाद सहारा देकर उसे उठाया तथा खिड़की में एक ओर बिठा दिया, जब तक उसने बिस्तर की और ओढ़ने की चादरें बदल दीं। फिर नवनीत को पुनः बिस्तर पर लिटाकर आनन-फानन में फर्श पर भी सफाई कर दी। नवनीत केवल टुकुर-टुकुर देखता रहा। बोला कुछ नहीं, उसका मन कहीं अतीत में आरती की इसी तरह की परिचर्या पर चला गया था। हरनाम इसी बीच भीतर से एक पतीली ले आया था, खाट के नीचे सरकाकर बोला, "अब जी घबड़ाए तो इशारा कर देना मालिक! ओढ़ने-बिछौने के और तो कपड़े हैं नहीं।"

नवनीत ने मुस्कराकर स्वीकृति जाहिर कर दी, और स्वस्थ होने के लिए कुछ क्षण आँखें बन्द किए लेटा रहा। कुछ देर बाद उसने आँखें खोलीं तो देखा कि हरनाम का हाथ उसके सिर पर है, पर आँखें कहीं खिड़की के बाहर शून्य आकाश में कुछ खोज रही हैं।

नवनीत ने क्षीण स्वर में कहा, "मुझे क्या हो गया हरनाम?"

"आपको कुछ सपना आया था क्या मालिक?"

"सपने ही तो आते रहते हैं रे, नींद कहाँ आती है? अभी तो साँझ नहीं हुई न?"

"नहीं मालिक, यही डेढ़-दो बजे होंगे अभी तो!"

"गला सूख रहा है रे। कुछ पिलाकर तर कर दे न!"

"साबूदाना मिला कुछ दूध दे दूँ सरकार?"

"पागल है क्या? जी ही निकाल डालना चाहता है एकदम? देखा नहीं, कैसी कै हुई थी कलेजा ही बस बाहर निकलना रह गया था!"

"पर मालिक, पेट में कुछ न रहने से भी तो आँटियाँ पड़ जाती हैं, आँतें

कुलबुलाने लगती हैं और तभी जी मचला कर ऊपर उठ आता है तो उसके साथ खून भी निकल पड़ता है। डॉक्टर ने तो कहा भी था हुजूर !"

'तू तो उससे भी बड़ा डॉक्टर है न ! आखिर इतनी सेवा कर रहा है तो तेरा कहना ही कैसे टालूँगा ? डॉक्टर जहर भी दे तो बीमार बिना किसी झिझक के ले लेता है, मैं भी ले लूँगा। पर अभी तो थोड़ा, न सही कुछ पानी ही डाल दे गले में ! चिरे हुए गले से तो बोला भी नहीं जाता न !"

"साबूदाना तो तैयार कर रखा है हुजूर ! ले आऊँ ?"

"कर रखा है ? पर अभी नहीं। कुछ देर बाद लूँगा। अभी तो एकाध चम्मच पानी दे दे बस !"

हरनाम ने उठकर पास की सुराही से गिलास में पानी भरा और चम्मच से नवनीत के मुँह में डाल दिया। हरनाम फिर वहीं आ बैठा तो नवनीत ने कहा, "उस वक्त तो जी बहुत घबरा रहा था, पर लगता है मानो छाती से एक रोड़ा हट गया। पानी से भी कुछ तरावट आ गई है ! तुझे नहीं लगता ?"

"थोड़ा साबूदाना, कुछ नहीं तो दूध ही ले लें, कुछ ताकत भी महसूस होने लगेगी सरकार।"

"लूँगा, कहता है तो जरूर लूँगा, पर कुछ ठहर कर। अब तो काफी समय हो गया न ! तेरी बहूरानी के आने की तो अब क्या आशा की जाए ?" और वह किंचित मुस्करा पड़ा।

"क्यों नहीं की जाए मालिक ? आप तो जानते ही होंगे, आपके ससुर साहब के सुरगवास के बाद से ही स्कूल में मास्टरनी का काम करती हैं न ! अभी कहाँ से लौटी होंगी स्कूल से ?"

"अच्छा ! मुझे तो कुछ मालूम नहीं था भई ! खुद कहा था उन्होंने ?" और हरनाम के भोलेपन पर वह मुस्कराए बिना नहीं रह सका !

"रोज ही तो स्कूल जाते देखा है मैंने उन्हें ! लौटते ही जैसे ही खत देखेंगी दौड़ी आएँगी।"

"और कहाँ जाएँगी ? महरी ने कहा था कि घर पर नहीं हैं !"

"नौ बजे से पहले ही पहुँच गया था न वहाँ ?" मुस्कराकर नवनीत ने कहा !.

"वहाँ से लौटकर ही तो गोपालजी के मन्दिर पहुँचा था, तब साढ़े नौ बज

रहे थे।"

"तो बुद्धूराम, जो स्कूल नौ बजे चलता रहता है, वह ग्यारह बजे तक बन्द हो ही जाता है। और जो ग्यारह से चार या पाँच बजे तक चलता है, वह नौ बजे खुलता ही नहीं ! समझा ?"

हरनाम नवनीत का मतलब समझ गया। तो क्या बहूरानी सचमुच लौटकर नहीं आएँगी ? अपने आदमी की ऐसी हालत की भी परवाह नहीं होगी उन्हें ? बहूरानी को तो वह तब से जानता है। ऐसा कैसे हो सकता है ? पति तो नारी का स्वामी ही होता है, इस जनम का ही नहीं, जनम-जनम का। तब यह धरती ही टिकी किस पर रहेगी ?

हरनाम से कोई उत्तर न पाकर नवनीत ने कहा, "न आएँ सो ही ठीक है रे ! आकर है ही क्या यहाँ पाने को ? देख तो रहा है, चला-चली की तैयारी नहीं लगती तुझे यह सब ?"

"यह आप क्या कह रहे हैं राजा बाबू ? मुझ बूढ़े की सारी उमर आपको लग जाए !"

"पर किसके लिए ? जिस पर कुछ जोर होता है, उसने ही जब अनसुनी कर दी तो…"

"नहीं मालिक, मेरा मन कहता है, बहूरानी जरूर आएँगी। आप मन छोटा न करें !"

फीकी हँसी हँसकर नवनीत ने कहा, "नहीं, मन छोटा नहीं करूँगा। पर उससे क्या होगा खुद तो बड़ा बन नहीं सकता न ! कहा था न उन्होंने तुझसे कि मार्गरेट नामक बँदरिया को दिल्ली से साथ ले आया था मैं ?"

"अब उन बातों को याद करने से क्या होगा मालिक ? अब साबूदाना ले आऊँ ?"

"कुछ ठहर जा ! कब कहा था तुझसे यह ? क्या मानपुर से आते ही कहा था ?"

"यह तो तब कहा उन्होंने जिस रात मुझे छोड़ने यहाँ लिवा लाई थीं वे। उसके पहले तक कहाँ थी एक खरोंच भी उनके मन पर आप के लिए ?"

"खरोंच अभी भी नहीं होगी हरनाम, यह मैं जानता हूँ ! कौन पत्नी इतना सहती है रे ? तू तो आखिर मुझसे ज्यादा ही उन्हें जान-समझ पाया होगा !

तभी तो रह गया था वहाँ ! बुलाया भी तो तुझ पर विश्वास रखकर ही न !"

"नहीं मालिक। तार तो मुझे आपके ही नाम का मिला था। मथुरा का था इसी से तो समझा था मैं कि आप सुसराल ही तो गए होंगे ! स्टेशन पर फिर खुद बहूरानी मिल गई थीं।"

"और तूने भी तो उस रात मुझे एक लड़की के साथ ही लखनऊ रवाना होते देखा था !"

"वही छोरी थी क्या यह दिल्लीवाली बँदरिया सरकार ?"

नवनीत केवल मुस्करा कर रह गया। प्रतिवाद करे तो किसलिए ? इस बूढ़े स्वामिभक्त सेवक के मन को व्यर्थ आघात पहुँचाने से क्या लाभ ? जिस मन से इसने नवनीत की सेवा की है, उसी मन से ही तो उसने माया की भी सेवा-आराधना की है। माया नवनीत को प्राप्त न हो तो यह नवनीत के ही कर्मों का फल हो सकता है, पर हरनाम किस पाप के फल से अपने हृदय में निराश हो ?

कुछ देर ठहर कर नवनीत ने कहा, "हरनाम, यहाँ किसी वकील को पहचानता है ?"

"वकील ? एक हैं तो हुजूर, जो आपकी सुसराल में आया-जाया करते हैं !"

"सुसराल में ? नाम जानता है उनका ?"

"सुरेश बाबू कहते हैं उन्हें सब !"

ओह, तो वह है सुरेश नारायण, उस सभा का उपाध्यक्ष जबकि अध्यक्षा माया का परदे की ओट छिपा रहना आवश्यक हो गया था।

"नहीं, वह नहीं हरनाम ! मैं एक वसीयत कर जाना चाहता हूँ !"

"तब तो वही ठीक रहेगा न मालिक ! बहूरानी के भरोसे का ही तो आदमी लगता है वह !"

"इसीलिए नहीं ! मेरी चिन्ता तेरी बहूरानी की नहीं है। उनके पिता काफी पैसा छोड़ गए होंगे उनके लिए। और कहता है न तू, वे भी तो अब नौकरी करती हैं !"

"तो उससे ही क्या उनका हक मारा जा सकता है मालिक ?"

"नहीं, मारा तो नहीं जा सकता, पर मुझ जैसे गरीब का दान लेकर वे छोटी हो जाएँगी और ऐसा है ही क्या कि उनका हक मारा जाएगा ? इसके आलावा उनके लिए एक व्यवस्था है भी। पाँच-छः साल की नौकरी हो गई है न, वहाँ से

जो कुछ भी मिलना होगा, वह उन्हीं को तो मिलेगा। उनका नाम जो दे रखा है मैंने !"

मानो बोलते-बोलते नवनीत थक गया हो, उसने कुछ विश्राम लिया और कहा, "साध नहीं है भाई, कि और जीवित रहूँ ! जीवित किसी आशा के लिए ही तो रहा जाता है ! दुनिया भी कम नहीं देखी इसी बीच ! जरूर छाती ठोक कर नहीं कह सकता कि मुझसे कोई भूल नहीं हुई। ठोकर खाए बिना जहाँ कुछ सीखा ही नहीं जाता हो, कौन वहाँ ठोकर नहीं खाता ? पर ऐसी अजीब दुनिया है कि हर ठोकर खानेवाला अपनी ठोकर भूल कर दूसरे ठोकर खानेवाले पर जी खोलकर हँसता है। है न ?"

"राजा बाबू, अब आप बहुत मत बोलिए। बोलने से सिरदर्द बढ़ जाएगा !"

"सो जानता हूँ हरनाम ! क्या मालूम, कब अचानक ही बोल बन्द हो जाए ! मन की कह तो लूँ ! कोई बात नहीं, वकील न भी हो तो भी उपाय है। लखनऊ को पोस्ट ऑफिस में पाँचेक हजार के लगभग रुपए होंगे। कम भी हो सकते हैं, ज्यादा भी। किताब मानपुर में ही है। साँस चलते रहने तक दवा-दारू में और फिर फूँकने-फाँकने में समझ ले, पाँचेक सौ खर्च हो जाएँगे। क्या कर जाऊँ तेरे लिए यही सोच रहा हूँ ! इस बेकार नाकाम आदमी की जगह सरकारी नौकरी होती तो पेंशन का हकदार हो गया होता। ज्यादा नौकरी की ही कहाँ उमर है तेरी ? अच्छा, कोई ऐसी छोटी-मोटी दूकान जहाँ ज्यादा मेहनत न करनी पड़े—पान-बीड़ी की दुकान से भी तो गुजर चल सकता है न !"

हरनाम ने आँसू पोंछ कर कहा, "क्या कह रहे हैं सरकार, आप ! आप लाख बरस जिएँ। मुझ बूढ़े निपूते को आप लकड़ी दे दें यही मेरे लिए सबसे बड़ी बात होगी मालिक ! मुझे और कुछ नहीं चाहिए मेरे राजा ! मेरे अगले दस जनम की उमर आपको लग जाए।"

नवनीत ने मुस्करा कर कहा, "दस जनम के साथ दस-दस मौत भी तो होती हैं न ! खैर, न मरा तो तुझे मैं देखता ही रहूँगा। पर आगे की सोच लेने में बुराई क्या है ! दो हजार में तो पान की दूकान लग जाएगी न ! पोस्ट ऑफिस के कुछ फॉर्म हैं मेरी जेब में। मानपुर से चला था तभी डाल लिए थे। दस्तखत कर जाऊँगा। और उससे भी बड़ा एक काम करना होगा।"

हरनाम कुछ नाराजी का नाटक करके कहते हुए उठ खड़ा हुआ, "आप चुप

न रहेंगे तो मैं ही उठकर चला जाता हूँ। मुझसे ऐसा कोई आपका काम नहीं हो सकेगा !"

हाथ बढ़ाकर नवनीत ने उसका हाथ थाम लिया, और कुछ मुस्कराकर कहा, "नाराज भी नहीं हो सकेगा हरनाम ! मरने वाले की बात नहीं सुनने से पाप लगता है ! और मेरा तो इस दुनिया में तेरे सिवा है ही कौन ! बाप कहे तो, माँ कहे तो, भाई कहे तो—सभी कुछ तू ही तो है। तू नहीं करेगा मेरा काम तो और कौन करेगा !"

हरनाम की आँखें फिर डबडबा आईं। नवनीत ने भी आँखें बन्द करलीं और कहा, "कर्जा है, और बहुत भारी कर्जा है मुझ पर हरनाम ! तेरी आरती बहन का ! अधर लाल को फाँसी हुई। शायद तू नहीं जानता कि मैं उन्हें बचा सकता था, और जैसी सेवा उन लोगों ने मेरी की थी, उसे देखते हुए अपने प्राण देकर भी मुझे उन्हें बचाना चाहिए था !" फिर एक लम्बी साँस लेकर कहा,—"बेसहारा हो गई हैं वे ! कैसे बीतेगा उनका पहाड़-सा जीवन ? पर मेरी बाकी सब बची-खुची सम्पत्ति की मालिक वे होंगी। बँटाने को तो तेरा भार भी वे बँटा सकती हैं पर किसी के भरोसे में तुझे नहीं छोड़ूँगा। उनके लिए भी कागज पर दस्तखत मैं कर दूँगा। वह कागज और मानपुर की गृहस्थी की जो चीज़ तुझे नहीं चाहिए वह उन्हें सौंप देनी होगी।"

आरती का नाम सुनते ही हरनाम को एक नई आशा जाग्रत हुई। उसने कहा, "हुजूर, मैंने कहा था न आपसे, आरती बहन और नीलम देवी भी यात्रा पर यहीं आई हुई हैं। बुला लाऊँ उन्हें ?"

मुस्कराकर नवनीत ने कहा, "क्या होगा बुला लाने से ? और बुलाने से ही क्या कोई आ जाएगा ? जिसका हक था और जिस पर हक था, बुलाने से भी जो नहीं आया तो किसको पड़ी है कि किसी ऐरे-गैरे के बुलावे पर घर का काम या देव-भक्ति छोड़कर जगह-कुजगह घूमता फिरे ?"

"नहीं मालिक, सवेरे जब मन्दिर में आपकी बीमारी की खबर उन्होंने सुनी तो उन्हें बहुत अफसोस भी हुआ और आपका हाल बराबर देते रहने को भी कहा !"

"अचरज नहीं हुआ उन्हें कि मैं भी यहीं हूँ ?" मन ही मन मुस्कराकर नवनीत ने कहा !

"नीलम देवी जी को तो नहीं, पर आरती बहन ने तो जरूर पूछा था !"

"फिर क्या कहा तैंने ?"

"कहता क्या ? कहा कि आपकी सुसराल यहीं है न !"

"अच्छा ? तब तो जरूर और कुछ पूछा होगा उन्होंने ?"

"आपकी सुसराल का पता पूछा !"

"और तूने बता दिया ! हूँ ?"

हरनाम हकबका गया। पता पूछने पर कोई कारण नहीं था कि वह उन्हें न बताता पर मानो शीघ्र ही कुछ याद हो आया हो, वह बोला, "पर मालिक, यह मैंने उनसे नहीं कहा कि आप वहाँ नहीं, यहाँ होंगे !"

"तब भी क्या होगा ? अगर दोनों वहाँ पहुँच गई होंगी, और उन्हें मालूम हुआ होगा कि विप्लव-दल की वह सभानेत्री और कोई नहीं, उसकी पत्नी मायावती ही है, तो ? कहीं ऐसे ही उपसर्ग ने तो नहीं माया को यहाँ आने से रोक लिया ?"

—हरनाम अपने ही उत्साह में कहने लगा, "कम-से-कम यह तो होगा मालिक, आपको जो कुछ कहना-सुनना या देना-दिलाना हो, आप खुद उन्हें दे सकेंगे !"

"और तब उन्हें इनकार करने का भी मौका मिल जाए ! यही चाहता है क्या ? खैर, मेरी सुसराल का पता तो वे तुझसे जान गई, पर उनका ठिकाना तू कहाँ से मालूम करेगा ?"

"मैंने पूछ लिया था उनसे ! आप हुकुम दें तो थोड़ा-सा साबूदाना दे दूँ अब आपको। और फिर कुछ ही देर में खबर दे आता हूँ मैं उन्हें ! डर यही है कि आपको अकेला छोड़ जाना पड़ेगा।"

हँसकर नवनीत ने कहा, "सो तो एक दिन छोड़ना ही पड़ेगा न ! अच्छा दे, जो कुछ खिलाना-पिलाना हो। और खाना तूने भी कहाँ खाया होगा ? तू भी ले आ। इतनी ताकत तो आ गई है, मैं बैठकर साबूदाना निगलता हूँ और तू मेरे सामने बैठकर जो पकाया हो खाले। कुछ न पकाया हो तो साबूदाने का ही हिस्सा करना होगा !"

अमन्द उत्साह में भरकर हरनाम ने नवनीत को साबूदाना खिलाया, उसके साथ ही खुद भी इच्छानुसार अपने लिए पकाई हुई खिचड़ी खाई, और जल्दी

ही सब काम निपटाकर चल पड़ा वह नीलम और आरती को खबर देने के लिए। एहतियात के लिए खाट के नीचे से निकाल कर पतीली उसने एक स्टूल पर रख दी ताकि यदि कभी कै हो नवनीत को तो बिना किसी कठिनाई के वह उठाले उसे। पानी का गिलास भी पास ही रख गया वह। आरती बहन और नीलम देवी को, हो सका, तो वह साथ ही लेता आएगा और आएगा बहूरानी के घर की तरफ होता हुआ ताकि यह तो मालूम हो कि उन्हें चिट्ठी भी मिली या नहीं। जरूरत हुई तो बहूरानी को साथ लिवा लाने में वह आरती और नीलम की सहायता भी आसानी से पा सकेगा।

और जब वह चला गया तो किसी तरह उठकर नवनीत ने जो सबसे पहला काम किया वह था जेब से निकालकर पोस्ट ऑफिस से पैसा निकालने के फॉर्म पर हरनाम और आरती का नाम लिखकर दस्तखत करना। उन्हें फिर से जेब में रखकर वह पुनः खाट पर लेट गया, आनेवालों की राह में कान बिछाए हुए।

नहीं, दो ढाई से अधिक नहीं बजा है। मन और शरीर जब दोनों ही भारी हों, और करने को या मन लगाने को जब कोई साधन न हो तो समय पहाड़ जैसा लगता ही है। मायावती के आने की आशा तो कभी नष्ट नहीं हो सकती, अन्त तक बनी रहेगी। इतनी लोभनीय, इतनी प्रेय वह पहले कभी नहीं थी तो क्या हुआ? न भी आए तो भी नवनीत माया को दोष नहीं देगा। ऐसी तेजस्विनी पत्नी पाकर कौन पति गर्व नहीं करना चाहेगा? कितनी बड़ी परीक्षा ली जा रही थी उस विचार-भवन में उसके नारी-स्वभाव की? उत्तेजना, भर्त्सना कचोट एक के बाद एक, और फिर उसी त्वरा से प्रतिद्वन्द्वियों का रंगभूमि में क्रमशः अवतरण। नवनीत को सभा की कार्यवाही का एक-एक क्षण पुनः जीवित होता हुआ लगने लगा। मानो इस नई अभिज्ञता के साथ कि उसकी पत्नी माया-वती ही तो सभानेत्री के आसन पर बैठी उसके प्रति आरोपों को सुन रही है, और उन पर उसे तटस्थ हो कर विचार करना है। सारी भूमिका फिर से खेलेगा वह?

नहीं ही आए वह तभी शुभ है। उसके लिए भी और नवनीत के लिए भी। नवनीत की यदि यह अंतिम यात्रा ही हो तो माया का मोह इसे भारी क्यों करे? और माया ही स्वयं क्या पालेगी? एक उत्ताप, जो शायद जीवन भर के लिए

उसके साथ चिपक जाए। यदि यह सुरेश नामक युवक उसकी कृपा का पात्र हो उठा तो ईर्ष्या से नवनीत क्यों जल उठे ? नहीं उसका उन दोनों को आशीर्वाद है। जो कुछ नवनीत माया को नहीं दे सका, वह किसी दूसरे से क्यों न प्राप्त करे वह ? कौन उसको सुख के अधिकार से वंचित कर सकता है ? सभा के शेष क्षणों में ही उसने घोषणा करदी थी न कि नवनीत माया को किसी सम्बन्ध की भावना से परवश या विवश समझने की गलती न करे। क्यों करे तब वह यह गलती ?

और क्यों भेज दिया अब उसने आरती या नीलम को ही खबर देने के लिए हरनाम को ? नहीं, अब कुछ उपाय नहीं हो सकता, वह चला गया है। क्या पता, पहुँच ही गया हो अब तक और जबकि वे दोनों यहाँ विद्यमान हों, उस समय अगर माया भी यहाँ आ टपके तो ? नवनीत के अधरों पर हास्य फैल गया मौत के कगार पर खड़े होकर भी जो अपनी दृष्टि अपने पीछे खड़ी तीन-तीन उम्मीदवारों पर चिपकाए रखे, उसका सामने गिर जाना जितना जल्दी हो उतना ही अच्छा नहीं है क्या ? पर जीवन में नवनीत जब इतना सब कुछ देख सका है तो यह भी सही। उसकी आशा को पंख लगाकर माया तो आए एक बार !

आरती और नीलम भी उसके निमंत्रण पर चली ही आएँगी, क्या यह उसका इच्छानुवर्ती तर्क नहीं है ? जिसे विधवा बनाने की सारी जिम्मेदारी उस पर है, जिसका भरे यौवन में उसने जीवन-रस सुखा डाला, सेवा की मूर्ति होकर भी क्या वह रमणी उससे सहानभूति रखेगी ? और नीलम ? आरती शायद आ भी जाए, पर वह जोन ऑफ आर्क भी क्या उसी तरह चली आएगी ? कितनी तेजी के साथ ललकारा था उसने नवनीत को सभा-भवन में ? नवनीत के दृढ़ उत्तरों की बाढ़ में जब सुरेश नारायण के पैर लड़खड़ा उठे थे तब नीलम ने ही तो अपने तीक्ष्ण व्यंग्य से उस बाढ़ को क्षीण किया था। नवनीत के पैर ही तो आखिर उसी ने उखाड़े। पुष्टिमार्ग की भक्ति का रस पीकर भी कोई इतना कोमल कैसे हो जाएगा ? राख पोत लेने से ही क्या अग्नि का तेज नष्ट हो जाता है ? बल्कि वह राख ही नहीं क्या जो अवसर के लिए उसकी सहज शक्ति को सहेजे रखती है ? नीलम की उस न बुझ सकने वाली आग ने ही तो उसे प्रतिहिंसा के मार्ग पर ढकेल दिया था। शराब, षड्यन्त्र, हत्या, गद्दारी, मुखबरी क्या बचा है उससे ?

षड्यन्त्र, हत्या नवनीत ने तो इन्हें राष्ट्रप्रेम के बड़े नेक इरादे से ही अंगीकार किया था। मधुपान की उस पहली रात के बाद आरती से वह प्रत्यक्ष कोई सम्पर्क नहीं रख सका, किन्तु अधर लाल तो सभी समय उनके पास ही बने रहते थे। आरती ने उससे उस शाम की घटना कही या नहीं कही, किन्तु अधर लाल ने कभी यह आभास भी नहीं होने दिया कि उन्हें नवनीत से किसी तरह की कुछ शिकायत भी है। उसकी श्रद्धा अधर लाल पर से कभी कम नहीं हुई। कितना ऊँचा, कितना स्पष्ट और कितना उदात्त व्यक्तित्व था। और तब भी कितना निस्पृह ? जिस व्यक्ति में इतिहास की धारा को मोड़ देने की शक्ति थी, लगन थी, और जिसने उसके लिए कीमत चुकाने में कभी कंजूसी नहीं की, इतिहास के निर्माण के समय वही दूर तट पर जा बैठा धारा से मानो बिल्कुल असंपृक्त। और इतिहास बढ़ गया उसके संधान से बहुत दूर होकर। किसी भटके हुए उपन्यासकार ने यदि उसे अपने क्षुद्र कल्पनावी उपन्यास की छिछली धारा में प्रक्षालित कर दिया तो क्या हुआ ?

रेडियर से विप्लव-दल की योजना जान लेने में नवनीत को कुछ भी कठिनाई नहीं हुई थी। उस दिन जब नवनीत और अधर लाल आने वाले अतिथि के निवास की व्यवस्था पर विचार कर रहे थे तो सहसा ही नवनीत ने कहा था, लेकिन अधर भैया, आखिर इतनी सारी माथापच्ची का लाभ क्या होगा ?

"लाभ का क्या प्रश्न है भाई ? हम नौकर आदमी ठहरे। ऊपर के अफसरों के आदेश मानना ही तो हमारा सबसे बड़ा लाभ है। लाभ नहीं, वह तो कर्तव्य है। हाँ, हानि की चिन्ता हमें जरूर करनी चाहिए।"

"पर इस सारे इंतजाम का कुछ उपयोग भी होगा ? रेडियर कह रहा था···"

"रेडियर ?" लेकिन तब भी कोई विशेष दुश्चिन्ता या आशंका का भाव नहीं था अधर लाल के चेहरे पर, नवनीत ने खास करके लक्ष्य किया था। एक सामान्य अजनबी के प्रति जो उत्सुकता होती है, बस।

"मेरा मतलब है डॉ० रेडियर से। तुम जानते हो।" कुटिल हँसी हँसकर बोला था नवनीत।

"ओह वह दाँत का डॉ० रेडियर ? हाँ, एक दिन बेपर की उड़ा तो रहा था कि मि० किट्सन उसके मित्र हैं। इंग्लैंड में दोनों में जान पहचान हुई थी।

पर भाई, मैंने उसे शह नहीं दी। आई हो अगर कोई चिट्ठी उसके पास सीधी वहाँ से तो आग जाने और लुहार जाने। हमें क्या? हमें तो जो सूचना गोपनीय रखनी है, वह हम गोपनीय रख ही रहे हैं।"

"लेकिन अधर भैया, वह तो कहता है कि उनको यहाँ पहुँचने देने के पहले ही—नहीं समझे? समझते तो हो, पर मुझे बना रहे हो, है न? पर भैया, मैंने ऐसा क्या कसूर किया है जो मुझ पर विश्वास नहीं किया जा सकता?"

अधर लाल ने सहज ही कहा था, "अविश्वास की बात ही क्या है! और यदि विश्वास ही की बात हो तो अविश्वास की ही बात कहाँ थी! यदि रेडियर ने सब कुछ कहा है तो यह तो तुम्हें स्पष्ट हो ही गया होगा कि पोस्ट ऑफिस की बदनामी का कोई मौका नहीं आने दिया जाएगा।"

"मैं पोस्ट ऑफिस की नहीं कह रहा। उसमें कौन सी जान है कि मैं परवाह करूँगा। मैं कहता हूं देश की सेवा करने का तो सब को अधिकार है। मुझे ही क्यों नहीं हैं!"

"कौन कहता है तुम्हें नहीं हैं! पर सभी काम तो एक व्यक्ति ही नहीं कर सकता न। इसके अतिरिक्त तुम किसी दल के निकट बाध्य भी तो नहीं हो। इसका यह मतलब तो नहीं कि तुम में देश-प्रेम नहीं हैं।"

"तो ठीक है। मैं किसी दल का सदस्य हूँ या नहीं, यह कोई बात नहीं। मैं कहता हूँ तुम्हारी यह योजना सारी संयोग पर निर्भर करती है और इसीलिए गलत है। यदि यह पूरी न हुई तो जानते हो, इसका मतलब होगा देशद्रोह।"

"पर हम फल की चिन्ता क्यों करें! प्रयत्न तक ही तो हमारी सीमा है।"

"पर फल से आँख मूँद कर काम नहीं किया जा सकता अधर भैया! आँख बन्द करके लक्ष्य तक पहुँचने की चेष्टा का क्या होता है! खासकर तब, जब कि राह ऊबड़-खाबड़, टेढ़ी-मेढ़ी और बाधाओं से भरी हुई हो। नहीं इस योजना को संयोग पर नहीं छोड़ा जा सकता। इसे कामयाब होना ही है और वह कामयाब होगी इस तरह।"

और फिर नवनीत के सुझाव पर ही सारी योजना की रूप-रेखा नए सिरे से बनी थी। मध्य रात्रि में नौका-विहार का कार्यक्रम, खाने-पीने की प्रचुर व्यवस्था और फिर एक झगड़े का नाटक। अधर लाल ने हँस कर कहा था, "देश-भक्ति नहीं, आंग्ल-विरोध की भावना का उबाल है, यह नवनीत बाबू।"

नील की नाँद में गिर कर रँग गए सियार की तरह पाँचवें सवार में इस तरह नवनीत ने भी नाम लिखवा लिया था। पर कुछ ही समय बाद मानो उसे चुनौती देने के लिए ही संयोग के सहारे शर्ली और रेडियर तालाब से बच निकल कर प्रकट हो गए। उनका प्रकट हो जाना सभी के लिए संकटजनक था, किन्तु नवनीत ही सबसे अधिक संत्रस्त हो उठा था। सचमुच ही क्या वह कायर था, विप्लव-दल को उसने प्रेरित भी तो करना चाहा था कि इन दोनों की हत्या करके मार्ग साफ कर लिया जाए, किन्तु अधर लाल उससे अधिक जानते थे। यों ही वे हत्याएँ बढ़ाना नहीं चाहते थे। फिर शर्ली और रेडियर तो अब राज्याश्रय में थे। उन्हें पा सकना विप्लव-दल के लिए भी सहज नहीं था। अधर लाल के पास स्पष्ट उपाय नहीं था, पर नवनीत की तरह भयत्रस्त या व्याकुल वे कभी नहीं देखे गए, न उपाय खोजने के लिए व्यग्र। चिन्ता के मारे नवनीत का हाल अवश्य बुरा हो गया था, उसकी मद-पान की मात्रा अति के निकट पहुँच चुकी थी। ऐसा ही तो वातावरण था उस रात को मानपुर में—

अप्रैल के दिन थे। होली बीत चुकी थी, पर हवा में अबीर और गुलाल छाया हुआ था। न खास ठंड थी न खास गरमी। रात और दिन बराबर हो चले थे। बसन्त की मस्ती और ताजगी वातावरण में रही हो, पर नवनीत के मन में अवसाद और तलखी भरी हुई थी। दल की सदस्या होने के नाते नीलम से उसका परिचय बढ़ता जा रहा था, और आरती की अंतिम इच्छा के अनुसार वह उससे निकटता का व्यवहार भी करने लग गया था, किन्तु इससे उसकी आरती विषयक तृष्णा बढ़ ही चली थी। जितना ही वह आरती को मन से निकाल फेंकने की चेष्टा करता, उसके ध्यान में वह उतनी ही गहरी गड़ती जा रही थी। नीलम के व्यवहार से नवनीत यह तो समझ गया था कि आरती ने नीलम से उस रात की बात नहीं बताई है। अधर लाल को भी नहीं बताई थी आरती ने। तो क्या यह भी आरती की आसक्ति का कोई अबूझ अलक्ष्य प्रमाण है? कहीं आरती के चेतन और अवचेतन में तो कोई युद्ध नहीं है, नवनीत को लेकर? यदि ऐसा हो तो नवनीत को आरती की राह को निष्कंटक करना होगा। पर कैसे? शराब पीकर और अधिक से अधिक अपने चैतन्य से दूर हट कर वह मार्ग खोजने में लग जाता। वह अपने ही हाहाकार से प्रताड़ित था। इधर

शर्ली और रेडियर फिर प्रगट हो गए थे। यद्यपि सारा विप्लव-दल इससे संकट-ग्रस्त हो जाएगा। पर मानो सबसे अधिक चिन्ता नवनीत को अपनी ही हो गई थी। अब उतना आत्मविश्वास या सिद्धान्तों के प्रति मर मिटने की आस्था वह पाता कहाँ से ?

दस-ग्यारह बज गये होंगे रात के, जब नवनीत ने बाहर दरवाजे पर साँकल खटखटाई। अब वह पहली रात का चुल्लू से चख कर उल्लू हो जाने वाला नौसिखिया नहीं, कुल्हड़ से ढकोसने वाला पका पकाया पियक्कड़ हो चुका था। नशे की खुमारी उसके लड़खड़ाते पैरों और जीभ पर ही दिखाई देती, मन के और किसी व्यापार में उसे लक्ष्य करना सामान्य व्यक्ति के लिए सभव नहीं था। हरनाम ने दरवाजा खोला तो उसे कुछ कष्ट ही हुआ, आश्चर्य नहीं। पर जब वह ऊपर पहुँचा तो उसकी प्रतीक्षा में बैठी हुई नीलम नवनीत को देख कर अवश्य आश्चर्यहत हो गई। सिर के रूखे बाल बिखरे हुए, मुँह में सिगरेट, पर आधी जल-जलाकर वह कब और कैसे बुझ गई, इसका पीने वाले को भी पता नहीं। लाल-सुर्ख फटी-फटी-सी आँखें कपाल पर चढ़ी हुई, पैर धरती से उठे हुए। कोट कन्धे पर लटका हुआ, नवनीत का एक हाथ कोट के भीतर की जेब में पड़ी हुई बोतल पर था और दूसरे हाथ में सिगरेट का टिन था। नीलम की उपस्थिति का उसे पता नहीं था। आते ही सिगरेट के टिन को दरवाजे के पास की टेबल पर रख कर उसने जेब से बोतल निकाली, उसे जलती हुई लालटेन की रोशनी के सामने किया और उसकी ओर ओठ सिकोड़ कर धप्प की आवाज के साथ टेबल पर रख दिया। फिर कोट को उतार कर कुर्सी की बाँह पर लटका दिया, और कुर्सी को खींच कर जैसे ही वह बैठा कि उसकी दृष्टि नीलम पर जा पड़ी। नीलम ने बैठे ही बैठे हाथ जोड़ कर कहा, "नमस्ते नवनीत बाबू।"

"अख्खाह, नीलम देवी। माइ गॉड। व्हॉट ए लक !"

उल्लास के साथ जैसे ही नवनीत ने कहा, कि उसके ओठों में दबी सिगरेट छिटक कर उसकी गोद में आ गिरी मानो वह जल रही हो, इस तरह कपड़े झाड़ कर वह उठ खड़ा हुआ। नीचे गिरी सिगरेट की ओर देखते हुए नीलम की ओर मुँह कर वह टेबल के एक कोने पर ही बैठ गया, बोला, "पहचान में ही नहीं आईं आप तो एकाएक। देखे भी तो बहुत दिन हो गए न।" और उसने एक और सिगरेट निकाल कर ओठों में फँसाली।

"पहचान में तो आप भी कठिनाई से ही आए हैं। मुझे नहीं पहचान सके, यह तो सहज बात ही है। जिसे भूल जाना है, उसे पहचानने के माने ही क्या हैं!"

"पर आपको भूल जाना क्या आसान है? रह-रह कर याद दिलाया करती हैं न! इस इनायत करम पर सदके।" और उसने पेंट की जेब से दियासलाई निकाल कर सिगरेट जलाई।

हरनाम कोट को कुर्सी पर से उठा कर खूँटी पर टाँग रहा था। उसने हरनाम की ओर दृष्टि डाली। हरनाम ने आकर जूतों को उतारने का उपक्रम किया तो नवनीत ने कहा, "मैं उतार लूँगा, रहने दे। पर दोस्त, खाना-वाना कुछ बना है या नहीं?"

"खाना तो कभी का बन गया है हुजूर। चूल्हे पर गरम रखा है।"

"चूल्हा जल रहा है न?—तो कुछ नमकीन, न हो पकौड़े बना दे चटपटे।"—फिर एक दृष्टि बोतल की ओर डाल कर नीलम की ओर देखते हुए बोला, "क्लब गया हुआ था। आपको तो मैंने शायद कहा था न कि हम लोगों ने एक क्लब बनाया है यहाँ। कहीं से थानेदार जालिमसिंह गैरकानूनी शराब की बोतलें बरामद कर लाया था।—ह ह ह।—शराब इस जमाने में कानूनी भी होती है नीलम देवी।—और नाम भी क्या खूब है थानेदार का। पर है बड़ा प्यारा आदमी। कह गया है, और भी बोतलें चाहिए तो वह इन्तजाम कर देगा। इससे भी बढ़िया जमा कर रखी है हरामजादे ने।"—फिर हरनाम की ओर देख कर कहा, "अरे, मेरी शक्ल क्या देख रहा है? कहा न तुझसे। मसालेदार चटपटा, अच्छा-सा कुछ नमकीन बना ला।—ओ हो! पियूँगा तो कौन-सा आसमान सिर पर उठा रहा हूँ?—नीलम देवी क्या नहीं जानतीं?—विलायत में तो यह रोजाना का रिवाज है उल्लू।—जा, जल्दी कर।"

हरनाम भीतर चला गया तो जूते उतारते-उतारते नवनीत ने कहा, "जिद्दी बहुत हो गया है। बहुत पुराना कोई नौकर हो तो वह सिर पर ही चढ़ जाता है, मानो बड़ा-बूढ़ा वही तो है। नहीं जानता कि इस जमाने में लड़के अपने सगे बाप की भी चिंता नहीं करते। झूठ कहता हूँ क्या?"

नीलम ने कहा, "किन्तु वे अपने आपको कुटुम्ब का व्यक्ति जो समझते हैं। जितना त्याग वे करते हैं, उतना घर का आदमी भी कहाँ करता है?"

"यह बात तो आपकी ठीक है। देखिए न बेचारा कैसी सेवा करता है ? इतने नाज तो घर की बीवी भी नहीं बर्दाश्त करती न ! और आज-कल तो बराबरी का अधिकार चाहती हैं, बराबरी का। कमा कर लाने में चाहे बराबरी का दावा न करें।" और वह हँस दिया, "कहिए, आज आप किधर भूल पड़ीं ? जरूर कुछ खास बात होगी।"

"नहीं, खास बात कुछ नहीं है। आपका यह हरनाम ही, कहना चाहिए, घसीट लाया।"

"अच्छा। बड़ी ताकत है इसमें। कुछ शिकायत करता था क्या ?"

मुस्करा कर नीलम ने कहा, "कोई आपकी बॉस हूँ कि मुझसे शिकायत करेगा ?"

"वह तो यही चाहता है कि कोई मेरा बॉस हो। बिना नकेल का हो गया हूँ न ! क्या करूँ, आपको तो शायद मालूम नहीं, नकेल डालने वाली भी ले आया था सिर पर सेहरा बाँध कर। शायद नहीं जानती होंगी आप कि हमारे यहाँ शादी के लिए दूल्हे को सिर पर सेहरा बाँधना पड़ता है। नकेल क्या डालने लगी वह, नाक में तीर ही पिरोने लग गई। मैंने कहा, माफ करो भाई। कटी नाक और फटे कान लेकर इस सभ्य समाज में जिन्दा किस तरह रहा जा सकेगा ? और बस——बिदा कर दिया एक शाम को अपने पीहर। ह ह ह। ठीक किया न ?"

"आपके विवाह की कथा जानती हूँ मैं। आरती काकी ने कहा था उस दिन।"

"आरती काकी ? ओह, आपकी काकी मेरी भाभी होती थी न ! कैसी हैं वे ? कुछ कहती थीं मेरे बारे में ?"

"हैं तो कुशलपूर्वक ही। आप तो आजकल शायद उधर जाते नहीं। कहेंगी क्या, आपके विवाह की बात तो वैसे ही किसी प्रसंग में आ निकली थी।"

"नहीं जानता वह प्रसंग क्या था, पर अनुमान लगा सकता हूँ। अब आप ही कहिए नीलम जी, क्या जब चाहे तब किसी से भी शादी-ब्याह किया जा सकता है ? खास कर खाई से निकल कर कौन एकाएक कुएँ में गिरने को तैयार होगा ? आप की बात मैं नहीं कह रहा—बल्कि यही देखिए न, आप जैसी अत्यंत ऊँचे विचार, संस्कृति, शिक्षा-दीक्षा और सौंदर्यमयी रमणी—"

नीलम संकुचित हो उठी। नवनीत को बीच में रोक कर उसने कहा, "जाने

दीजिए नवनीत बाबू, उस बात को। कितना पानी तब से पुल के नीचे बह गया है। वह भी एक समय था कि एक सनक सवार थी मुझ पर। शायद अधर काका और आरती काकी शह न देते तो सनक के पैदा होने का भी प्रश्न नहीं था। मेरी नसों में तो वह संस्कार भी नहीं कि विवाह के बिना नारी का जीवन ही पूर्ण नहीं होता।"

सिगरेट का एक लंबा कश लेते हुए नवनीत ने कहा, "और मैं समझता रहा कि आपके नाम की आड़ में वे कुछ और ही बात कहती जा रही हैं।" और नीलम की दृष्टि बचाने के लिए उसने राखदानी में सिगरेट को झटकना शुरू कर दिया।

नीलम ने आश्चर्य की मुद्रा में कहा, "कहते क्या हैं आप ?"

नवनीत उठ खड़ा हुआ और बोला, "माफ कीजिए। जरा ये कसावट के कपड़े बदल लूँ। घोड़े की जीन समझ लीजिए न। आदमी आराम से हिल-डोल भी नहीं सकता, बैठना दरकिनार रहा। एक मिनिट लगेगा, यदि आप इजाजत दें।"

"हाँ-हाँ, जरूर। हाथ-मुँह धो-धुला कर आराम से बैठिए। देर तो हुई है, किन्तु विप्लव-दल के सदस्यों के लिए दन क्या और रात क्या ?"

"ओ येस, यह तो मैं भूल ही गया था। यू आर ए प्रेटी जोन ऑफ आर्क। यह आया मैं।" और हँसता हुआ वह दूसरे कमरे में चला गया। शराब की बोतल उसी तरह टेबल पर पड़ी रही।

जरूर नवनीत पिए हुए है, वरना इतना मुखर वह नहीं है। पर, नियंत्रण पूरा है उसे अपने आप पर। लेकिन आरती की क्या बात कह गया यह ? आरती काकी, और उनके साथ कोई छल की बात हो ? या नवनीत ही का भ्रम है ?

हरनाम उसे घर से जबर्दस्ती ही बुला लाया था। कह रहा था इन दिनों मालिक अनाप-शनाप शराब पीने लग गए हैं। रात को कब आते हैं, इसका कोई ठिकाना नहीं, कभी-कभी रात भर भी गायब रहते हैं। क्लब क्या बना लिया है, शराबखोरी और कबाब खोरी का अड्डा है। सोने जैसी देह मिट्टी में मिला डाली है। समझाने वाला कोई है नहीं। हरनाम कुछ कहता है तो उसी पर बरस पड़ते हैं। एक बार तो नशे में उसे घर से बाहर ही निकाल दिया था। बेचारा रात भर बाहर पड़ा रहा। जाकर आरती बहन से समझाने को कहा था, किन्तु

वे किसी भी तरह जाने को राजी नहीं हुईं। हार कर इसीलिए वह नीलम देवी के पास गया था कि वे समझाएं तो शायद कुछ मान ही जाएँ। इच्छा नीलम की भी आने की नहीं थी, किन्तु हरनाम का आग्रह प्रबल था । भीतर ही भीतर शायद उत्सुकता भी थी कि हजरत हैं किस हालत में, यही देख लिया जाये। रब्त-जब्त अवश्य कम हो गया था, किन्तु विप्लव-दल के किट्सन-शर्ली काँड में नवनीत की भूमिका प्रमुख थी और, प्रत्यक्ष चाहे न हो, उस दल की परोक्ष सदस्यता के नाते ही नीलम का भी उस काँड से कुछ संबंध तो था ही।

जो कुछ हरनाम ने कहा था, उसमें अत्युक्ति तनिक भी नहीं है। जिस वेश-भूषा और हालत में बस्ती की सड़क पर चल कर हजरत घर पहुँचे हैं, नीलम ने अपनी आँखों से देख ही लिया है। स्वास्थ्य पहले का आधा भी नहीं रहा—और बोतल तो अभी भी टेबल पर रखी हुई है। क्या नीलम के कहने का कुछ असर होगा इस दुर्वृत्त युवक पर ? दुर्वृत्त तो है ही। आरती के बारे में क्या कहना चाहता है यह ? तभी भीतर से एक प्लेट में कुछ पकौड़ियाँ लिए दबे पाँव हरनाम भीतर आया और प्लेट को टेबल पर रख कर आँखों ही आँखों में नीलम से पूछा कि वह कहाँ है ?

नीलम ने कहा, "हाथ-मुँह धोने शायद गुसलखाने में गये हैं। क्या रोज यह बोतलबाजी चलती है ?"

"रोज ही का काम है नीलम देवी। अच्छा, एक काम करता हूँ, बोतल ही हटा ले जाता हूँ और खाना लगा देता हूँ। आप बैठी हैं तो शायद लिहाज कर जाएँ।"

"कर देखो यह भी।" हरनाम बोतल हटा कर भीतर चला गया और शीघ्र ही एक थाली में खाना लगा कर ले आया। टेबल पर रख कर जाना ही चाहता था कि दूसरे दरवाजे से नवनीत ने प्रवेश किया। कपड़े उसने बदल लिये थे। सिर के बाल भी जमे हुए थे। कंधे पर रखे तौलिए से मुँह पोंछते-पोंछते उसने कहा "अरे, यह क्या ? खाना लगा लाया ? खाना लगाने को किसने कहा था तुझसे ? और वह बोतल क्या हुई ? मैंने कहा था न कुछ नमकीन बनाने के लिये ?"

"पकौड़ियाँ बना तो ली हैं सरकार।"

"तो क्या इन चोकर की चपातियों के साथ चबाने को बनवाई हैं ? गधा

कहीं का। रोज देखता है और रोज नए सिरे से सिखाना पड़ता है। नहीं समझ में आता तो मेरा पीछा क्यों नहीं छोड़ता? किसी भले से छोकरे को रखने से ही क्या मेरा काम नहीं चल जायेगा? अब मेरा मुँह क्या ताक रहा है खड़ा-खड़ा? नीलम देवी बैठी हुई हैं, वरना इसी वक्त हाथ पकड़ कर निकाल बाहर करता। ले जा थाली यहाँ से। और देख, कुछ सोडा—"

"लेकिन सरकार मेहमान के सामने तो—"

"यानी मेहमान के सामने तू मेरा मालिक बनेगा और मैं तेरा हुकुम मानने वाला नौकर?"

"नहीं हजूर मेरा मतलब—"

"मैं खूब समझता हूँ तेरा मतलब। और नीलम देवी कोई गैर हैं क्या? अबे गधे, तुझे क्या मालूम, एक दिन ये ही इस घर की मालकिन हो सकती थीं। जा, ले आ बोतल, गिलास और सोडा। खाना बाद में होगा। मैं नीलम देवी से भी प्रार्थना करूँगा कि वे भी यहीं खाएँ।"

नीलम लज्जा से गड़ी जा रही थी, यद्यपि हरनाम नवनीत के व्यंग्य का अर्थ नहीं समझ पाया था। खाने के प्रस्ताव पर नीलम ने कहा, "मैं घर से खा-पीकर चली हूँ। मैं नहीं खा सकूँगी।"

नवनीत ने हँस कर कहा, "सुना हरनाम के बच्चे? क्या कहती हैं मेहमान? खा-पीकर चली थीं, खाकर ही नहीं, पीकर भी। और तू मुझे ही उपदेश दे रहा है?"

नीलम ने उठ कर कहा, "जी नहीं, मेरी बात का आप गलत अर्थ लगा रहे हैं। शराब मैं छूती भी नहीं। आप अपना खाना-पीना कीजिए, मैं आप में से किसी को लज्जा में डालना नहीं चाहती।"

नवनीत ने दरवाजे के सामने खड़े होकर हँसते हुए कहा, "चली कैसे जाओगी? बात तो हुई ही नहीं कि आखिर कष्ट क्यों किया आपने? मेरी कसम। जा नहीं सकेंगी आप इस तरह। मेरे पीने से ही अगर आपको एतराज हो तो नहीं पियूँगा मैं। बैठिए-बैठिए, वादा करता हूँ, असाध्य नहीं बनूँगा। बैठिए। हरनाम, नहीं बोतल-वोतल नहीं, खाना भी अभी नहीं। बाद में खाऊँगा अब। और तुझे राह देखते बैठे रहने की जरूरत नहीं है। मैं अपने हाथ से लेकर खा लूँगा। तू जा, सो रह।"

नीलम पुनः अपने मोढ़े पर बैठ गई। नवनीत ने कुर्सी खींच कर टेबल की ओर पीठ करके कहा, "आप नहीं जानतीं नीलम देवी, कितना दर्द उठाना पड़ा है मुझे। कोई उस दर्द को समझ नहीं सकता। इच्छा करना और फिर इच्छा को पूरा न कर पाना, कौन समझता है इसका दर्द? इस डर से ही तो वे इच्छा ही नहीं करते। और जानती हैं न आप? जिनमें इच्छाएँ, वासनाएँ नहीं होतीं, वे अपनी उम्र के बावजूद बूढ़े हो जाते हैं, जड़ होते जाते हैं। मेरा दोष यह है कि मैं उम्र के साथ ही बूढ़ा होना चाहता हूँ, पहले नहीं। इसीलिये इन पूरी न हुई इच्छाओं का दर्द दबाने के लिये ही मुझे सिगरेट पीनी पड़ती है, शराब पीनी पड़ती है, और अगर जरूरत पड़ी तो किसी दिन जहर भी पीना पड़ सकता है।"

"यह क्या कह रहे हैं आप? जहर क्यों पीना पड़ सकता है आपको?"

नवनीत ने सिगरेट को हाथ लगा कर कहा, "सिगरेट तो पी सकता हूँ न, या इजाजत नहीं है?"

"नहीं-नहीं। सिगरेट ही क्यों, चाहें तो आप शराब भी पी सकते हैं। शराब से मैं डरती नहीं हूँ। मैं तो सिर्फ यही कहती थी कि मेरी वजह से आप क्यों किसी असुविधा में पड़ें? अरे हरनाम, ओ हरनाम। जा, गिलास-सोडा-बोतल सब जो ये चाहें, ले आ। मुझे इसमें क्यों एतराज होने लगा?"

"सचमुच?" नवनीत ने सिगरेट जला कर खड़े हो नीलम को झुक कर सलाम किया, फिर कुर्सी पर बैठ कर बोला, "अंडरस्टैंडिंग, व्यक्तित्व की आवश्यकता को गहराई से अनुभव करने की क्षमता बिरले ही व्यक्तियों में पाई जाती है नीलम देवी। बल्कि इस समझदारी के अभाव से ही तो पीड़ित का दुःख बढ़ जाता है। यदि उस समझदारी का लाभ उसे मिल पाता तो शायद वह शराब पीना ही प्रारम्भ नहीं करता कभी। नहीं क्या?"

हरनाम पुनः शराब की उस बोतल के साथ गिलास और सोडे की बोतल रख गया। अवश्य ही उसका मुँह भारी हो गया था। नीलम ने लक्ष्य किया भी, पर कर ही क्या सकती थी वह? हरनाम जाने को हुआ तो नवनीत ने कहा, "नमकीन की प्लेट भी दे जाना हरनाम।"

नीलम ने कहा, "आपकी पीड़ा मैं नहीं जानती, आपकी इच्छा-आकाँक्षाओं का भी मुझे ज्ञान नहीं है, किन्तु उनके भार को दबाने का आपका यह तरीका तो

हानिकर ही होगा न ?"

गिलास में पहले कुछ मदिरा और शेष में सोडा भर कर नवनीत ने कहा, "पर उपाय क्या है ?"

"क्यों, उपाय क्यों नहीं है ? निराश होने पर सब तो पीने नहीं लग जाते। पर, तभ भी आप की निराशा क्या है ?"

नवनीत ने सिगरेट थमे हाथ से ही गिलास उठाया और नीलम की ओर बढ़ा कर सिर से ऊँचा उठाते हुए कहा, "आपके मधुर स्वास्थ्य का पान मदाम।" और एक घूंट गले में उतार कर टेबल पर गिलास रखते हुए उसने मुस्करा कर कहा, "पूछती हैं आप मेरी निराशा क्या है ?" हरनाम आया और पकौड़ियां भरी प्लेट टेबल पर रख निर्वाक लौट गया—"अब यही देखिए, मेरी गृहस्थी का मालिक है यह हरनाम। कहीं तुक दिखाई देती है इसमें आपको ?"

"नहीं दिखाई देता, पर यह तो हरनाम का दोष नहीं है।"

एक और घूंट गटकते हुए उसने कहा, "जरूर उसका नहीं है, मेरा है। शायद यही कहना चाहती हैं न आप ?"

"यदि आप दूसरा विवाह उचित न समझते हों तो अपनी पत्नी को क्यों नहीं मना लेते ?"

"पत्नी मान जाएगी, इसकी आशा नहीं है, और दूसरा विवाह जिससे करना चाहूँ अगर वह स्वयं इसके लिए राजी न हो तो ?" और मानो किसी अप्रिय स्मृति को उभर कर आने देने से रोकने के लिए उसने आधे से अधिक गिलास गले में खाली कर दिया।

"भारत में तो अभी तक लड़कियाँ अपनी मरजी से पति चुनने को उत्सुक दिखाई नहीं देतीं। कौन है ऐसी लड़की, जो आपको एकाएक पसन्द न करे ?"

"मेरी पत्नी भी तो उन्हीं में से एक है।" हँस कर नवनीत ने कहा, "और पति चुनने की बात कहती हैं आप। आपकी आरती काकी की ही बात ले लीजिए न। आखिर अधर लाल तो उनके स्वयंवर के पति हैं न ! नहीं क्या ?" और वह हँसता रहा।

"उनका स्वयंवर तो विशेष परिस्थितियों में हुआ था। स्वयंवर वे इसे मानती हैं, पर कहेगा कौन उसे स्वयंवर ? हाँ, यह बात दूसरी है कि अपनी उपलब्धि पर पछताने का उन्हें कभी कोई कारण या अवसर नहीं है, न उन्हें मिला

ही है ।"

"इसीलिए तो हँसी आती है नीलम देवी ।" और इस बार सारा गिलास खाली करके आवाज के साथ टेबल पर रखते हुए उसने कहा, "पछताने का अवसर तो जवानों को आता है, जो नित्य नवीन इच्छाओं, वासनाओं से प्रेरित होते हुए आगे, हमेशा आगे बढ़ते रहते हैं । और यह विवाह का क्षेत्र तो मानव के विधि-निषेध ने ऐसा बना दिया है कि सिर्फ एक को पसन्द कर लो, और शेष सबको—ना, छोड़ देने से ही काम नहीं चलेगा, सब को नापसन्द करना होगा, सब से घोर घृणा करनी होगी । और पसन्द भी क्या ? गले में जो ढोल बँध गया, उसी को तो बजाते जाना है ता–उम्र । हा-हा-हा ।" और उसने एक गिलास और भर लिया, इस बार सोडे की मात्रा कम, शराब की अधिक थी ।

नीलम ने कहा, "पर आरती काकी तो किसी से घृणा नहीं करतीं ।"

"घृणा नहीं करतीं ? अस्वीकार तो करती हैं न । उनकी बात को जाने दें नीलम देवी । वे अपने आपको बहुत सुन्दर, पढ़ी-लिखी और ऊँचे खानदान की समझती हैं न । भई, हैं भी तो । अपना मुबारकबाद । यह गिलास उनके स्वास्थ्यपान में ।" और उसने उसी तरह गिलास सिर के ऊपर उठा कर ओठों से लगा लिया । तब तक उसका दूसरा हाथ हवा में उड़ कर किसी का अभिनन्दन करता रहा ।

नीलम ने कहा, "किन्तु नवनीत बाबू, पुरुष के जीवन में क्या नारी ही नारी है ? नारी के अलावा और कुछ नहीं है क्या ? जैसे राष्ट्रप्रेम, देशप्रेम, जनसेवा, ये बहुत बड़े-बड़े दायरे हों तब भी, जैसे व्यवसाय, खेल-कूद, किसी ललित-कला में रुचि, सार्वजनिक हित का कोई कार्य—"

"यानी जीवन को फुसला कर, लक्ष्य को झुठला कर उपलक्ष्यों में ध्यान दिया जाए !"

"पर मानव-सभ्यता तो इन्हीं उपलक्ष्यों की राह चल कर पल्लवित-विकसित हुई है न ?"

हँस कर नवनीत ने कहा, "यह बात भी एक तर्फा है नीलम देवी । राष्ट्र-सेवक, कलाकार, धर्मध्वजी अपनी भूमिका का औचित्य प्रमाणित करने के लिए ही यह सब कुछ बकवास करते हों तो क्या पता ! दुनियाँ क्या दिन ही की होती है ! रात की नहीं; जरूर, जो केवल दिन ही को जागते रहते हैं, और रात भर

खुर्राटे भरने की आदत हो गई है, वे ऐसा ही कहेंगे। पर सृष्टि में इस भूलोक को छोड़ कर दिन-रात और हैं ही कहाँ ?" और उस गिलास को खाली करके उसने दूसरे गिलास को भरने का उपक्रम कर डाला।

नीलम ने कहा, "आप यह तीसरा गिलास तैयार कर रहे हैं। इतना क्यों पीते हैं ? आपके स्वास्थ्य के लिए यह उचित नहीं होगा नवनीत बाबू।"

"मुश्किल यही तो है नीलम देवी। शराब पीने का जो उपदेश देते हैं, वे पीते नहीं। पीना शुरू करते ही फिर ऐसी बात वे कर नहीं सकते। स्वास्थ्य क्या है ? और शराब क्या नहीं है?" नवनीत की वाणी पर शराब का असर होने लग गया था, वह लड़खड़ाने लग गई थी।

"लेकिन आप तो मानो अपने आपको इसी को समर्पित करते जा रहे हैं ?"

"एक अवस्था आती है न नीलम देवी, तब अपने आपको पकड़े नहीं रखा जा सकता। उस वक्त कम्बख्त जो भी सामने आजाए, उसी की बाहों में—क्या कहा आपने, आत्म-समर्पण न ? वो हो जाता है, चाहे सामने शैतान हो, या तुम जैसी सुन्दरी हो, या···"

"आप मेरा नाम क्यों लेते हैं ! कह चुकी हूँ मेरी आपके प्रति कोई आसक्ति नहीं है।"

नवनीत ने एक घूंट और पीकर कहा, "नहीं है न ! यही तो अच्छी बात है। तुम जैसी, नहीं। मगर तुम्हारी वो सहेली—ऐं ! सहेली नहीं, काकी हैं न तुम्हारी तो ! आरती—काकी, आरती—काकी, मगर—क्या कह रहा था मैं नीलम देवी ! हाँ-हाँ, उनकी बाहों में आत्म-समर्पण हो जाता है। यही चाहा था मैंने बी। पर बहोत कंजूस हैं तुमारी वो आरती काकी। बाहें समेट ली उन्ने। और तब इस शराब ने थाम लिया मुजको, नहीं अब ये मुजे नहीं छोड़ेगी और मैं इसे नहीं छोड़ूँगा नीलम देवी।" और फिर एक ही साथ वह आधा गिलास खत्म कर गया।

नीलम ने नवनीत की आरती विषयक आसक्ति की बात सुनी तो बैठी की बैठी रह गई। क्या, यह बात भी सच हो सकती है ? नवनीत ने आरती को प्यार किया ! अवश्य ही आरती काकी को यह तथ्य मालूम हो गया होगा, और नवनीत को इसके लिए ताड़ना भी दी होगी, तभी तो शायद आज-कल नवनीत उनके सामने जाने से कतराता है। कह भी तो गया था वह अभी कि वह समझ

बैठा था कि नीलम की आड़ में आरती अपनी ही बात कहती थीं। गलतफहमी की यही भावना तो कहीं नवनीत के मन में जमी रह कर कालान्तर में वृक्ष नहीं हो गई ?

हरनाम दूसरी प्लेट में और पकौड़ियाँ लेकर आया तो नवनीत ने कहा, "ओ। आ गए मेरे सरकार हरनाम सिंगजी ! मैं समझा कि आरती काकी के साथ तुम बी गोल हो गए। अरे यार, सोडा भी खत्म हो गया। हो तो दे जाना न, नहीं तो कुछ परवा नहीं। मैं सोडे का गुलाम नहीं हूँ, नहीं हूँ। जा मुँह क्या देखता है ! ऐसे देख रहा है जैसे पुलिस का सिपाही हो। सबूत है तेरे पास कि वह मदारी का बच्चा, मदारी नईं बाबा, मदारी नईं, वो मदरासी रेडियर, जिन्दा है ! मैं पूछता हूँ, जिन्दा है ?"

हरनाम ने नीलम की ओर हताश-दीन दृष्टि से देखा। नीलम भी सोच रही थी कि अब और यहाँ बैठे रहने से क्या लाभ है, नवनीत को इस समय तो हर्गिज समझाया नहीं जा सकता, तो चली क्यों नहीं जाए वह ? पर एकाएक ही यह रेडियर की क्या चर्चा छेड़ बैठा है ! रेडियर तो शायद तालाब में डूब कर मर गया था न ! वह जिन्दा है ? इधर हरनाम ने जब देखा कि नीलम अपने ही विचारों में लीन है तो हाथ फैलाकर निराश वह भीतर चला गया।

नवनीत ने कहा, "तेज आप में भी कम नईं है नीलमदेवी—आरती काकी ने तो उसकी बात बार-बार कही ई है। मगर—" और गिलास को लालटेन की रोशनी में उठाते हुए कहता गया, "इस परी का तेज अजीब निराला है नीलम-देवी। है न ? तुम्हारा तेज जलाता है, डराता बी है, उसमें आरती की तरह कोमलता नईं है। उसमें जनता की खिदमत के बहाने मुलामियत बी नईं है कि कोई उसके साथ खेलने की हिम्मत कर सके। बचता रहा हूँ तुमसे सो ठीक किया न ? तुमने कब्बी मेरी सेवा का बहाना नईं किया। पर ये परी तो गले के नीचे उता-रते ई बनती है।" और वह सारा गिलास बड़े मजे से गटागट पी गया।

नीलम ने कहा, "आप क्या कह रहे थे, डॉक्टर रेडियर जीवित है ?"

"जालिम सिंग कह रहा था साला। उसी ने तो ये बोतलें दी हैं। गले में हाथ डाल कर बोला था साला, 'अरे यार नौनीत, तू तो मेरा यार है न। रेडियर जिन्दा है तो तू ये बोतल ले जा, और पीकर हजम करजा साले को इस पानी के साथ'।" और नवनीत ने बोतल को ही हाथ में उठा लिया। आधी से अधिक वह

ख़ाली हो चुकी थी। उसकी ओर देखते हुए बोला, "साला हरनाम, सोडा नईं लाया न ! रेडियर का बाप लगता है। मगर जालिम, ये तेरा यार नौनीत बी तो कलेजे वाला है। ले देख, सोडा नईं तो नईं सही।" और बोतल को ही मुँह से लगा कर वह पीने लगा। कंठ ने कुछ विरोध किया पर उसने अपने बहादुर कलेजे पर हाथ रखा और छल-छल करती बोतल शेष हो गई। आँखें अंगारे सी जलने लगी थीं उसकी, और वे मानो कपाल में से निकल आकर छिटक पड़ना चाह रही थीं। नीलम केवल देखती ही रह गई, कुछ कर सकना उसके लिए सम्भव भी नहीं था।

बोतल को टेबल पर रखते हुए नवनीत कह रहा था, "दुनियाँ इसे शराब कहती है न ? बोतल में है तो शराब हो गई, पर औरत की आँखों में क्या है यह ? नईं तुमारी आँखों का नशा दूसरी किसिम का है, मगर आरती की आँखें ? बाप रे, एक पूरा मैखाना है ! है न ?"

नीलम को विरक्ति हो चली थी। शराब के निकट जिसने अपने आपको समर्पण कर दिया हो, वह स्त्री की आसक्ति की चर्चा के सिवा और कर ही क्या सकता है। कहाँ देवता के मस्तक की मरकतमणि जैसी आरती काकी, और कहाँ यह बोतल का दास अपने ही दंभ में पतित सड़े-महुए का कीट, हीन पुरुष। चली भी जाती वह। पर रेडियर के बारे में यह क्या नई सूचना वह ले आया है ? यदि सच है तो महत्त्वपूर्ण हो सकती है वह। पर तब तक इसका अनर्गल प्रलाप भी तो सुनना पड़ेगा न ?

नीलम ने कहा, "नवनीत बाबू आपने बहुत पी ली है, सीमा से अधिक। आरती काकी के बारे में आपको भ्रम हुआ है, उनकी सेवा में कहीं छल-कपट नहीं हो सकता।"

"बहुत पी ली ? बहुत कहाँ पी है नीलम जी।" और पुनः खाली बोतल को उठा कर उसे आँखों के सामने घुमाते हुए बोला, "ये बोतल खाली हो गई, दो घूँट में ई खाली हो गई, और तब बी पागल कहाँ हुआ ? पिला-पिला कर बी जो कब्बी खाली नहीं वो तो सिरफ औरत की आँख होती है नीलम रानी, औरत की आँख। कित्ती आँखों की शराब पी है मैंने ? नईं जानतीं न ? वो शर्ली तो मरती थी इस नौनीत पर सब ने मिल कर मुझे पागल कर दिया। मगर मैं बी औरत को खूब समज गया हूँ अब। इस शराब ने भीतर की आँखें खोल

दी हैं। कहो तो तुमारे भीतर की बात बता दूँ ? बता दूँ नीलम रानी ?"

"मेरे भीतर की बात ?" जरा तमक कर नीलम ने कहा।

"हा हा हा। इस बोतल की तरह खाली नई हो तुम। यई तो समजाना चाहता था मैं तुमारी आरती काकी को। अधर लाल को छोड़ दें तुमारे लिए, और वे होजाएँ मेरी, बस—"

"नवनीत बाबू।"

किन्तु नवनीत ने मानो कुछ नहीं सुना, उसने खाली बोतल को ही मुँह लगा दिया था, पर जब उस में से कुछ नहीं निकला तो ओठ बिचका कर बोला, "तू बी तो औरत जात है न—मैं अब औरत की परवा नई करता। समजी मेरी जान। मैं उसकी गर्दन तोड़ दूँगा—तेरी बी, इस तरह" और उसने हाथ को खींच कर बोतल को दीवार से दे मारा, एक भयानक आवाज के साथ उसके ुकड़े चारों ओर बिखर गए और वह एक क्रूर अट्टहास कर उठा।

आवाज सुनकर हरनाम भी दरवाजे पर आ गया। नीलम उठ खड़ी हुई थी। नवनीत ने कहा "अरे अर्नाम। ये काँच के टुकड़े बटोर ले। कूड़े पर मत फेंकना, किसी शरीफ आदमी को गड़ जाएँगे। अरे, आप डर गईं नीलम रानी ? मैं नशे में नईं हूँ, मुजे होश है, खूब होश है जी। पर आप नईं जानती, औरत ने मेरे दिल को बी इसी तरह चकनाचूर कर दिया है। नईं, आपको इस तरह उठा कर नईं फेंकूँगा। शर्ली को फेंका था न ? सो तो हाथों में हतकड़ी पड़ सकती है। जालिम, हाँ आँ आँ ! जालिम कह रहा था। वो शराब बी रेडियर के साथ निकल गई है न।" और वह मानो शिथिल होकर कुर्सी पर गिर पड़ा।

हरनाम ने फर्श पर बिखरे काँच के टुकड़े बटोर लिए थे। खड़ी-खड़ी ही नीलम ने कहा, "इन्हें तनिक भी होश नहीं हैं हरनाम। मुझे रोशनी दिखादे, मैं जाऊँगी, मेरे आने का कोई लाभ नहीं हुआ।"

नवनीत ने कहा, "जाना चाहती हो ? अँधेरिया ओ रात। सजन ! जाओ जाओ नीलम रानी। शायद अधर लाल कहीं तुम्हारी राह देख रहे होंगे। है न ? जाओ, नईं रोकूँगा तब।"

"क्या ऊल-जलूल बक रहे हैं आप ?"

"बक रहा हूँ ? आरती भी जानती है, पर वो बकती नईं। पतिवरता पत्नी है न। अरे अर्नाम ! बिस्तर फैला दे। नईं, अब नईं खाऊँगा, नईं खाऊँगा।

जालिम ने कहा था प्यारे, खाना मत, सिरफ पीना, पीते जाना। आज की रात अपनी है। लखनऊ गया था न वो, वहीं से तो खबर लाया साला सुसरा।"

जाती-जाती नीलम रुक गई, उसने हरनाम से कहा कि वह नवनीत के लिए खाना लगाकर ले आए, शायद धुन ही धुन में खाने लग जाए। इसी बीच यदि हो सका तो वह उस बात का पता भी लगा ले जो वह अनायास पहली बार जान रही है। रेडियर और शर्ली यदि बच गए हैं तो अधर लाल को यह खबर जाननी ही चाहिए। साँस रोके वह पुनः अपने आसन पर बैठ गई।

उसने नवनीत से कहा, "क्या खबर लाया है जालिम सिंह लखनऊ से ?"

"तुम बी जानती हो उस जालिम को ? कयामत आगई तब तो। हीरों का जौहरी है न वो। थानेदार है मानपुर का, और क्लब में मेरा दोस्त हमपियाला हमपियाला। खुद मुद्दाम बुलाया गया था वो। अरे भई कनफी···कन्फीडीशल धत्तेरे की चमड़े की जीभ शराब की जगह बोतल का दूध पी गई। बोतल में भी आता है न दूध नीलम देवी ?"

नीलम ने पुनः उसे बात पर लाते हुए कहा, कन्फीडेन्शियल रिपोर्ट की बात कह रहे थे न ?"

"होगी साली कान्फीडेशल। अपना क्या? कहता था साला, तालाब की वो घटना एक्सीडेंट नई थी, किट्सन को मार डाला गया। और अब वो अंगरेज बँदरिया भी उस मदरासी मदारी के साथ नाच दिखाएगी। खुब मजा होगा न ?

"शर्ली न ?"

"और कौन ? अब्बी तो अस्पताल में है सुसरी। अरे वा यार अर्नाम, मेरा दोस्त, खाना ले आया। अच्चा भई, तुम कैते हो तो खा लेते हैं। आप तो नई खाएँगी न ? मेरे साथ खाने से जात मर जाती है। मर जाती है तो मर जाने दो जिगर। अरे, ये पराँटे बी तो गरमागरम हैं। कुर्बान जाऊँ तुज पर।"

हरनाम भीतर चला गया तो नीलम ने पूछा, "जब शर्ली बच निकली है तो आपको भी तो खतरा हो सकता है ?"

"और रेडियर से खतरा नई होगा ?"

"वह तो आपके ही दल का जो था ?"

"था तब था, अब तो वो बँदरियाँ का लहँगा पकड़ कर नाचता है। हर आदमी यई करता है न ?"

"अगर आपको खतरा हुआ तो आप क्या करेंगे ?"

"मुजे ? मुजे खतरा नई है। जालिम कह रहा था मुजे खतरा नई है। मैंने किट्सन की हत्या नई की।"

"किसने की उसकी हत्या तब ?" धड़कते हुए दिल से नीलम ने पूछा। क्या कहता है वह देखें ?

गले में निवाला डाल कर हँसते हुए नवनीत ने कहा, "नई, नीलमबाई, डरिए मत। मैं किसी से नई कहने वाला हूँ कि आपके चितचोर अधर लाल ने की है ये हत्या। मुजसे पूछेगा कोई तो कह दूँगा, भई दुर्घटना तो क्या, घटना बी नई हुई। ठीक न ? छुट्टी हुई।" और वह फिर हँस दिया और निवाले पर निवाले ठूँसता रहा अपने गले में।

"लेकिन कोई पूछे कि तब किट्सन कैसे मरा तो ?"

"मौत आई और मर गया। हा हा हा। मौत आई और उसे ले गई। शर्ली उसकी बीवी आई और जैसे खाविन्द को ले गई उसी तरह। हम खड़े देखते ई रह गए। कारवाँ गुजर गया, हम गुबार देखते रहे। हक्क !" नवनीत को एक हिचकी आई। एक क्षण के लिए उसकी बकबक रुक गई।

नीलम ने ध्यान न देकर कहा, "क्या सरकार एक फौजी अंग्रेज अफसर की हत्या के बारे में इतना-सा सुन कर चुप होकर बैठ जाएगी ?"

"नई। बैठेगी क्यों ? वे भी तो शराब पीते हैं, सब साले पीते हैं। किट्सन कित्ती सारी चढ़ा गया था उस रात। देखा नहीं आपने ?"

"और खास कर तब, जबकि वह अंग्रेज लड़की आपके खिलाफ गवाही देगी तो ?"

"मेरे खिलाफ ? मेरे खिलाफ क्यों ? मैंने किसी की हत्या नई की। आप कैसे कहती हैं—?"

"मेरा मतलब है आप लोगों से, यानी आपके दल से।"

"तो सबूत दे न वो ! आप तो जानती हैं न। हत्या हुई हमारे, नई नई, आपके काका अधर लाल की गोली से। अरे शर्ली क्या, शर्ली का बाप भी नहीं जान सकता—नई जान सकता। जानता है तो सबूत दे ! किट्सन मर तो गया, पर वो कभी था बी, इसका क्या सबूत है ? दे कोई सबूत इसका। हे हे हे।" और वह बेशर्मी से अपनी ही बात पर हँस पड़ा।

"नवनीत बाबू, अंग्रेज जाति इस समय कितनी कीनासाज हो गई है। उधर लड़ाई में लगातार उनका पाँसा पलटता जा रहा है। भारत में भी गए अगस्त की आग अभी तक ठंडी नहीं हुई है। कैसी पैशाचिकता से बदला ले रही है अंग्रेज जाति? उसे तो बस, बहाना भर चाहिए। शायद वह न्याय का नाटक भी न करे, और हम सब को जेल में ठूंस दे।"

"तुम जाकर कहो न अपने चितचोर से। अपने दल को कह कर उन दोनों की बी, रेडियर और शर्ली की बी हत्या करवा दें। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसरी। और अगर अधर बाबू को जेल में ठूंस दे तो आरती रानी को तो वहाँ कोई नई ले जाएगा न! फिर तो—" वह रुक गया।

"आप नशे में हैं नवनीत बाबू, और क्या बकते चले जा रहे हैं, इसका आप को शायद कुछ होश नहीं है। अगर होता तो मैं ही आपको बतला सकती कि एक भद्र महिला का अपमान करने का क्या फल मिलता है?" और वह पुनः उठ खड़ी हुई।

नवनीत ने एक हिचकी लेकर कहा, "तो एक काम करो न नीलम बी, अपने प्यारे को लेकर रात-ई-रात में नौ-दो-ग्यारह हो जाओ। अधर लाल नई रहेंगे तो आरती को मैं संभाल लूंगा एं? हिक्क! अच्ची बात नई कही क्या? हा हा हा। पते की तो कही है न?" लेकिन जैसे ही गिलास उठा कर उसने पानी पीना चाहा, एक भीषण हिचकी ने उसके गले को रुद्ध कर दिया। एक क्षण के लिए उसके सारे बदन में फुरहरी छूट गई, और फिर एक दुर्निवार झटके के साथ सामने थाली में उसे कै हो गई। शराब की दुर्गन्ध से सारा कमरा भर उठा।

नवनीत ने सामने देखा और फिर अट्टहास करके बोला, "हा हा हा! साली निकल गई सब! औरत की जात है न शराब बी! पेट में टिकती नहीं। बूढ़े खसम की जवान जोरू बी नई टिकती न घर में? जा रही हो? अरे अर्नाम। नीलम बी जा रही हैं। भाग मत जाना भई, अधर बाबू को लेकर! मैं तो मजाक कर रहा था! मजाक कर रहा था जी। अरे अर्नाम! रहने दे, पहले इनको बत्ती बतादे बत्ती। टा टा। नीलम बीवी, टा टा! मुबारक हो ये रात!" और उसने नीलम को शीघ्र ही नीचे उतरते भी नहीं देखा। वह केवल राक्षस की तरह अपनी करतूत पर हें हें हें करता हँसता रहा, अँधेरे में कहता रहा "मेरे भरोसे आरती को नई छोड़ना चाहती?"

नीलम सीधे वहाँ से अधर लाल के घर पहुँची, और उसने रेडियर तथा शर्ली के जीवित रहने के सम्बन्ध में जो कुछ नवनीत से सुना, सब कह दिया। अधर लाल ने बहुत विचार के बाद भी कुछ तय नहीं किया, शायद कुछ करने के लिए समय की आवश्यकता भी थी। एकाएक भाग जाना संभव नहीं था। रेडियर और शर्ली की हत्या के बारे में विप्लव-दल से परामर्श के बाद ही कुछ तय किया जा सकता था। और जबकि वे राज्याश्रय में हैं, तब बहुत कुछ कर सकना शायद संभव भी नहीं हो। किसी भी कदम के लिए समय तो अपेक्षित है ही।

नीलम के अपने घर चले जाने के बाद कुछ ही समय हुआ होगा कि पुलिस अधर लाल के घर पहुँची और उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। उसी तरह दूसरा जत्था स्वयं जालिम सिंह के नेतृत्व में टीकू के घर पहुँचा। उसे नींद में ही उठाकर बन्दी बना लिया गया। उसके विरोध की कुछ आशंका चाहे पुलिस दल को रही हो, पर टीकम चन्द को स्वयं कुछ पता ही नहीं था, तो विरोध करता ही क्यों और कैसे ?

सारा ही कार्य बड़ी सावधानी के साथ किया जा रहा था। जाने कब रेडियर और शर्ली बच निकल कर प्रगट हुए थे। साल भर होने आया था उस घटना को भी। लगता है वे खुद इतने समय तक छिपे रहे थे, या छिपा रखे गए थे। और जब उन्हें प्रगट होने की सुविधा हुई तो अधर लाल और टीकम चन्द की गिरफ्तारी का प्रबन्ध पहले ही कर लिया गया। मानपुर के थानेदार जालिम सिंह को लखनऊ बुला भेजा गया और किस तरह उसे आगे कार्य करना है, इसकी समस्त हिदायतें दे दी गई थीं उसे। शराब के नशे में उस शाम को जालिम सिंह ने लौटते ही कुछ खबर तो दे दी थी, नवनीत की सहायता की भी तो अपेक्षा थी न सरकार को ? यह तो नवनीत की मनोस्थिति ही ऐसी थी वरना जालिमसिंह के काम में भयानक बाधा उपस्थित हो सकती थी। जालिम सिंह भी अपनी गलती को तत्काल कुछ तो समझ ही गया था, इसीलिए उसने नवनीत की सुरक्षा का कुछ उपाय उसे बता दिया था, ताकि वह बाधा उपस्थित करने के स्थान में अपने ही लाभ के लिए सहायक हो सके। और फिर और भी अधिक सावधानी के लिए ही उस रात उसने अधर लाल तथा टीकू को गिरफ्तार करने का प्रबन्ध कर लिया।

दो ही दिनों बाद नया पोस्टमैन आ गया वहाँ एक मुन्शी सुन्दर लाल श्रीवास्तव—अपने आप में नितांत विशिष्ट। ऊँचाई चार फुट पाँच इंच से भी कम, सींकदार भरी हुई मूँछें जो सिरे पर उठी हुईं, जबड़ों में सदा दो बीड़े सुरती वाले पान भरे हुए, ओंठ भी उसी से मूँछों के बाल की तरह ही काले पड़ चुके थे और उन पर कत्थे की काली पपड़ी ही जमी रहती थी। छोटी-छोटी कंजी आँखों पर ढीला चश्मा, जो हमेशा नाक की उठान पर आकर ही टिकता था। पढ़ते तो सारस की तरह गर्दन उठा कर, पर किसी को देखते तो उसे बिल्ली की तरह झुका कर चश्मे के काँच के ऊपर से ही। चाल बड़ी चुस्त, चलते थे तो हाथ-पैर-सिर-कूल्हे सभी बराबरी की सतह पर योग देते थे। बड़े ही चलता-पुर्जा। आते ही बस्ती ही में नहीं, नवनीत के दिल में भी घर कर लिया। कहते थे कि एक बार एक दूकान पर उन्होंने पीपे से ही पीना शुरू कर दिया था। हालाँकि कीमत उन्हें पूरे पीपे की चुकानी पड़ी, पर लोगों के बीच-बचाव करने से दो किश्तों में वह सारी खुराक खुटाना पड़ी।

पोस्ट ऑफिस में काम की भीड़ दुपहर के बाद ही होती है। स्टेशन से बस के जरिए डाक भी आ जाती है तब तक। डाक के थैलों को फर्श पर खाली करके पोस्टमैन एक-साथ उन पर आमद की मुहर छापता रहता है। सुन्दर लाल मुहर लगाने में भी एक ताल है। खटपट-खटापट की ताल के साथ उसके मुँह में पान-सुपारी-कत्था-चूना-तम्बाकू की लुगदी इस गलफड़े से उस गलफड़े में बराबर घूमती रहती है और उसके बाद एक-एक कर वह डाक छाँटने लग जाता है। प्रायः इसी समय दरवाजे पर भीड़ भी आ जुटती है। जिन लोगों को डाक का रोग होता है वे डाकिए के घर आकर डाक दे जाने की राह नहीं देखते हैं। इधर खिड़की पर आकर खड़े हो जाते हैं और मुँशी सुन्दर लाल एक-एक को पहचान कर या उसका नाम पूछ कर लगभग आधी डाक खिड़की ही पर निपटा देता है। उसके बाद शेष डाक बाँटने के लिए लगती है कस्बे में उसकी फेरी। और फिर सारा समय उसका होता है। कभी शाम तक लौट आता है तो कभी रात भर नहीं लौटता। जब भी लौटता है या तो छक होकर आता है या छक हो कर पी लेता है, फिर दफ्तर में ही एक ओर टाँगें पसार कर सो लेता है।—जोरू न जाँता अल्ला मियाँ से नाता!

खाना-पीना शेष कर नवनीत भी इसी समय दफ्तर में आ बैठता है। खिड़की

पर डाक लेने आने वाले अपनी आवश्यकतानुसार टिकट-लिफाफे भी खरीद लेते हैं, रजिस्ट्री, पार्सल वगैरा भी प्रायः इसी समय होते हैं। चार बजे के बाद बाहर का काम बन्द। तब वह सारे दिन का हिसाब समेट कर पाँच बजे दफ्तर बन्द कर देता है।

खिड़की की भीड़ छँट चुकी थी। एकाध आदमी ही खड़ा था। नवनीत ने देखा कि अब कोई खरीदार नहीं है तो हिसाब ही क्यों न मिला लिया जाए! लेजर-बुक निकाल कर वह उसके अंकों को आँखों में उतारने लगा।

"कुर्बान जाऊँ सरकार, आप भी खूब छुपे रुस्तम निकले!" मुंशी सुन्दर-लाल कह रहा था। वह कब पास आ गया था, इसका नवनीत को पता ही नहीं था। नवनीत ने पहले अपना जोड़ पूरा किया फिर कहा, "क्यों मुंशीजी, क्या बात हो गई?"

"अरे हुजूर, देखा नहीं आपने?"

"क्या देखता भाई!" और दृष्टि उठा कर उन्होंने उस ओर देखा। सुन्दर-लाल की कंजी आँखें काँच के ऊपर से शरारत की हँसी हँस रही थीं। अपने गन्दे दाँत दिखा कर बोला वह,

"कितनी नफासत से जाहिर किए हुए थे कि आपका कभी कोई खत ही नहीं होता!"

"खत? मेरा कोई खत है?"

"एक नहीं, दो-दो सरकार! इत्र से लिखे गुलाबी लिफाफे में बन्द। मुँह मीठा करवाइएगा!"

"अच्छा, किसी की शादी का दावतनामा है? क्या देखें?"

"ऊपर भिजवा दिए हैं सरकार!"

"क्या कहते हो? तुम तो तब से यहीं बैठे हो, हरनाम भी इधर दिखाई नहीं दिया?"

लेकिन तभी दरवाजे पर हरनाम दिखाई दिया। मुंशीजी ने कहा, "लीजिए सरकार, यह हरनाम भाई मुजस्सिम दावतनामा बन कर आए हैं! आए हो न? तलबी हो रही है न ऊपर सरकार को?"

हरनाम मुन्शी सुन्दर लाल से खुश न था। मुँह लगाना दरकिनार, उससे जरूरत से ज्यादा बात-चीत भी नहीं करता था। नवनीत भी यह जानता था।

हरनाम ने नवनीत ही से कहा, "ऊपर मेहमान आए हैं, जरा जल्दी ही आ जाइएगा। मैं जरा बाजार हो आता हूँ।" और वह चल दिया।

नवनीत ने मुंशीजी की ओर देखा। वह अपनी घनी मूँछों में बेशर्मी की हँसी हँस रहा था। बोला, "एक नहीं सरकार, दो-दो चाँद जमीन पर उतर आए हैं, दो-दो। तभी तो कहता हूँ कि हुजूर तो छुपे रुस्तम ही निकले। कभी चिड़े के पूत को भी रोशन नहीं होने दिया!"

"कोई औरतें हैं?"

"तभी तो सीधी ऊपर चली गई हैं! इन चश्मे-बद से तो उस खूबसूरती के पायदान का काम भी नहीं लिया जा सकता न! गुदगुदे मुलायम पैर न छिल जाएँ?"

"—आरती और नीलम के सिवा हो ही कौन सकती हैं? अधर लाल की गिरफ्तारी की ही बात होगी, और क्या? कहला दे वह कि उसे अभी अवकाश नहीं है?"

हाथ की पेंसिल को कान में खोंसते हुए सुन्दर लाल कहने लगा, "घूँघट में हो, पर चाँद बादलों से छिप तो नहीं जाता न! क्या गजब का हुस्न है सरकार? कसम परमात्मा की, कभी देखा नहीं, दिखाई तो बस कलाइयाँ ही दी थीं, मगर क्या कहने सुघड़ाई, गुराई और नफासत के! आँखें चमक से बन्द हो गईं हुजूर। और वह दूसरी तो गजब-गुजार बला है बला! उस चाँद पर तो घूँघट के बादल को ठहरने की ही हिम्मत नहीं हो सकती न! मक्खन की मुलामियत और संगमर्मर की चमक मानो गुलाब की कली में आ मिली हो। और सिन भी महज उठता हुआ। सदकें जाऊँ हुजूर! अब देर न कीजिए। मगर आप—"

नवनीत ने लेजर का आगे वाला पन्ना खोल लिया था।

हँस कर सुन्दर लाल ने कहा, "समझा हुजूर! एक साथ दोनों जब आमने-सामने खड़ी हो जाएँ तो आशिक का वही हाल होता है, जो कैंची में फँसे कपड़े का! दाद दीजिए सरकार, इस्लाम की शरीयत को—दो नहीं, एक साथ चार-चार बेगमें जायज हैं। पर कोई मुजायका नहीं। मेरा मुँह बाद में मीठा करवाइएगा। पहले आप अपना मुँह तर कर लें। क्या मजाल कि तब कोई ख्याल भी पैदा हो किसी तरह का!"

नवनीत ने उसकी ओर देखा। बात तो ठीक कह रहा है। आई हैं वे, तो

उसके लेजर देखने लग जाने से ही तो टल नहीं जाएँगी। मुकाबला उसे करना ही होगा, और अगर एक पेग उसके पेट में पहुँच जाए तो साहस की कमी उसे न होगी! सुन्दर लाल कह रहा था, "जिन्दगी का नायाब गौहर है मेरे मालिक, नायाब गौहर! गम गलत करने के लिए तो सभी पीते हैं, मगर खुशी को दोबाला करने के लिए भी इससे बेहतर चीज नहीं है। महज एक प्याला सरकार!"

"पर वह सब तो ऊपर रखा है सुन्दर लाल!"

"बस, इतनी-सी बात? आप इशारा कीजिए। ताबेदार मैखाना यहीं हाजिर कर सकता है। समझा क्या है आपने?" और भीतर के कमरे से अदृश्य होकर वह शीघ्र ही एक बोतल और गिलास ले आया।

ऊपर सामने वाले कमरे में पहुँचते ही नवनीत ने देखा कि फर्श पर बिछी हुई दरी पर ही नीलम और आरती बैठी हुई हैं। आरती की दरवाजे की ओर पीठ है, किन्तु नीलम ठीक इसी ओर देख रही है। भीतर पहुँचते ही मुँह की सिगरेट को हाथ में लेकर हाथ जोड़ते हुए नवनीत ने कहा,

"नमस्ते नीलम देवी, बहुत दिनों में कृपा की आज तो? साथ में क्या आरती भाभी हैं? नमस्ते भाभी। आप नीचे क्यों बैठी हैं? हरनाम में इतनी भी तमीज नहीं। इधर मोढ़े पर बैठिए न?"

आरती ने केवल हाथ जोड़ लिए। उत्तर दिया नीलम ने, "नहीं, हरनाम का कोई कसूर नहीं है। मोढ़े—कुर्सी की अपेक्षा तो फर्श पर ही अधिक आराम मिलता है। ना ना, आप क्यों नीचे बैठते हैं? बल्कि इन कपड़ों में तो फर्श पर बैठने में असुविधा ही होती है। आप वहीं बैठिए।"

"अच्छी बात है, आपकी आज्ञा ही सही!" और उसने एक मोढ़ा उनके पास ही खींच लिया। अब आरती बाजू से देखी जा सकती है। नहीं, वह तेज नहीं है। घूँघट तो नहीं है, पर आँचल आँखों तक खिचा हुआ है। रंग वैसा ही तपाए हुए कुन्दन-सा है। पर चमक मानो आँखों की धारा बहा ले गई है। कपोलों का खिला हुआ गुलाब सूख कर पीला पड़ता जा रहा है। कभी बिखरी हँसी से दीप्त रसीले अधर आज वेदना की मुहर से बन्द हो कर सूख गए-से लगते हैं। दीर्घ आँखें गढ़े में धँसी-सी लगती थीं, और उनकी बिजली को मानो आस-पास के गढ़े की बादलों की स्याही पी गई थी। वह मानो किसी अतीत के सौंदर्य का प्राणहीन

पथराया हुआ अवशेष था। देखा उसने कि वह अपनी साड़ी के आँचल का एक छोर थामे उसमें गाँठ लगाती और खोल डालती थी।

लेकिन इस रूप में भी आरती उसे अप्रतिम लग रही थी। मानो यह उसके व्यक्तित्व का एक नया ही रूप था जिसका उसे पहले कभी दर्शन नहीं हुआ था। चेहरे पर चमक न रही हो, पर हिमालय के ज्योत्स्ना-स्नात हिम-सौंदर्य का प्रकृत वैभव अब ही तो प्रगट हुआ है! अधरों पर हास्य की कृत्रिम-धारा उनके भीतर के लाल रस की प्रतीति ही कब देती थी? लगता है अब मानो मरकत के प्याले में मदिरा के रस की जरूरत है। नीलम की दृष्टि को सहसा अपने ऊपर आरोपित देख कर नवनीत ने कहा, "और भाभी, आप कैसी हैं? आपके तो बहुत दिन बाद दर्शन हो रहे हैं?"

आँचल को छोड़ नाखून से दरी को खरोंचते हुए उसने कहा, "अच्छी ही हूँ देवर!"

नवनीत के दूसरे प्रश्न का उत्तर नीलम ने दिया, "और दर्शन करने के लिए जब भक्त ही मन्दिर नहीं पहुँचा तो स्वयं भगवान ही आज दर्शन देने आ गए हैं! कहिए, शिकायत करने का अधिकार किसे है, भक्त को या भगवान को?"

नवनीत ने सिगरेट के धुएँ से अपने सारे मुँह को व्याप्त करके व्यंग्य से मुस्कराते हुए कहा, "भगवान वही पूजा और आराधना के योग्य होता है जो भक्तों को अनायास ही सब अधिकार दे देता है, और उनकी मुँहमाँगी मुराद भी पूरी करता है!"

आरती ने कहा, "मैं गरीब अबला तुम्हें क्या दे सकती हूँ देवर? आज तो मैं ही भिखारिणी बन कर तुम्हारे दरवाजे पर आई हूँ, तुम ही मेरे भगवान हो और मेरी मदद कर सकते हो।"

"अधर भैया की गिरफ्तारी के बाद मुझे आपके निकट उपस्थित तो होना चाहिए था। कुछ नहीं, तो भी लोकाचार का तकाजा तो था ही, पर क्यों नहीं जा सका, इसका कारण तो आप जानती ही हैं!"

"मैं भी जानती हूँ नवनीत बाबू!" नीलम ने कहा, "और वह आरती काकी के मुँह से नहीं, आपके मुँह से ही सुना है मैंने। वह रात याद है न? शायद नहीं है!"

"मेरे मुँह से?"

"कहा न, शायद आपको याद न हो। बोतल की वह चुड़ैल जो आप पर सवार थी !"

अपने आपको बड़ा तीसमार खाँ समझ रही है नीलम, और आई है आरती की वकालत करने के लिए ! नवनीत ने सिगरेट का एक लम्बा कश लिया और कहा, "सो तो आप सही कह रही हैं नीलम देवी। क्या करता, एक दूसरी चुड़ैल जो सवारी करने के लिए तैयार बैठी थी। दो चुड़ैलों में से मैंने हल्की को चुन लिया था। इसी के लिए मुझे दोष देंगी क्या ?"

आरती ने नीलम के घुटने पर हाथ रख कर उसे चुप रहने का संकेत किया, और स्वयं बोली, "तुम घर पर आए तो क्या, और मैं ही घर पर आ गई तो क्या अन्तर पड़ जाता है देवर ? मैंने तो तब भी तुमसे कहा था कि वह घर भी तुम्हारा ही है। और आज जो मैं बिना झिझक चली आई हूँ, सो भी तो अपने देवर पर कुछ अधिकार समझ कर ही तो ! नहीं क्या ?"

समाप्तप्राय सिगरेट से दूसरी सिगरेट जला कर मुस्कराते हुए नवनीत बोला, "आपका अधिकार सुरक्षित है भाभी, यद्यपि आपका अहसान—नहीं, उसकी चर्चा न करना ही बेहतर होगा, नीलम देवी अभी जोन ऑफ आर्क बन कर वातावरण पर छा जाएँगी।"

"काश, मैं जोन ऑफ आर्क का आधा भी बन सकती इस समय ! आपने जो कुछ किया है—पर नहीं, मेरी उत्तेजना यहाँ निष्फल ही नहीं, हानिकारक भी हो सकती है। जो कुछ कहना है, तुम्हीं कहो आरती काकी, मैं चुप ही रहूँगी !" और क्रोध से नीलम के ओठ काँप उठे।

छत की ओर दृष्टि उठा कर मुँह से धुँआ छोड़ते हुए नवनीत ने कहा, "हाँ, उचित भी यही है नीलम देवी। अरे, आ गया तू हरनाम ? और चाय भी बना लाया ? यह काम किया अकल का। औरतों को देख कर ही अकल आती है तुझे। जानता है ? ऐसे आदमियों को कहा जाता है स्त्रैण ! समझा कुछ ? नहीं समझा !" और वह अपनी ही बात पर नीलम की ओर देख कर हँस दिया।

हरनाम ने ट्रे में से निकाल कर एक-एक प्लेट में कुछ बिस्कुट और एक-एक कप चाय तीनों के सामने रख दी। आरती ने इशारे से कहा भी कि वह चाय नहीं पीती, पर हरनाम का ध्यान नवनीत की ओर था, जो उससे कह रहा था, "देख हरनाम, तू नीचे दफ्तर में जा कर बैठ। मुन्शीजी डाक बाँटने जाएँ तो

दफ्तर को ताला लगवा कर चाबी ले लेना । और बुलवाऊँ नहीं, तब तक नीचे बैठना । कोई बाहरी आदमी ऊपर न आ धमके !" स्पष्ट ही नवनीत नहीं चाहता था कि हरनाम यहाँ बात-चीत के समय उपस्थित रहे । हरनाम नीचे चला गया ।

कप को ओठों से लगाते हुए नवनीत ने कहा, "कहिए भाभी, अब कहिए। क्या सेवा कर सकता हूँ आपकी ? यदि कुछ सेवा हो सकी तो निश्चय ही मुझे आन्तरिक प्रसन्नता होगी । नीलम देवी की बात का मैंने बुरा नहीं माना । जब से मैं यहाँ आया हूँ, हम लोगों में बातचीत की भाषा व्यंग्य ही रही है, यह शायद आप नहीं जानतीं ।" और वह नीलम की ओर देखकर हँस दिया ।

नीची दृष्टि किये ही आरती ने मानो अपने आपको सहेज कर कहा, "शायद तुम्हें पता होगा देवर, कल शाम लखनऊ से सरकारी वकील आए थे ।"

"सरकारी वकील ? नहीं, मुझे तो मालूम नहीं । क्या कह रहा था ?"

"मुकदमे का सारा विवरण देकर मुक्ति के कुछ तथ्य जानना चाहता था यदि हों ।"

"अच्छा । अपनी ओर से भी कोई वकील-अकील किया गया है भाभी ?"

आरती ने नकारात्मक सिर हिलाकर कहा, "तुम्हारे भैया इन्कार कर गये थे न ! इसके सिवा मैं जानती ही किसे हूँ यहाँ ?"

"इन्कार क्यों कर गए भैया ? बचाव का मार्ग तो वकील ही बता सकता है न ?"

"सो तो है । पर तुम तो जानते हो, वे एक क्रांतिकारी गुप्त दल के सदस्य हैं न ?"

नवनीत ने नीलम की ओर देखा, वह इसी ओर देख रही थी, बोली, "जी हाँ, मैं भी उस दल की एक सदस्या हूँ । रक्षा के किसी भी उपाय का विचार करते समय हमें दल की सुरक्षा और गोपनीयता का भी ध्यान रखना होगा ।"

नवनीत ने अपने आपको संयत करके कहा, "हाँ, यह बात तो है । ऐसी अवस्था में सरकार द्वारा तैनात वकील ही आखरी भरोसा है । पर आप तो जानती हैं, उसे मिलता है सरकार से पैसा, और मुकदमा चलाने वाली पुलिस भी ठहरी सरकारी नौकर । यानी एक तरह से सरकार ही इस में एक तरफ हुई वादी, और दूसरी तरफ हुई प्रतिवादी । आदमी जुदा हुए तो क्या हुआ ? आदमी कैसा है ? कुछ नाम-वाम बताया था ? शायद मैं जानता ही होऊँ ।"

"प्रौढ़ व्यक्ति हैं। नाम बताया था उन्होंने पं सच्चिदानन्द पाठक।"

"सच्चिदानन्द पाठक ? व्यक्तिगत परिचय तो जरूर नहीं है उससे मेरा, पर सुनता था बड़े प्रसिद्ध वकील हैं लखनऊ के। भाभी, मुझे तो मुकदमे का विशेष कुछ हाल मालूम नहीं है न ! बस, इतना ही जानता हूँ कि वह पायरिया स्पेशलिस्ट डॉ. रेडियर और वह अंग्रेज की पत्नी, दोनों तालाब से बच निकले हैं, और शायद उनकी रिपोर्ट पर ही पुलिस ने अधर भैया तथा टीकू को गिरफ्तार किया है। पर, अब रिपोर्ट में खास बात क्या लिखाई है उन्होंने, यह तो मैं जानता नहीं न ! वैसे पाठक जी तो मँजे हुए वकील हैं। उन्हें यह तो मालूम होगा ही कि घटनास्थल पर मैं भी मौजूद था, मुझसे भी तो कुछ पूछना उचित था उन्हें !"

आरती जब उत्तर के लिए बहाना ढूँढ़ रही थी तो नीलम ने कहा, "वे आपसे नहीं मिले इसलिए कि आपने पहले ही पुलिस के सामने अपना बयान दे दिया है, और वह बयान, कहते हैं, बड़ा ही दुर्भाग्यपूर्ण है।"

सिगरेट के धुएं के साथ खेलते हुए नवनीत ने कहा, "हाँ। पुलिस जब पूछती है तो कुछ बयान तो उसे देना ही पड़ता है। न दिया जाए तो जानती हैं, उसे भी अपराध समझा जाता है।"

"और आपने उस सारे अपराध को दूसरों के मत्थे मढ़ देने का अच्छा प्रयत्न किया है, ताकि आप मजे से जीवन के गुलछर्रे उड़ाते रहें और आपके स्थान पर कोई दूसरा अपनी गर्दन जुए में फँसा दे।" नीलम ने ही कहा।

"नीलम देवी, जिस बयान को आप दुर्भाग्यपूर्ण कहती हैं, यदि वह मेरे लिए दुर्भाग्यपूर्ण होता तो आप खुश हो सकतीं ! क्या किया जाये ! सचाई कड़वी होती ही है, और जिसे भी उसकी कीमत चुकानी पड़ती है, वह उसे दुर्भाग्यपूर्ण मानता ही है। आत्मरक्षा का अधिकार यदि व्यक्ति का आप न मानें तो भी सत्य भाषण का उसका अधिकार तो आपको स्वीकार करना ही होगा और अब तो जब एक बार बयान दिया जा चुका, तो उसको फेर लेने का तो उपाय नहीं है न ?"

आरती ने कहा, "पाठक जी कह रहे थे कि यदि मजिस्ट्रेट के सामने वह बयान नहीं दिया गया तो उसकी कोई कीमत नहीं है। सवाल यह है कि आप मजिस्ट्रेट के सामने ऐसा बयान न दें। कह सकते हैं कि पुलिस ने डरा-धमका कर वैसा बयान ले लिया है।"

नीलम ने अपनी ओर से कहा, "आपका बयान होने में तो अभी समय लगेगा। पहले बयान होगा उस अंग्रेज महिला शर्ली का। आप तो जानते ही होंगे वह अभी अस्पताल ही में है। शायद आपरेशन के जरिये समय के पूर्व ही उसका प्रसव कराया गया है। वह क्या बयान देगी, इस पर आप का भी बहुत कुछ भविष्य निर्भर करता है नवनीत बाबू, चाहे आप सरकारी गवाह ही क्यों न बन जाएं ! बल्कि रेडियर ने खुद जो बयान दिया है, उससे लगता है कि वह दल को इस में सानना नहीं चाहता। सिर्फ यही कहा है उसने कि तालाब की घटना महज दुर्घटना नहीं थी, वह एक षड्यंत्र था, किसका था, यह वह नहीं जानता। खुद वही इस षड्-यंत्र का शिकार हुआ था। अघर काका तथा टीकू चाचा ने कैसा भी बयान देने से इंकार कर दिया है, जिससे स्पष्ट ही उनकी स्वीकृति समझ ली गई है। पुलिस अब षड्यंत्र की टोह लगाना चाहती है। कम से कम रेडियर दल के प्रति तो वफादार साबित होना नहीं चाहता, उसके बयान से तो ऐसा ही लगता है।"

"आपने ये सब बातें पाठक जी से कहीं ?" नवनीत ने कहा।

"पाठक जी ने खुद कहीं। पर उन्हें किसी दल विशेष का कुछ भी हाल मालूम नहीं है। शर्ली यदि रेडियर का ही अनुकरण करती है तो दल तो शायद बच जायेगा, किन्तु आपकी सुरक्षा भी खतरे में है।"

"कैसे ? पाठक जी ने कुछ कहा इस संबंध में ?" नवनीत की चिन्ता स्पष्ट लक्ष्य हो रही थी।

नीलम ने ही कहा, "यह तो आप भूले न होंगे कि जब आप खुद रेडियर से उलझ रहे थे, और शर्ली की पुकार पर उसका पति जब आपको अपनी पिस्तौल का लक्ष्य बना कर समाप्त करना ही चाहता था, तब अघर काका ने ठीक समय पर पिस्तौल चला कर आपकी रक्षा की थी। शर्ली को तो तालाब के हवाले आपने खुद ही किया और रेडियर को भी मरणांतक आघात आपने ही पहुँचाया, बच गया वह, यह उसके भाग्य की बात है।"

"आप तो जैसे वहाँ सशरीर उपस्थित थीं।" व्यंग्य से नवनीत ने कहा।

"नहीं थी, यही अफसोस है नवनीत बाबू। नहीं तो आपके भीतर का चोर पहचानने में मुझे थोड़ी भी कठिनाई न होती, और तब—जाने दीजिए, बात बढ़ाने से कोई लाभ नहीं है।"

नवनीत ने कहा, "सचमुच नहीं है। पर सवाल तो हत्या जिसकी हुई, उसका

है, और वह हत्या हुई है अधर भैया की गोली से, टीकू के खंजर से। रहा सवाल यह, कि शर्ली को तालाब में फेंका या रेडियर को चोट पहुँचाई, इसका प्रमाण क्या है ? न्याय तो प्रमाण चाहेगा।"

नीलम ने कहा, "और सरकारी गवाह बन कर बहुत कुछ सुविधा तो आप प्राप्त कर ही लेंगे। कान खोल कर सुन लो आरती काकी। मेरी बात का तुम विश्वास करना नहीं चाहती थीं न ?"

नवनीत ने आरती को लक्ष्य करके कहा, "भाभी, सारी बात स्पष्ट कर देने से भी अधर भैया की मुक्ति तो संभव नहीं है न ? खास दोष है किट्सन की हत्या का, और उसके लिए अधर भैया ही तो जिम्मेदार ठहरते हैं। अन्य बातें तो अवान्तर हैं। उनको बता देने से अगर कुछ नतीजा निकलेगा तो यही कि खामु-खाँ मैं भी मुकदमे में फँस जाऊँगा। लाभ उससे किसी को होगा नहीं, बल्कि तब आत्मरक्षा के लिए मुझे ही जाने क्या क्या रहस्य न खोलने पड़ जायें।"

नीलम ने मुस्करा कर कहा, "रहस्य न खोल कर दूसरों की हित-साधना की आपकी प्रवृत्ति का काफी परिचय मिल चुका है नवनीत बाबू। क्या रहस्य है आपके पास, जिसे आप नहीं खोलना चाहते ? जिस क्रांतिकारी दल की आप चर्चा कर रहे हैं, मैं ही तो बच रहती हूँ उसकी सदस्य। नहीं, मुझे आपकी तरह अपनी रक्षा का मोह नहीं है। चलिए, इसी बहाने अदालत के सामने खड़ी हो जाने दीजिये मुझे। यह देखना मेरा काम रहा कि अधर काका के पक्ष में कोई प्रमाण जुटा पाती हूँ या नहीं।"

"नीलम देवी, बहुत बढ़-चढ़ कर बातें कर रही हैं आप, और ऐसी बातें जिनका कुछ उपयोग नहीं है। अगर ऐसी ही बातें करनी हैं तो मेरी फुरसत का समय दूसरा है। यह मेरे दफ्तर में काम करने का समय होता है।"

"किन्तु फुरसत के समय तो आप अपने मालिक नहीं रहते न ?"

"क्या मतलब ?"

"नहीं समझे ? समझ जरूर गए हैं, पर साफ ही कहलवाना चाहते हैं तो क्या उस रात की याद दिलानी होगी ?"

"नीलम देवी, एक शरीफ आदमी के घर आ कर आप उसका अपमान कर रही हैं।"

"आपके मुँह से निकलती हुई सुगन्ध भी आपकी शराफत का परिचय दे रही

है ? पर आप की उत्तेजना से ही मैं मुँह खोलने को विवश हुई थी। सचमुच मुझे चुप रहना चाहिये था। तुम्हीं कहो आरती काकी, जो कुछ तुम्हें कहना हो। नवनीत बाबू, मैं आपसे क्षमा माँग लेती हूँ।"

आरती ने आँखों के आँसू पोंछ कर कहा, "दोष मेरी जली तकदीर का ही है देवर, नहीं तो यह सब कुछ होता ही क्यों ? वकील साहब कहते थे कि डॉ० रेडियर के बयान के लिए भी कानून प्रमाण की अपेक्षा करेगा। उसके बयान से ही कुछ हो नहीं जाता। वे कह रहे थे कि उपलब्ध सामग्री से देवर, तुम एक प्रबल प्रमाण हो सकते हो, दोनों ही पक्षों से।"

"दोनों ही पक्षों से क्या मतलब ?"

"यानी तुम जो भी पक्ष ग्रहण करना चाहो !"

मुस्करा कर नवनीत ने कहा, "इस में पक्ष ग्रहण करने की बात ही कहाँ है भाभी ? जो बात सत्य है, वह तो रहेगी ही। वैसे तो स्पष्ट ही मैं आप के पक्ष का हूँ, पर अभी तो मेरी कहीं भूमिका ही नहीं है।"

"आपकी कोई भूमिका न हो, तब तक तो गनीमत है, किन्तु पुलिस तो आपका उपयोग करना ही चाहेगी। उनके भी तो आप प्रमुख प्रमाण हैं। घटना-स्थल पर उपस्थित प्रमाण।"

अपने महत्व को समझ कर नीलम की ओर देखते हुए नवनीत ने कहा, "पर भाभी, वकीलों की जिरह का ढंग आप नहीं जानतीं। कहीं ऐसा न हो जाए कि आपका पक्ष संभालने की मेरी चेष्टा प्रतिपक्षी वकील अपनी जिरह से व्यर्थ कर दे। यह संभावना तो ध्यान में रखनी ही होगी। नहीं ?"

आरती ने कहा, "इस संभावना की ओर वकील साहब ने भी इशारा किया था।"

"तो फिर वकील ने कोई रास्ता तो बताया होगा न भाभी ?"

"उसने तो कहा है देवर, कि सब कुछ आप पर निर्भर करता है !"

व्यंग्य से मुस्करा कर तथा नीलम की ओर देख कर, मानो उसे सुनाने के लिए ही, नवनीत ने आरती को संबोधित करके कहा, "निर्भर योग्य तो एक ही उपाय है भाभी कि हत्या का सारा दोष मैं अपने सिर पर स्वयं ले लूँ। क्यों नीलम देवी, क्या सोचती हैं ?"

"सचमुच वह एक अकल्पनीय साहस और अप्रतिम नैतिकता की बात होगी

नवनीत बाबू ।"

"नैतिकता की बात ? यानी दूसरों के किए हुए दोष का भार अपने कन्धे पर लेना नैतिकता है ? हाँ, दया यदि आप कहतीं तो एक बात भी थी ।"

हँस कर नीलम ने कहा, "श्रेय लेना चाहते हैं न ? दया ही कह लीजिये । इसमें अंतर ही क्या पड़ता है ?"

"अंतर बहुत पड़ता है नीलम देवी । आप अभिमान से सिर भी ऊँचा रखना चाहती हैं और काम भी निकलवा लेना चाहती हैं । जरा बताइए, यह मेरा नैतिक दायित्व कैसे है ?"

"यदि आप यह स्वीकृति दे रहे हों नवनीत बाबू, तो मैं अपनी गलती मान लेती हूँ। और आप से क्षमा माँगते हुए ही, आपकी बहादुरी के लिए, आपका अभिनन्दन करती हूँ ।"

"इतनी सस्ती भावुकता मुझ में नहीं है नीलम देवी । मैं यह बात स्वीकार करने नहीं जा रहा कि किट्सन की हत्या मैंने की है । मैं अदालत से यह प्रार्थना करने के लिए तैयार हूँ कि अधर लाल के अपराध का जो भी दंड हो, वह मुझे मिले ।"

"और अदालत आपकी यह प्रार्थना मान लेगी ? यदि मान लेगी तो इसके लिए आपके निकट न दौड़े आना पड़ता । स्वयं आरती काकी और मैं, हम दोनों मिल कर भी उस दण्ड को स्वीकार करना सौभाग्य समझतीं ! टीकू चाचा ने तो स्वीकार भी कर लिया है कि किट्सन अधर काका की गोली से नहीं, उनके चाकू से मारा गया था । दया की भी आपसे क्या आशा की जाए, जब आप अपना नैतिक दायित्व ही नहीं समझ पाते ! सुनेंगे आप अपना दायित्व इस सम्बन्ध में ?"

"मन में क्यों रखती हैं ? निकाल डालिए न मन का गुबार ।"

"गुबार ही सही । आप खूब जानते हैं कि अधर काका ने यह हत्या केवल आपकी प्राण रक्षा के लिए की थी, हत्या ही नहीं, पाप कहिए उसे । यदि आप में मनुष्यता हो तो ऐसा कोई पाप नहीं, केवल अपराध स्वीकार करने का साहस आप में होना चाहिए । यह है आपका नैतिक दायित्व । और कहूँ ? इसके पहले भी आरती काकी ने आपकी मरणान्तक बीमारी में आपकी सेवा···" आरती ने आगे बढ़ कर नीलम का मुँह बन्द कर दिया तो वह बोली, "छोड़ो काकी, मैं चुप

हो जाती हूँ। बस ?"

"कह लेने दीजिए, न भाभी—आप तो जानती ही हैं कि यह सारा क्रोध नीलम देवी को इस घर में स्वीकार न करने के कारण है। आप जब इनकी सिफारिश कर रही थीं तब शायद आपको भी पता न था कि ये ऐसे ऐसे वाक्य-बाण भी चला सकती हैं। एक सीधे-सादे युवक से विवाह के तिनके की आड़ में पहाड़ के पहाड़ खड़े कर देना भारतीय नारी के लिए न हो किन्तु फ्रांस की युवती के लिए तो बाएं हाथ का खेल है। वहाँ निराश प्रेमिकाएं अपने प्रेमी की हत्या करने में नहीं हिचकिचातीं। इस भारत भूमि में ये अगर सोच रही हैं, कि स्वेच्छा से ही फाँसी पर चढ़ जाऊँ तो क्या आश्चर्य है ? कहिए कहिए, रुकिए मत नीलम देवी।"

"रुक कर क्या होगा ? यह मत सोचिए कि मुखबीर बनने से ही आपको मुक्ति मिल जाएगी। मुझे अपनी तनिक भी चिन्ता नहीं है। अब तो मैं ही कोर्ट के सामने खड़ी होकर आपकी सारी करतूतों का बयान करके आपको कठघरे में न ला खड़ा करूँ, तब तक मैं भी विश्राम नहीं लूँगी। यह न सोचिए कि शर्ली आपको बख्श देगी। सरकारी वकील पाठक जी से यह आश्वासन तो मिल ही गया है कि लखनऊ जाने पर शर्ली से मुझे मिला देने की वे व्यवस्था कर देंगे। यदि मैं फ्राँस का पानी हूँ, तो वह भी इंग्लैंड का रक्त है।"

आरती ने नीलम से कहा, "चुप भी रहेगी नीलम। क्यों व्यर्थ की बहस से मेरा अहित करती जा रही है ? और देवर, मेरा कोई अहसान आपके ऊपर नहीं है। बीती हुई सब बातों को आप भूल जाइए। मेरा आप पर कोई दावा नहीं। मैं आपसे आँचल पसार कर दया की भीख माँगती हूँ कि जिस किसी तरह हो, आप मेरे पति की जान बचाइए। और वकील साहब कह रहे थे, आप बिना अपने आपको किसी विशेष संकट में डाले यह काम कर सकते हैं। मैं आपके अहसान को कभी नहीं भूलूंगी। यदि चाहेंगे तो जन्म भर आप के घर झाडू-बुहारी की नौकरी करूँगी देवर। मुझे बचा लीजिए, वरना मैं कहीं की न रहूँगी।"

"पर वह तो स्वयं हत्या का अपराध स्वीकार किए बिना मैं कर नहीं सकता न। और यदि अधर भैया के बाद किसी के विधवा होने का अभिशाप है तो मेरे पीछे भी मेरी पत्नी है, और उसे विधवा करने का अधिकार मुझे भी नहीं है न ?"

आरती ने कुछ उत्तर नहीं दिया तो नीलम ने कहा, "कहना तो नहीं चाहती

थी नवनीत बाबू, पर आपकी प्रवंचना चुप नहीं बैठने देती। आपकी पत्नी के विधवा होने का आपको बहुत खयाल है। उसके साथ आपके व्यवहार की कहानी कुछ-कुछ मालूम हुई है। पता नहीं शहीद होकर आप उसे विधवा बना जाएँगे या अपनी काली छाया हटाकर उसे मुक्त कर जाएँगे। खैर, यदि आपको जीवन इतना प्यारा है तो एक और विकल्प है। हत्या की एक स्वीकृति लिख जाइए—नहीं, उसका उपयोग नहीं किया जाएगा, केवल इसलिए कि वादा करने के बाद कहीं आपके भीतर का ओडिपस न जाग पड़े। और चले जाइए कहीं दूर दक्षिण में, जहाँ आपको कोई खोज नहीं सके। खोजने को आपका यहाँ है ही कौन, ? माँ नहीं, बाप नहीं, पत्नी भी एक तरह से तो नहीं ही है। यदि कहेंगे तो आठ-दस हजार का प्रबन्ध भी किया जा सकेगा। वकील कह गया है, यह उपाय भी अव्यर्थ प्रमाणित हो सकेगा।"

नवनीत ने मानो एकाध मिनिट सोच कर कहा, "जितनी नफरत आप मुझ पर व्यय कर चुकी हैं नीलम देवी, क्या उससे किसी को आपके प्रस्ताव पर विचार करने की इच्छा हो सकती है ? पर स्त्रियों जैसा ओछा मैं नहीं बनूंगा। आपने कहा न कि कहीं मेरे भीतर का ओडिपस न जाग उठे। मैं आपके भीतरकी इलेक्ट्रा को जाग जाने के अवसर दूँगा। आपका प्रस्ताव मैं मानता हूँ, किन्तु मुझे इस बलिदान का लाभ क्या मिलेगा ? मेरी लगी लगाई सरकारी नौकरी—नहीं, रुपए के लिए नहीं, मैं क्षतिपूर्ति दूसरी किस्म की चाहूँगा।"

नीलम ने कहा, "कहिए, क्या चाहेंगे आप ?" आरती की दृष्टि भी ऊपर उठ गई।

नवनीत ने सिगरेट के धुएँ के साथ दृष्टि को छत पर फेंकते हुए कहा, "नीलम देवी ने कहा था न कि आप या वे अधर भैया की प्राण रक्षा के निमित्त अपने प्राणों की चिन्ता नहीं करेंगी नहीं, नीलम देवी मुक्त हैं, उन पर मेरा कोई लोभ नहीं। वे इलेक्ट्रा का पार्ट अदा करें। मैं हत्या की स्वीकृति लिख कर यहाँ से एकदम अदृश्य हो सकता हूँ, पर एक शर्त के साथ। आरती देवी मेरे साथ जाएँगी।" और मुँह को सिगरेट के धुएँ से भर कर उसने आँखें बन्द कर लीं।

आरती की दृष्टि फटी की फटी रह गई। उसकी अपलक अचंचल आयत नेत्रों की रेखा भूत-भविष्यत को वर्तमान की पतली-सी रेखा में समेट कर इस शैतान को देखती रही। किन्तु नीलम के अधरों पर हँसी बिखर गई-घृणा की,

व्यंग्य की। वह पौरुष का नग्न और पाशव दम्भ था, जो निर्बल नारीत्व की असहायता पर चुनौती बन गया था। नवनीत निर्विकार दोनों के मनोभावों को तौलता हुआ सिगरेट का धुआँ धीरे-धीरे बड़े अलस भाव से फेंकता रहा।

कुछ क्षण बीत जाने पर नीलम ने कहा, 'तो फिर काकी, मुझे क्या आज्ञा होती है ? मैं जाऊँ ? यदि आदेश दोगी तो नए काका की स्वीकृति तो ले ही जा सकूँगी।"

आरती की वाणी रुद्ध हो गई थी, वह कुछ कह न सकी। नवनीत ने कहा, "तारीख उस पर मैं आज की नहीं, दस दिन बाद की डालूँगा ताकि आप उसका समय से पहले उपयोग नहीं कर सकेंगी दस दिन के बाद आप कह सकती हैं कि वह आपको पोस्ट द्वारा मिली है।"

नीलम ने कहा, "बल्कि नवनीत बाबू, उसी दिन उसका प्रयोग किया जाएगा जिस दिन अबर काका को फाँसी दी जाने वाली हो। नाटकीय ढंग से उनका उद्धार हुआ तो आपका नाम भी दुनियाँ में रोशन हो जाएगा। तब तक तो आप दक्षिण ही क्यों, मलाया-सिंगापुर, कहीं भी दूर विदेश पहुँच कर अपना विवाह भी सम्पन्न कर चुके होंगे।"

"ठीक है, मुझे मंजूर है आरती देवी।" नवनीत ने सिगरेट का लंबा कश खींच कर कहा।

"और चलना है तो आज ही चल देना उपयुक्त होगा। स्टेशन तक पहुँचने में अवश्य कुछ कठिनाई होगी। मेरे पीछे भी तो पुलिस की दृष्टि है, पर मैं उसकी व्यवस्था कर लूँगा किसी तरह। घूँघट निकाल लेने पर आपको भी कोई पहचान नहीं सकेगा। स्टेशन पहुँच जाने के बाद तो कोई भय ही नहीं है। कहिए, लिखूँ अपनी स्वीकृति ?"

"लेकिन नवनीत बाबू।" और मानो काठ की बनी हुई हो, इस तरह उठ खड़ी होकर आरती ने कहा, "—मेरे पति को मुझसे अधिक कौन जानता है ? किसी मिथ्या का आश्रय लेकर वे जीवित नहीं रहना चाहते, और न ही मेरे अभाव में जीवित रहने की उनकी इच्छा होगी।"

नवनीत ने कहा, "और उनके जीवित रहते शायद मेरी याचना पर भी आपका ध्यान नहीं जाएगा। है न ?"

आरती नवनीत के पैरों में गिर पड़ी और बोली, "मेरे सतीत्व को न

माँगिए मुझसे देवर ! आखिर सतीत्व देकर भी तो मैं अपने पति को बचा नहीं सकूँगी न !"

"तो फिर उन्हें कौन बचा सकता है ?" और वह भी पैर छुड़ा कर उठ खड़ा हुआ, "सती वृन्दा की कथा जानती हैं न ? भगवान के निकट सतीत्व बेच कर उसने देवताओं की रक्षा की थी, दुर्भाग्य से उसका पति राक्षस भी तो था न ! और उसने पतिव्रता का, सती का दर्जा पाया । पर आप तो पुराणों की कथा पर विश्वास नहीं करतीं न ।" और फिर एक लम्बी साँस छोड़ कर बोला, "—ठीक है, नीलम देवी की चपल बुद्धि ही आपको तब कुछ मार्ग सुझा सके । मैं चलूँगा अब । ठहर नहीं सकता, मुझे दफ्तर का काम बहुत है करने को ।"

—और उन न छुए हुए चाय के प्यालों तथा बिस्कुटों पर पहली बार दृष्टि डाल कर मानो चौंकता-सा हुआ, सिगरेट का धुआँ उड़ाता और पैरों से जूते बजाता हुआ खटाखट-खटाखट नीचे उतर गया ।

११ मंजरी

इस सीलनभरी अँधेरी कोठरी में दिन को ही समय का कुछ अन्दाज नहीं लगाया जा सकता तो रात का क्या लगाया जा सकता है ? किन्तु हवा में कुछ ताजगी जाहिर करती है कि पिछला प्रहर शायद आ लगा है । चेष्टा करके भी नवतीत सो नहीं सका है । कल सभा में नीलम उसके अतीत का वह पृष्ठ खोलना चाहती है जिसमें उसके दुःख की, घाव की समस्त वेदना संग्रहीत होकर फूल उठी है । और यह बदबूदार अँधेरी कोठरी ? श्रीकृष्ण की जन्मभूमि यह प्राचीन नगरी यों ही एक शाश्वत बन्दीगृह है । तंग गलियाँ, ऊँचे-ऊँचे मकानों के छोटे-छोटे कमरे, भूगर्भ में अँधेरे वायुहीन तलघर । ऐसा ही कोई कमरा रहा होगा यह भी । मच्छर और खटमलों के अलावा एक सीलन भरी बदबू । यह अच्छा ही है कि दिन उसके निद्रा या बेहोशी में ही बीतते हैं । दम घुट रहा है पर वह खटमल-पिस्सुओं की बाहरी आपदाओं से नहीं, उसकी मानसिक स्थिति ही ऐसी है ।

सभा-स्थगन का प्रस्ताव मंजरी ने किया था । नहीं, बहुत समय हो जाना ही इसका कारण नहीं हो सकता, उसके दिमाग में जरूर कोई अभिसन्धि रही होगी । कैसी दुर्वृत्त है वह लड़की भी । चाहती क्या है उससे ? गिरफ्तारी का काम, जो उसे सौंपा गया था वह तो कर ही चुकी है मंजरी । पर क्या और आशाएँ पाल रही है मन में ? क्यों वह इस तरह इन अस्थिर-बुद्धि चंचल-मस्तिष्क गुड़ियाओं के खेलने का खिलौना बन जाता रहा है ? आरती के प्रसंग को वह अवश्य आगे नहीं बढ़ने देगा । विप्लव-दल की गोली खाना ही यदि उसका अभिशाप हो तो पुराने घावों की शल्यक्रिया का अवसर वह नहीं देगा किसी को ।

किन्तु इस अबोध लड़की मंजरी की अभिसन्धि समझ में नहीं आती।

पहले पहल मुलाकात हुई थी नवनीत की उससे उस संध्या को! दस-पन्द्रह दिन ही तो हुए होंगे। कैसी अनिश्चितता में दिन बीत रहे थे उसके? सरकारी तंत्र भी क्या गोरखधन्धा है। छः माह से अधिक हो गए मुकदमे की कार्यवाही को पूरा करते-करते, पर तब भी वह अभी तक तो समाप्त ही नहीं हुई है शायद। अधर लाल और टीकम चन्द का मृत्यु-दण्ड तो उसका केवल एक भाग ही साबित हुआ न। और उसने आशा की थी कि सब बात वहीं समाप्त हो जाएगी। शायद शर्ली का अस्वास्थ्य ही मुकदमे को इतना तूल देता गया है, और अधर लाल तथा टीकू को प्राणदण्ड भी जल्दी और गुप्त रूप से शायद इसीलिए दिया गया कि सरकार को जनता के विद्रोह की आशंका हो चली हो। आखिर अधर लाल और टीकू की मुक्ति के विफल प्रयत्न से भी उसे सावधान हो ही जाना चाहिए था। उसी की तो बारी थी अब। प्राण लेकर भाग भी तो गया होता वह पर जालिम सिंह के आदमी उसे आँखों से ओझल ही कहाँ होने देते थे? प्रयत्न करता भी वह, किन्तु···जाने दे नवनीत, इन मृगमरीचिकाओं ने ही तो उसे सारे जीवन भटकाया है। शर्ली के प्रेम का अनुमान लगा कर उससे किसी प्रकार की आशा करना कि वह अपने बयान से उसे बचा लेगी, क्या उतना ही व्यर्थ नहीं, जितना यह आशा लगाए रहना था कि अधर लाल के मार्ग से हट जाते ही आरती उसकी ओर अभिमुख हो उठेगी!

ऐसी ही शाम थी न वह, जब वह निकल पड़ा था घर से पथ-भ्रष्ट धूमकेतु की तरह। पान की दूकान से उसने सिगरेट ली तो, हाँ अब पहचाना उसने, विप्लव-दल का यह मूक चपरासी लछमन ही तो बैठा था वहाँ। जैसे ही नवनीत दूकान से आगे बढ़ा कि वह भी तो उठ गया था वहाँ से, और दूसरी दिशा में चला गया था वह, जरूर नवनीत की खबर देने के लिए ही तो। अवश्य वह नवनीत की गतिविधि की टोह लेता रहा होगा। फिर···

रंगमंच पर आने के पहले सध्या इधर-उधर से झाँक कर देख रही थी कि उसके आने का अवसर उपस्थित हुआ है या नहीं। नवनीत सड़क पर हो लिया था। कुछ ही दूर तालाब पर जाने का मार्ग आ जाता है। लेकिन उस ओर नहीं। उस ओर टीकू की स्मृति रहती है। सड़क पर कुछ ही आगे वही पनघट है जहाँ मानपुर प्रवेश के प्रथम क्षणों में उसे आरती का दर्शन प्राप्त हुआ था। एकाध

बुढ़िया अभी भी पानी भर रही है वहाँ। पर सब कुछ सूनासूना-सा दिखाई देता है। सवेरे भी आरती अब रस्सी-डोल लेकर पहले की तरह पानी भरने शायद ही आती होगी। आती भी होगी तो वह चुहल, वह हास्य, वह अल्हड़ता कहाँ होगी अब ?

उस दिन की स्मृति में खो गया था वह। पहले गाड़ीवान के साथ मखौल फिर खुद उसके साथ जब पानी पीने के बहाने उसकी रूपसुधा पीने के लिए वह कुएँ की जगत पर पहुँच गया था और आरती के हाथ से खिसक कर उसका डोल-रस्सी कुएँ में गिर पड़े थे। उस दिन का वह रोषारुण चेहरा आज रक्तहीन सफेद हो गया था। फिर भी कितनी आल्हादक है वह कान्ति ? सफेद संगमर्मर का माँसल स्पर्श, जिसमें स्पन्दनों का झंझावात मचल रहा हो, लगाम से खिंची आकाँक्षा को भी जो चाबुक मार दे। प्रेम और युद्ध के क्षेत्र में कुछ भी तो अन्याय नहीं है। उस दुपहर को नीलम और आरती ने उसके घर आकर प्रतिहिंसा की अग्नि ही नहीं बढ़ाई थी उसके मन में, आरती की प्राप्ति के लिए अन्तिम प्रयत्न का बहाना भी पकड़ा दिया था नवनीत को। मुकदमे की सारी कार्यवाही गुप्त रूप से ही हुई थी, किन्तु यदि उसके वक्तव्य का प्रमाण न होता तो सरकार अधर लाल तथा टीकू के अपराध कभी प्रमाणित नहीं कर पाती। नारी के लिए इतिहास में एक नहीं अनेक हत्याएँ हुई हैं। नवनीत ही इसका अपवाद कैसे हो?

कुछ दूर आगे बढ़कर ही सड़क बाएँ मुड़ जाती है। दो-एक सरकारी इमारतें हैं वहाँ। एक छोटे दावों की अदालत, तहसीलदार का दफ्तर और आवास, उस के पास तहसीलदार का छोटा-सा कैदखाना, फिर मुन्सिफ का आवास—ये सब सड़क की बाँईं ओर हैं, और सामने दाहिनी ओर इन्हीं सब अफसरों के और नवनीत के सम्मिलित प्रयत्नों से एक क्लब खोल दिया गया है, जहाँ गाहे-ब-गाहे ये लोग मिला करते हैं। तो कभी फ्लैश या रमी, कभी कैरम, कभी बैडमिंटन खेल लेते हैं, बस। एक साप्ताहिक 'इलस्ट्रेटेड वीकली' और एक दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' भी मँगाया जाता है, जिसे और कोई पढ़ता हो या न पढ़ता हो, नवनीत जरूर पढ़ता है। प्रायः ही नवनीत की संध्याएँ आजकल यहीं बीतती हैं। यों, क्लब के काफी सदस्य बना लिए हैं उसने। मुन्सिफ, तहसीलदार, डॉक्टर, पुलिस का सब-इस्पेक्टर, माध्यमिक शाला का हैड मास्टर, ये तो हैं ही, इनके साथ ही कस्बे के दो-एक वकील, सरकारी इमारतों के ठेकेदार और बस्ती का

एकाध व्यापारी भी सदस्य है। पर क्लब में दो-एक को छोड़कर प्राय: कोई जाता नहीं। मुन्सिफ, तहसीलदार वगैरह अपने को वकील-मुख्तारों से ऊँचा समझते हैं, इसीलिए मिलने के मौके को टालना ही पसन्द करते हैं। वकील-व्यापारी अपने-अपने मुवक्किलों से ही फुरसत नहीं पाता। और भी कुछ कारण हो सकते हैं, पर नवनीत बराबर वहाँ जाता है। गए कुछ दिनों से जब से वह अपने आपको समाज से कटा-फटा रखना चाहता है, क्लब ही उसका एकमात्र मक्का बन गया है। क्लब का एक अपना कमरा भी बन गया है किसी ठेकेदार की कृपा से। पास में दो और छोटे कमरे किसी दूसरे ठेकेदार ने गए महीने ही बनवाए हैं। पीछे की ओर है बड़ा-सा मैदान, जहाँ बैडमिंटन का फील्ड तैयार कर लिया है।

बरामदे में कुछ देर खड़े रहने के बाद नवनीत जब भीतर हॉल में घुसा तो दौरे पर आया हुआ ओवरसीयर कपूर और कस्बे का डॉक्टर सरदार गुरुबख्श सिंह 'रमी' खेल रहे थे।

नवनीत ने कहा, "सत श्री सरदार जी। आज किधर फुरसत मिल गई? मानपुर के मरीजों को क्या आज छुट्टी दे बैठे हो?"

"अरे यार, फुरसत साली मिलती ही कहाँ है? ये तो अपणा पुराणा यार है कपूर। मान्ना ई नहीं, जबर्दस्ती खींच लाया।"

"चलो अच्छा किया कपूर साहब। आज बेचारे मानपुर के मरीज आपको ही दुआ देंगे। क्या रमी चल रही है?" और उसने भी एक कुर्सी पास खींच ली।

डॉक्टर ने कहा, "इधर क्या बैठता है यार, उधर तेरी कोई पुराणी मासूक बैठी तेरा रस्ता देख रही है।"

"मेरा रास्ता?" और कुर्सी के सहारे वह खड़ा ही रहा।

"फिरँगी मैम लगे है बीर। बुलबुल परी समझ ले। मुबारकबाद तो लेता जा।"

फिरँगी मैम, यानी लिवास में अब हिन्दुस्तानी अंगरेज महिला। नवनीत का कलेजा धड़कने लगा। नीलम तो हिन्दुस्तानी ही ज्यादा लगती है, और इधर के लगभग सभी लोग उसे पहचानते हैं। शर्ली तो नहीं हैं कहीं? मन हुआ कि उसके पैर पर होजाएँ और छत फोड़कर वह आसमान में उड़ जाए, सब की

नगाहों से ओझल। लेकिन—

डॉक्टर ने हाथ का अतिरिक्त पत्ता फेंकते हुए कहा, "अरे, क्यूँ तरसाता है बिचारी को। कब की बैठी है इन्तजारी में। नौकर है उसके नाल, पर वो बी साला है गूँगा और बहरा।"

नवनीत आगे बढ़ा। पीछे बरामदे में उसकी ओर पीठ किए बैठी है वह। नहीं, शर्ली नहीं लगती, जी में जी आया उसके। शर्ली को तो पौर-पौर से पहचानता है वह। नीचे बैठे हुए नौकर ने नवनीत को देख लिया था, उसने इशारे से अपनी मालकिन को सूचना दे दी। युवती मुँह फिरा कर उठ खड़ी हुई और बोली, "गुड़ ईवनिंग मि० नौनीट लाल। आ' एम शोअर, आई हैव द ऑनर ऑफ एड्रेसिंग देट डीअर पर्सनेज।" और छूने के लिए उसने हाथ बढ़ा दिया।

नवनीत ने हाथ जोड़कर अंग्रेजी में ही कहा, "जी, मुझे ही नवनीत कहते हैं। क्या सेवा कर सकता हूँ मैं आपकी?"

अपने बढ़े हुए हाथ को खींचकर युवती मुस्करा उठी, और हाथ जोड़ कर बोली, "मैं मैगी मतलब मर्गरेट कह कर पुकारी जाती हूँ—मर्गरेट ज्यॉफ्री।"

"ज्यॉफ्री?"

"जी हाँ, यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं आपकी परिचित शर्ली ज्यॉफ्री की बहन हूँ। लेकिन यह एक सौभाग्य भी था। उसके बिना आप से परिचय ही कैसे होता?" फिर उसने इधर-उधर देख कर कहा, "मैं आशा करती हूँ, यहाँ हमारी बातचीत कोई नहीं सुन रहा है।"

नवनीत ने उस ओर ध्यान न देकर कहा, "अभी आप कहाँ से आ रही हैं?"

हँसकर बोली वह, "अभी तो लखनऊ के सिवा और आ ही कहाँ से सकती हूँ मैं? आपके मुकदमे का जब तक फैसला न हो जाए तब तक तो डैडी भी ट्रान्सफर पर नहीं जा सकते न। आपसे बहुत बातें करनी हैं काफी जरूरी।"

"सो तो देख ही रहा हूँ। लखनऊ से यहाँ कब आईं आप?"

"आज ही, लगभग दो घन्टे पहले।"

"और ठहरी कहाँ हैं?"

"अपनी टूअरर कार में।" दोनों खड़े खड़े ही बातें कर रहे थे। मर्गरेट का नौकर कुछ दूरी पर बड़ी उदासीन मुद्रा में खड़ा हुआ था। बातचीत सारी

अंग्रेजी में चल रही थी, जिसका कुछ भी अंश उसके लिए बोधगम्य नहीं था। युवती ने कहा, "क्या यहीं बैठकर हम बातचीत नहीं कर सकते ?"

नवनीत ने कहा, "कर तो क्यों नहीं सकते, किन्तु वहाँ खुले में सामने बैठें तो क्या हर्ज है ? चुपके से भी कोई हमारी बातचीत नहीं सुन सकेगा। लेकिन मुझे माफ करना होगा कुमारी जी, इस क्लब में भी आपके सत्कार का मैं कोई प्रबन्ध नहीं कर सकता। ऐसी अभागी बस्ती है—"

मुस्करा कर युवती ने कहा, "यह मैं जानती हूँ।" उसने इशारा किया तो वरामदे में रखी दो आरामकुर्सियों को उसका नौकर उठा कर सामने खुले मैदान में, जहाँ बैडमिंटन और टैनिस के ग्राउंड बने हुए थे, रख आया। नवनीत के इशारा करने पर वह एक छोटी-सी गोल टेबल भी ले आया। बैठ कर नवनीत ने सिगरेट का डिब्बा मर्गरेट के सामने पेश किया। मुस्करा कर उसने एक सिगरेट निकाल कर कहा, "मैंने सुना है भारतवर्ष में नारी का सिगरेट पीना एक बुरी रुचि का परिचय देता है। भारतीय तरीकों की आदत डालने की मैं चेष्टा कर रही हूँ, और अब तो सिगरेट के बिना रह भी लेती हूँ।" लेकिन उसने सिगरेट मुँह में दबा ली। नवनीत ने माचिस जला कर पहले मर्गरेट की सिगरेट सुलगाई और कहा, "यह तपस्या आप किसलिए कर रही हैं ?" और उसने अपनी सिगरेट भी जला ली।

"मान लीजिए आपके लिए।" और सिगरेट के धुएँ से उसने अपना ही मुँह व्याप्त कर लिया।

"आपकी बहन की कृपा तो मैं सम्पादित कर ही चुका हूँ। पता नहीं आप सब हाल से वाकिफ हैं या नहीं !"

"कितना होने से सब होता है यह तो मैं नहीं जानती, किन्तु कह सकती हूँ, बहुत कुछ हाल तो जानती ही हूँ, आपके साथ उसकी प्रणय-लीला से लगा कर उसके तालाब में गिराए जाने और अब आपके विरुद्ध मुकदमे तक के हाल से जरूर परिचित हूँ।"

नवनीत ने पास ही खड़े हुए मर्गरेट के नौकर की ओर देखा तो मर्गरेट ने कहा, "उसकी आप चिन्ता न कीजिए। वह मेरा नौकर है, किन्तु एकदम बहरा और गूँगा। केवल आँखों की भाषा ही समझता है। फिर भी उसे चले जाने के

लिए कह देती हूँ ।''

मर्गरेट के इशारे पर उसका नौकर काफी दूर जाकर एक वृक्ष की छाया में ज़ाकर बैठ गया । नवनीत ने चैन की साँस ली, मर्गरेट है तो आखिर लड़की ही । अकेली, उससे डरने का कोई कारण नहीं है, चाहे वह शर्ली की बहन ही क्यों न हो । नवनीत पुरुष जो है ।

सिगरेट को ओठों में ही अटकाए रख कर नवनीत ने कहा, ''शर्ली की बहन हैं आप, और कहती हैं आई भी लखनऊ से ही हैं, किन्तु लखनऊ में कभी आपको देखा तो नहीं ?''

हँस कर मर्गरेट बोली, ''कहाँ से देखते ? भारत तो मैं पहली बार शर्ली और किट्सन की दुर्घटना का समाचार पाकर आई हूँ । सब समय तो मैं यार्क-शायर ही रही न । लेकिन लगता है शर्ली ने आपको मेरे बारे में कुछ भी नहीं बताया !''

''मेरे बारे में कुछ बताया था क्या उसने आपको ?''

''सब कुछ बताया था उसने । हर हफ्ते वह मुझे पत्र लिखती और हर हफ्ते आपके प्रणय-व्यापार का प्रत्येक अंश काफी विस्तार के साथ उसमें रहता था ।''

अनैसर्गिक इसमें कुछ हो, ऐसा नवनीत को नहीं लगा । अपने रहस्य के भागी-दार को खोजने की सबको इच्छा होती ही है, नहीं तो उसके भार से आदमी दब ही जाए । और फिर अपनी छोटी बहन, जो एकदम अपने से दूर सात समन्दर पार बैठी हो, उससे उपयुक्त पात्र रहस्य वहन करने को और हो ही कौन सकता है ?

''मि० रॉगर्स के साथ विवाह के विस्तृत समाचार नहीं दिए उसने आपको !'' नवनीत के स्वर में कुछ व्यंग्य था, जिसे मर्गरेट तत्काल ही पहचान गई ।

मुस्कराकर मर्गरेट ने कहा, ''वहीं पर तो मेरा अवसर हो सकता था ।''

''मैं आपका मतलब नहीं समझा मिस ज्यॉफ्री । माफ कीजिए, मिस ही कहूँ न आपको ?'' और फिर बहुत धीरे, लेकिन स्पष्ट ही जिसे वह सुनले, उसने कहा, 'यद्यपि कुछ 'मिस' किया हो आपने लगता नहीं ।''

मर्गरेट के मुँह पर छाई लाली को सिगरेट का धुआँ भी नहीं छिपा सका । लेकिन उसने कहा, ''मिस' किया है, इसलिये मिस नहीं हूँ, बल्कि मिस हूँ, इसलिए

'मिस' किया है। मसलन आपको तो मिस किया ही है मैंने। अपने पत्रों में आपके बारे में सब कुछ लिखती जाकर शर्ली कैसी प्यास जगाती जा रही थी मेरे मन में आपके लिए, वह मेरे सिवा शायद कोई नहीं जानता। लेकिन आप मुझे मर्गरेट कह कर क्यों संबोधित करते हैं? अगर आप मैगी कहकर पुकार सकें तो मैं अपने आपको खुशनसीब समझूँगी।"

नवनीत अपने आप में कुछ अधिक उलझ गया। मर्गरेट के आगमन का अभिप्राय वह कुछ नहीं समझ पा रहा था। उसके संबंध में वह सारा हाल जानती है। किट्सन की हत्या का मामला तो अधर लाल और टीकू के मृत्युदंड से ही समाप्त हो गया है, किन्तु यह तो मुकदमे का केवल एक हिस्सा मात्र है। अधरलाल और टीकम चन्द को भी गुपचुप और जल्दी में इसीलिए निपटा दिया कि कहीं लोकमत राज्य के विरुद्ध सिर न उठा ले। अभी शर्ली की भूमिका तो बाकी ही है, और आश्चर्य नहीं, नीलम उस दिन की धमकी के अनुसार वहाँ जाकर उसे क्या-क्या न समझा आई हो। तब नवनीत को हत्या के प्रयत्न का अपराधी तो करार दिया ही जा सकता है, एक अंग्रेज महिला की हत्या के सफल प्रयत्न का। और सरकार को अब उसकी गवाही की आवश्यकता भी तो नहीं है। अधरलाल और टीकम चन्द रंगभूमि से बिदा किए ही जा चुके हैं। और यह मर्गरेट उसी अंग्रेज महिला की बहन है।

नवनीत को विचारों में डूबा देखकर मर्गरेट ने कहा, "आपको यह जानकर संतोष होगा मि० नीट, कि शर्ली की देखरेख का सारा भार अब मैंने अपने ऊपर ले लिया है, और वह बड़ी तेजी से स्वस्थ हो रही है।"

क्या मतलब? क्या व्यंग्य कर रही है यह लड़की? प्रगट में नवनीत ने कहा, "आश्वस्त हुआ मिस मर्गरेट। किन्तु वे क्या सचमुच बहुत अस्वस्थ हैं? नौकरी की विवशता देखिये न कि इच्छा करके भी मित्र की बीमारी में उन्हें देखने भी नहीं जा सकता। छुट्टी के लिए प्रयत्न करूँगा अब। अच्छा, आपने यह तो बताया ही नहीं कि यहाँ आने का कैसे कष्ट किया आपने?"

मर्गरेट ने एक कटाक्ष किया। साधारण व्यक्ति को पागल बनाने के लिए पर्याप्त था वह। किन्तु नवनीत इस समय अपनी ही चिन्ता में मग्न था। मर्गरेट को उत्तर देने के लिए मानो मानसिक तैयारी करनी पड़ी। उसने कहा, "यहाँ आने के बाद बड़े धर्मसंकट में पड़ गई हूँ मि० नीट। नहीं मालूम, आप कहाँ तक

मेरा विश्वास करेंगे, तब भी सब बातें आपको बता देने से मैं अपने आप को रोक नहीं सकी, और बिना किसी पूर्व परिचय के मैं आपकी सेवा में आ उपस्थित हुई हूँ।"

"लेकिन बिना कोई कारण हुए आपकी बात का विश्वास क्यों नहीं करूँगा? आप कहिये?"

"धन्यवाद मि० नीट। इंग्लैंड में मुझे यही खबर मिली थी कि क्रिट्सन और शर्ली नौका-विहार के समय किसी दुर्घटना के ही शिकार हुए थे—मगर के शिकार में ऐसी दुर्घटना हो ही जाती है। और शर्ली का बाद में बच निकलना भी प्रसन्नता ही की बात थी। पर यहाँ आने पर तो मैं उसके मुँह से कुछ अजीब ही ऊल-जलूल बातें सुन रही हूँ।"

"क्या सुन रही हैं आप?" धड़कते हुए हृदय से नवनीत ने पूछा।

"यहाँ आने पर एक बात तो यह मालूम हुई कि वह दुर्घटना नहीं थी, बल्कि एक पूर्वनिश्चित षड्यंत्र था। खैर यह तो प्रमाणित हो गया कि वह किसी आतंक-दल का षड्यंत्र था जिसके आप स्वयं भी शिकार हुए हैं। पर उसका कहना है कि षड्यंत्र की योजना में आपका भी हाथ था, क्रिट्सन की हत्या में आपका सक्रिय सहयोग तो था ही, शर्ली को पानी में भी आपने स्वयं फेंका था। शायद आप नहीं जानते होंगे कि जरा और स्वस्थ होते ही कोर्ट में वह ऐसा ही बयान देने की सोच रही है।"

नवनीत के बदन से पसीना छूटने लगा। उसने कहा, "कहती क्या हैं आप? मैं......"

"लगता है शर्ली का दिमाग संतुलन खो बैठा है मि० नीट। लेकिन यहाँ की पुलिस और सरकार को तो मुझसे ज्यादा आप ही जानते होंगे। इसके अलावा शर्ली का एक और कोई काला-सा डेंटिस्ट मित्र है न। क्या नाम है देखिये उसका—"

"डॉ० रेडियर—"

"येस डॉ० रेडियर। वह भी आपसे असंतुष्ट है क्या? वह शर्ली को उकसाता रहता है और कहता है कि जो कुछ वह कहेगी, उसका प्रमाण वह देगा अदालत में।"

"हूँ।" कुछ सोचकर नवनीत ने कहा, "और यह तो आप मानती ही हैं न,

कि रेडियर का दिमाग तो अपनी जगह पर है। सो डॉ० रेडियर शर्ली का मित्र है, और आप हैं उसकी बहिन। मुझसे क्या मेरे अपराध की स्पष्ट स्वीकृति जानने आई हैं आप ?"

मर्गरेट ने लज्जा का नाट्य किया और नवनीत को नीची दृष्टि से तिरछे देखते हुए कहा, "नाराज हो गए न! अस्वाभाविक नहीं है मि० नीट।" और फिर मुस्कराते हुए कहती गई, "पर मेरा दिमाग भी सही जगह पर है। आपके स्पष्ट न करने पर भी मैं जानती हूँ कि आप सर्वथा निर्दोष हैं।"

"कैसे जानती हैं आप ?"

'मैंने मनोविज्ञान पढ़ा है महाशय। जो हत्यारे होते हैं, उनकी सूरत छिपी नहीं रहती। या शर्ली आपको समझ नहीं पाई, या उसके मन में कुछ दुरभि-सन्धि है।"

"अपनी बहन को आप ही मुझसे अधिक जानती होंगी!"

'लेकिन मि० नीट, अगर शर्ली ने अदालत में यही बयान दिया तो अपनी रक्षा के लिये आप क्या करेंगे? वह एक अंग्रेज महिला है, और इस अंग्रेज सल्तनत में उसका वक्तव्य एक भारतवासी के वक्तव्य की तुलना में कभी हल्का नहीं लिया जायेगा।"

यही तो नवनीत नहीं समझ पा रहा है। बोला, "लेकिन..."

"कहिये।"

"मिस ज्यॉफ्री, आप हैं शर्ली की बहन। निश्चय ही आपका दिमाग भी सही जगह पर है। मैं तो आपके शत्रु-पक्ष का ही तो हुआ न! आप ये सब बातें मुझ से क्यों पूछ रही हैं?"

मर्गरेट अपनी कुर्सी पर जम कर बैठ गई, मानो पैंतरा बदल कर अपना दाँव आजमाने जा रही हो। उसने बड़ी भावभरी दृष्टि से नवनीत की ओर देखा और बोली, "शायद आप अंग्रेज जाति को पूरी तरह नहीं जानते। व्यक्तिगत स्वातंत्र्य का वहाँ कितना सम्मान और महत्व है, यह कह कर नहीं बताया जा सकता। अपना मत आप बनाने में वर्ण, जाति, राष्ट्रीयता, मित्रता या रिश्ता कोई भी कभी किसी भी तरह की बाधा नहीं पहुँचा सकता। अपने मन और मत पर व्यक्ति के अधिकार की जितनी अधिक स्वीकृति उस देश में है, पता नहीं विश्व के किसी अन्य देश में वैसी उपलब्ध हो।"

"अंग्रेज जाति के इस गुण की प्रशंसा मैंने भी सुनी है मिस ज्यॉफ्री, अवसर आने पर शायद प्रमाण भी मिल जाए। पर आप मुझे निर्दोष मानती हैं, इसी से मुझे क्या मिल जाएगा ? प्रश्न तो यह है कि अदालत मुझे निर्दोष माने।"

"तभी तो मैं आज आपके पास प्रस्तुत हुई हूँ कि सत्य और न्याय का पक्ष दृढ़ रह सके।"

"आपकी तो भावना के लिए अंग्रेज जाति के प्रति ही नहीं, आपके प्रति भी बड़ी श्रद्धा और आदर का भाव उत्पन्न होता है मिस ज्यॉफ्री। किन्तु आपको मेरी निर्दोषिता का निश्चय कैसे है ? बहस के लिए नहीं, केवल अपनी उत्सुकता शमन करने के लिए जानना चाहता हूँ।"

"वेल, उसका कोई ठोस प्रमाण मेरे पास नहीं है। मेरे पास केवल मेरी व्यक्तिगत भावना ही है जिसका कोई पक्का प्रमाण पाया नहीं जा सकता। शर्ली के प्रति आपकी जैसी निष्ठा रही है और उसके प्रति जैसी गहरी प्रतीति आपके लिए शर्ली में थी, वह उसके लिखे हुए पत्रों से छलकी पड़ती थी। उस गहरे प्रेम की पृष्ठभूमि में कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता कि आप अपने उस प्रीति-पात्र को नष्ट करने का भाव भी मन में ला सकते हैं। और जब आज आपको देखती हूँ तो,—इतना मनोविज्ञान मैं जानती हूँ महाशय ! अगर आप अपराध इस के दोषी हो सकते हैं, तो मैं क्यों नहीं हो सकती ?"

"आपके उदारतापूर्ण विचारों के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद मिस ज्यॉफ्री। किन्तु केवल आपकी भावना ही मेरी सहायक हो सकती है ? यदि शर्ली अदालत में मेरे विरुद्ध ये अपराध लेकर प्रस्तुत हो, तो अपने प्रेम का प्रमाण ही मैं कैसे दे सकूँगा ? आप शायद यह भी जानती ही होंगी कि हमारा प्रेम वस्तुतः लखनऊ में ही अंकुरित-पल्लवित और विकसित हुआ, और जबकि हम सदा वहाँ सशरीर उपस्थित थे ही तो हमारे बीच पत्र-व्यवहार की भी कोई आवश्यकता क्यों होती कि उसके प्रमाणस्वरूप कोई उसका पत्र ही मेरे पास उपलब्ध होता, और आज मैं उसका उपयोग कर पाता।"

"लेकिन शर्ली के मुझे लिखे गए वे पत्र तो अपनी कहानी आप कहेंगे।"

"वे पत्र हैं आपके पास ?"

"निस्संदेह। और आप चाहें तो आपको दिए भी जा सकते हैं, किन्तु कठि-नाई यही है कि मैं उन्हें अपने साथ यहाँ नहीं लाई हूँ। इसके अलावा मैं खुद

आपके लिए गवाही दे सकती हूँ।"

"आपके निकट मुझे अपनी गहरी कृतज्ञता प्रगट करनी चाहिए मिस ज्यॉफ्री। यानी आप मेरे प्राणों की रक्षा ही करेंगी! समझ नहीं पाता कि किस तरह आपकी इस उदारता का बदला चुका सकूँगा।"

"बदला आप कई तरह से चुका सकेंगे मि० नीट। लेकिन यदि आप सचमुच मेरे संतोष के लिए कुछ करना चाहते हैं तो मैं प्रार्थना करूँगी कि मुझे आप मिस ज्याँफ्री या मर्गरेट कहकर न पुकारें।"

"तब ?"

"मुझे 'मैगी' कहिए, और यह इजाजत भी दीजिए कि मैं आपको 'नीट' कह कर पुकार सकूँ।"

"किन्तु संबोधन के ऐसे रूप तो—"

"मैं यह कहने की इजाजत चाहती हूँ नीट, कि मैं—मैं आपको प्रेम करती हूँ।" और कहते-कहते सचमुच उसके सारे चेहरे पर सिन्दूर पुत गया, फलों के बोझ से झुक कर धरती की ओर आ लगी डाली की तरह उसकी दृष्टि झुक गई। वह कह रही थी, "आज से नहीं, तभी से जब से शर्ली ने तुम्हारे बारे में अपने पत्रों में मुझे लिखना शुरू किया था। तुम शायद महसूस नहीं करोगे जिस पत्र में तुम्हारा उल्लेख न होता उस पत्र को मैं क्रोध से फाड़ डाला करती। और आज तुम्हें प्रत्यक्ष देखकर मुझे अपने पर गर्व होता है कि मैंने किसी अपदार्थ से प्रेम नहीं किया है।"

नवनीत एक क्षण के लिए अपने हृदय की गम्भीर गुहा में खो गया। क्या सचमुच यह लड़की उससे प्रेम करती है, या केवल एक प्रवंचना है उसकी? आंतरिक प्रेम की गम्भीर विवृत्ति हुए बिना चेहरे पर इस तरह लाली न दौड़ आती, और प्रवंचना वह करे भी तो किसलिए? शर्ली के पक्ष में तो वह कोई तथ्य संग्रह कर नहीं रही है। पर वाह रे तेरे भाग्य की विडंबना। क्या इन स्त्रियों की क्रीड़ा का कन्दुक होना ही तेरे भाग्य में बदा है? अनजाने ही एक मुस्कान उसके अधरों पर मचलने लगी, पर उसे दबा कर उसने कहा, "तुम्हारी बात से मैं अपने आपको प्रशंसित समझता हूँ मैगी, किन्तु क्या यह शर्ली के प्रति तुम्हारा विश्वासघात नहीं होगा?"

यही सोच कर तो मैंने पहले तुम में अपनी दिलचस्पी खतम करली थी। पहला

धक्का मुझे तब लगा जब उसने मुझे लिखा कि तुम्हारे साथ वह उसके प्रेम का खिलवाड़ ही था और उसने इरादा कर लिया कि वह किट्सन रॉगर्स के साथ विवाह करना चाहती है। उसके ऊपर क्रोध हुआ था किन्तु अपने मन में आशा की एक किरण को भी उदय होते हुए मैंने महसूस किया था नीट।"

"फिर भी शर्ली तुम्हारी बहन ही तो है!"

"है। लेकिन मैं अंग्रेज लड़की हूँ, और अपने निर्णय की तथा व्यक्तित्व की रक्षा का मुझ में पर्याप्त आग्रह है। तुम नहीं जानते, पर और भी कई कारण हैं जिनसे मैं शर्ली से घृणा करती हूँ। केवल मुझसे बड़ी होने के मनोवैज्ञानिक कारण से ही नहीं।"

"आपत्ति न हो तो बताओ न, वे क्या कारण हैं?"

"तुमसे आपत्ति कैसी डीयर? डर केवल इतना ही है कि भारतीय पैमाने से आप कहीं मुझे एक निकृष्ट बहन न मानने लग जाएं!"

"कुछ अंशों तक यह सही हो सकता है, किन्तु मैं संस्कारों से ऊपर उठ कर यह सोचने का यत्न करता हूँ मैगी, कि एक उत्कृष्ट बहन होने की अपेक्षा एक न्यायप्रिय और सच्चा मानव होना ही व्यक्तित्व की श्रेष्ठतर उपलब्धि है।"

"कितने स्वीट, उच्चाशय और आश्चर्यमय व्यक्तित्व हो तुम नीट? शर्ली में जो मैं बहुत ज्यादा नापसन्द करती हूँ वह है उसकी वासना। इसीलिए तो उसका प्रेम स्थाई नहीं हो सकता। तुमसे पहले भी वह ऐसे प्रेम के नाटक कर चुकी है।"

"कहती क्या हो?"

"अब जब कि वह तुम से छूट चुकी है, बल्कि तुम्हारे साथ शत्रुता भी करने पर तुली बैठी है तो तुम्हें यह बताने में कोई हानि नहीं है कि वह नैतिक दृष्टि से मेरे लिए निकट अपराधिनी भी है। बहन होकर जिस नैतिकता की वह रक्षा नहीं कर सकी मैं ही क्यों करूँ उसके लिए?"

"कौन सी घटना है वह मैगी?"

"बड़ी भद्दी घटना है नीट। तब वह इंग्लैंड में ही थी। डैडी भी आए हुए थे तब वहाँ। यार्कशायर में मेरा एक सहपाठी था जैक्सन पर्किन्स, उससे मेरी घनिष्ठता थी, और वह घनिष्ठता प्रणय की सीमा तक पहुँच चुकी थी, पर एक बाधा उपस्थित हो गई। शर्ली मुझसे सिर्फ ग्यारह महीने ही बड़ी है। उस वर्ष

जैक को डर्बी का पहला इनाम मिल गया, बस शर्ली की उस पर लार टपक पड़ी और उस पर वह मेरे बावजूद डोरे डालने लग गई, यद्यपि पहले वह उससे नफरत करती थी और अपनी नफरत मुझ पर प्रगट भी कर चुकी थी।"

"अच्छा। यह तो बड़े ओछेपन की बात है। और वे मि० जैक्सन भी उसके चंगुल में फँस गए?"

"पुरुष का क्या है नीट। जरासी कहीं प्रेम की उछल-कूद देखी कि फिसल गए। अवश्य उसके साथ मेरी सहानुभूति थी, पर पूर्ण प्रेम तो तब तक विकसित नहीं हुआ था न! मैंने भी शर्ली के लिए उसे एक दम छोड़ दिया। आखिर वह मेरी ही तो बहन थी! किन्तु उस दिन के मेरे हृदय के विद्रोह को मत पूछो डीयर, जिस दिन सबेरे मुझे मालूम हुआ कि रात को जैक अपने कमरे में मृत पाया गया और उसकी सारी सम्पत्ति गायब थी।"

"तुम्हारा मतलब है शर्ली ने उसकी हत्या की?"

"कोई नहीं जानता, किन्तु मेरे पास प्रमाण है। उस रात मैंने शर्ली से सिनेमा जाने का अनुरोध किया था, किन्तु यह प्रस्ताव उसने इसलिए इंकार कर दिया था कि वह रात शर्ली जैक के साथ बिताने का कार्यक्रम निश्चित कर चुकी थी।"

"अच्छा!"

"उस समय तो मुझे इतना क्रोध भी हो आया था उस पर कि मैं उसे हत्या के अपराध में कानून को सौंपने के लिए उतावली हो उठी थी, लेकिन डैडी और मामा ने किसी तरह मना-मनू कर मुझे विरत कर दिया। उसके बाद ही तो डैडी इसे भारत ले आए। और हमारा पत्राचार तो और भी बाद में प्रारम्भ हुआ था। खैर, उस बार तो चाहे जो समझ कर मैंने तरह दे दी, किन्तु इससे तो मेरी नफरत बढ़ ही गई है न उसके विरुद्ध। तुम समझे न मेरी बात?"

"तुम सही कह रही हो।"

"वही छल उसने तुम्हारे साथ भी किया है, लेकिन वह नहीं जानती कि उसके मार्ग की अब सब से बड़ी बाधा मैं जो यहाँ आ गई हूँ, और मैं उसके मनोरथ को पूरा नहीं होने दूँगी। वह नहीं जानती कि मैं तुम से प्रेम करती हूँ। जिस तरह उसने मेरे साथ व्यवहार किया है, मैं उसका बदला लूँगी और तुम्हारी रक्षा के लिए मैं प्राणों पर खेल जाऊँगी।"

"मैं तुम्हारे निकट कृतज्ञ हूँ मैगी। किन्तु क्या मैं तुम्हारे उपयुक्त हूँ ? अभी तो मेरे जीवन का ही कुछ ठिकाना नहीं है। नहीं क्या ?"

"उसका दायित्य मेरा रहा। तुम्हें खतरा शर्ली और क्या नाम उसका, वह डैंटिस्ट..."

"डॉ० रेडियर—"

"उसी से तो खतरा है। दोनों मेरे हाथ में हैं। शर्ली की देख-रेख तो मैं करती ही हूँ, और वह रेडियर प्राय: सारे दिन वहाँ बना रहता है। उसे मार्ग से हटाने में देर ही क्या लगती है, अगर तुम्हारी कुछ सहायता मिल जाए। और शर्ली ? रेडियर के बिना वह यों ही बिना पंख के हो जाएगी, फिर भी, जानते हो न ? उसके स्वास्थ्य पर मेरा पूरा अधिकार है।"

मर्गरेट के इशारे को नवनीत समझ गया। उसे मानो चाँद ही हाथ लग गया। बुरा हो इस प्रेम का, नारी इसके लिए क्या-क्या नहीं कर बैठती ? नवनीत ने तय कर लिया कि यदि उसे सफल होना है तो प्रेम का अभिनय उसे करना ही होगा। और यह आकाशीय सहायता ही उसका उद्धार कर सकती है, वरना शर्ली और रेडियर अवश्य उसे नष्ट कर देंगे।

नवनीत को सोचते देखकर युवती ने कहा, "मैं चाहती हूँ इस दिशा में जो कुछ करना हो शीघ्र कर लिया जाना चाहिए। शर्ली का स्वास्थ्य काफी ठीक हो गया है, और अब किसी भी दिन वह अपने बयान के लिए कोर्ट में जा सकती है। आज ही मेरे साथ लखनऊ क्यों नहीं चले-चलते डीयर ? शर्ली के सभी पत्र ले आ सकोगे और सब कुछ अपनी आँखों से देख लोगे।"

"आज ही रात को ? पर यह कैसे मुमकिन है ?"

"क्यों ! कठिनाई क्या है ? मेरी कार साथ है। किसी को पता भी नहीं लगेगा और कल संध्या के पहले तुम फिर यहाँ मौजूद हो जाओगे। मेरा विश्वास तो कम से कम हो जाएगा तुम्हें !"

"लेकिन मैगी, यहाँ ऑफिस की भी तो व्यवस्था करनी होगी कुछ। बिना आज्ञा मैं यह स्थान छोड़ ही कैसे सकता हूँ ?"

"एक दिन में ऐसा क्या हो जाता है ! तुम्हारा पोस्टमैन कैसा है ? क्या एक दिन के लिए भी संभाल नहीं सकता ? निश्चय ही हम यह नहीं चाहते कि मैं डैंडी से कह कर तुम्हारी अनुपस्थिति को नियमित करवा दूँ।"

"ना ना, उनसे कैसे कहा जा सकता है ! तुम्हारे डैडी मुझ से तो काफी नाराज होने चाहिए। मेरा पोस्टमैन भी अभी नया ही है, पर काम तो दे ही सकता है वह…"

"फिर क्या बाधा है ?"

"एक बाधा है मैगी। शर्ली ने जो बयान पुलिस को दे रखा है, उससे पुलिस मेरे पीछे नजर गड़ाए रहती है। एकाध आदमी मेरे पीछे लगा ही रहता है। मुमकिन है यहाँ भी कोई हो।"

"अच्छा, उसकी चिन्ता भी मैं अपने ऊपर लेती हूँ। आज न सही। देखो, कल है शनिवार, यानी परसों रविवार को दफ्तर का भी झंझट नहीं रहेगा और सोमवार को सबेरे ही मैं तुम्हें यहाँ छोड़ जाऊँगी। कल आधी रात को तैयार रहोगे तुम मेरे साथ चलने के लिए। तुम्हारे पीछे लगे पुलिस के आदमी को मेरा नौकर खोज निकालेगा। गूँगा और बहरा जरूर है, पर खूब चतुर है। तुम खुद देख लोगे। यहाँ के सिपाहियों को तो बहुत कम वेतन मिलता है न ? एक साथ अगर दस माह का वेतन उसके हाथ पर रख दिया जाए तो हमारे इशारे पर उसकी आँखें और जीभ, दोनों बन्द हो जाएँगी।"

"तुम ठीक हो सकती हो मैगी। तो कल रात को तय रहा। कितना खेद है मुझे डीयर, कि अपने घर ले जाकर मैं तुम्हारा उचित स्वागत-सत्कार भी नहीं कर सकता !"

हँस कर युवती ने कहा, "समय आने दो, उसे ब्याज सहित उगाह लूँगी डार्लिंग।"

"तुम्हारी ही बात सही। उधार मंजूर करने के सिवा दिवालिए के पास चारा ही क्या है ? मेरा ख्याल है, अब हम जुदा हों, वरना यहाँ के लोग भी खयालों के कई पुलाव पकाने लगेंगे।"

मर्गरेट उठ खड़ी हुई, "ओ० के० डार्लिंग, तो कल तक। मैं रात को जल्दी ही आने की चेष्टा करूँगी। मकान मैं जानती हूँ, पिछवाड़े से आऊँगी मैं।"

"यही ठीक रहेगा, पर जल्दी नहीं। मकान नहीं मिलने से पोस्टमैन यहीं सोता है, हालाँकि उसे कुछ पिला-पिलू कर जल्दी ही सुलाने की मैं कोशिश जरूर करूँगा।"

'विश यू ए व्हेरी व्हेरी गुड एंड लकी नाइट एंड दा फॉलोइंग डे टिल वी

मीट ।"

दोनों ने बड़ी सरगर्मी से हाथ मिलाए। मर्गरेट के इशारे से लछमन पास आ गया तो वह पीछे की राह से ही बाहर निकल गई। जब तक वह मुड़-मुड़ कर देखती रही, उस बढ़ते हुए अंधकार में नवनीत उसकी ओर अपना रूमाल हिलाता रहा।

अँधेरी रात आधी से अधिक जा चुकी थी। गहरी रात की साँय-साँय से सारा मानपुर ढका पड़ा था। मिट्टी के तेल की कमी के कारण म्युनिसिपैलिटि की लालटैन भी दस बजे ही बुझ चुकी थीं। भयानक अँधेरे में आकाश के चमकते हुए तारे किसी दानव के कुष्ठ चिन्हों जैसे लगते थे। हवा भी मानो कहीं दुबक कर छिपी बैठी थी।

तभी पोस्ट ऑफिस के पिछवाड़े एक काले रंग की टूअरर कार आकर निश्शब्द खड़ी हो गई। उसका काला रंग रात की गहराई और गली की सँकराई में ऐसा घुल मिल गया था कि लाइट बन्द हो जाने पर बिना ठोकर खाए किसी को उसका पता ही न लगता। आवाज भी कुछ नहीं हुई। निशीथ की वह भयानक शांति मोटर के प्रकाश से चमक कर पंख, फड़फड़ाने वाले एक डरे हुए उल्लू के द्वारा ही भंग हुई। प्रकाश के बन्द होते ही मृत्यु की वह निबिड़ कालिमा पहले से भी अधिक सघन होकर वातावरण पर फैल गई।

अपने कमरे में नवनीत लाल तब भी इस सिरे से उस सिरे तक चहल कदमी कर रहा था। शत्रु-शिविर में जा रहा है, इसलिए उसने पिस्तौल का कहीं से प्रबन्ध कर लिया है। पोस्ट ऑफिस के कुछ "मनी विथड्राल फॉर्म" उसने जेब में डाल लिए हैं, यद्यपि पैसे की उसे जरूरत नहीं पड़ेगी और कल इतवार भी है, किन्तु आखिर बाहर जा रहा है, कब क्या हो जाए, सो कैसे कहा जा सकता है? पास में साधन हों तो अड़ बैठने की नौबत नहीं आती।

कल का दिन है और वह है। मर्गरेट पर विश्वास का नाटक किए बिना और कोई उपाय नहीं है। शर्ली के साथ वह जो कुछ कर चुका है, उससे वह अन्य किसी व्यवहार की आशा कर ही नहीं सकता, और रेडियर तो उसका पिछलग्गू ही रह गया है न? उनको अवसर मिल गया तो वे उसे जीवित छोड़ भी दें तो भी आजन्म कारावास निश्चित है उसके लिए। भाग भी तो नहीं सकता

यहाँ से ! जालिम सिंह तो इस मुकदमे के दारोमदार पर ही सर्किल इन्सपैक्टर-शिप का स्वप्न देख रहा है। और फिर आरती ? जिसके लिए वह गढ़े में उतरा है और उतरता ही रहा है, उसी को अपने प्राणों के भय से छोड़ कर चला जाए ? नहीं, अभी तक वह उससे नहीं मिल सका है, अवसर भी नहीं मिला और साहस भी तो जुटाना है उसे। उसने तो चेष्टा भी की थी कि यह नीलम भी झपट्टे में आजाए, पर कानून की बारीकियों में से भी निकल गई। सच्चिदानन्द पाठक बड़ा ही मँजा हुआ वकील है। वह तो नवनीत का पक्का प्रमाण जुट गया ? वरना अधर लाल और टीकम चन्द के विरुद्ध भी अपराध प्रमाणित होना असम्भव था। शर्ली और रेडियर से एक बार निपट ले तो फिर आरती की ओर ध्यान देगा वह ! नवनीत ने हाथ की घड़ी की ओर देखा, बारह तो बज गए हैं। क्या मर्गरेट भी एक धोखा ही थी ? अब तक तो आ जाना चाहिए न उसे।

दरवाजे पर एक हलकी-सी चाप पड़ी तो उसने कहा, "चली आओ मैगी। दरवाजा खुला है।"

दरवाजा खुलते ही काले गाउन में अपने समस्त शरीर को छिपाए जब मर्गरेट लालटेन के सामने हँसता हुआ चेहरा लेकर आ खड़ी हुई तो बादलों के घने मंडल में स्थिर विद्युल्लेखा-सी उसकी आभा देखकर नवनीत भी अभिभूत हो गया। उसने मर्गरेट को बाँहों में भर लेने के लिए हाथ बढ़ाए किन्तु उसे इशारे से रोक कर बोली, 'गुड ईविनिंग डार्लिंग ! ठीक समय पर आई हूँ न ? और यह है तुम्हारे पीछे लगा हुआ सिपाही ! मैंने इसे राजी कर लिया है।"

एक और आदमी ने आगे बढ़ कर नवनीत को सलाम किया। बातचीत सारी अंग्रेजी में चल रही थी, इसलिए सिपाही के कुछ पल्ले पड़ने का प्रश्न ही नहीं था।

नवनीत ने कहा, "तुम एक अद्‌भुत लड़की हो मैगी ! इसे कैसे राजी किया तुमने ?"

"केवल सौ रुपयों में डीयर !" फिर उस आदमी की ओर अभिमुख होकर अंग्रेजियाना हिन्दी बोली, "टोमरा बख्शीस हाय यह ! ढोका डेना नेई माँगटा। लौट कर आएगा टो और इटना बख्शीस डेना माँगटा। पूछने पर बोलेगा सा'ब लोक बीमार हाय। फ्रंट डोअर से बाहर बी नेई निकला—"

"फिरन्ट डोर क्या होता है मेम सा'ब ?" सिपाही ने पूछा।

नवनीत ने कहा, 'सामने का दरवाजा'। कहना तुम, कि तुम सामने के दरवाजे पर थे। और अगर कोई जाँच-पड़ताल करने ही आ जाए—"

"नहीं सा'ब, आप खातिर जमा रखिए। मैं जमादार हूँ। पहली बात तो कल इतवार है, कोई नई कार्रवाई तो हो नहीं सकती। और तब मुझ से थानेदार सा'ब भी कुछ नहीं पूछेंगे।" और उसने अपनी सिरे पर उठी हुई घनी मूँछों पर हाथ फेर लिया।

मर्गरेट ने उसके हाथ पर सौ रुपए का नोट रख दिया और कहा, "वेल, टोम खुड बहोट समजडार हाय। टोमरा अकिल का टोमको और बी इनाम डेगा हम। समजा? जाने शकटा टोम।"

सिपाही को नवनीत ने कई बार देखा था। जब वह सलाम करके नीचे उतर गया तो सचमुच उसके मन पर से एक बोझ उतर गया।

"और तुम्हारे पोस्टमैन के क्या हाल हैं डार्लिंग?"

"वह नशे में मुर्दों से बाजी बद रहा है। "ब्लैक एंड व्हाइट" की एक बोतल उसकी खुशी का सबसे बड़ा स्रोत है। घोड़े बेच कर बेहोश पड़ा है नीचे दालान में!"

"बहुत खूब! पर यहाँ भी ब्लैक एण्ड व्हाइट मिल जाती है क्या?"

मर्गरेट ने बड़ी भावुकता से नवनीत की ओर देखा और वह कुछ और पास सरक आई। नवनीत ने उसे बाँए हाथ से पास खींच कर कहा, "मेरे पास थी मैगी, कभी-कभी अफसर आ जाते हैं न?"

"मेरे पास कुछ फ्रान्स की बढ़िया चीज है। मार्ग में देखेंगे उसे। अच्छा, डीयर, तुम्हें एक पिस्तौल तो जरूर अपने पास रखनी चाहिए। मैं तुम्हारे लिए एक ले आई हूँ। अपनी हिफाजत के लिए एक रहनी ही चाहिए। यह लो।" और उसने अपने गाउन से एक पिस्तौल निकाल कर उसकी ओर बढ़ा दी। मर्गरेट की बातों पर अविश्वास के लिए अब नवनीत को कारण न रहा। उसने कहा "इस यात्रा के महत्व से मैं परिचित था। मैंने एक की व्यवस्था करली है। इसे तुम रखो अपने पास।"

हँस कर मर्गरेट और भी नवनीत के निकट खिसक कर बोली, "मैं तुम्हारी बगल में पहुँच गई हूँ तो मुझे इसकी क्या जरूरत रह जाती है? मैं महसूस करती हूँ कि तुम्हीं मेरी सबसे बड़ी सुरक्षा हो!" और मर्गरेट ने पिस्तौल लेकर पुनः

अपने गाउन में छिपा ली। फिर नवनीत का हाथ अपने में लेकर बोली, "तो हम चलें ? समय बरबाद करने से क्या लाभ ?" और उसने साहस करके नवनीत का हाथ चूम लिया।

मानो यह इशारा था। नवनीत ने लालटेन की कल घुमादी। कमरे में अंधेरा हो गया तो उसने मर्गरेट का कपाल चूम कर कहा, "मैं कितना कृतज्ञ हूँ तुम्हारे निकट मैगी ? लेकिन चलो, ये बातें फुरसत में होंगी। तुम्हारा वह नौकर तो कार में ही है न ?"

"हाँ, वह बहुत ही भला और भोलाभाला लड़का है डियर !"

दोनों अँधेरे में ही नीचे उतरे। मर्गरेट नवनीत का हाथ थामे रही। नीचे दालान में मुंशी सुन्दर लाल श्रीवास्तव दीन-दुनिया से बेखबर, बगल में खाली बोतल दबाए लुढका पड़ा था। दोनों ही पीछे के दरवाजे से बाहर निकल गए। हरनाम को पहले ही सूचित कर दिया गया था कि नवनीत को आज रात विशेष काम से लखनऊ जाना है। हरनाम आजकल नवनीत के प्रति कुछ-कुछ उदासीन भी हो गया है। नवनीत को इससे भी कुछ मलाल नहीं है। वह भी स्वयं एक विशेष अवस्था में से जो गुजर रहा है।

नवनीत कार से टकरा जाता, पर ठीक समय पर मर्गरेट ने सावधान कर दिया। गूँगे-बहरे चपरासी लछमन ने कार का दरवाजा खोल दिया। दोनों पीछे की सीट पर बैठ गए तो लछमन शोफर के पास सामने बैठ गया। शोफर ने गाड़ी स्टार्ट की, हल्की-सी रोशनी, हल्की-सी घर्र-घर्र की आवाज, मानो कोई बिल्ली गुर्राकर जाग उठे। किसी को कानोंकान खबर न हुई। कार बढ़ी और मानपुर पीछे छूटने लगा।

ठडी हवा का झोका दोनों के मुँह को लगा। बैठे ही बैठे मर्गरेट ने पास के एक बक्स से एक बोतल निकाली, फिर एक गिलास में दूसरी बोतल से सोडा उढेंला और उसमें शराब मिला कर नवनीत के मुँह के सामने करके कहा, "टु माई हैल्थ माइ व्हेरी स्वीट डार्लिंग !"

पेय की सुगन्धि से ही नवनीत का प्राण-प्राण आपूर्य हो उठा था। बिना झिझक के सारा गिलास खाली करके उसने कहा, 'तुम नहीं लोगी मेरी मधु ?"

"लूँगी। किन्तु कुछ बीयर ही। मैं तेज पेय सह नहीं सकती, और मुझे बहुत कुछ होश में रहना है !"

हँस कर नवनीत ने कहा, "मुझे होश में रहने की जरूरत नहीं है क्या ?"

एक दूसरी बोतल से गिलास में बीयर भर कर तथा एक चुस्की लेकर मर्गरेट ने कहा, "डीयर, तुम स्ट्राँग ड्रिंक सहन कर सकते हो न ! मैं तो अभी नौसिखिया ही हूँ, केवल एक छात्रा ! पीती हूँ, पर बहुत जल्दी होश खो बैठती हूँ। आज अपने प्रेम की सार्थकता के प्रथम क्षण में मैं अपने को खोना नहीं चाहती डीयर ! मैं आशा करती हूँ, तुम मेरी कठिनाई महसूस करोगे।" और उसने अपना हाथ नवनीत की गोद में रख दिया।

गाड़ी की रफ्तार बढ़ती जा रही थी। बस्ती छोड़े लगभग एक घण्टा होने आया था। खुली खिड़की से आ-आकर हवा आरोहियों के चेहरों को थपथपा रही थी और उनके मन के भीतर एक ताजगी भरती जा रही थी। नवनीत के गले में तेज शराब पहुँच गई थी। उसके मन में एक ओर ताजगी तो दूसरी ओर एक शैथिल्य सा घर करता जा रहा था। यौवन के ज्वार पर पहुँची हुई अत्यन्त सुन्दर, समर्पण के लिए उत्सुक, एक युवती उससे सट कर बैठी हुई है और उसके स्पदनों से अपने स्पन्दन मिलाती जा रही है। वह स्वयं शराब के तेज घोड़े पर सवार बेतहाशा भागा जा रहा है। रह रह कर उसका मन लगाम खींचता है, किन्तु आखिर हार कर उसका हाथ अनायास ही मर्गरेट को कमर से घेर कर और अपने पास खींच लेता है। मर्गरेट ने अपने आपको इतना शिथिल कर दिया कि नवनीत के हाथ का जरा-सा स्पर्श पाते ही वह उसके सीने से जा सटी। रेशमी सुवासित केश पाश से नवनीत का दिमाग भर उठा।

मर्गरेट ने कहा, "कितना सुहावना समय है माइ लव्ह ! इंग्लैंड में तो ऐसी नीरव शाँत रात्रि स्वप्न में भी सुलभ नहीं होती। अब तो हम जंगल में बहुत दूर भी निकल आए हैं। क्या तुम्हारी इच्छा नहीं होती कि कुछ देर यहाँ ठहर कर ताजी हवा में मन का तनाव कुछ कम कर लें ? मेरी परम कामना है डीयर, कि सब चिन्ताओं को छुट्टी देकर मुक्त खुले गगन के नीचे अपने प्रियतम की दिव्य संगति का ऐश्वर्य उपभोग करूँ ! क्या कहते हो ? ड्राइवर को कहूँ ?"

"नहीं जानता मैगी, तुम मुझे कहाँ लिए जा रही हो ? मैंने अपने समस्त आपे को तुम्हारी इच्छा पर छोड़ा। जो इच्छा हो, तुम कर सकती हो माइ हनी !" और उसने मर्गरेट के उठे हुए मुँह को अनायास ही चूम लिया।

"मैं कितनी खुशनसीब हूँ ! ओ माइ गॉड, मेरी खुशी का यह क्षण मुझसे कभी

जुदा न हो। डीयर नीट, तुम्हारे पास पिस्तौल है न ! इस खुशी के क्षण को तुम अमर कर दो। कितना बड़ा सौभाग्य होगा यह मिलन और निस्संदिग्ध विश्वास की बेला में प्रियतम के हाथों प्रेम में मर मिटना ? जरूर तुम मुझे इसी क्षण खत्म कर दो डीयर, ताकि भविष्य के लिए मेरे मन में अपने प्रेम के सम्बन्ध में किसी तरह की शंका व्याप्त न हो सके। डू प्लीज डीअरेस्ट ! आइ इम्प्लोअर यू।"

नवनीत ने मर्गरेट को अपने सीने से सटा लिया और कहा, "पागल हो गई हो मर्गरेट ! तुम मेरे भविष्य की एकमात्र आशा, और मैं तुम्हें मारूँगा ? अपने प्राणों के लिए भी नहीं मैगी ! मैंने अपने आपको तुम पर निछावर कर दिया है। हाउ स्वीट एण्ड प्रेटी यू आर !"

"तो गाड़ी रुकवा दूँ ? मेरी प्रार्थना मंजूर है ?"

"तुम्हारा आदेश सिर-आँखों पर डीयर !"

मर्गरेट ने इशारा किया। गाड़ी एक मैदान में सड़क के एक ओर पहुँच कर रुक गई। मर्गरेट ने दरवाजा खोला। उसका हाथ पकड़े हुए नवनीत भी उसके पीछे ही उतर पड़ा। गाड़ी का प्रकाश बुझने के पहले नवनीत की धुँधली मनःशक्ति ने अनुभव किया कि आगे सड़क की दो शाखाएँ हो गई हैं।

"नवनीत ने पूछा, "दो सड़कें डीयर—"

"हाँ नीट, इधर यह लखनऊ का मार्ग है, और उधर दिल्ली, बरेली मथुरा···"

"लखनऊ इस ओर है न ? कितना समय और लगेगा वहाँ पहुँचने में ?"

"और दो घण्टे अधिक से अधिक डीयर ! इधर डार्लिंग—"

हाथ पकड़े मर्गरेट नवनीत को सड़क से दूर मैदान में एक ओर ले गई। गाड़ी की लाइट बुझते ही पहले तो एकाएक अन्धकार घना हो उठा था, किन्तु धीरे-धीरे मानो तारे भी प्रकाश देने लग गए। मर्गरेट ने कहा, "हमारा काम आधा तो समाप्त ही समझो। शुभ प्रारम्भ आधी उपलब्धि ! मेरा क्या इनाम होगा डार्लिंग ?"

"जो तुम चाहो डीयरेस्ट !"

"मैंने तुम्हें चाहा !"

"मुझे ? मैगी, यह तो बड़ी हीन पसन्द है तुम्हारी !"

"क्यों ? निश्चय ही विवाहित तो तुम नहीं हो न ?"

"हूँ, पर न-हूँ जैसा ही समझो। मेरी पत्नी ने मुझे त्याग दिया है।"

"तलाक दे दिया है ? तब तो तुम फिर विवाह करने के लिए स्वाधीन हो न ?"

हँस कर नवनीत ने कहा, "हिन्दुस्तान में हिन्दुओं में तलाक अभी जायज नहीं है मैगी। पर हाँ, विवाह करने, न करने के मामलों में मैं जरूर स्वाधीन हूँ। कम से कम अभी तक तो विवाह न करने का ही आनन्द उठाता रहा हूँ ?"

"और अब ?"

"अब ! यह उत्तर तो तुम हो।" और उसने पुनः मर्गरेट को कमर से खींच-कर पास सटा लिया।"

"तब मेरी इस पसन्द को हीन क्यों कहते हो ? मैं तो अपने आपको बहुत बड़ी सौभाग्यशालिनी मानती हूँ, इस पसन्द के कारण।"

"मैं खुद जो हीन हूँ मैगी। विवाह में कुछ रुपया मिला था, पर वह विवाह में ही खत्म हो गया। वेतन जो मिलता है, वह अकेले के लिए ही काफी नहीं है। और अब नौकरी का भी क्या ठिकाना है ?"

"उसकी तुम्हें चिन्ता नहीं करनी होगी डीयर ! मैं खुद नौकरी करके काफी कमा कर ला सकती हूँ। मैं भारतीय लड़की नहीं हूँ कि नौकरी से कतराऊँगी।"

"लेकिन तुम्हारे माता-पिता क्या सहमत हो जाएँगे ? खास कर जब वे जान जाएँगे कि उनकी कन्या शर्ली के साथ मेरा कैसा व्यवहार हुआ है ?"

"इस क्षेत्र में माता-पिता से डरने वाली लड़कियाँ इंग्लैंड में नहीं पैदा होतीं नीट। आत्मा की पुकार पर कार्य करने के लिए हम ईश्वर से भी नहीं डरते। मैं खुश, हूँ, बहुत खुश हूँ कि मैंने तुमको चुना है। मेरा स्वास्थ्य पान करो डीयर, तुम्हारी थकावट दूर हो जाएगी।"

नवनीत का गला सूख रहा था, "यहीं बैठ जाएँ ! कुछ दो पीने के लिए मैगी। क्या पिला दिया है तुमने कि प्यास बढ़ती ही जाती है ?" और वह वहीं नीचे बैठ गया।

मर्गरेट भी वहीं जमीन पर ही बैठ गई और हाथ की टोकरी में से आपानक की सामग्री निकाल कर गिलास में उचित मिश्रण का पेय बनाते हुए उससे कहा, "यह मुहब्बत की प्यास है डीयर। यह बुझती नहीं, हमेशा बढ़ती ही रहती है,

बढ़ते रहने में ही इसकी सार्थकता है ?"

नवनीत ने गिलास से चुस्की लेकर कहा, "बड़ी तेज है मैगी !"

"बर्गन्डी की शराब कुछ तेज होती ही है नीट ! एक भीख माँग सकती हूँ डार्लिंग !"

"येस शुअर !"

"मे आइ किस यू !"

"यह तुम्हारा अधिकार है मैगी, और कौन तुम्हें अपने अधिकार से वंचित कर सकता है !" और गिलास की शेष शराब को एक ही घूँट में समाप्त करके नवनीत ने मर्गरेट को खींच कर अपने बदन से सटा लिया और चुम्बनों से उसके मुँह को परिव्याप्त कर डाला। मर्गरेट शिथिल हो गई। बड़ी उत्तेजना में भर कर उसने भी नवनीत के शराब की बू से भरे मुँह को चूम लिया। मध्यरात्रि के निबिड़ अन्धकार से भरे उस वातावरण में बेसुध होते गए—एक तेज शराब के दुर्निवार नशे में, और दूसरा अंधी वासना तथा प्रेम की अनिवार्य विवशता में।

जमीन की घास की चादर पीली पड़ती जा रही थी, पर ठंढी हवा में भीगी नर्म ही अधिक थी जिससे भू-पृष्ठ की कठोरता दब गई थी। मर्गरेट की लालसादग्ध दृष्टि की आग उस अंधकार में भी नवनीत के नयनों के सामने मानो उसे जला डालने के लिए उद्यत थी। तेज शराब की मादकता में नवनीत का चेत लड़-खड़ाता जा रहा था। मर्गरेट सुन्दर है, युवती है, समर्पण की भावना से शिथिल होती जा रही है—अंग्रेज है, शर्ली की बहन है तो क्या हुआ ? लेकिन नवनीत—कितनी नारियों की मरीचिका का वह शिकार हुआ है ? और तब भी कहाँ वह माया, कहाँ वह आरती, कहाँ वह फ्रान्सीसी रक्त नीलम, और कहाँ यह सस्ती भावुकता और अन्धी कामुकता से पिसी जा रही क्षुद्र औरत ? नवनीत ने सदा सच्चे हीरे ही को हाथ लगाया है और वह भी मुकुट पर लगे हीरे को ही। मार्ग की धूल में पड़ा मिल जाए, उसका मूल्य ही क्या ? मानो एक ही क्षण में नवनीत को उबकाई आने लगी। उसने मुँह फिरा लिया।

मर्गरेट ने पूछा, "क्या हुआ डीयर ?"

"आह, कैसी तेज शराब पिला दी है तुमने मैगी ? सारा आकाश उल्टा घूमता लग रहा है। तुम्हारी आँखों में यह कौन आ बैठा है ? मेरी पुरानी पत्नी ? क्या चाहती है वह ? उसे कभी ऐसा प्यार नहीं मिला न ? बदनसीब बेचारी !"

उसकी गोद में झुक कर मर्गरेट ने उसके कंधे पर अपने हाथ फैला दिए और सीने पर अपना सिर टिका कर कहा, "लेकिन मैं तो वैसी बदनसीब नहीं हूँ न डीयर ?"

"नहीं हो, इसीलिए तो अभी मैं तुम्हें अपने प्यार का प्रमाण नहीं दूँगा।"

"क्यों ? क्या तुम्हें अभी भी मुझ पर यकीन नहीं है ?" भर्राए स्वर में मर्गरेट ने कहा।

"यकीन ? क्या कह रही हो मैगी—यकीन न होता तो तुम्हारे साथ इस रात में चला कैसे आता ? मगर नहीं, तुम्हारी बात नहीं कहता, मेरे गले में कानून की रस्सी जो पड़ी हुई है न, वह फन्दा अभी टला कहाँ है ? उस फन्दे को गले में लटकाए रख कर क्या प्रेमी को गले लगाना अभिशाप नहीं होता ? नहीं, अभी नहीं मैगी ! मौत और जीवन की इस दुविधा से निकल आने के बाद ही मैं तुम्हें आत्मसमर्पण करूँगा, अभी तो आत्मसमर्पण का कोई मूल्य ही नहीं है न ! अभी नहीं। अभी तो यह सिरदर्द ही नहीं सम्हल रहा है मैगी !"

"सिर दर्द तो मुझे भी हो रहा है डीयर। दो-ढाई बजे तक जागते रहने से सिर दर्द स्वाभाविक ही है। अच्छा डीयरेस्ट, एक प्रस्ताव करें ?"

"बोलो।"

"अगर मेरे बावजूद तुम्हें जीवन का इतना अधिक अनिश्चय लग रहा हो तो क्यों नहीं हम दोनों अभी ही यहाँ से भाग चलें दूर बहुत दूर ? कार हमारे पास है ही। बहुत दूर जाकर किसी स्टेशन के पास इसे छोड़ देंगे और रेल में सवार होकर कहीं भी निकल पड़ेंगे। कौन हमें पकड़ सकता है तब ?"

नवनीत ने एक क्षण सोच कर कहा, "कहती तो तुम ठीक हो। लेकिन मैगी, भाग कर हिन्दुस्तान में क्या इस सरकार से छिपा जा सकता है ? इस शरीर की आग को छिपा सके, ऐसी राख कहाँ है ? और फिर तुम जैसी बिजली, जो बादलों में ही रह सकती है, यदि धरती पर आ जाए तो क्या प्रलय नहीं मच जाएगी ?"

"मैं जाली पासपोर्ट का प्रबंध भी कर सकती हूँ नीट। जहाज में बैठ कर हम किसी भी दूसरे देश भी जा सकते हैं, जहाँ अंग्रेज सरकार हमारा कुछ भी न बिगाड़ सकेगी।"

हँस कर नवनीत ने कहा, "फाँसी का फंदा भी एक दूसरे मुल्क का पास-

पोर्ट ही है। पर नहीं मैगी, नवनीत इस दुनिया में एक कायर की भूमिका खेलने के लिए पैदा नहीं हुआ।"

"अपने जीवन को बचाने की चेष्टा कायरता नहीं कहलाती डीयर।"

"मगर सिर को ऊँचा उठा कर जीने का नाम ही जीना है। मैदाने-जंग में लड़ कर, जय पाकर ही जीने में कुछ मजा है। डरने की क्या बात है ? शर्ली और रेडियर को काबू में ही तो करना है ? फिर तो यह रंगीन दुनिया हमारी है न !"

"उस ओर से तुम निश्चिंत रहो। वहाँ पहुँचते ही तुम खुद देख लोगे, शर्ली और रेडियर तो एकदम तुम्हारी मुट्ठी में हैं।"

"तो फिर देर क्यों कर रही हो मैगी ? मेरा सिर घूम रहा है, मैं लेटना चाहता हूँ।"

"मेरी गोद में सिर रख कर इस खुली हवा में ही लेट लो न ! दस-पन्द्रह मिनिट भी लेट सके तो ताजगी आ जाएगी।"

"हम यहाँ सुरक्षित हैं क्या ?"

"एक दम। यह जंगल और ऐसी घनी रात, आ ही कौन सकता है यहाँ इस समय ? इसके अलावा ड्राइवर और चपरासी, दोनों ही विश्वासपात्र व्यक्ति शस्त्रसज्जित हैं।"

"तुम जानो मैगी डीयरेस्ट। मैंने अपने आपको तुम्हारे सुपुर्द किया।" और नवनीत मर्गरेट की पृथुल जंघाओं पर सिर टिका कर लेट गया, लेटते ही उसकी आँखें झँप गईं। मर्गरेट जानती थी वह नींद नहीं, बेहोशी थी। शराब के द्वारा उसे और भी कुछ दिया गया था और उसी के प्रभाव की मर्गरेट को प्रतीक्षा थी।

उसके बाद चेत में जब नवनीत आया तो उसने अपने आपको विप्लव-दल की सभा के सम्मुख न्याय-विचार के लिए उपस्थित पाया था। उस समय भी पूरा चेत कहाँ था उसे ? अन्य महिलाओं के साथ उसी की ओर निरंतर ताकती हुई वह रमणी भारतीय वेशभूषा में मर्गरेट ही तो थी। किन्तु उसे पुकारा जा रहा था मंजरी के नाम से। और कुछ ही समय बाद यह भी स्पष्ट हो गया था कि वह एक षड्यंत्र द्वारा गिरफ्तार करके यहाँ लाया गया है। प्रशंसा करनी पड़ेगी उसे मंजरी के अभिनय की। कहीं पर भी तो उसका छल नहीं पकड़ा जा सका। अंग्रेजी ऐसे फर्राटे के साथ बोलती थी जैसे सचमुच जीवन भर कैम्ब्रिज

ही में पढ़ती रही हो। और नवनीत से किया हुआ उसका प्रेम का अभिनय ? नहीं, उसमें अभिनय नहीं था। बाद की घटनाओं ने तो प्रमाणित भी कर दिया न। मंजरी जैसी अभिनय-कुशल और बुद्धिमती लड़की भी प्रेम की कमजोरी से परास्त हो गई। उस रात मंजरी या मर्गरेट की गोद में सिर रखे जब वह अचेत होकर पड़ रहा था तब उसके मनोभावों की कल्पना नवनीत अच्छी तरह कर सकता है। मंजरी के मन में भी कम संघर्ष नहीं रहा होगा उस समय !

देखा होगा मंजरी ने अपनी जंघाओं पर पड़े नवनीत के अवश चेहरे की ओर उस निशीथ के स्वप्नालोक में। पौरुष की श्री वहाँ तब भी कुछ तो शेष रही ही होगी। उसका मन हवाई किलों को सर करने में लग गया होगा। यदि मंजरी को इस युवक से प्रेम है तो अब उन दोनों के बीच बाधा ही क्या है ? नवनीत उसके अंक में पड़ा ही है, मन के वेग की तरह ही वांछित दिशा में उड़ा ले जाने वाली कार उसके अधिकार में है। क्यों न नवनीत को लेकर वह उड़ चले मन की उसी दिशा में ? बाधा देता ही कौन ? ड्राइवर और लछमन उसके ही तो आदमी थे ! न रहे हों तो भी मंजरी को उन्हें मार्ग से हटाते क्या देर लगती। पिस्तौल उसके पास थी ही, वही उसे लछमन से भी मुक्ति दिला सकती थी। और जो पुलिस के कर्मचारी तक को फोड़ने में सफल हो सकी थी, वह इन बाधाओं से ही पार न पाती ? पाँच-छः घंटे में तो दो-ढाई सौ मील दूर किसी स्टेशन से रेल में सवार होकर उत्तर भारत से दूर कहीं भी जा सकती थी। सीलोन, ब्रह्मदेश, या इंग्लैंड, अमेरिका—कहा भी था न उसने।

लेकिन तब क्यों ले आई वह नवनीत को माया का अतिथि बनाने ? नाटक ही सही, मंजरी को प्रेम करने का नवनीत का नाटक इतना बुरा तो नहीं था कि मंजरी उसके छल को कहीं भी समझ पाई हो। समझ गई होती तो विप्लव-दल की सभा में अपने ही आदमियों के सामने अपनी कमजोरी का प्रदर्शन करके उनकी भर्त्सना का पात्र होना कभी पसन्द न करती। प्रेम करता हो पुरुष, तो नारी को सब कुछ मिल जाता है। वह अपने आपको 'फुलफिल्ड'—तृप्त अनुभव करती है। फिर उसकी कोई आकांक्षा नहीं रह जाती। इसीलिए तो माया के जीवन में एक हाहाकार छा गया था, इसीलिए तो सब कुछ पाकर भी, यश, प्रतिष्ठा और देश के प्रति मर मिटने के संकल्प में जीवन की सार्थकता पाकर भी, वह अपने ही अन्तरतम की प्यास से प्रताड़ित होकर नवनीत का न्याय-

विचार करने के लिए आ बैठी थी। इसीलिए तो कुछ न पाकर भी, दारिद्र्य, असम्मान, और अंत में वैधव्य प्राप्त करके भी आरती अपने पति से मिली तृप्ति को लेकर अभी तक अपराजित, अप्रभावित रही है। क्यों ले आई तब मंजरी नवनीत को वहाँ ? क्या था उसके मन में ? माया के कोप-यज्ञ में नवनीत को आहुति बनाने की उसकी पुरोहिताई में ? और फिर जब नवनीत को प्राणदण्ड सुनाया जा रहा था तब उसका वह अतर्कित व्यवहार ? वह वक्तव्य ? नवनीत को पुरस्कार में प्राप्त करने की याचना ? जंगल की वह अर्धरात्रि, गोद में अचेत विवश लेटा हुआ अपना प्रीति पात्र। लालसादग्ध अधरों की कितनी प्यास बुझाई होगी तब मंजरी ने, ऐसा हिसाब कौन कूआ या तालाब रख सकता है ? पर वह तब भी असंपृक्त था और संपृक्त रहा हो तब भी स्पष्ट वह उसे नाटक समझ कर ही तो खेल रहा था। स्पष्ट छलना।

और मथुरा की उस सीलन भरी बदबूदार कोठरी में उस रात नवनीत ने निश्चय कर लिया था कि वह नीलम को आरती का अभियोग प्रस्तुत करने का अवसर नहीं देगा। ठुकराती रह कर ही आरती ने नवनीत की आसक्ति सम्पादित की थी, उसका पौरुष आरती की अनासक्ति को सहज ही चुनौती मान बैठा था, और जिसके सामने वह पदस्थ हो गया—नहीं, आरती का स्वप्न अब उसके लिए देवता का मन्दिर है, वह अब अधिक उसे कलुषित नहीं होने देगा। क्षति पूर्ति ? उसकी सारी सम्पत्ति, जितनी भी वह हो, आरती की हो जाए, इससे बढ़ कर उसकी सार्थकता क्या है ? क्षतिपूर्ति नहीं केवल एक भक्त का भगवान के प्रति पत्र-पुष्प निवेदन। अधिक वह कर ही क्या सकता है। नीलम उसका साथ देगी ही, और नीलम का साथ उसके लिए सौ पुरुषों के सहारे से अधिक महत्व-पूर्ण है।

नीलम का भविष्य ? वह क्यों सोचे ? नवनीत को प्यार करने की अपनी कमजोरी पर वह विजय पा चुकी है। भगवान श्रीकृष्ण की मधुर भक्ति में उसका मन रँगता जा रहा है। फ्रांस की भावुकता के साथ विरह-रस के आस्वाद में ही जीवन की चरम सार्थकता समझने वाली अनन्य प्रेमिका राधिका ही यदि वह अपने आपको अनुभव करने लग जाए और मीरा के समान अपने अंतरतम की प्रणय-रागिनी पर थिरकती नाचती जीवन बिता सके तो इससे बड़ी आध्यात्मिक

उपलब्धि उसके लिए और क्या हो सकती है ?

और इन्हीं विचारों में उस सीलन भरी मच्छरों और खटमलों के दंश से कुजबुजाती अंधेरी कोठरी में नवनीत को कब नींद आ गई, प्रातः काल की शीतलता के साथ, नवनीत को स्वयं नहीं मालूम ।

१२ समानेत्री माया

सिमट कर नवनीत एक बिन्दुमात्र रह गया था, तभी तो काल के प्रवाह में उसकी गति अत्यन्त द्रुत हो गई थी। जीवन के सारे व्यवधान को वह तभी तो आज इतनी जल्दी नापता चला जा रहा है। काल उसके लिए मानो स्थिर हो गया है। आगे-पीछे अगल-बगल मानो उसके लिए कुछ नहीं है। और उसका स्वयं का अस्तित्व ? उसकी उसे चिन्ता नहीं है। बिन्दु हुए बिना प्रकाश की अणुबेधक गति नहीं मिलती न ! उसका अपना अस्तित्व तो तभी उसने खो दिया जिस दिन उसका परिप्रेक्ष्य खो गया था। जो अस्तित्वशील रह गया था वह नवनीत नहीं, उसकी छाया मात्र थी, केवल दो आयाम में सिमिटा हुआ उसका अस्तित्व। और अब उस रात से ही जब मायावती उसकी आँखों के सामने एका-एक ही प्रगट हो कर उसके प्राण माँग बैठी थी, तभी से वह लम्बाई-चौड़ाई के दोनों आयामों को भी गवाँ कर एक निरायाम बिन्दु भर रह गया है। बिन्दु भर रह गया है, इसीलिए तो उसे संयम की यह दिव्यदृष्टि प्राप्त हो गई है और वह निरासक्त भाव से एक तटस्थ दर्शक की तरह सब कुछ देख सकता है।

मंजरी के प्रस्ताव पर स्थगित उस रात की सभा दूसरी रात शायद जल्दी ही प्रारम्भ हो गई थी। देर भी हो सकती है, अपनी कोठरी के अँधेरे के कारण समय की कल्पना नवनीत के लिए सम्भव नहीं थी। सभी सदस्य यथास्थान आ बैठे थे। केवल मंजरी ने महिलाओं की गैलरी में अपना स्थान बदल लिया था। अब वह अभियुक्त के निकट वाली बैठक पर बैठी थी और यदि अभियुक्त सामने अध्यक्ष की ओर देख रहा हो तो वह ठीक उसकी बगल में उसक दृष्टि

से ओझल रहती थी । नवनीत शायद इस परिवर्तन पर लक्ष्य न भी करता, किन्तु मंजरी के प्रस्ताव पर उसका एक शनिवार टल गया है, कुछ महत्व तो है ही उसका उसकी आँखों में !

स्थगित कार्यवाही का सूत्र पकड़ कर नीलम ने वक्तव्य प्रारंभ किया, "सभा-नेत्री महोदया, अपनी कहानी मैं सुना चुकी हूँ । मैं नहीं समझती, यह कहानी नारीत्व की लज्जा की कहानी है । नारीत्व की दुर्बलता की भी नहीं । यह तो सम्पूर्ण मनुष्यता की दुर्बलता की कहानी है जिसे आज का सभ्य समाज फ्रॉयड की देन कह कर सुबक दोष हो जाना चाहता है । नवनीत लाल ने इसे मेरी दुर्बलता प्रमाणित करना चाहा है, मैंने अपनी बात सदस्यों को बता दी है । स्वयं नवनीत लाल की ऐसी कई दुर्बलता की बातें बताई जा सकती हैं, किन्तु जो दुर्बलता सारी मानवता की हो उसके लिए व्यक्ति विशेष को दोष देने के कोई माने नहीं हैं ।

पास बैठी हुई उषा चंचल हो उठी । उसने कहा, "किन्तु माननीय सदस्य ने उस दुर्बलता पर विजय पाकर अपनी दुर्दम शक्ति का परिचय भी तो दिया है !"

नीलम ने मुस्कराकर कहा, "अवश्य दुर्बलता लज्जा नहीं है साथियो, किन्तु दुर्बलता के सम्मूख असम्मानपूर्वक झुक जाना अवश्य लज्जाजनक है । मैंने सभा को बताने की चेष्टा की है कि किस तरह अभियुक्त मानपुर में नए-नए बीमार शरीर और बीमार मन लेकर आए थे, जिसका कारण भी यह विदेशी सरकार थी जिसकी भक्ति और न्यायनिष्ठा में आज इनके विश्वास को किनारा नहीं मिल रहा है, किन्तु तब उसके प्रति इनके विक्षोभ की सीमा नहीं थी । सचमुच तो अधर काका से इसके बारे में यही सब हाल जानकर अनायास ही मेरी श्रद्धा इनकी ओर हो चली थी, और बाद में हमारे दल ने भी इन पर विश्वास किया था । अपने परिचय के प्रभात में यदि ये किसी समर्पणोत्सुक युवती को आकृष्ट करने में समर्थ हुए हों तो उसे न नारी की लज्जा कहा जा सकता है और न पौरुष का विशेष महत्व ही । यह तो सृष्टि की एक सामान्य-सी घटना मात्र है, निताँत स्वाभाविक । मेरी दुर्बलता के बारे में आप खुद सोच देखिए ।"

सुरेश नारायण को नीलम के वक्तव्य से मानो कुछ बल मिला । उन्होंने कहा, "और शर्ली को जो अपने प्राणों का मूल्य नवनीत के निकट उपस्थित करना पड़ा वह भी इसलिए क्यों हो क्योंकि वह अंग्रेज की कन्या है, या किट्सन के साथ खड़ी होकर वह हमारे सभापति के पुत्र की हत्या का कारण बनी हो ? क्या

यह संभव नहीं कि निराश प्रेम का ही वह बदला लेना रहा हो ?—अवश्य रेडियर ने वैसा ही किया था, पर उसने शर्ली के प्राण बदले में नहीं माँगे।"

नवनीत ने एक निगाह सुरेश नारायण की ओर देख भर लिया, बड़ी ही अवज्ञा की दृष्टि थी वह। उत्तर कुछ भी देना नवनीत ने आवश्यक नहीं समझा।

नीलम ने ही कहा "किन्तु मुझे पता लगा था इनकी नारी विषयक उपेक्षा का ही। मैं स्वयं भी उसका शिकार बनी और निराशा चाहे जितनी हुई हो मुझे, श्रद्धा इनके प्रति बढ़ी ही। किन्तु श्रद्धा का वह ज्वार अधिक टिका नहीं रह सका, बल्कि उसकी परिणति लज्जाजनक भर्त्सना में होगी, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। अवश्य ही, जैसा कि इन्होंने कहा है, प्राण देने वाले को प्राण लेने का अधिकार नहीं मिल जाता, किन्तु प्राण देने वाले के प्राण लेने का ही इन्हें क्या अधिकार है ? अधर लाल को इन्होंने अपनी न्यायनिष्ठा के कारण न्याय के निकट सौंप दिया किन्तु एक ही पक्ष तो नहीं है इस कांड का ! अधर लाल की विधवा पत्नी आरती देवी इनके निकट अपने पति की हत्या के लिए ही नहीं, अपने स्वयं के लिए भी उतनी ही दावी हैं—" एक क्षण के लिए नीलम रुक गई, उसने पहले सामने सभानेत्री के अँधेरे कक्ष की ओर देखा, फिर सुरेश नारायण की ओर, और शेष में जब उसने अपनी दृष्टि नवनीत की ओर प्रेरित की तो उसे सन्देह हुआ कि वह उसकी बात सुन भी रहा है या अभी तक दिन को दी हुई दवा की बेहोशी उस पर छाई हुई है ! सीने पर उसका सिर लटका हुआ था। वह पूर्ण सावधान और सचेत है यह प्रमाणित करने का उसे अवसर भी नहीं मिला था। उसकी दृष्टि लटकी हुई गर्दन से फर्श ही को चूम रही होगी।

"आप सुन रहे हैं नवनीत बाबू ?" नीलम ने ही कहा।

नवनीत ने सिर उठाया और कहा, "मैं सुनूँ या न सुनूँ, जिनको सुनाना आपको अभीष्ट है वे तो सुन ही रहे हैं। आप कहती चलिए। जरूरत पड़ने पर वे ही तालियाँ भी बजा देंगे।"

"मैं चाहती हूँ कि आप भी सुनें। क्योंकि हो सकता है यह आप ही की आत्मा की आवाज हो। न्याय-विचार का भय आत्मा की आवाज को नहीं होता, किन्तु तब भी व्यक्ति की संकीर्ण मनोवृत्ति उसका गला बड़ी सरलता से दबोच देती है।"

"भारतीय अध्यात्म का आपने शायद काफी अभ्यास किया है। मेरी आत्मा की आवाज आपके गले में स्पंदित हो, शायद यह भी हमारे आध्यात्मिक प्रेम का प्रमाण मान लिया जाए। पर, आप कहिए, जो कुछ आप कहना चाहें, मैं सुन रहा हूँ।"

नीलम ने भी बात आगे बढ़ाना उचित नहीं समझा, और कहा, "साथियो माँ की ममता लेकर सेवा करने की इस दुनिया में समता नहीं है। उससे भी बड़ी सेवा मातृभूमि की है। अधिकार-अभियोग जताने के लिए वह तो कभी मुँह भी नहीं खोलती। जिस मिट्टी पर मनुष्य जन्म लेता है, जिस धूल में खेल कर, जिसके धन-धान्य से पल कर वह पलता-पनपता है, ऐसी मातृभूमि के लिए व्यक्ति के मन में उतना ही प्रेम होना चाहिए जितना माता के लिए। माता के साथ द्रोह करने पर भाई उसका बदला वसूल करता है, और मातृभूमि के साथ द्रोह करने पर अपना देशवासी भाई। मातृभूमि के साथ जो द्रोह नवनीत बाबू ने किया है उसका विचार सभा कर रही है। मैं इनका भाई या बहिन नहीं हूँ कि इनके मातृ-द्रोह का विचार करूँ, किन्तु बिल्कुल जन्म देने वाली माँ की तरह वात्सल्य से जिस नारी ने इस व्यक्ति की प्राणांतक बीमारी में सेवा की है, उसी धर्म माता के उपकार का बदला उसे विधवा बना कर देना कितना जघन्य अपराध हो सकता है ? नहीं, कानून शायद इस क्षेत्र में प्रवेश नहीं करता, इसकी पवित्रता इतनी गहरी है कि इस ओर आँख उठा कर देखने का कानून को साहस नहीं हो सकता स्वयं माँ कभी अपनी संतान के विरुद्ध न्याय की याचना नहीं करती। किन्तु वह माँ इसी तरह मेरी भी धर्म-माता है, और उस माँ के नाम पर उसकी यह···"

नवनीत ने समस्त शक्ति लगा कर कहा, "नीलम देवी !"

"कहिए ? मैं सुन रही हूँ। और जहाँ तक मैं समझती हूँ, आप यह भी नहीं कह सकते कि आपको पूर्ण चैतन्य नहीं है।"

"मैं पूर्ण रूप से बाहोश हूँ। आप व्यक्तिगत मामलों को लेकर गड़े मुर्दे उखाड़ने को उद्यत प्रतीत हो रही हैं, उससे किसे लाभ होगा ? मैं अपने समस्त अपराधों को स्वीकार किए लेता हूँ।"

"लाभ सचमुच किसी को नहीं होगा।" नीलम ने कहा, "गड़े मुर्दे उखाड़ने की मेरी विवशता भी इसलिए थी कि आप स्वीकार ही नहीं करना चाहते थे कि कोई मुर्दा है भी। गड़े मुर्दे उखाड़ने से तो वातावरण में अस्वास्थ्य ही फैलता

है। खासकर तब, जब की स्वयं आरती देवी मुझे इस अप्रिय और अशोभन कर्तव्य से विरत करने की प्राणपण से चेष्टा करती आ रही है। इसीलिए मैंने इन्हें आपके लिए वात्सल्यमयी माँ कहा, है यद्यपि आपने उस सम्बन्ध को कलंकित करने में कुछ भी उठा नहीं रखा। चाँद के ऊपर थूकने के प्रयास का जो फल होता है, वही आपको मिला है, यह मुझे स्वीकार करना चाहिए, और अपने आप में यह भी कोई कम दंड नहीं है। ठीक है; यदि आप समस्त अपराध स्वीकार करते हैं तो मेरा दायित्व शेष हुआ। अब आप सभानेत्री के सम्मुख नत-मस्तक होइए। सभानेत्री महोदया, यदि आज्ञा दें तो मैं बैठ जाऊँ।"

नवनीत ने सभानेत्री की ओर मुख करके कहा, "मैं समस्त अपराध स्वीकार करता हूँ। लेकिन उनका कथन समाप्त होने के पहले ही सुरेश नारायण ने दर्प के साथ कहा,

"इस स्वीकृति का अर्थ समझते हैं न ?"

नवनीत ने दृष्टि नीची कर ली। शायद एक लंबी साँस भी उसके ओठों से निकल गई। अध्यक्षा को ही संबोधित करके दृष्टि झुकाए ही उसने कहा, "मरने से मैं नहीं डरता सभानेत्री जी, यद्यपि मरने की मेरी उमर नहीं है। प्राणों का मोह किसे नहीं होता ? अपने विगत पर दृष्टि डालता हूँ तो देखता हूँ कि मेरा जीवन सचमुच ही व्यर्थ हुआ है। कई अरमान थे, कई आशाएँ थीं, स्वप्न भी कम नहीं देखे थे। किन्तु कितना विवश है व्यक्ति इस जगत् में ? न हो लगाम चाहे उसकी इच्छाओं पर, किन्तु कितनी दूरी है इच्छा और फल-प्राप्ति के बीच ? परिस्थितियों के झंझावात कितना दूर भटका देते हैं उसे अपने लक्ष्य से ? शायद मुझ जैसे व्यक्ति के जीवन का अभाव ही मेरे लिए श्रेयस्कर हो ताकि मैं भविष्य में अपने लिए और समाज के लिए भार न बन सकूँ। किन्तु तब भी पश्चात्ताप—नहीं, विशेष मुझे कुछ नहीं कहना है।"

निकलसन के पास बैठे एक युवक ने मुस्करा कर कहा, "पश्चात्ताप भी हो रहा है आपको ?"

उस ओर आधी दृष्टि फेंक कर नवनीत ने कहा, "हो रहा तो भी आपको क्या ? और उसे व्यक्त करने की सार्थकता ही क्या है ?"

सुरेश नारायण को सभानेत्री से शायद कुछ संकेत मिला। उठ कर उसने कहा, "सभानेत्री का आदेश है नवनीत लाल, कि आप अपने बचाव के तथा मन

में आए हुए तथ्य जो भी आप चाहें, निस्संकोच प्रगट करें, ताकि निर्णय पर पक्षपात का दोष न लगा सकें।"

नवनीत ने देखा, सभा नेत्री का आदेश है। विप्लव-दल की अध्यक्ष ही क्यों न हो, पर नारी है तो दया और करुणा के संस्कार कुछ तो रह ही जाते हैं। सहज मरना चाहता ही कौन है ? यदि इस परीक्षा से निकल गया वह तो अवश्य माया की खोज में प्रवृत्त हो सकेगा, और अवसर मिल जाए तो अपने अन्याय का प्रायश्चित करने का प्रयत्न करेगा। तो ? चेष्टा कर देखे एक बार और ?

आशाभरी दृष्टि उठाकर उसने सभानेत्री के अंधकाराच्छन्न गवाक्ष की ओर देखा और फिर दृष्टि गिरा कर धीरे-धीरे कहना शुरू किया, "प्राणों का मोह यदि प्राणी-मात्र का धर्म है तो मैं ही उसका अपवाद हो जाऊँगा, इस पर कोई विश्वास नहीं कर सकेगा सभानेत्री महोदया। और प्रायश्चित की भावना हो, तब भी सार्थकता उसकी तब है, जब उसे करने का अवसर मिल सके। कह चुका हूँ कि मेरा जीवन एक तरह से व्यर्थ ही साबित हुआ है अबतक, और उसकी व्यर्थता का सबसे बडा कारण शायद मेरी पत्नी का परित्याग ही है। अगर मैं आपसे कभी जीवन की भीख चाहूँ तो कदापि वह अपने लिए नहीं होगी। मैंने अपनी पत्नी के साथ अन्याय किया है और इस अन्याय का प्रतिविधान न कर सकने की मज-बूरी मुझे कभी संतोष के साथ मरने न देगी। शायद संतोष के साथ मरना मेरा प्राप्य न हो तब तो मुझे कुछ भी नहीं कहना है, किन्तु मेरे ऊपर यदि कुछ दया ही करना चाहती हैं तो मैं आपके निकट जीवन का एक और अवसर माँगने की हिमाकत करना चाहूँगा—हिमाकत के सिवा कहा ही क्या जा सकता है इस प्रार्थना को। अपनी पत्नी के परित्याग का प्रतविधान करने की उत्कट इच्छा ही मुझे जीवित रहने की प्रेरणा दे रही है। बस, इसे आप प्रार्थना कह लीजिए, जो कुछ इसे आप समझना चाहें, यही मेरा शेष निवेदन है।" उसकी वाणी में पश्चात्ताप की कातरता और प्रायश्चित की दीनता स्पष्ट ही प्रभासित हो रही थी।

कुछ क्षणों की चुप्पी से क्षुण्ण हो कर नवनीत ने जब सामने दृष्टि उठा कर देखा तो उसे लगा कि सुरेश नारायण भुव-संकोच द्वारा मानो नीलम को उत्तर देने के लिए उत्प्रेरित कर रहा है। और सचमुच ही नीलम उस आदेश को मान-कर उठ खड़ी हुई तथा बोली,

"मुझे कल्पना नहीं थी कि अभियुक्त इतनी जल्दी कातर हो उठेगा। जीवन का मोह सचमुच सामान्य नहीं होता। कठिनाई है तो केवल यही, कि इस मोह पर दूसरों के दावे को हम कितनी शीघ्र अस्वीकार कर देते हैं ? मानव जाति के लिए अवसर की शृंखला के सिवा जीवन और है भी क्या ? अस्तित्व में आने के क्षण में ही कितना परवश और दूसरों के सरक्षण, दया और अवसर-दान की अपेक्षा में होता है वह ? किन्तु कितना शीघ्र भूल जाता है वह, अपनी परवशताएँ ?—नवनीत बाबू, आप जीनन का एक और अवसर माँग रहे हैं। जीवन का एक अवसर आपको आरती देवी ने दिया था. जीवन का एक अवसर आपको अधर लाल ने दिया था, जीवन का एक अवसर आपको शायद टीकम चन्द ने दिया था। और एक अवसर आप माँग रहे हैं सभानेत्री जी से। अवसर आपको मिलेगा या नहीं, कह नहीं सकती। शायद मिल जाए, क्योंकि यह विप्लव-दल अधिक रहने वाला नहीं है। किन्तु विप्लव-दल के सदस्य तो कहीं अलक्ष्य में समा जाने वाले में नहीं हैं। आरती देवी भी बची हुई हैं, प्रतिहिंसा नहीं है उनमें तो और भी सुविधाजनक है, और बची हुई है आपकी चहेती वह शर्ली। उस मार्ग का काँटा किट्सन या रेडियर, दोनों ही नहीं हैं सो, आपके जीवन के अवसर की सार्थकता के लिए सब कुछ निष्कंटक है। मुझ अकेली के मत का कोई मूल्य नहीं है, सभा के समवेत मत या सभानेत्री के आदेश से ऊपर उसका कोई मूल्य मैं चाहती भी नहीं। क्षमा आपको मिल जाए, ताकि जीवन के ऐसे अनेक अवसर आप वैभव के साथ उपभोग कर सकें, तो सबसे पहले मेरा आपको अभिनन्दन है, किन्तु इससे आप यह न सोच लीजिएगा कि आपने न्याय का उचित मूल्य अदा कर दिया है। स्वीकार कर लेने भर से अपराध की गुरुता कम नहीं हो जाती, और अभी भी नारी की कठोरता की परीक्षा लेने का अवसर युगों दूर है। अधर लाल को यदि मैंने पिता माना है और आरती देवी को माता, तो मेरे हृदय के घाव को सभानेत्री शायद ही समझ सकेंगी। आपकी प्रवचना को यदि कोई अनुभव कर सकता है तो वह मैं हूँ, या होती तो शायद अनुभव करती, आपकी वह निरपराध परित्यक्ता पत्नी। अच्छा, मेरा अभिनन्दन आपको।

"नीलम की वाणी काँप उठी थी, क्रोध से या शोक से, कहा नहीं जा सकता। सदस्यों ने उसकी आँखों से बहते हुए आँसू भी देख लिए जिन्हें नीलम ने बैठते ही शीघ्र ही आँचल से पोंछ लिया था। उसकी बगल में ही बैठी आरती की आत्म-

ग्लानि की सीमा नहीं रह गई थी। वह इस तरह सिकुड़ी बैठी थी, मानो उसका अस्तित्व एक न दिखाई दे सकने वाली पतली रेखा मात्र रह गया हो।

कितना समय नीरवता में बीत गया, कुछ कहा नहीं जा सकता। सुरेश-नारायण ने कहा था, "सभानेत्री ने तुम्हारे वक्तव्य को सुन लिया है नवनीत बाबू। उनका आदेश है कि यह सभा ही सबसे बड़ी शक्ति है। इस सभा के सदस्यों के लिए भी यदि तुम्हें कुछ कहना हो तो कह सकते हो। अन्तिम निर्णय इस सभा का ही होगा।" और मानो इसी आधार पर नवनीत अपराध के भार से झुकी अपनी आँखों को बड़ी चेष्टा के साथ उठा उठा कर वह प्रत्येक सदस्य की ओर वितृष्णा से देखता जा रहा था।

अध्यक्ष का स्थान सभा में सर्वोपरि महत्व का होता है, चाहे इससे उसके व्यक्तित्व की श्रेष्ठता का प्रमाण न मिले किन्तु व्यक्तित्व के महत्त्व का प्रमाण तो मिल ही जाता है। उसके निकट क्षमा माँगना और प्राणों के अवसर की प्रार्थना प्रस्तुत करना अलग बात है, चाहे यह पता न भी हो कि वह अध्यक्ष कौन है ? किन्तु निकल्सन जैसे क्षुद्र और रक्तलोलुप सामान्य व्यक्तियों के सामने वह क्षमा के लिए हाथ पसारेगा ? आखिर जीने जैसा लोभनीय जीवन में है क्या ? जीवित रहे, पर किसके लिए ? माँ-बाप, किसी के जीवन में नित्य नहीं रहते, और उनकी सार्थकता नवनीत के सचेत जीवन में कभी प्रमाणित ही नहीं हुई। आदमी जीवित रहता है परिवार के लिए, समाज के लिए, देश के लिए, मानवता के लिए। परिवार उसका हुआ तो था, पर रहा नहीं। प्रेम उसके जीवन की विडंना ही बना। समाज, देश, मानवता—इनकी अदालत में भी तो दोषी प्रमाणित हो चुका है वह। तब ? कुछ नितांत स्वार्थी अहंतावादी व्यक्ति अपने ही लिए जीवित रहते हैं, अपने लिए वे शेष जगत् की चिन्ता नहीं करते, या करते हैं तो अपनी ही अपेक्षा से। सब दिशाओं से अपने अस्तित्व के लिए सार-संग्रह करना ही उनका उद्देश्य रहता है। मन समझाने के लिए दर्शन की भूमि पर कुछ भी औचित्य पेश किया जाए। नवनीत की अपने लिए सार जुटाने की यह अस्तित्ववादी चेष्टा भी व्यर्थ हो गई है। और अब तो सब लोगों की भर्त्सना और अपमान की मात्रा के बीच उसका मन और स्वास्थ्य भी तो टूट चुका है। पकड़े रखने को है क्या उसका जीवन में ? एक लंबी साँस लेकर उसने कहा, "अध्यक्ष महाशय, और महानुभावो ! सचमुच जीवन का लोभ बढ़ाने का मुझे कोई अधि-

कार नहीं है, और लोभ भी नहीं है। अपराध मैंने स्वीकार कर लिया है, क्षमा की प्रार्थना मैं वापिस लेता हूँ, और आपके निर्णय की मैं प्रतीक्षा करूँगा।"

किन्तु इसके पहले कि नवनीत की बात आश्चर्य के साथ सदस्य पूरी सुन सकें, मंजरी देवी नवनीत को बगल में किन्तु उसकी ओर कुछ पीछे हटकर, रखी हुई सीट से उठ खड़ी हुई और बोली, नवनीत ने केवल अपनी पीठ से आती हुई आवाज ही सुनी, "अध्यक्ष महोदय, यदि आज्ञा मिले तो मैं कुछ निवेदन करना चाहती हूँ।"

नवनीत अपने आपको बहुत थका हुआ महसूस कर रहा था। जीवन की उसकी आशा तब ही क्षीण हो चुकी थी, जब उस सीलनभरी कोठरी में रात के पिछले पहर उसने निश्चय कर लिया था कि वह नीलम को आरती का आख्यान प्रस्तुत करने का अवसर नहीं देगा। मृत्यु की निकटता का आभास शरीर या मन जिसे भी हो जाए, वही अवसन्न होने लग जाए तो क्या आश्चर्य है? फिर भी नवनीत को एक शांति-सी अनुभव हो रही थी। जीवन भर वह मरुस्थल में किसी मिथ्या मरीचिका के पीछे दौड़ा हो, अपने अंतिम क्षणों में तो कम-से-कम वह शांत निरुपद्रव हो गया है। और जो कुछ उसने किया है, उसका मूल्य भी वह चुकाने को तत्पर है। किन्तु मंजरी की, शेष काल में विवाद प्रस्तुत करने की चेष्टा देख कर उसकी विरक्ति और ग्लानि की सीमा नहीं रही। मानो अकस्मात् ही वह किसी शीशे के बने मुर्दा प्लूटो ग्रह पर फेंक दिया गया है और वहाँ की गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कारण वह अपने ही भार से मानो भूतल से चिपक जाने को विवश हो रहा है। हार कर वह नीचे बैठ गया। उसे यह भी पता नहीं रहा कि वह नीचे फर्श पर बैठा है या बैंच पर। हाँ, मंजरी का ध्यान वह एक क्षण के लिए भी भुला नहीं सका था।

क्या दावा अपना पेश करना चाहती है यह युवती? क्या इस क्षुद्र नारी की गवाही पर नवनीत की दिखावटी आसक्ति को आधार बना कर एक और नारी की प्रवंचना का आरोप नवनीत पर लगाया जायेगा? मृत्युदंड से भयानक तो और कोई दंड नहीं है, और उसके लिए वह बहुत पहले से तत्पर है ही, किन्तु सदस्यों को व्यंग्य करने का जो एक और अवसर मिल जाएगा, वह क्या कम लज्जाजनक होगा? सुरेश ने मंजरी को बोलने की स्वीकृति दी या नहीं, यह भी नवनीत को मालूम न हुआ, किन्तु उसने अपनी पीठ पीछे से आती मंजरी की वाणी सुनी—

"इस अत्यंत गंभीर मामले में बाधा डालने की अपनी विवशता की मैं पहले ही क्षमा माँग लेती हूँ। इस सभा ने डॉक्टर रेडियर तथा नवनीत लाल को बन्दी बना कर लाने का जिम्मेदारीभरा कर्तव्य मुझे सौंपा था, और आपके अनुग्रह से मैं अपने उस पुनीत कर्तव्य का पालन करने में समर्थ हुई। यह मेरा सौभाग्य है, चाहे दूसरों का यह दुर्भाग्य ही प्रमाणित हुआ हो। कभी-कभी मैं सोचती हूँ, यदि अपने प्रयत्न में मैं कृतकार्य न हुई होती तो—"

"तो ?" क्षणांश के लिए मंजरी के चुप होते ही अनेक सदस्यों ने एक साथ प्रश्न किया।

"तो डॉक्टर रेडियर और नवनीत लाल सभा के समक्ष अपने विचार के लिए प्रस्तुत न हो पाते। तब न तो डॉ० रेडियर को आत्महत्या करनी पड़ती और न नवनीत लाल को, मृत्यु निकट आई जान कर, प्राणभिक्षा माँगनी पड़ती।"

आदेश पाकर सुरेश नारायण ने मंजरी को बीच ही में रोकते हुए कहा, "मंजरी देवी, आप कहना क्या चाहती हैं ? आपके प्रयत्न की सफलता के गौरव पर सभा ने आपको हार्दिक अभिनन्दन दिया है और अत्यंत प्रसन्नता व्यक्त की है। किन्तु क्या आपका तात्पर्य यह तो नहीं कि आपकी यह सफलता आपके दायित्व-बोध से भारी है ?"

मंजरी अप्रतिभ नहीं हुई, उसने कहा, "माननीय निकलसन साहब को अपने दायित्व-बोध का जो पुरस्कार अभी इस सभा में दिया गया है, यदि उसे देख कर मेरा लोभ जाग उठा हो तो क्या उस पर इतना आश्चर्य करना उचित होगा महाशय ? अपने प्रयत्न का मूल्य भी तो मैं अब ही समझ पाई हूँ। अध्यक्ष महोदय, श्रम के उचित मूल्य की अपेक्षा करना क्या अविश्वास या दोष के दायरे में परिगणित होता है ?"

"आपको अपनी बात कहने की स्वतंत्रता है।" सुरेश नारायण ने उत्तर दिया।

मंजरी बोली, "सभा की एक सदस्या होने के नाते सभा की व्यवस्था, विधान आदि में मैं भी सम्मिलित हूँ। श्री नवनीत लाल की गिरफ्तारी मैंने की है—अवश्य ही हम लोग यहाँ विचार और कार्य की द्वैतता में विश्वास नहीं रखते। अतः कार्य-सम्पादन में सक्रियता के समान ही उनके विचार के क्षेत्र में भी अन्य सदस्यों की अपेक्षा किंचित् अधिक सक्रियता का मेरा विशेष दावा स्वीकार किया

जाना चाहिए। यदि कार्य के महत्व और गौरव को देखते हुए मैं अभिनन्दन की अपेक्षा कुछ ठोस पुरस्कार माँगूँ तो क्या मेरी प्रार्थना स्वीकार न होगी ?"

"आप अपना तात्पर्य क्यों नहीं स्पष्ट करतीं ?" सुरेश नारायण ने व्यग्रता के साथ कहा।

"मैं प्रार्थना करना चाहती हूँ कि नवनीत लाल सभा के दायित्व से मुक्त करके मेरे हवाले कर दिए जाएं।" एक साथ साहस संचित करके मंजरी ने कहा, दृष्टि उसकी नत थी।

"आपके हवाले ?" कई सदस्यों के मुँह से एक साथ निकल पड़ा।

मंजरी ने इस ओर ध्यान नहीं दिया, और कहती गई, 'माननीय सदस्य श्री अधर लाल और टीकम चद को मृत्युदंड कभी का हो चुका, और इस सभा का कोई भी प्रयत्न, नवनीत लाल या किसी का कितना भी रक्त अब उनको जीवित नहीं लौटा ला सकता। नवनीत लाल ने शुद्ध हृदय से अपराध स्वीकार करके पापों का प्रायश्चित करने के लिए जीवन का एक अवसर माँगा है। मैं उनके हृदय की शुद्धता की ज़ामिन होना चाहती हूँ। मेरी जमानत स्वीकार की जाए, यही मेरी सेवाओं का पुरस्कार होगा।"

सुरेश नारायण ने पूछा, "यह प्रस्ताव आप सदस्य की हैसियत से कर रही हैं या व्यक्तिगत हैसियत से मंजरी देवी ?"

"प्रार्थना का अधिकार तो सदस्य ही को मिलता है न, किन्तु प्रार्थना तो व्यक्तिगत ही समझिए महाशय।"

"इसके पहले कि इसके औचित्य पर विचार किया जाए, क्या आप यह बताने का कृपा करेंगी कि इससे आपका क्या व्यक्तिगत हानि-लाभ है ?"

मजरी कुछ असमंजस में दिखाई दी। उसने कहा, "क्या इस प्रश्न का उत्तर दिया ही जाना चाहिए ?"

"इस प्रश्न के उत्तर के अभाव में तो औचित्य का विचार नहीं किया जा सकता न ?"

मंजरी की दृष्टि और भी नीचे झुक गई। मुँह पर उसके प्रकाश सीधा न रहा, किन्तु तब भी उसके कंठ में जो एकाएक संकोच जड़ जमा बैठा, वह उसके स्वर में झंकृत होकर सभी सदस्यों पर प्रगट हो गया। वह कह रही थी, "सभानेत्री महोदय, आप नारी हैं, मेरे हृदय के द्वन्द्व को आप अच्छी तरह समझ सकेंगी, यदि

मैं यह कहने की धृष्टता करूँ कि नवनीत लाल ने मेरे हृदय पर अधिकार कर लिया है। उन्होंने वादा किया है कि यदि वे मुक्त हो गए तो मेरे साथ विवाह कर लेंगे।" और अपना आरक्त मुँह अपने दोनों हाथों से छिपा कर बिना एक क्षण के लिए किसी ओर देखे वह अपने आसन पर बैठ गई।

किन्तु उसके कथन मात्र से सभा में मानों वज्रपात हुआ। सभी सदस्य स्तंभित होकर कभी मंजरी की ओर, कभी नवनीत की ओर देखने लगे। नीलम के चेहरे पर पहले तो अपूर्व विस्मय और फिर गर्वमय मुस्कान का भाव फैल गया। आरती स्वयं अपने आप को भूल कर मंजरी की ओर देखने लगी। और जो कि नारी थी, और नारी के हृदय के द्वंद्व को खूब अच्छी तरह समझ सकती थी, वह सभानेत्री शायद अपने ही किसी नए द्वंद्व में दाँतों से अपने ओठों को काटने लगी।

नवनीत नितांत क्लांत-श्रांत अपने भाग्य की विडंबना पर विचार में खोया हुआ था। सदस्यों की मजाक और आलोचना का लक्ष्य हो कर भी मानो वह किसी दूसरे ही जगत् में था। कुछ क्षणों तक जब कोई न बोला तो नीलम ने पूछा, "वादा कर चुके हैं मंजरी देवी ये ?"

"जी हाँ।" अत्यंत धीमे स्वर में उसी तरह मस्तक नवाए मंजरी ने उत्तर दिया।

नीलम ने खड़ी होकर तेजोद्दीप्त वाणी में कहा, "तो फिर आप भी शायद इनके साथ इनकी परित्यक्ता पत्नी का उद्धार करने जाएँगी। नए-नए विवाह के बाद एक आज्ञाकारिणी दासी की आवश्यकता होती ही है, सो सभानेत्री महोदया, सचमुच उस अभागिनी का उद्धार हो जायेगा, कम-से-कम उदरपूर्ति की उसकी समस्या तो हल हो ही जायेगी। बेचारी हिन्दू कन्या ठहरी, यदि जीवित है तो कठिनाई से एक समय का आहार जुटाकर जीवन के दिन काट रही होगी। मेरी भी सिफारिश है सभानेत्रीजी, नवनीत लाल को मंजरी देवी की हवालात में भेज दिया जाए, एक साथ दो नारियों के उद्धार का अवसर है।"

मंजरी ने क्रोध से नीलम की ओर देखा। नीलम द्वारा व्यक्त संभावना की कल्पना से सभानेत्री का भी क्रोध सौ गुना और ईर्ष्या चार सौ गुना बढ़ गई थी, शायद यह किसी ने नहीं जाना। किन्तु सभानेत्री तब भी स्थिर सौम्य ही बनी रही।

सुरेश नारायण ने व्यंग्य से नवनीत से पूछा, "क्यों महाशय, क्या सचमुच आपने वादा किया है ?"

नवनीत की उदासीनता चरम सीमा पर पहुँची हुई थी, और इसीलिये मानो उसकी अंतर्दृष्टि को दिव्यता प्राप्त हो गई थी। मंजरी का साहस तो अवश्य कम नहीं है, यद्यपि इस समस्त व्यापार में नवनीत को एक ऊँचे किस्म के परिहास तथा व्यंग्य के अतिरिक्त कुछ गंभीरता अथवा वास्तविकता नहीं लग रही थी। सुरेश नारायण ने जब उसे कचोटा तो मुस्करा कर वह उठ खड़ा हुआ और बोला—

"नीलम देवी की इर्ष्या तो समझ में आती है महाशय, किन्तु आपके शब्दों में इतनी कशिश देख कर आपमें भी ईर्ष्या का संदेह हो रहा है। आपकी पसन्द पर मैं आपको बधाई देने में नहीं हिचकिचाऊँगा। आप निश्चित मन से अपने लक्ष्य की ओर प्रवृत्त होइए। और यदि सभानेत्री महोदया, यह प्रश्न आपके रहस्यमय गवाक्ष के संकेत से पूछा गया हो, तो गुस्ताखी माफ हो, आप अपने अंधेरे दिल को टटोलिये। शायद आप समझ सकें, क्योंकि आप नारी हैं। नारी अपने ही विश्वास का दावा नहीं कर सकती, फिर यह चंचल नारी मेरे ही विश्वास का दावा कर बैठेगी, इससे अधिक बड़ी और क्या प्रवंचना हो सकती है ? रहा मेरे हृदय का रहस्य, सो भी आप क्या समझ सकेंगी ? मुझे आप जानती ही कितना-सा है ? किन्तु यदि नीलम देवी अपने हृदय की जासूसी पर अविश्वास न करें तो उन्हें कदाचित मेरी बात का विश्वास हो जाये। सच तो यह है कि एक के बाद एक स्त्रियों के प्रेम का उपलक्ष्य बना कर मैं एक ऐसा लुढ़कता हुआ कंदुक मान लिया गया हूँ, जिसकी कभी सीधी गति न हो, और जब कभी उसकी स्वछंद गति ने उनकी क्रीड़ा में असहयोग किया है तभी मुझे उनकी प्रतिहिंसा के बल्ले के आघात सहने पड़े हैं। नारी की आसक्ति का सचमुच मेरे निकट कितना महत्व रहा है, यदि यह आप जानती होतीं तो इस क्षुद्र नारी के साथ प्रयुक्त मेरी आसक्ति के अभिनय की कृत्रिमता का आपको विश्वास हुआ होता।"

नवनीत कुछ क्षणों के लिये चुप हो गया। अपना पक्ष प्रबल प्रमाणित कर तो रहा है वह, पर किसलिये ? जीवन उसके लिये अब है ही कहाँ ? नारी की आसक्ति ही क्यों, इस जगत् में किसी आसक्ति का कोई महत्व उसे अपने निकट नहीं रहने देना है, तभी उसकी मृत्यु गौरवमय हो सकती है।

मंजरी का दर्प नष्ट हो गया था। नीलम को भी बोलने के लिये कुछ शेष न था। अंधकार में बैठी सभानेत्री के मनोभावों को जानने का कोई उपाय नहीं था। किन्तु लगता था, कि जो सीना तान कर तथा पैर टिका कर खड़ा हो जाए उसे सत्य के रूप में ग्रहण करना ही होता है, शेष सबको सिर पर पैर रख कर मिथ्या हो जाना पड़ता है। नवनीत ने हाथों को पीठ की ओर गूंथ कर कहना जारी रखा, "नीलमदेवी ने कहा था कि यदि सभानेत्री के स्थान पर मेरी परित्यक्ता पत्नी होती तो मुझे मेरी कुटिलता का पुरस्कार मिल जाता। नीलम देवी विदुषी और विदेशी साहित्य में पारंगत हैं। विशेषण-विपर्यय की तरह भाव-विपर्यय के व्यंग्य का सफल प्रयोग वे ही न करेंगी तो और कौन करेगा ? किन्तु यह मेरा सौभाग्य है,—और इसीलिए उनका दुर्भाग्य है, जिसे आप सभी स्वीकार करेंगे—कि वे मेरी पत्नी नहीं हैं, चाहे प्रत्याख्यात वे हों, जैसा कि स्वयं वे स्वीकार कर चुकी हैं। बल्कि सभानेत्रीजी, मेरी प्रार्थना है कि कुछ समय के लिए आप उन्हें ही क्यों अपना आसन नहीं दे देतीं। मेरी परित्यक्ता पत्नी की भावनाएँ, जज़बात तो हैं उनमें। मुझे मेरे अपराध के योग्य दंड देकर नारी जाति की जागृति का एक उदाहरण बनने का श्रेय मिलता हो उन्हें, तो इससे आपकी प्रतिष्ठा ही बढ़ेगी महोदया।"

"यह सभानेत्री का अपमान है बन्दी।" सहसा अँधेरे गवाक्ष से एक नारी-कंठ गरज उठा।

नवनीत आपाद-मस्तक काँप उठा। यह क्या ? यह कैसा स्वर ? सचमुच क्या उसके कान तो धोखा नहीं खा रहे हैं ? यही तो वह गौरवमय घन का मन्द-मन्थर गर्जन है, जिसकी अपेक्षा में उसके मन-मयूर की थिरकनशील केका-ध्वनि जीवन के आकाश में शून्य नीरव पड़ी है। अवश्य ही यह जानता था वह कि परदे के पीछे स्वर किसी नारी का ही है, पर वह स्वर इतना मोहक हो उठेगा ? पहले भी उसने इस स्वर को सुना है; इस सभा-भवन में, किन्तु तब शायद वह पूर्णतः होश में नहीं था, शायद जीवन की धुँधलाहट उसे छाए हुए थी। मीठा और आशाजनक यह स्वर शायद तब भी उसे लगा था, किन्तु आज—यह अभेद्य-अंधकार, आत्मगोपन की यह रहस्यात्मक निबिड़ता क्या एकदम आकस्मिक है ? इस स्वर और बन्दी के बीच क्या कोई संबंध नहीं ?

किन्तु भावना में बहने का अवसर नहीं है नवनीत। सभानेत्री ने अपमान

का एक और दोष आरोपित कर दिया है। भूखे भेड़ियों की इस सभा की आँखों में रक्त की प्यास उदग्र हो गई है। नवनीत ने शीघ्र ही अपने को प्रकृतिस्थ करके कहा,

"किन्तु महोदया, यही तो नारी-जाति का सम्मान है। मंजरी देवी की भावना मुझे मुक्त कर देगी, वह नारी की पुरुषता को चुनौती होगी, नारी को इतिहास कोमल और दुर्बल के नाम से स्मरण रखेगा। और नीलम देवी की भावना ? परख लीजिए, इस नवनीत ने मोह शब्द को सदैव तटस्थ होकर देखा है, चाहे वह अपने स्वयं के प्राणों का हो या किसी नारी का हो। यदि मेरी बात से आपको अपमान बोध होता है तो मुझे कुछ नहीं कहना है। अपराध मैं स्वीकार कर चुका हूँ। तत्काल मृत्युदंड की आप आज्ञा दें, मैं प्रस्तुत हूँ।" और एक बार और गर्व से सीना फुला कर नवनीत चुप हो गया। सारी सभा में सन्नाटा पहले से ही व्याप्त था।

सुरेश नारायण ने नीरवता भंग की, "और कुछ कहना है आपको ? मृत्युदंड के पात्र को अपने बचाव में सभी कुछ कहने का अधिकार दिया जाता है।"

"आपकी न्यायप्रियता का कायल कौन नहीं होगा ?" मुस्करा कर नवनीत ने कहा, "कितनी ऊँची कोटि का नाटक है यह आपके न्याय और विचार का। सभानेत्रीजी, नहीं, किसी के अपमान-सम्मान या अपने दोष के लिए अब क्षमा नहीं माँगूँगा, किन्तु सच बात कहने की आज्ञा चाहता हूँ ताकि आपको और इस सभा को यह भ्रम न रहे कि आप लोग कभी न्याय कर भी सकते हैं ? विचार करने बैठी है यह सभा, कि मैं श्री अधर लाल और टीकम चन्द की मृत्यु में कहाँ तक जिम्मेदार हूँ, किन्तु कौन उनके अभाव की भावना का भार लेकर यहाँ विचार कर रहा है ? मैं तो देख रहा हूँ, विचार करने वालों में किसी का भाव मेरी निराश प्रेमिका का है, कोई अवैध संबंध की अस्वीकृति की प्रतिहिंसा लिए हुए अंग्रेज कन्या शर्ली की भावना लिए हुए है, और कोई लिए हुए है मेरी परित्यक्ता पत्नी की भावना। सुनता हूँ कि यह किसी विप्लव-दल की गुप्त कार्यवाही वाली सभा है, किन्तु लगता तो यह है मानो किसी बहु-विवाह वाले अभागे पति की बिगाड़ी हुई गृहस्थी हो।" और नवनीत स्वयं अपनी बात पर हँस उठा, सम्पूर्ण सभा की श्री उसकी मुस्कान में दब गई।

गर्व से चारों ओर देख कर नवनीत ने अपना कथन जारी रखा, "मेरा अपराध

है तो यही कि मैं पुरुष हूँ, और जीवित रहना चाहता हूँ, दूसरों के दिए हुए या दूसरों से माँगे हुए अधिकार पर नहीं, बल्कि अपने हाथों अर्जित अपने स्वत्व पर। नीलम देवी ने जिस प्राणदान की बात का बारंबार उल्लेख किया है, उस पर जरा विचार तो कीजिये। जिसने दुनिया देखी है, वह जानता है कि यह प्राणदान कितनी बार मृत्यु के वरदान से अधिक दूर प्रमाणित होता है ? उस दिन अभी डॉ० रेडियर ने प्राणदान को ठोकर मार कर मृत्यु के आलिंगन से क्या मेरी बात प्रमाणित नहीं की ? सेवा के द्वारा किसी की बीमारी को दूर कर प्राणदान का गौरव अस्पताल की नर्सों को कितनी बार नहीं मिल जाता ? और मृत्यु ? यदि किसी भी सामान्य-सी ठोकर से मृत्यु संभव है तो हर ठोकर के अभाव को प्राणदान क्यों नहीं कहा जाना चाहिये ? पिस्तौल चला कर एक आदमी की हत्या के द्वारा दूसरे आदमी को बचा सकना यह भी क्या संयोग नहीं है ? यदि ये सब संयोग दुनिया में न होते तो मनुष्य को परमात्मा नाम के किसी काल्पनिक ईश्वर को खड़ा न करना पड़ता। प्राणदान और प्राणरक्षा दोनों पृथक् वस्तुएं हैं। इन को एक मान कर किसी के प्राणों का सौदा करना शायद आपकी सभा ही न्यायसंगत समझ सकती है। किन्तु नहीं, यह कहने से कोई लाभ नहीं है। आपकी न्याय-प्रणाली की आलोचना करने का मेरा उद्देश्य नहीं है कि मैं आपको अपनी त्रुटि समझा कर अपने लिए किसी सुविधा की व्यवस्था करना चाहूँ।"

नीलम बड़ी व्यग्र हो रही थी, बोली, "मुझे कुछ कहने की आज्ञा दीजिएगा ?"

सुरेश नारायण ने कहा, "अभियुक्त को अपनी बात समाप्त कर लेने दीजिए।"

"शायद आगे कुछ न कहना ही मेरे लिए उचित होगा।" नवनीत ने कहा, "नीलम देवी की व्यग्रता मुझे भी महसूस करनी चाहिए। वे शायद चाहती हैं कि मेरे और भी गंभीर आरोपों का चिट्ठा आपके सामने खोल कर मुझे प्रवंचक कह सकें। जिस बात को आगे न बढ़ने देने के लिए मैंने अपना अपराध स्वीकार कर लिया, शायद उसी बात को वे आपके सामने रखना चाहती हैं। शायद सभा यह बात तो समझ ही गई होगी कि वह बात श्रीमती आरती देवी से संबंध रखती है। वे स्वयं यहाँ विद्यमान हैं और मेरे दोष का सारा आघात यदि किसी को लगा है तो वह उन्हीं को लगा है। वे यदि स्वयं मुझ पर अपने आरोप लगा सकें तो उनका स्वागत है या यदि वे आज्ञा दें तो मैं स्वयं उनके प्रति अपने दोष गिना-

गिना कर स्वीकृति दूँ ?"

आरती ने बैठे-बैठे ही तत्काल उत्तर दिया, "मेरे बारे में आपके द्वारा किसी बात के उल्लेख की मैं आवश्यकता नहीं समझती।"

नवनीत ने एक लंबी साँस ली और कहा, "आपकी पीड़ा मैं समझता हूँ। उसका प्रतिविधान अब किसी भी मूल्य पर सम्भव नहीं है। प्रतिशोध भी आप नहीं लेना चाहतीं, यही क्या मेरे लिए कम दण्ड है ? तब भी प्रायश्चित्त करने का अवसर तो मुझे है ही। देख रही हैं न सभानेत्री महोदया ? दुनिया में घटनाओं का उतना महत्व नहीं होता, जितना होता है उनका अर्थ लगाने के तरीके से। अर्थ शब्दों का अनुकरण नहीं करता, प्रत्युत शब्द ही को अर्थ की अपेक्षा होती है। यह मेरा दुर्भाग्य है कि भिन्न-भिन्न रुचि-मति वाले इस समाज में मैं किसी को सुखी- सन्तुष्ट नहीं कर सका। बाप-बेटे की वह कहानी सारी सभा जानती है, जिसमें सभी दर्शकों को संतुष्ट करने की चेष्टा में उन्हे अपने बैल से ही हाथ धोना पड़ा था। और नर-नारी का सम्बन्ध ? वह क्या प्रकृति ही का दंड नहीं है ? प्रकृति का तो कण-कण आकर्षण-विकर्षण की प्रक्रिया में सहज ही गुथा हुआ है। विवाह मेरा अवश्य हुआ है, किन्तु जहाँ दो प्राणी मिल जाते हैं वहाँ आकर्षण-विकर्षण का क्षेत्र ही कहाँ रहता है ? मैं तब भी गर्व के साथ कह सकता हूँ कि मेरे पौरुष ने यदि किसी नारी के आर्कषण को स्वीकृति दी तो वह केवल एक नारी थी, और वह भी केवल इसलिए कि वह अप्राप्य थी। जैसे-जैसे उसकी प्राप्ति का स्वप्न दूरतर होता गया, आकर्षण उग्र होता गया, यहाँ तक कि तनाव के कारण प्रयत्न की रस्सी टूट गई और उसके सहारे चढ़ने वाला मैं नीचे गिर गया। दुनिया ने यही तो देखा कि मैं नीचे गिरा हुआ हूँ।"

नीलम ने बीच ही में छेड़ा, "और यदि आपके प्रयत्न की रस्सी न टूटती तो ?"

"आपके प्रासाद की भाँति मेरे स्वागत की आरती वहाँ जलती न मिलती मुझे। यदि तनाव से रस्सी न कटती तो अपने हाथ से उस रस्सी को काट फेंकने में उस देवी को ही कितना समय लगता ? यदि यह भी न होता,तो भी उसके प्राणों पर तो उसका, उसके स्वामी का पूरा अधिकार था। आप कहेंगी, "दुर्भाग्य से उसका मस्तक झुक जाता तो ?"—तो नवनीत का हृदय किसके सहारे खड़ा होता ? क्या वह खुद नहीं टूट जाता ? जो हिमालय का आरोहण करना चाहता

है वह अपने पैरों चल कर उसके मस्तक पर पहुँचता है, किन्तु यदि हिमालय का मस्तक ही झुक जाए तो चढ़ने वाले के गौरव की प्रतिष्ठा कहाँ रह जाती है ! सभानेत्री महोदया, वह दृढ़ रमणी यही आरती देवी हैं, जिन्होंने आज फिर प्रतिशोध के अवसर का परित्याग करके मुझे गहरी पराजय की है। मैं इनके अक्षुण्ण नारीत्व के सम्मुख अपना गर्वोन्नत मस्तक झुकाता हूँ।"

"बन्दी, तुम्हारी वाचालता को बहुत लगाम दी जा चुकी है।" सभानेत्री के निबिड़ घन अन्धकार मण्डित गवाक्ष से वज्र जैसे स्वर में मानो अकस्मात बिजली कौंध पड़ी।

"मैं इसके लिए आपका हृदय से कृतज्ञ हूँ सभानेत्री जी। आपने मुझे बहुत कुछ कहने दिया है, शेष में आप ही से कुछ निवेदन करके मैं चुप हो जाता हूँ, केवल इसलिए कि इस सारी सभा में मुझे शायद आपकी ही तटस्थता पर विश्वास और निर्भर करना चाहिए था। किन्तु अध्यक्ष के पवित्र और उत्तरदायित्वपूर्ण आसन पर जब दृष्टि डालता हूँ तो सिवा अंधकार के मुझे कुछ दिखाई नहीं देता। अन्धकार से मैं डरता नहीं, किन्तु उसकी सचाई पर कोई विश्वास करने को तैयार नहीं हो सकता। नारी के प्राकृत अधिकारों के लिए आपकी आतुरता, अपने आपको, अपने व्यक्तित्व को छिपाने की इस चेष्टा में खो जाती है, कातर हो जाती है, सभानेत्री जी ! आपकी बहादुरी की, आपकी कठोरता की सभा में काफी प्रशंसा सुन चुका हूँ। यदा-कदा आपकी वाणी अवश्य कानों में पड़ी है, उसमें बिजली की तड़प है, किन्तु उसके साथ गलदश्रु बादलों की बरसात का आभास भी उसमें छिपा नहीं रहता। क्या मालूम उसमें किस पत्नी की कातरता, किस प्रेमिका की निराशा और किस परित्यक्ता की परवशता छिपी हुई है ? न मेरी पत्नी, न मेरी कोई प्रेमिका यहाँ अभियोग प्रस्तुत करने के लिए विद्यमान है। नीलम देवी के निष्फल क्रोध का भी कोई औचित्य मेरे न्याय-विचार में प्रमाणित नहीं हुआ, और स्वयं आपके निकट तो दोषी होने का मेरे लिए कारण ही नहीं है। कहीं इन्हीं सब बातों को सोचकर तो नहीं आपने अपने आपको इस दुर्वृत्त अंधकार में छिपा रखा है ? तब तो मुझे कहने दीजिए कि मेरे न्याय-विचार का अधिकार यहाँ केवल एक रमणी को है, और वह हैं श्रीमती आरती देवी, जिनके पति की हत्या के परिशोध के लिए मुझे यहाँ उपस्थित किया गया है। उनका निर्णय मेरे लिए सिर आँखों पर होगा। यदि आपमें अपने सत्य को

व्यक्त करने का साहस न हो तो मेरी प्रार्थना है कि न्याय के नाम पर आप अपने आसन को उनके लिए खाली कर दीजिए।"

अप्रतिहत चुनौती थी। सभा मौन, स्तंभित, दो चुटीले शेरों का वाग्युद्ध देख रही थी। किन्तु सभानेत्री ने चुनौती को स्वीकार कर लिया। नवनीत का स्वर शेष न हुआ, उसके पहले ही सभानेत्री का गवाक्ष विद्युत-प्रकाश से एकाएक जगमगा उठा, किन्तु गवाक्ष मानो विद्युत-प्रकाश से ही नहीं, सभानेत्री मायावती के कठोर सौन्दर्य से ही जल उठा हो।

नवनीत ने स्तंभित होकर सामने देखा, एक अकल्प्य आश्चर्यमय अविश्वास से भरी आँखों की भ्रांति मिटाने के लिए आँखों को हथेलियों से मसल कर पुनः देखा और देखता ही रह गया। तभी तो, उस वाणी का गर्जन सुन कर ही उसका मन-मयूर विभोर हो उठा था। समझ नहीं पाया था वह। यह कल्पना ही उसे कैसे होती कि सभानेत्री के आसन पर उसी की परित्यक्ता पत्नी मायावती उसके मुकदमे का विचार कर रही है। गवाक्ष के निबिड़ अंतराल से आई वाणी का वह चढ़ाव-उतार—ओह, पत्नी के हृदय को ठेस पहुँचाने वाले कितने वक्तव्य, कितने व्यापार वहाँ नहीं घटित हो गए, ठीक उसी पत्नी की आँखों के सामने? और कितना संयम नहीं दिखाया है इस नारी ने अपने आपको अब तक थामे रहने में?

कई क्षणों तक नवनीत ने जब निर्निमेष सभानेत्री की ओर देख लिया तो स्वतः ही उसकी दृष्टि झुकने लगी और तत्काल सभानेत्री ने उसी तरह कड़क कर कहा, "देख चुके मेरे सत्य का स्वरूप? कहो, कौन करेगा तुम्हारे मुकदमे का फैसला—वह करुणा की मूर्ति प्राणों का दान देने वाली आरती देवी, या प्रवंचकों का विषदंत तोड़ने वाली विप्लव-दल की सभानेत्री मैं? कहो।"

नवनीत ने हाथ जोड़ कर सजल वाणी में कहा, "आपका और असम्मान नहीं होगा आर्ये। मैं आपके सम्मुख नतमस्तक हूँ। आप ही दीजिए अपना निर्णय। आपको सचमुच मेरे न्याय-विचार का सर्वापेक्षा अधिक अधिकार है।" और उसकी वाणी काँप भी उठी।

मायावती ने अपने आपको सम्हाला। हृदय में उठती हुई ईर्ष्या, क्रोध और अपमान की भावना को दबाने के लिए मुँह पर जबर्दस्ती उसने मुस्कराहट भी एकत्र कर ली। फिर एक विचारक की गरिमा के साथ उसने कहा, "सदस्य

साथियों, आपने अभियुक्त के अभियोगों और उसके वक्तव्य को सुना है। विचार-प्रसंग में अवश्य कुछ अवांतर व्यक्तिगत बातें आ गई थीं, किन्तु अभियुक्त के व्यक्तित्व के अध्ययन के लिए वे एकदम अप्रासंगिक भी नहीं कही जा सकतीं। यह कोई राज्य-सरकार का न्याय-मंडल भी नहीं कि भारतीय दंड-विधान आदि प्रचलित विधि-निषेधों का हम पालन करें। तब भी मूलरूप से माननीय अधर-लाल और माननीय टीकम चन्द के मृत्यु दंड में अभियुक्त की जिम्मेदारी अस्वीकृत नहीं की जा सकी है। सब बातों पर पूर्ण विचार करके मैं इस निर्णय पर पहुँची हूँ कि हमारे नियम और प्रणाली के अनुसार अभियुक्त नवनीत लाल को प्राण दंड दिया जाए—"

"सावधान सभानेत्री जी, मेरे हाथ में देख रही हैं न ? रक्षको, मेरा लक्ष्य सधा हुआ है। तुम्हारी गोली मुझे मार देगी किन्तु सभानेत्री को तुम बचा नहीं सकोगे।" बाधा पाकर जैसे ही सदस्यों ने वक्ता की ओर देखा तो पाया कि नवनीत अपने हाथ में पिस्तौल लिए सभानेत्री की ओर लक्ष्य साधे चुनौती दे रहा है। सभी के होश फाख्ता हो गए। एक गोली में अभियुक्त का काम समाप्त किया जा सकता है किन्तु तब तक क्या नहीं कर गुजर सकता वह ? उछलते हृदय से सबने सुना नवनीत को कहते हुए, वह कह रहा था, "सभानेत्री जी, आपके साहस की मुझे प्रशंसा करनी चाहिए। ईर्ष्या होती है मुझे। काश, मुझ में भी आप जैसी कठोरता होती तो प्राणदंड का आपका शब्द आपके मुँह में वापस रख पाता। किन्तु आप नारी हैं, दुनियाँ में आपकी जाति अबला के नाम से प्रसिद्ध है, और मैं पुरुष हूँ। नवनीत किसी के मोह से परास्त होने वाला क्षुद्र व्यक्तित्व नहीं है, न प्राणों के मोह से और न—"नवनीत ने दृष्टि मोड़ कर पीछे बैठी हुई मंजरी की ओर देख कर कहा, 'सुन्दरी, न किसी नारी ही के मोह से। यह लो अपनी पिस्तौल। मैंने अपने हृदय की उदारता तथा विशालता से तुम्हारी सभानेत्री को प्राणदान दिया, उन्हें क्षमा कर दिया ताकि वे अपना निर्णय पूरा कर सकें। मुझे बचाने के लिए जो तुमने दुस्साहस किया है मंजरी देवी, मैं उसका कृतज्ञ हूँ, मैं सभानेत्री से अन्तिम इच्छा के रूप में अवश्य यह प्रार्थना करूँगा कि वे तुम्हारे अपराध को क्षमा कर दें। पर मेरे मोह को आधार मानकर और अधिक दुःख और लज्जा की पात्री न बनना। उससे नारीत्व का उपहास ही होता है। नारीत्व की सफलता के लिए तुम्हारी सभानेत्री की कठोरता चाहिए। हाँ, सभानेत्री जी, आप

अपना निर्णय पूरा कीजिए।" और वह पुनः सीना तान कर सगर्व खड़ा हो गया।

सभानेत्री ने बिना किसी प्रकार का आवेश दिखाए कहा, "मंजरी ने विश्वासघात किया है, उसे गिरफ्तार किया जाए। मैंने अपनी आँखों उसे अभियुक्त को पीछे से पिस्तौल थमाते देखा है।"

दो रक्षकों ने आगे बढ़ कर मंजरी को गिरफ्तार कर लिया। नवनीत के अधरों पर तुच्छता की हँसी फैल गई। वह बोला, "आर्ये, प्रेम का दोष आपके अराजक-दल के लिए तो इतना संकटजनक नहीं है। हाँ, अपने दल से उसे अवश्य बरखास्त कर दीजिए ताकि अपनी गृहस्थी बसाने में वह सफल हो सके। और पिस्तौल जरूर ले लीजिएगा उससे। उसे नहीं मालूम कि उसकी आँखों और जीभ में ही इतनी शक्ति है कि मुझ जैसा पत्थर भी गिरफ्तार हो जाता है।"

सभानेत्री कुछ कहे, उसके पहले अपने आसन से उठ कर आरती ने कहा, "सभानेत्री जी, यदि आप यह मानती हैं कि अभियुक्त के दोष का समस्त फल मुझे भोगना पड़ा है तो उनके प्राणों पर मेरा दावा है। मैं अपने समस्त अभियोग वापस लेती हूँ। न्याय के नाम पर मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप नवनीत लाल को मुक्त कर दें।"

नवनीत ने चिल्ला कर कहा, "मुक्त कर दें? नहीं-नहीं, यह नहीं होगा। सभानेत्री, अपने न्यायाधिकरण का दायित्व इस नारी के ऊपर देकर मैंने भूल की है। मैं उनके निकट नहीं, इस सभा के निकट और सबसे अधिक आपके निकट दोषी हूँ। आप अपने निर्णय में किसी तरह का परिवर्तन न करें। याद रखिए, यह आपके नारीत्व की कसौटी है!"

मुस्करा कर माया ने कहा, "कह चुके? या और कुछ कहना चाहते हैं?"

नवनीत की दृष्टि उसी ओर गड़ गई। उसने केवल सिर हिला दिया।

माया ने उसी तरह मुस्कराते हुए कहा, "कई तरह के भावों को वहन करने का आपने मुझ पर आरोप किया है। किन्तु देख रहे हैं न? आपके किसी भी प्रकार के भाव से मैं लेशमात्र भी आसक्त नहीं। आपको मृत्युदंड देने के मेरे निर्णय को इस महान नारी ने बदलने के लिए मुझे विवश किया है। साथियो, अभियुक्त के समस्त अभियोगों और दावों को वादी ने लौटा लिया है। मैं उन्हें तत्काल मुक्त करने का निर्णय देती हूँ। उनके बन्धन खोल दिए जाएं। सावधान मिस्टर नवनीत लाल, सभानेत्री के ऊपर किसी भी भाव का लांछन लगा कर नारीत्व

के औचित्य को नष्ट करने की चेष्टा न हो।"

—और इन शब्दों के साथ ही गवाक्ष में पुनः अंधकार हो गया। नवनीत के बन्धन खुलने के साथ ही सभासद भी उठ खड़े हुए। नवनीत पत्थर की तरह नीरव निस्पन्द तब तक वहीं खड़ा रहा जब तक कि शून्यगृह में उसके कन्धे पर मूक चपरासी लछमन का हाथ उसे सावधान करने के लिए न पड़ा। मानो उसके सारे जीवन को दबाकर एक गहरी साँस ही उसके कंठ से निर्गत हो सकी।

प्रशांत-प्रशांत

१३ सुरेश नारायण

काल-स्रोत मानो एकबारगी ही थम गया है। कहीं कोई हरकत नहीं मालूम देती। नवनीत की समस्त पीड़ाएँ, भौतिक और आधिभौतिक, एक बिन्दु पर स्थिर होकर मौन हो गई हैं। महासिन्धु की किसी विराट गहराई के ऊपर मानो वह तैर रहा है। तैरने के लिए उसे किसी तरह का प्रयत्न नहीं करना पड़ रहा। मानो वह उसकी संतरण की सामान्य दशा है, जैसे कोई विशाल मत्स्य सतह पर तैर आकर बाहर आकाश के विपुल विस्तार में अपनी आँखें बिछा दे। दिन या रात कहीं कुछ नहीं है। केवल उसकी चेतना का अन्त निस्सीम सिन्धु है। महापोतों को कंपित कर डुबा देने वाली लहरें भी नहीं हैं, न ही वे भयानक हिंस्र तिमिंगल कहीं किसी भी सतह पर दिखाई दे रहे हैं, जिन्होंने उसके जीवन में भयंकर आवर्त और तूफान पैदा कर दिए थे, और जिनमें कोई पोत विध्वंस हो गए थे। किसी मलय-पर्वत से बह कर आई हुई मन्द समीरण में कुछ कोमल-चंचल लहरियाँ अवश्य क्रीड़ा करने लग गई थीं—नहीं, काल के स्रोत में बँध कर नहीं, अपने स्वतन्त्र सहज लीला-विलास के रूप में। किसी देश में नहीं, किसी काल में नहीं। भगवान श्रीकृष्ण की लीला भूमि मधुबन का कालिन्दीकूल नहीं, मृत्यु के देवता का भैरव-मन्दिर नहीं, द्वापर युग नहीं, कलियुग का चतुर्थ चरण···कौन है नवनीत ? कौन है आरती-अधर लाल, नीलम, मंजरी, शर्ली, रेडियर, मायावती ? कहीं भी तो कुछ दिखाई नहीं देता। उजाला-या अँधेरा कहीं नहीं हैं, कुछ हो तब तो कुछ दिखाई दे ! केवल एक बोध, केवल अनुभूति, एक शाश्वत-चैतन्य के अतिरिक्त कुछ भी तो प्रतीत नहीं होता।

बाहर से भी कुछ खास विशेष दिखाई नहीं देता। नवनीत की स्मृति में

एक पूरे मानव-जीवन की पुनरावृत्ति हो गई, जीवन और मृत्यु की आँखमिचौनी खेल कर क्या वह थक गया है? नहीं श्लथ-पलकों पर तैर आए सुनहरे-सपने, नीले अधरों पर पँख खोल कर उड़ने के लिए उद्यत रुपहली आशाएँ, वह तो मानो एक नए जीवन का संदेश है। कब गया हरनाम आरती और नीलम को बुलाने? कहाँ है उसकी वह प्राणाँतक पीड़ा? मायावती को उसने पत्र लिखा था न सवेरे! क्या वह आ रही है? आ सकेगी वह? क्या नवनीत में उसकी कुछ आसक्ति रही है? क्या यह सब सब कुछ सोचने का कोई प्रयोजन है? नवनीत क्या इतना विस्तीर्ण, इतना गंभीर नहीं है कि ये सब आवर्त उसके स्पन्द से उसके अन्तराल ही में प्रगट हो जाते हैं, बिला जाते हैं? महासिन्धु के निस्सीम अनन्त वक्ष पर वे क्षण-क्षण में पैदा होने वाले बुदबुद ही तो हैं!

नीचे कोई कार आकर रुकी। दरवाजा खुला, बन्द हुआ। भैरव के मन्दिर का दरवाजा भी कुछ आवाज करके खुला बन्द हुआ, किन्तु जिसने सुनना चाहिए था, नवनीत ने कुछ नहीं सुना। सीढ़ियों पर कदमों की स्पष्ट आहट, और फिर सामने दरवाजे पर प्रगट हुए मिस्टर सुरेश नारायण, उस सभा में विप्लव-दल का सूत्र संचालन करने वाले प्रमुख सदस्य। शायद सीधे अदालत से चले आ रहे थे। काली सर्ज का खुले गले का कोट, गले में वकीलों का सफेद बो, और सफेद पेंट। प्रवेश करते ही एक सरसरी दृष्टि उन्होंने कमरे में डाली। कमरे में था ही क्या? सब कुछ सूना-सूना-सा दीवारें, छत नंगी, फर्श नंगा, देख कर एक क्षण के लिए तो अपने इरादों के पैबन्द लगे फटे लिबास में वे खुद अपने आपको नंगे लगने लगे। सामने एक मामूली-सी खाट पर ही तो वह व्यक्ति सोया हुआ है जिसकी खोज में वे यहाँ तक चल कर आए हैं। कितनी सरलता से छुट्टी पाई जा सकती है इससे? आँखें बन्द हैं, पर सोया हुआ तो निश्चित नहीं है। सुरेश-नारायण ने खँखार कर गला साफ किया, किन्तु नवनीत की ओर से कोई चेष्टा नहीं हुई। तब तो पिस्तौल की भी जरूरत नहीं होगी। पीछे से आकर दोनों हाथों से गला दबा देना बहुत आसान होगा। किसी को कानों कान खबर भी न होगी। तो भेज दिया जाए उसे यमपुर? या दिल्ली?

विप्लव-दल के अच्छे खासे सदस्य हैं वे। हत्या जैसी सामान्य वस्तु से वे डरते नहीं, किन्तु प्रगट जीवन में वे कानून के व्यवसायी भी हैं। हत्या के कानूनी अपराध की गुरुता उनसे छिपी नहीं। और विप्लव-दल से उनका सम्बन्ध भी

है तो सिर्फ माया के कारण ही तो। अपने पिता की मृत्युशैया पर मायावती ने दो वादे करके उन्हें स्वर्गारोहण की यात्रा में चिन्तामुक्त किया था। एक तो देश की स्वधीनता के उनके अधूरे स्वप्न को पूरा करने की चेष्टा, और दूसरा अपनी गृहस्थी बसाना, चाहे नवनीत को लौटा लाकर, या यदि यह न हो सके तो पुनर्विवाह द्वारा। आखिर माया ही तो उनके समस्त जीवन की आशा थी। मायावती ने सुरेश नारायण से वादा किया था कि देश के स्वाधीन होते ही विप्लव-दल भंग कर दिया जाएगा और तब वह अपनी गृहस्थी बसाने के दूसरे वादे की ओर ध्यान देगी। सुरेश नारायण स्वयं भी कमलकिशोर की अंतिम यात्रा के समय माया के वादे के गवाह थे। और तभी से माया के कंधे के साथ कंधा भिड़ा कर उस दिन की प्रतिक्षा कर रहे थे, जब माया का दाक्षिण्य उन्हें प्राप्त होगा। वह जानते थे, माया का पहला विवाह और पति एक कहानी ही रह गया है, बीती हुई कहानी। युद्ध समाप्त होगया है। देश के स्वाधीन होने में अब अधिक समय नहीं है, वह भी महात्मा गाँधी के सुझाए हुए शाँतिमय वैध तरीकों से। यानी विप्लव-दल के सभी प्रयत्न और बलिदान मानो अर्थहीन रह गए हैं। कुछ हिन्दू और मुसलमानों के पारस्परिक सम्बन्धों ही की बाधा रह गई है। इंग्लैंड की मजदूर सरकार इस बाधा को भी किसी तरह हटाने में समर्थ होगी। बस, फिर रह जाते हैं मायावती और वे। उनके जीवन का स्वप्न पूरा होने में अधिक विलम्ब नहीं है।

साढ़े चार बजे ही लौट आए थे आज कचहरी से और पहुँचे थे सीधे ही वे माया के यहाँ। माया तब भी घर लौटी नहीं थी। महरी सुरेश नारायण को जानती ही नहीं, उन दोनों की घनिष्ठता तथा भविष्य की उनकी अभिसंधियों से भी परिचित है। वह जानती है कि दोनों में कोई दुराव नहीं हैं। चाय पीते-पीते ही सुरेश नारायण को कह दिया गया कि किसी भद्र व्यक्ति का एक नौकर सवेरे एक पत्र यह कह कर दे गया है कि मायावती के पति देवता बीमार हैं, और आते ही उन्हें पत्र दे दिया जाए, किन्तु वे तो अभी तक लौट कर आई नहीं हैं। सुरेश को उत्सुकता होना स्वाभाविक था। महरी ने भी उचित समझा कि पत्र उन्हें बता दिया जाए, जाने बीमार को कैसी आवश्यकता हो, और सहायता पहुँचाना या न पहुँचाना यह भी तय किया जाए।

वह पत्र अभी भी सुरेश नारायण की जेब में रखा हुआ है। वह कहता है कि

यह सोया हुआ व्यक्ति उनका रकीब है, मायावती का पुराना पति ? पुराने से क्या मतलब ? भारतीय कानून के अनुसार अब भी उसका पति है। सचमुच सुरेश का प्रतिद्वन्द्वी विकट प्रतिद्वन्द्वी है। विचार के समय भी नवनीत ने कितना अप्रतिभ कर दिया था उसे ? यह तो नीलम ने लाज रखली थी उनकी। वकील होता तो सचमुच एक प्रखर वकील होता नवनीत। क्या इसीलिए तो माया ने प्राणदण्ड न देकर उन्मुक्त कर दिया इसको ? नहीं, माया ने कहीं पर भी तो कोई दुर्बलता नहीं दिखाई थी। अंधेरे में छिपे रहने का जो भी तात्पर्य रहा हो माया का, किन्तु अंत में ललकारे जाने पर प्रगट हो कर जो दृढ़ता उसने दिखाई, उसका पूरा महत्व तो तभी समझा जा सकता है जब विचारक और अभियुक्त के सम्बन्धों का पता लग जाए। मायावती ने बाद में भी तो इस व्यक्ति में कोई अभिरुचि नहीं दिखाई, बीमार यह तब भी था ही। शायद मजरी के उपलक्ष्य ने माया की वितृष्णा बढ़ा दी हो। और नीलम, आरती आदि की आसक्ति का उद्‌घाटन। अवश्य ही इस व्यक्ति में डॉन जुआन की भूमिका खेलने का सामर्थ्य है।

यह उसका सौभाग्य ही है कि माया के स्थान पर पत्र उसके हाथ लग गया है।—बहारें फिर भी आएँगी।—जरूर आएँगी मेरे दोस्त, अफसोस है मगर, हम-तुम जुदा होंगे। और माया तुम्हें लौटा न पाएगी। तुम्हारी डगर जीवन के इस बाजू में नहीं, उस बाजू में है, जहाँ से कोई लौटता नहीं। नई दिल्ली तक मेरी कार पहुँचादे तुम्हें और अस्पताल में भरती कर दिया जाए। इस समय यही तो जरूरत है तुम्हारी। माया आकर भी करती तो क्या ? और वहाँ का डॉक्टर गुलजार तो सुरेश का मित्र है ही। सब व्यवस्था कर देगा वह ताकि नवनीत को अधिक कष्ट न उठाना पड़े।

शायद तभी नवनीत के अन्तर-चैतन्य में कहीं से कोई हिलोर उद्‌वेलित हुई कि उसके अधरों पर एक मुस्कान फैल गई। अपने ही मन के चोर से घबराकर सुरेश ने पुकारा, "नवनीत बाबू।"

नवनीत के अधरों पर कुछ कँपकँपी हुई किन्तु स्वर नहीं निकले।

सुरेश नारायण ने नवतीत का बाजू हिला कर तथा स्वर को यथासाध्य कोमल बना कर कहा, "नवनीत बाबू, कैसे हैं आप ?"

धीरे-धीरे पलकें खोलते हुए नवनीत ने कहा, "कौन म्-माया—ओह, आ—आप हैं ?"

"जी हाँ, मैं सुरेश नारायण हूँ। पहचान नहीं पाए ?"

नवनीत ने पुनः आँखें बन्द करलीं। सुरेश नारायण ही तो है; विप्लव-दल की सभानेत्री माया नहीं, किन्तु उस दल का उपनेता, माया का संदेशवाहक ही क्यों ? भारवाहक भी तो है ! प्रतिनिधि से प्रस्तुत होने की औपचारिकता तो पूरी हो ही जाती है।

"आपका पत्र पा कर मायावती जी ने मुझे आपकी सेवा में भेजा है।" सुरेश ने कहा।

'सो तो स्पष्ट है, वरना उसके यहाँ आने का बहाना ही क्या था ?' वह चुप ही रहा।

"क्या कष्ट है आपको ?" पूछना चाहिए था क्या कष्ट नहीं है।
किसी तरह अपने आपको सहेज कर नवनीत ने कहा, "माया—माया नहीं आ सकी ?"

"चाह कर भी तत्काल नहीं आ सकीं। वे बहुत विषम-स्थिति में आ पड़ी हैं। सरकार को उनके दल का पता लग गया है, और बड़ी संभावना है कि उनके घर पर तथा यहाँ पर भी शायद पुलिस छापा मारे। वे दिल्ली के मार्ग में हैं, और मुझे आदेश हुआ है कि मैं आपको भी शीघ्र ही दिल्ली ले चलूँ। मैं गाड़ी लाया हूँ।"

नवनीत की शाँत नीरव मुद्रा से यह पता नहीं लगा कि एक ही साँस में दी गई सुरेश नारायण की कैफियत को उसने कितना सुना और कितना समझा। सुरेश ने कुछ और नवनीत के उत्तर की अपेक्षा करके पूछा, "आपको खास तक-लीफ क्या है ?"

नवनीत ने उत्तर में सीने पर हाथ रख दिया। सुरेश नारायण ने सीने पर हाथ रख कर देखा, वह मानो किसी कारखाने के एंजिन की तरह धड़ाधड़-धड़ाधड़ शायद रक्त की अबाध धारा पँप करता जा रहा था, शायद शरीर की रक्त-प्रवा-हिनी नाड़ियाँ बाढ़ से भर उठी थीं। सुरेश नारायण ने वहाँ से हाथ हटा कर नवनीत के दाहिने हाथ की नाड़ी पर रखा। उसका स्फूर्जन भी लड़खड़ाता-सा जा रहा है। कभी उसकी गति दुगनी-चौगुनी, और कभी सहसा ही आधी से भी कम। शायद ऐसे ही लक्षणों को तो दिल का दौरा कहते हैं। दिल का दौरा और नवनीत

की उमर। अगर सुरेश नारायण के अभ्यन्तर में और कोई मानसिक या आध्यात्मिक सुरेश नारायण हो तो उसका मुँह एक शैतानी मुस्कराहट से भर गया था जबकि ऊपरी सुरेश नारायण के मुँह पर चिन्ता और घबराहट के चिह्न स्पष्ट आ मौजूद हुए थे। अगर दौरा साँघातिक हो तो? ऐसे बीमार को शायद हिलाना-डुलाना भी तो मना है।

"पुलिस किसी भी समय यहाँ भी आ धमक सकती है।" सुरेश नारायण ने कहा।

"तो अच्छा है। अच्छा ही है सुरेश बाबू। इस लाश की कुछ व्यवस्था हो जाएगी। अपनी अध्यक्षा से कह दीजिएगा, उनकी दिलचस्पी के लिए मैं कृतज्ञ हूँ।"

"यह आप क्या कह रहे हैं? आप अच्छे हो जाएँगे। मैं स्वयं आपको ले चल रहा हूँ। कुछ ही दूर शायद मार्ग में प्रतीक्षा करती ही आपको मायावती जी मिल जाएँ। नई दिल्ली में आपको सबसे बढ़िया अस्पताल में दिखलाया जाएगा। आप चिन्ता क्यों करते हैं?"

"कहाँ—चिन्ता कहाँ कर रहा हूँ? बैठिए, अरे हरनाम, ओ हरनाम।"

"हरनाम शायद आपके नौकर का नाम है। पर वह तो कहीं दिखाई नहीं देता।"

"नहीं लौटा अभी शायद। बाहर गया है किसी को बुलाने!"

"डॉक्टर को बुलाने गया है क्या?"

"शायद। मैंने तो मना भी किया था, माना ही नहीं। कुछ तो है नहीं यहाँ। इधर खाट पर ही बैठ जाइए न! यह तो छूत की बीमारी नहीं हैं भाई मेरे।"

खाट के एक कोने पर बैठते हुए सुरेश नारायण ने कहा, "मुझे छूत-वूत का डर नहीं है नवनीत बाबू। फिर यहाँ की व्यवस्था के लिए भी तो विप्लव-दल की ओर से मैं ही जिम्मेदार हूँ। मेरी चिन्ता तो यह है कि हम अधिक देर नहीं कर सकते यहाँ।"

"आप मेरी चिन्ता—मेरी चिन्ता मत कीजिए। मुझे यहीं रहने दीजिए। आप जाइए—जाइए, मायावती को हिफाजत से संकट से दूर पहुँचा दीजिए। मुःमेरी क्या चिन्ता है?—मायावती ने आपको भेजा है, उसने स्वयं भेजा है, मेरी सब पीड़ा मिट गई। मेरी क्या चिन्ता है?"

"नहीं नवनीत बाबू, आपके यहाँ रहने से उन पर और अधिक संकट आ सकता है।"

नवनीत ने हँसने की चेष्टा की, लेकिन स्वर में भी नहीं, केवल शब्दों ही में वह चेष्टा व्यक्त हो सकी। उसने कहा, "मेरे यहाँ रहने से ही तो ! मेरे से अगर केवल शरीर ही का मतलब हो तो वह जरूर रह सकेगा, लेकिन मेरे अभाव में वह क्या कुछ बोल सकेगा, समझ सकेगा ? देखिए, मैं जो इतना बोलने लग गया हूँ वह तो उनको—उनको देखे से जो मुँह पर आ जाती है रौनक।—बस आपके जाने भर की देर है। इस दिए का तेल चुक गया है सुरेश बाबू।"

"आप भी अधीर हो कर क्या बच्चों जैसी बातें कर रहे हैं। आपको तो अच्छा होना है, और जल्दी करना है। मायावती जी वहाँ पर खड़ी व्यग्रता से आपकी प्रतीक्षा कर रही होंगी, यह कौन कह सकता है ? यदि पुलिस को खबर लग गई तो उनका बचाव कैसे होगा ?"

"लेकिन, लेकिन सुरेश बाबू···"

"कहिए।"

"मेरा नौकर हरनाम।"

"वह क्या जानता है ?"

"पर उसे मैं कैसे छोड़ कर जा सकता हूँ ?"

"अगर नहीं छोड़ सकते तो मैं व्यवस्था कर देता हूँ, जैसे ही वह आए, उसे कह दिया जाएगा कि वह नई दिल्ली आपके पास पहुँच जाए, पता और किराया उसे दोनों मिल जाएँगे।"

"और अगर पुलिस पकड़ ले ?"

"विप्लव-दल से उसका क्या सम्बन्ध है कि पुलिस उसे पकड़ेगी ?"

कुछ सोच कर नवनीत ने कहा, "किन्तु नई दिल्ली में मेरा पता लगा सकना उसके लिए सहज नहीं होगा सुरेश साहब ?"

"उसकी व्यवस्था भी मुझ पर छोड़िए। आखिर दल भी तो सक्रिय है। क्या पता आपका नौकर हरनाम शायद अब तक मायावती के साथ ही कहीं आपकी राह देख रहा हो ?"

विप्लव-दल के लिए सब कुछ सम्भव है। तो माया ने उसे लौटा लिया है मृत्यु की देहली से, जीवन के विशद हाट में ! उसने शायद लिखा था न, ऐहैं

बहुरि बसन्त ऋतु इन डारनि वे फूल ! दिशाभ्रष्ट यह हृदयगति भी मानो फिर लक्ष्य पा गई है। तभी तो अब पहलू में उनके दर्द भी कम होता है ! अवश्य वह आरोग्य लाभ करेगा। बहारें फिर भी आएँगी। किन्तु प्रगट में उसने कहा, "लेकिन मेरी हालत क्या चलने जैसी है सुरेश बाबू ?"

"आपको कुछ मनोबल संचित करना होगा, बस। बल्कि अब तो आप पहले से कुछ स्वस्थ भी मालूम देते हैं। आपकी नाड़ी की गति भी काफी सयत हो चली है !"

"तो फिर—" और उसने बैठने की चेष्टा की। सुरेश ने हाथ का सहारा दे कर कहा, "पर नवनीत बाबू, आपको एकाएक उत्तेजित नहीं होना चाहिए !"

बैठकर नवनीत बोला, "उत्तेजित न होऊँ ?—सुरेश बाबू, पता नहीं आप माया को अध्यक्षा के अलावा और किस रूप में जानते हैं—"

"जानता हूँ, वे आपकी पत्नी हैं !"

"आप जानते हैं ? कब से ?"

"आज से ही, जब से उन्हें आपका पत्र मिला। लेकिन नवनीत बाबू, अभी तो हमें जल्दी करनी चाहिए। समय बड़ा नाजुक है, और मूल्यवान है !"

"हाँ-हाँ, जल्दी तो करनी ही चाहिए। मेरे लिए नहीं, बल्कि माया के लिए। साथ में क्या-क्या लेना होगा ?"

"कुछ नहीं। दिल्ली तक दो-ढाई घंटे ही का तो मार्ग है। रास्ते में आध घंटा और समझ लीजिए। वहाँ तो सब व्यवस्था है ही। मार्ग के लिए अगर तत्काल चिकित्सा की कोई औषधि हो तो वह ले लीजिए। ओढ़ने के लिए यह शाल बहुत है। मैं लिए लेता हूँ। बस।—मैं सहारा दूँ आपको ?—मेरा कन्धा पकड़ लीजिए। जरा आहिस्ता से उतरिएगा। शाबास !"

और दूसरे पाँच मिनिट के भीतर ही सुरेश नारायण की बड़ी कैडिलक कार नवनीत को लिए आगारा-दिल्ली रोड पर सरपट दौड़ रही थी। पीछे की सीट पर नवनीत लेटा हुआ था और सामने खुद सुरेश ड्राइव कर रहा था तथा रह-रह कर पृष्ठ-दर्शक काँच पर बीमार नवनीत की गतिविधि लक्ष्य कर रहा था। मथुरा से जब कार चली थी तो शीतकाल का सूर्य आकाश में छिप चुका था।

शहर से बाहर होते ही सुरेश ने दाहिने पैर पर जरा दबाव कड़ा किया कि चाबुक खाए घोड़े की तरह उनकी गाड़ी उछल कर मानो सड़क पर तैरने लगी।

किन्तु साथ ही पीछे से एक क्षीण सी 'ग्राह' का ग्राभास पाकर उसने पृष्ठ-दर्शक काँच में देखा कि नवनीत बहुत ही व्याकुल हो उठा है, तो गाड़ी को बाईं ग्रोर करके रोक लिया ग्रौर पूछा, "क्या बात है नवनीत बाबू ?"

"एकाएक जी मिचलाने लग गया सुरेश साहब ! पुतलियाँ ग्राँखों की मानो घूम रही हैं। ग्रभी भी सब कुछ चक्कर खाता-सा दिखाई दे रहा है। शायद शरीर का रक्त-संचार ग्रापकी गाड़ी की रफ्तार से मेल नहीं खा सकेगा। ग्राप मुझे यहीं उतार दें। मेरे लिए ग्रपनी सुरक्षा को क्यों संकट में डाल रहे हैं ग्राप ?" सुरेश ने देखा कि नवनीत की ग्राँखें कपाल में से छिटकी पड़ रही हैं।

"हमारी ग्रौर ग्रापकी सुरक्षा तथा खतरे एक दूसरे से जुड़ गए हैं नवनीत बाबू। यहाँ रुक जाना भी खतरनाक है। ग्रच्छा धीरे-धीरे चला जाए तो कैसा हो ?"

'तब शायद नाड़ियों में खून की चाल शर्मिन्दा होकर बिगड़ उठना नहीं चाहेगी !"

"ग्रापको तो शायद स्मोक करना मना होगा। मैं स्मोक करूँ तो ग्रापको ग्रापत्ति तो न होगी ?"

"इस दईमारी बीमारी में मना क्या नहीं है भाई ! पर मैं जब्त कर लूँगा—ग्राप शौक कीजिए !" सुरेश ने कहा,' 'ग्राप लेट जाइए। मैं धीरे-धीरे ड्राइव करता हूँ। ग्रापको जरा भी ग्रटपटा लगे तो मुझे कह दीजिएगा ?"

नवनीत घुटने सिकोड़ कर लेट गया तो सुरेश ने गाड़ी स्टार्ट कर दी। धीरे-धीरे वह सामने के ग्रँधेरे को भेद कर सड़क की लम्बी रेखा को निगलने लगी। सुरेश सामने लगे काँच में रह-रह कर नवनीत की ग्रोर देख लेता था। कार की गति यद्यपि ग्रठारह-बीस मील प्रति घण्टा से ग्रधिक नहीं थी, किन्तु सुरेश नारायण का मन ग्रसीम वेग से भागा जा रहा था, ग्रौर वह भी किसी सीधे मार्ग पर नहीं। ग्रँधेरा चारों ग्रोर फैलने लग गया था, गाड़ी के कक्ष में भी ग्रँधेरा घुस ग्राया था। कृष्णपक्ष की कोई तिथि थी। सुरेश ने सामने डैशबोर्ड तक की बिजली नहीं लगाई थी। हाँ, कभी-कभी सिगरेट के सिरे से सुरेश का मुँह ग्राभासित हो उठता था। सड़क निर्जन हो चली थी। कभी-कभी जब कोई देहात नजदीक होता तो इक्के-दुक्के लोग जल्दी-जल्दी डग बढ़ाते दिखाई दे जाते। कभी-कभी गाय या बैल गाड़ी की तीव्र रोशनी में चलते-चलते रुक कर गाड़ी की ग्रोर देखने लग

जाते। तब उनकी दोनों आँखों में गाड़ी की बत्तियाँ चमक उठतीं, और दो अन्य बत्तियों का भ्रम पैदा कर देतीं।

किन्तु सुरेश नारायण का मन उनसे बाहर अन्यत्र कहीं था ही नहीं। सामने सड़क को देखने वाली आँखें, स्टिअरिंग घुमाने वाले हाथ, एक्सलरेटर दबाने वाले पाँव, और इन सबका संचालन-निर्देशन करने वाले स्नायु तथा पेशियाँ मानो किसी दूसरे ही व्यक्ति के मस्तिष्क से शासित हो रही थीं। गाड़ी के भीतर पड़ा नवनीत अवश्य उनके चिन्तन का विषय था, पर वह भी भविष्य की रहस्य-मय ऊबड़-खाबड़ भूमि में! डॉक्टर गुलजार उनका मित्र है। अस्पताल में न होगा तो घर पर तलाश की जा सकती है। टेलीफोन पर उससे कह रखना अच्छा होता! पर समय ही कहाँ मिला था सुरेश को? पता तो लग ही जाएगा उसका। बाहर भी गया हुआ हो तो एकाध दिन के लिए ही तो! नहीं, ठहर वे नहीं सकेंगे। सवेरे के पहले उन्हें लौट जाना होगा। माया उत्सुक होगी ही, उसे कुछ तो कहानी सुनानी ही होगी। महरी यह तो कहेगी ही कि माया के नाम आए उसके पति की बीमारी का पत्र लेकर सुरेश नारायण चला गया था और फिर रात भर गायब रहा। गायब रहा? क्या माया यह सोचेगी कि सुरेश गया है नवनीत के उपचार के लिए, उसकी सेवा के लिए? पति है नवनीत उसका, तो उसकी टोह तो वह रखती ही रही होगी। महरी से सूचना पाकर अगर माया भैरव मन्दिर पहुँच जाए, और वहाँ पर नवनीत के उस नौकर से उसकी भेंट हो जाए तो? आसपास लोगों ने उसकी कैडिलक कार को देखा ही होगा, यह भी वे कहेंगे कि कार में किसी बीमार को लादा गया और कार वहाँ से रवाना हो गई। यदि माया यह न सोचे कि सुरेश नवनीत की चिकित्सा के लिए किसी अस्पताल में ले गया है तो वह उसका पीछा भी कर सकती है। और मानो सुरेश की आशंका को मूर्तिमान करने के लिए ही तभी पीछे से आती हुई किसी कार की रोशनी उनके काँच में पड़ी, उसके साथ ही उनके कान में आई उसके हॉर्न की आवाज! सुरेश नारायण का कलेजा धक् करके रह गया। कार माया ने जरूर पहचान ली होगी, तभी तो रह-रह कर हॉर्न बजा रही है! एक मन तो हुआ उनका कि एक्सलरेटर पर पैर दबा कर हवा हो जाएँ। हो, जो कुछ होना हो नवनीत का—आखिर उसे कुछ हो जाए इसीलिए तो वह भागे जा रहे हैं! कौन कार है तब यहाँ जो उनकी कैडिलक की गंध भी पा सके? लेकिन इससे क्या

कभी माया उन्हें मिल सकेगी ? और पीछे से हॉर्न पर हॉर्न बजता जा रहा है। सुरेश नारायण ने साँस दबाकर गाड़ी को एक ओर किया कि रुक जाएँ, कि पीछे वाली गाड़ी खाली सड़क पाकर आगे निकल गई और अँधेरे को चीरती हुई शीघ्र ही आँखों से ओझल हो गई।

सुरेश नारायण को गाड़ी रोकनी नहीं पड़ी। गले का पसीना पोंछ कर उन्होंने पीछे की ओर देखा। नवनीत की तंद्रा भी मानो इस झटके से टूट गई थी। उसने क्षीण स्वर से पूछा,

"क्या हुआ था सुरेश बाबू ?"

"कुछ नहीं, एक गाड़ी थी। लगता है, जल्दी में थी। सिगरेट दूं ?"

"जी नहीं ! कुछ जी घबराता-सा है ! पुलिस की गाड़ी तो नहीं थी न ?"

"नहीं ! लगता है, मायावतीजी भी आगे चली गई हैं। बुद्धिमत्ता भी इसी में है। अँधेरे में गाड़ी भी तो एकाएक पहचानी नहीं जा सकती न ! आप लेट जाइए, मेरा मतलब है, कुछ सोने की चेष्टा कीजिए। इधर से निश्चिन्त रहिए। मैं काफी सावधान हूँ !"

और गाड़ी फिर उसी तरह सड़क पर आ लगी। अगर माया चाहे तो उसे बहुत कुछ खबर लग जाएगी और उसमें सुरेश की भूमिका को भी वह स्पष्ट देख सकेगी। तब ? सुरेश का कानून-व्यवसायी मन कानून के सब पक्षों को एक क्षण भर में ही देख गया, और उन्हें लगा कि जब तक कोई नया उपाय वे नहीं खोज लेते, वे भयानक रूप से अपने ही फन्दे में फँस गए हैं। क्या करें, अँधेरी रात में कहीं छोड़ दें इसे जंगल में और लौट जाएँ ? मर जाए तो ठीक ही है, और एक गोली ही तो काफी है इसके लिए ! पर माया पूछेगी तो क्या जवाब देंगे ? पूछेगी तो जरूर !

अगर कोई दुर्घटना हो जाए तो ? कार अगर खोनी भी पड़ जाए तो क्या, उसका बीमा किया हुआ है। और दुर्घटना यदि आकस्मिक न होकर इरादतन घटाई जाए तो वे खुद बेदाग बच निकल आ सकते हैं ! तब वे खुद एक हीरो प्रमाणित हो जाएँगे। माया के निकट तो उनका अहसान और भी गहरा हो उठेगा। कितनी अच्छी होगी कैफियत उनकी ? यह पता लगते ही कि नवनीत बाबू उनके पति बीमार हैं, वे ताबड़तोड़ उनकी सुधि लेने के लिए आ पहुँचे। उनकी विषम शारीरिक अवस्था देखते ही उन्होंने निश्चय कर लिया कि अच्छी

से अच्छी मेडिकल सहायता के लिए उन्हें तत्काल नई दिल्ली पहुँचा दिया जाए। वे खुद लेकर रवाना हो गए, इससे अधिक और क्या कोई मनुष्य कर सकता था ? और जब दुर्भाग्य से मार्ग में यह दुर्घटना हो गई तो कितने बड़े संकट से वे खुद बच सके हैं ? भाग्य का मजाक ही कहना चाहिए कि बाल-बाल बचे हैं वे, वरना नवनीत के साथ वे भी यमपुर की हवा खा रहे होते। कितनी बढ़िया और पुरदर्द साबित होगी कहानी ? कौन इस पर विश्वास नहीं करेगा ? कहाँ है कानून में कोई खामी इसमें ?

लेकिन कहाँ है ऐसी जगह इस सड़क पर ? और क्या शकल हो दुर्घटना की कि वे बाल-बाल बच जाएँ, बाकी सब कुछ नेस्तनाबूद, खत्म हो जाए ! गाड़ी की गति अब और भी कम हो गई। डैश-बोर्ड पर रह रह कर लाल रोशनी चमकने लगी, मानो कह रही थी कि इतनी धीमी गति से डाइनेमो चार्ज नहीं करेगा, तुम्हें अपनी ही बेटरी पर निर्भर करना पड़ेगा।

लेकिन नवनीत को कुछ भी चिन्ता नहीं थी। आँखें बन्द कर लेने के बाद दृष्टि का कैनवास बहुत विस्तृत हो जाता है। वे चीजें दिखाई देने लग जाती हैं, जिनका कभी अस्तित्व भी नहीं था। हरनाम गया था नीलम और आरती को बुलाने के लिए। यह अच्छा ही हुआ कि उन लोगों के वहाँ आने के पहले ही वह वहाँ से रवाना हो गया। नीलम के सामने अपने दैन्य को प्रगट करने की विवशता सचमुच बड़ी बेतुकी होती ! कितनी दीप्त नारी है वह ? अपने नारीत्व के प्रति इतनी गहरी आस्था और स्वाभिमान की भावना न होती तो उस रात निस्संकोच भाव से, कभी अभिव्यक्त न किए हुए नवनीत के प्रति अपने प्रेम को वह कभी स्वीकार न कर पाती, न ही अपनी इस भूल का सार्वजनिक उल्लेख वह कर पाती ?

भारतीय नारी में इतना साहस नहीं है। संस्कारों में भारतीय हो तो क्या, फ्रांस ही नहीं, अधर लाल और टीकम चन्द के साथ वह अमेरिका, जापान, हिन्देशिया जाने कहाँ-कहाँ का पानी पीती, खाक छानती भारत पहुँची है। अधर लाल ने ही कही थी उसकी कहानी। भारत की स्वाधीनता के प्रयत्नों की वह कहानी कितनी अद्भुत, कितनी प्रेरणास्पद, कितनी गौरवमय है ? अधर-लाल की प्रेरणा और नीलम की कहानी ही ने तो उसमें जोश भरा था !

माया ! नहीं जानती तुम उस गौरवमय कहानी को ? कहाँ से जानती

होगी ! कौन बताता तुम्हें वह कहानी ? उस रात मेरे प्रति नीलम के प्रेम की स्वीकृति सुनकर अँधेरे गवाक्ष में अवश्य तुम ईर्ष्या से तड़प उठी होगी, लेकिन नीलम की पूरी कहानी अगर तुम जानती होती तो न केवल उसे तुम क्षमा कर देतीं, बल्कि उस पर, और उसके प्रीतिपात्र पर भी तुम्हें गर्व होता ! सुनाऊँ तुम्हें उसकी कथा ? उसे स्मरण करने मात्र से हृदय में एक अद्भुत उत्साह पैदा होता है, और जीवित रहने की इच्छा बढ़ती है माया ! भटकते हुए जीवन को लक्ष्य मिल जाता है मानो !

नवनीत का मानस, उसके रोगी शरीर से बिछुड़ कर स्वस्थता लाभ करके स्मृति के अनामीय क्षेत्र में उड़ चला। माया उसके सामने आ बैठी है और वह उसे नीलम की कहानी सुना रहा है।

"सुनती हो न माया ? तुमने इतिहास नहीं पढ़ा। वह पढ़ा नहीं जाता, जिया भी नहीं जाता वह तो ! उसे मनुष्य अनुभव नहीं कर सकता, क्योंकि वह भी उसके प्रवाह का एक भाग ही तो है ! बड़ी विहंगम दृष्टि चाहिए उसे हृदयंगम करने के लिए माया। पर—"

उतावली होकर सामने बैठी हुई माया ने मानो कहा, "अब अपना यह गुरुडम तो रहने दो महाराज, और कहानी सुनाओ तुम ! मैं जानती हूँ कि इतिहास मैंने नहीं पढ़ा, पर वह तो सिर्फ कॉलेज के दिनों की बात है ! इसके पहले स्कूल में तो इतिहास का सबक याद न कर सकने के कारण बैंच पर खड़े होने का ऐतिहासिक गौरव तक पा चुकी हूँ !"

"ऐतिहासिक गौरव ?"

'हाँ हाँ, ऐतिहासिक ! जानते हो ? कक्षा में मैं सबसे अधिक तेज और तर्राट लड़की भी समझी जाती थी। अरे, हँसते क्यों हो ? झूठ कहती हूँ ? बचपन में ढैया का पहाड़ा याद न कर पाने पर मुहल्ले की नाइन मास्टरनी ने मेरा कान उमेठ दिया था। जानते हो, उसी वक्त हाथ की स्लेट मैंने उसके बदन पर मार कर तोड़ दी थी।"

"अच्छा ! फिर क्या हुआ जी ? तुम्हारा स्कूल तो नहीं छूटा न, उस घटना से ?"

"छूट जाता, पर पिता जी का प्रभाव कम नहीं था और वह अध्यापिका थी

जाति की नाइन। उस ब्राह्मण-बनियों के स्कूल में वह पिताजी के प्रभाव से ही मास्टरनी हो सकी थी।"

"चलो अच्छा हुआ, वरना तुम्हारी यह कहानी इतिहास न बनती।"

"सो क्या ऐसी तेज-तर्राट लड़की को बेंच पर खड़ी देखना किसी भी सहपाठिनी के लिये ऐतिहासिक घटना न होती ?"

"नहीं होती। वह सिर्फ साहित्य ही की कहानी हो सकती है माया।"

"अब बहस तुमसे कौन करे ? सदा हरा देते हो न ? लेकिन अब बहस नहीं। तुम अपनी इतिहास की कहानी कहो। बातूनी तुम भी तो कम नहीं हो। इतिहास कहीं इतनी बातें बनाता है ?"

"नहीं बनाता, किन्तु तुम जैसी साहित्यिक पत्नी की मर्यादा भी तो रखनी होती है। लो मैं हार गया, तुम जीत गईं। है न ?"

"अच्छा-अच्छा, ठकुर सुहाती बहुत हो ली। क्या है वह तुम्हारी कहानी ?"

और नवनीत की चेतना का प्रवाह जब फैलने लगा तो मानो किसी हवाई-जहाज में बैठे उसकी दृष्टि अथ से इति तक सब कुछ देखने लगी। कहने लगा वह—

"दो शताब्दि पूर्व ठीक १७५७ में प्लासी के मैदान में भारत में भारतीयों की पराजय के साथ अंग्रेजी साम्राज्य की नींव पड़ी थी। इतना तो इतिहास की हर पुस्तक में रहता है माया, लेकिन जो नहीं रहता, वह यह कि भारत की स्वाधीनता संग्राम का बीज भी उसी समय उस नींव में गिर गया था, ताकि जब वह अंकुरित होकर बढ़े-पनपे तो नींव पर खड़ी सारी की सारी इमारत उखड़ जाए, ढह जाए, ! जरूर वह बीज आसानी से फूट नहीं सका। पहला और सब बाधाओं को परास्त कर सिर उठाने वाला अंकुर फूटने को पूरे सौ वर्ष लग गए थे। १८५७ की क्रांति दबा भी दी गई थी, किन्तु गर्भ-ही-गर्भ में उसकी जड़ें दूर-दूर गहरी फैल गई थीं, यहाँ तक कि उन्नीसवीं शताब्दि के अंत तक तो स्वाधीनता के लिये आतंक-क्रांति का जोर उतना ही बढ़ गया था, जितना आज अहिंसक क्रांति का बढ़ा हुआ है।"

माया ने कहा, "बड़े इतिहास के पंडित बने फिरते हो, पर रहे पोंगा ही। अहिंसा भी कहीं क्रांति होती है ? उस दिन हिरोशिमा और नागासाकी पर गिराया हुआ अणुबम क्या कोई इतिहास नहीं बनाता कि तुम उसे भूल बैठे।"

"भूला नहीं माया। बल्कि इसीलिये अहिंसक-क्रांति की याद ताजा हो जाती है। पहले मैं भी इसे नहीं समझता था पूरी तरह। समझाया था एक दिन अधर लाल ने ही। तुम आश्चर्य करोगी माया, कि अधर लाल की आस्था हिंसा में नहीं, अहिंसा में थी।"

"पर जीवन तो उन्होंने हिंसा के लिए ही दिया न ?"

"यह एक गुलाम कौम की परवशता है माया। स्वाधीनता की इसीलिये आवश्यकता है कि व्यक्ति अपने विश्वास के मार्ग पर चल कर जीवन-यापन कर सके। मानवता के बृहत् परिप्रेक्ष्य में भी अब तो अणुबम के आविष्कार ने प्रमाणित कर दिया है कि अहिंसा के बिना गत्यंतर नहीं है। अणुबम ध्वंस का साधन है, जीवन का नहीं। उससे त्राण न विजित को है न विजेता को। और यह जो अहिंसा है, वह भी कोई निष्क्रियता नहीं है माया। अहिंसा के लिये भी युद्ध करना पड़ता है, तोड़-फोड़ करनी पड़ती है, और किसी तर्क-बद्ध बौद्धिक विचार के साथ ही साथ आवेगमय शुद्ध प्रबल भावना शक्ति के द्वारा। वह युद्ध किसी बाहरी व्यक्ति के साथ नहीं बल्कि अपने ही मन के असुर के साथ करना पड़ता है और तोड़-फोड़ भी अपने लोभ-मोह आदि के खड़े किए हुए स्वार्थ के महलों की करनी पड़ती है। इसीलिए तो यह क्रांति है।"

"तुम तो अहिंसा के दूत ही बन गये हो, जैसे बड़े दूध के धोए हो ! लेकिन तुम्हारा यह बयालीस का आन्दोलन ? यह भी तो अहिंसा के पुजारी गाँधी जी का ही चलाया हुआ था।"

"महात्मा जी द्वारा चलाया हुआ था, यह तो नहीं कहा जा सकता माया, पर हाँ, इसमें आतंक-क्रांति की बू अवश्य थी। और मैंने कहा न, तोड़-फोड़ तो कुछ आवश्यक है ही।"

"ठीक तो है, जो सरकारी इमारतें, पोस्ट ऑफिस, स्टेशन आदि जलाये गये, आखिर वे हमारे ही तो हैं, यानी अपने ही भीतर की तोड़-फोड़।" और वह व्यंग्य से मुस्करा पड़ी।

"असहयोग का कुछ परिणाम तो होता ही है न !" और वह भी हँस दिया।

"अच्छा चलो, अपनी कहानी कहो। बेकार बहस में क्यों वक्त ज़ाया करते हो !"

नवनीत ने कहा, "तुमने १८९७ के ऐतिहासिक प्लेग की कथा सुनी है न—जब अंग्रेज अफसर रैण्ड की हत्या हुई थी ? फलस्वरूप सारे देश में अंग्रेजों का दमन-चक्र चल निकला था और उससे बचने के लिये काठियावाड़ निवासी बम्बई के युवक श्यामजी कृष्ण वर्मा को विलायत भाग जाना पड़ा था । वहीं सन् १९०५ में जब उन्होंने इंडिया होमरूल सोसाइटी की स्थापना की तो श्री सावरकर, मदनलाल धींगर आदि भारतीय सदस्यों के अतिरिक्त एक और आठ-दस वर्ष का किशोर वहाँ कार्यकर्ता हुआ था । जानती हो उसका नाम ? जरूर जानती हो।"

"बताओगे नहीं, और जान जाऊँगी ?"

"अधर लाल को नहीं जानतीं !"

"अच्छा। मगर वे विलायत कैसे पहुँच गए थे जी ! या वहीं पैदा हुए थे क्या !"

"पैदा तो भारत में ही हुए थे, लेकिन चार-पाँच वर्ष की उमर में ही उन्हें मातृभूमि छोड़ देने के लिये विवश होना पड़ा था।"

"तो क्या माँ के पेट से ही वे क्रांतिकारी पैदा हुए थे !"

"एक तरह से ऐसा ही समझा जा सकता है माया । उनके दादा थे कट्टर सनातनी-ब्राह्मण, और परम वैष्णव । १८५७ के विद्रोह में उन्होंने एक सद्य-विधवा अन्तरासत्वा अंग्रेज महिला को अपने घर में आश्रय देकर बचाया था । परिस्थितियाँ अनुकूल होते ही वह महिला इंग्लैंड लौट गई और वहीं उसने एक पुत्र प्रसव किया, किन्तु इस गरीब ब्राह्मण के लिए यहाँ वह बदनामी और धर्म-भ्रष्टता का प्रवाद छोड़ गई। जाति से बहिष्कृत कर दिये गये ये लोग और साथियों से देश-द्रोह की व्यर्थ लांछना भी प्राप्त हुई उन्हें । इसी तरह अपमान और लज्जा में वे दिन बीत रहे थे कि सन् १८९९ या १९०० में एक अंग्रेज युवक अपनी माँ के साथ भारत आया। जानती हो, यह वही विधवा महिला थी, जिसे इन लोगों ने आश्रय दिया था।"

"उस समय तो इन लोगों की तूती बोल रही थी न भारत में ?"

"हाँ, किन्तु ये लोग धौंस जमाने नहीं आये थे यहाँ, बल्कि अपनी कृतज्ञता जताने के लिये आये थे। लड़के ने जबसे अपनी माँ की कहानी सुनी थी, वह इन लोगों से मिलना चाहता था।"

"हाँ जी ! उनकी कृतज्ञता की कहानी खूब जानती हूँ मैं । तुम तो उनकी प्रशंसा करोगे ही । एक था न भलामानस ज्यॉफ्री, न केवल तुम्हें उससे नौकरी ही मिली, बल्कि उसकी जवान खूबसूरत..."

"फिर तुम उस अप्रिय बात को छेड़ बैठीं न । भूल गईं उस प्रतिज्ञा को—बीते हुए कृत्यों को हम कभी किसी भी बहाने स्मरण नहीं करेंगे ।"

हँस कर माया ने कहा, "अजी बीते हुए से ही तो इतिहास की प्रतीति होती है । स्मरण न रखने से कोई परीक्षा में पास होता है ! अच्छे मास्टर हो जी । शिष्याओं को ऐसा ही पढ़ाते रहे हो क्या ?"

नवनीत ने भी हँसी में योग दिया, "तभी तो शिष्याएँ ही नहीं, गुरु भी फेल हो गया और शर्ली की कहानी भी तो सुनानी है तुम्हें । तुम तो मुझे मँझधार में ही छोड़ कर चली आई थीं । बाद में क्या हुआ मेरा, यह तो तुम जानती ही नहीं ।"

"जानने लायक कुछ हुआ था क्या ? पर अभी अधर लाल की कहानी पूरी करो जी ।"

"जल्दी है क्या ! तुम क्या फिर चली जाना चाहती हो !" उसकी वाणी में कंप छा गया ।

"क्यों, अब क्यों जाऊँगी ? धक्का दोगे तुम, तब भी नहीं । अपने अधिकार के लिए लड़ मरने वाली नारी हूँ मैं । क्या अभी तक यह भी न समझ पाए ? पंचों में ब्याह करके अधिकार पाया था तुम पर । पकड़ा नहीं था यह हाथ तुमने ! कह सकते हो ?"

नवनीत की आँखें नम हो गईं । गला भी कुछ भर आया, बोला, "तब क्यों नहीं रखा था इतना भी ध्यान अपनी धरोहर का माया ! अगर जरा तुमने अपने अधिकार का भी प्रयोग किया होता, ममता नहीं, तब भी मेरी यह दुर्दशा, यह पतन न होता ।"

नवनीत की आँखें अपने हाथ से पोंछ कर माया ने कहा, "घाटा उठा कर मैं भी इस तथ्य को समझ गई हूँ जी । रहा सवाल हानि का, सो महाराज, हानि हुई भी तो मेरी ही है । तुम्हें दुःख नहीं करना चाहिये । लेकिन छोड़ो ये बातें । तुम अधर लाल की कहानी कह रहे थे न ।"

नवनीत ने कहा, "उस परिवार की दुर्दशा देख कर उन लोगों ने प्रस्ताव किया

कि वे सभी उनके साथ इंग्लैंड चले जाएँ। वहाँ देहात में उन लोगों की बड़ी जमींदारी है, जहाँ वे सब बड़े आराम के साथ रह सकते थे। अधर लाल के दादा की तो उत्तर-अवस्था थी। वे यह सह नहीं सकते थे कि उनकी मिट्टी किसी विदेशी भूमि में पड़े। जीना ही उन्हें कितने दिन था! किन्तु उन्होंने अपने जवान पुत्र मनोहर लाल वेदान्त-तीर्थ को उसके शिशु-पुत्र के साथ वहाँ जाने के लिए राजी कर लिया। मनोहर लाल की पत्नी भी एक पुत्र को जन्म देकर प्रसव-पीड़ा में ही परलोकगत हो गई थी। इस तरह मनोहर लाल अपने पुत्र अधर लाल के साथ विलायत पहुँच गये। वहाँ वे देहात में उस महिला की कोठी के साथ बने अनेक मकानों में से एक मकान में रहकर स्वतंत्रतापूर्वक नियम-धर्म पालन करने लगे। लेकिन उसी वर्ष उस अंग्रेज़ विधवा माँ का देहान्त हो गया और उसके बाद ही एक गुलाम देश के छुआछूत मानने वाले कट्टर ब्राह्मण मनोहर लाल के साथ वहाँ के निवासियों का व्यवहार बदल गया। अंग्रेज युवक तो नौकरी के सिलसिले में बाहर शहर में या दौरे पर रहता। उसकी बीवी के दिमाग आसमान पर थे, कई बार अपने पति को तलाक का भय दिखा चुकी थी। अधर लाल बच्चे थे, पर उनके दिमाग पर सारी घटनाएँ बराबर असर डाल रही थीं। इसी बीच शायद १९०४ में उनके पिता मनोहर लाल की वहाँ हत्या कर दी गई।"

"अच्छा! तब तो बेचारा बालक उस शत्रुपुरी में एकदम अनाथ हो गया।"

"कुछ दिनों तक तो उस अभिभावक ने इनको अपने साथ ही रक्खा। दौरे पर जाता तब भी साथ ले जाता। पर अधर लाल ने शीघ्र ही महसूस किया कि उनके चारों ओर अंग्रेज इस बात से नाराज हैं कि उनका सम्मान एक अंग्रेज बच्चे की तरह हो रहा है। इसलिए जैसे ही इस बालक के कान में इंडिया होमरूल सोसाइटी का नाम पड़ा कि वह अपने आश्रयदाता के घर से भाग निकला, और सीधे वर्माजी के पास पहुँच कर उसने अपनी सारी दास्तान कह सुनाई। बस, उस छोटी-सी अवस्था से ही अधर लाल उसके एक सक्रिय कार्यकर्ता बन गए।"

माया का मन मानो उस पराई भूमि पर धन-जन हीन नितांत अकेले बालक के पास जा उड़ा। नवनीत ने देख कर पूछा, "सुन रही हो न?"

"हाँ जी!—पर जीवन क्या सचमुच इतना निष्ठुर भी हो सकता है? माँ मेरी भी मुझे बचपन में ही छोड़ कर चल बसी थी, किन्तु बचपन का वह कोमल जीवन किसी कठिनाई में से गुजरा हो, ऐसा कभी लगा नहीं।"

"बचपन के वे कोमल वर्ष कोमलता में ही गुजारने के लिए हैं, किन्तु सब कोई वैसे भाग्यवान कहाँ होते हैं ? मैं भी तो वैसे ही निराश्रित हो चला था, यह तो तुम्हारे पिता की महानता थी कि ठीक समय पर उन्होंने मेरा हाथ थाम लिया—"

"दुत् ! ऐसी बात कही जाती है ?—वे तुम्हारे भी तो पिता थे और फिर तुमने भी तो मेरा हाथ थामा था।"

"पर तुम तो छुड़ा कर चली गई न ?"

नवनीत के घने बालों में अपनी अँगुलियाँ चलाते हुए माया ने कहा, "अब ये बारम्बार शिकवे-शिकायत करके मुझे लज्जित क्यों कर रहे हो ?"

"नहीं मेरी रानी, तुम्हें लज्जित क्यों करूँगा ?—मैंने तो अपने किए का फल पाया।—लो कहानी सुनो तुम तो।—कह रहा था कि दो साल भी नहीं बीते कि ब्रिटिश सरकार की गृद्धदृष्टि इस होमरूल सोसाइटी पर जा पड़ी, और आत्मरक्षा के लिए श्यामजी कृष्ण वर्मा को अधर लाल के साथ पेरिस भाग आना पड़ा। मदन लाल ढींगरा भी उनके साथ थे।"

"मदन लाल धींगरा न !—कहीं पढ़ा था शायद कि वे विलायत पढ़ने के लिए गए थे।"

"और बड़ा ही रसिकहृदय कहा जाता है उसे। एक धनिक फ्रेंच विधवा कैथराइन से उनकी गाढ़ी मित्रता भी थी। पेरिस में होमरूल सोसाइटी ने बहुत काम किया। वहाँ भारतीय क्रांतिकारियों की जननी मैडम कामा भी उसमें सक्रिय योग दे रही थीं। मदाम कैथराइन और धींगरा भी सदस्य थे सोसाइटी के, और उन दोनों की मित्रता इतनी बढ़ी कि दोनों प्रणय-सूत्र में बँध जाते, किन्तु तभी धींगरा को लन्दन जाकर सर कर्जन वाइली की हत्या का भार सौंपा गया, और १६०६ की पहली जुलाई को भारी सभा में एक के बाद एक तीन गोलियाँ मार कर उन्होंने अपना कर्तव्य पूरा किया।"

"क्यों जी, तब तो तुम्हें धींगरा का वह वक्तव्य भी स्मरण होगा जो अपने मुकदमे के दौरान दिया था उन्होंने ?"

"बड़ा प्रेरक वक्तव्य है माया, नीलम ने उसकी माँ के मुँह से कई बार सुना था, नीलम की जीभ पर भी वह मानो अक्षर-अक्षर प्रत्यक्ष रखा हुआ था।"

"सुना मैंने भी है। तुम्हें याद हो तो सुनाओ न एक बार।—आत्मा के कान

खुल जाते हैं उसको सुनने से । नहीं ?"

हँस कर नवनीत ने कहा, "कहा था धींगरा ने माया कि जो सैकड़ों अमानुषिक अत्याचार फाँसी और कालेपानी की सजाएँ मेरे देशवासियों को उनके देश-प्रेम के कारण हो रही हैं, मैंने उसी का एक साधारण-सा बदला उस अंग्रेज से लेने का प्रयत्न किया है। हिन्दू होने की वजह से मैं समझता हूँ कि यदि कोई हमारी मातृभूमि के साथ अत्याचार करता है तो वह परमेश्वर का अपमान करता है। हतभाग्य संतान के लिए, जो धन और बुद्धि दोनों से हीन है, इसके सिवा चारा ही क्या है कि मैं अपनी माँ की वेदी पर अपना रक्त अर्पित करूँ ? भारत-वासी इस समय केवल इतना ही कर सकते हैं कि वे मरना सीखें और इसे सीखने का एकमात्र उपाय यह है कि वे स्वयं मरें। मैं इसीलिए मरूँगा। ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि मैं फिर इसी भूमि में पैदा होऊँ जिससे कि फिर इसी पवित्र उद्देश्य के लिए अपना प्राणार्पण कर सकूँ और यह क्रम तब तक चलता रहे, जब तक कि भारत विजयी और स्वाधीन न हो जाए।"

मुस्करा कर माया ने कहा, "तुम्हें तो पूरा याद है जी। मानो—"

"मानो क्या ?"

"मानो तुम विप्लव-दल के ही सदस्य होओ।"

"क्या मतलब ?"

"यही वक्तव्य तो हमारे दल का प्रेरणासूक्त है। सदस्य होने के पूर्व हर उम्मीदवार को इस वक्तव्य का गीता की तरह पारायण करना पड़ता है।—लेकिन तुम सोचने क्या लग गए ?"

"यह सोच रहा हूँ कि तब तो सारी कहानी तुम जानती ही होगी ?"

"इतिहास में लिखा उतना ही तो जानती हूँ। नीमल की कहानी कहाँ लिखी है वहाँ ?"

"जानती हो तो भी क्या।—भगवान की कथा का तो बार-बार पारायण करना चाहिए न ?—सो, धींगरा ने जेल में ही सुना था कि उनकी प्रियतमा कैथराइन ने एक पुत्री को जन्म दिया है। किन्तु न तो पुत्री ने अपने पिता की, न पिता ने अपनी पुत्री की कभी शक्ल ही देखी। एक माह बाद ही अगस्त में धींगरा को फाँसी पर लटका दिया गया और विवाह न करके भी कैथराइन एक बार और विधवा हो गई। किन्तु इस बार वह एक तरह से भारतीय कुलवधू बन

चुकी थी। अपने जीवन-सर्वस्व की एकमात्र स्मृतिस्वरूपा कन्या को भी उसने एकदम भारतीय शिक्षा-दीक्षा, आचार-संस्कार देने का संकल्प कर लिया। पैसा उसके पास था ही। अधर लाल की सहायता भी उसे मिल गई। पेरिस में रह कर भी उस लड़की के लिए भारत का स्वप्न देखना सम्भव हो गया।"

"वह लड़की—"

"कहते हैं, बहुत बुद्धिमती निकली। फ्रेंच भाषा के साथ ही साथ हिन्दी को भी उसने मातृभाषा की तरह ही वरण किया। तीन-चार वर्ष की अवस्था से ही उसे भारतीय नृत्य-संगीत की शिक्षा दी गई, और भारतीय दर्शन और विचार में निष्णात, संस्कृत का एक जर्मन विद्वान् उसे भारतीय चिन्तनधारा की शिक्षा देने लगा।"

"यही न तुम्हारी नीलम थी?—बड़ा अद्भुत वातावरण मिला उसे।"

"कला, सौष्ठव और मार्दव की तो मूर्ति ही है फ्रेंच सभ्यता न। भारतीय विचार की शालीनता, गम्भीरता और मनोमयता भी आ मिली उसमें।"

"लेकिन क्यों जी, तब जन्मी है नीलम, तो तुमसे तो काफी बड़ी होनी चाहिए, हालाँकि दीखती मेरी ही उमर की है।"

हँस कर नवनीत ने कहा, "सौंदर्यमय तरुणाई में फ्रांस शायद समय की गति को रोक लेता है माया।—या यह सम्भव हो कि एक सभ्यता की भूमि से निकल कर पौधे को जब दूसरी सभ्यता की भूमि में गाड़ कर विकसित किया जाए तो नस्ल पर ऐसा प्रभाव पड़ जाए। एन्थ्रॉपॉलॉजी कहती है क्या इस दिशा में कुछ?"

"बेचारी एन्थ्रॉपॉलॉजी को बीच में क्यों घसीटते हो? वह तो अतीत के गड़े मुर्दों से सम्बन्ध रखती है।"

"मेरा मतलब क्रॉस-ब्रीडिंग यानी, अन्तर्प्रजनन से था।—जो भी हो माया। कहना यह चाहता था मैं कि गो वह मुझसे चार-पाँच बरस ही बड़ी होगी, उसके शरीर की यह चालाकी मुझसे नहीं चल सकी थी। पहली ही दृष्टि में मैं समझ गया था कि यहाँ आँखों को धोखा है।"

"जानती हूँ जी, कैसे तपस्वी हो तुम।—लेकिन इन बातों के लिए जिंदगी पड़ी है—"

"जिन्दगी पड़ी है?"

"हाँ हाँ, जिन्दगी। नहीं तो क्या मौत पड़ी है?—मेरी ओर देखो, क्या मैं मौत लगती हूँ?"

"तुम?—नहीं माया। तुम्हीं तो मृत्यु के इस तप्त-मरुस्थल में जीवन की सजल रेखा हो। तुम्हें पाकर ही मुझे अमरत्व मिल गया है। मृत्यु मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। किन्तु जिन्दगी भर अगर ऐसी ही बातें करती रहोगी माया—तो क्या मुझ पर अभी भी तुम्हारा विश्वास नहीं है?"

"विश्वास क्यों नहीं है। न होता तो क्या यों लौट आती?—पर झगड़ते भी तो रहना होगा न तुम से?"

"झगड़ते रहना होगा?—क्यों भई?"

"इसलिए कि झगड़े के बिना प्रेम पलता नहीं है न। उसकी प्रतीति भी तो नहीं होती।—पर लो, कहानी कहते-कहते ही तुम कहाँ उड़ जाते हो। यही तो है तुम्हारी आदत—कहीं के कहीं उड़ जाने की पुरुषों की आदत। सुनाओ कहानी।" और उसने लेटे हुए नवनीत के मानो कपोल से अपने कपोल सटा दिये।

माया के रेशम जैसे बालों को सहलाते हुए नवनीत ने कहा, "लाला हरदयाल का नाम इतिहास में पढ़ा याद होगा न?"

"वे तो अमेरिका में गदर पार्टी से सम्बन्धित थे न?"

"भारतीय गदर-पार्टी की अध्यक्षा होकर तुम्हीं न जानोगी उन्हें तो और कौन जानेगा?"

"नहीं नहीं, मैं पूरा इतिहास नहीं जानती। तुम सुनाओ। अमेरिका भी कोई एक छोटा-सा प्रांत तो नहीं है न? और कब कैसे कहाँ इस पार्टी का जन्म हुआ यह सब क्या मैं जानती हूँ?"

"जरूर जानती हो। लेकिन तब भी मैं सुनाता हूँ माया। मई १९१३ में केलिफोर्निया में हुआ था जन्म इस पार्टी का—और उन्नायकों में थे बाबा ज्वाला सिंह, करतार सिंह सराबा, पंडित जगत राम, हरदयाल आदि। पार्टी का मुख-पत्र 'गदर' अपने लेखों में खून और आग बरसाता था। परिणाम यह हुआ कि लाला जी गिरफ्तार कर लिए जाते, पर किसी तरह बच कर वे यूरोप चले गए। पेरिस में जब उनका परिचय अधर लाल से हुआ तो शीघ्र ही उन्होंने देखा कि अमेरिका में भारत के लिए शस्त्रास्त्र संग्रह करने के लिए अधर लाल से अधिक उपयुक्त और कोई नहीं हो सकता। इधर कैथराइन का भी पेरिस में अधिक

सम्मान नहीं रह गया था। जब अधर लाल अमेरिका जाने के लिए तैयार हुए तो कैथराइन ने भी अपनी सारी जायदाद बेच कर पुत्री के साथ अमेरिका जाना तय कर लिया। लाला जी के प्रयत्नों से एक दिन तीनों एक जर्मन जहाज द्वारा अमेरिका के लिए चल पड़े।"

"तो अधर लाल भारतीय-स्वाधीनता के अन्तर्राष्ट्रीय-प्रयत्न के प्रतीक थे?"

"और सरलता ऐसी थी उनमें, मानो वे सचमुच एक भारतीय पोस्टमैन से अधिक कुछ थे ही नहीं।"

"यही तो महान् आत्माओं की महानता का परिचय है।—फिर क्या हुआ? फिर कहीं बहक कर उड़ जाओगे नहीं तो।"

हँस कर नवनीत ने कहा, "क्या अब भी उतना ही अबाध्य समझती हो माया?"

"क्या कहने तुम्हारे!—दूध से धुल चुके हो न?—अमेरिका में फिर क्या हुआ?"

"अमेरिका में भारत के लिए शस्त्रास्त्र संग्रह किए गए। किन्तु कठिनाई यह हुई कि कनाडा सरकार ने भारतीयों के कनाडा-प्रवेश पर प्रतिबन्ध कठोर कर दिया। सिंगापुर के ठेकेदार बाबू गुरुदत्त सिंह ने एक गुरु नानक स्टीम नेविगेशन कम्पनी खोली। उसी के जापानी जहाजों द्वारा भारतीयों को कनाडा पहुँचाने और वहाँ से शस्त्रास्त्र लाने की योजना बनी। पर एक दुर्घटना हो गई।"

"वह क्या?" माया ने पूछा।

गुरु नानक कम्पनी का इतिहास-प्रसिद्ध जहाज 'कामागातामारू' लगभग चार सौ भारतीयों को लेकर कनाडा की ओर अग्रसर हुआ तो कनाडा सरकार ने इसे वैन्कोवर में ही रोक लिया, किनारे भी नहीं लगने दिया। कनाडा सरकार ने सोचा था कि यदि इस जहाज का बाहरी दुनिया से सम्पर्क ही न होने दिया जाए तो आप ही रसद वगैरा खत्म हो चुकने पर जहाज भारत लौट जाने को विवश होगा। भारतीयों ने कनाडा में इसके विरुद्ध काफी जनमत पैदा किया। इनमें अधर लाल भी प्रमुख भूमिका खेल रहे थे। यदि उनके प्रयत्न से शीघ्र ही जहाज पर रसद-पानी की व्यवस्था न होती तो जहाज के सभी यात्री जीवित ही जलसमाधि ग्रहण करने को बाध्य हो जाते। दो माह की लम्बी प्रतीक्षा के

बाद यह तय हुआ कि जहाज भारत लौट जाए। अधर लाल ने इस जहाज को शस्त्रास्त्र से लादने की चुपचाप व्यवस्था की और कहीं मार्ग में इस पर कोई विपत्ति न आ जाए, वे स्वयं भी भारतवर्ष के लिए रवाना हो गए।"

"और अमेरिका में उनके पीछे ?"

"वे तो वापिस लौटने का इरादा रखते थे न ? तब भी पीछे का कार्य तथा कैथराइन और उसकी कन्या का भार वे अपने साथी टीकम चन्द पर छोड़ आए थे।"

"यानी यह टीकू ही न ?"

"हाँ माया। एक समय वहाँ पर यह टिंकर के नाम से प्रसिद्ध था। उसके अलावा श्री पिंगले, सत्येन्द्र सेन आदि अन्य क्रांतिकारी भी वहाँ रह गए थे। इधर जैसे-जैसे कामागातामारू भारत की ओर बढ़ने लगा, उस पर विपत्ति की आशंकाएँ बढ़ती जा रही थीं। अमेरिका में भी जब ये समाचार पहुँचे तो टीकू और कैथराइन भारत लौट आने को उत्सुक हो गए। लाला हरदयाल के प्रयत्नों से अमेरिका-स्थित जर्मन राजदूत फान ब्रिकन के प्रयत्न से केलिफोर्निया से एक और जहाज अप्रैल माह में रवाना हुआ। उसका नाम था 'मेवरिक'। शस्त्रास्त्र के अतिरिक्त भारतीयों की सैनिक शिक्षा के लिए इसमें पच्चीस जर्मन सैनिक अधिकारी तथा कैथराइन अपनी पुत्री और टीकू के साथ सभी इसमें सवार हो गए थे।"

"और अधर लाल के जहाज की तो बड़ी दुर्गति हुई थी न ?"

"हाँ। बजबज रोक दिया गया वह जहाज और भारत सरकार ने आदेश दिया कि सभी यात्रियों को विशेष रेलगाड़ी द्वारा सीधे पंजाब पहुँचा दिया जाए, मार्ग में कहीं किसी को न उतरने दिया जाए। कनाडा के अपमान से यात्री उत्तेजित तो थे ही, घर पर ही कैद के इस अपमान को वे सह न सके और उन्होंने अंग्रेजों की आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया। बस, फिर क्या था। गोलियाँ चल पड़ीं। अठारह यात्री शहीद हो गए। कुछ भाग गए, कुछ को बन्दी बना लिया गया और कुछ को जबरन रेलगाड़ी में ठूँस कर पंजाब भेज दिया गया। अधर लाल और कम्पनी के ठेकेदार गुरुदत्तसिंह दोनों ही भाग निकलने में सफल हो गये। इतिहास में भी उल्लेख है माया, इस घटना का तो।—प्रथम महायुद्ध के दिन थे। जापान की भारत के साथ सहानुभूति थी।"

"एशिया का ही तो देश है न वह ! बाद में रास बिहारी बोस और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस का स्वागत भी तो किया था उन्होंने, किन्तु अणुबम ने उसकी भी रीढ़ तोड़ दी।"

"इतिहास किसी को क्षमा नहीं करता माया।—जापान, जर्मनी सभी तो सत्ता के मद में अन्धे हो गए थे।—लेकिन वह दूसरी बात है। सात-आठ वर्ष तक अधर लाल और गुरुदत्तसिंह सारे देश के बीहड़ जंगलों में घूमते रहे। इधर महात्मा जी का भारतीय राजनीति में प्रवेश हो चुका था। १९२१ में उनकी प्रेरणा से गुरुदत्तसिंह ननकाना साहब में प्रगट हुए और आत्मसमर्पण कर दिया उन्होंने। अगले वर्ष वे मुक्त भी कर दिए गए। अधर लाल छिपे-छिपे ही देश के अन्य क्रांतिकारी कार्यों में भाग लेते रहे, पर इस तरह कि सरकार उन्हें भूल ही गई। उन्होंने एक संभ्रांत व्यक्ति की तरह प्रगट में पोस्टमैन की नौकरी भी कर ली, और पटना के बाद जब मानपुर में उनका तबादला हुआ तो मानो उन्हें मन के मुताबिक ही स्थान मिल गया।"

"लेकिन कैथराइन और नीलम का क्या हुआ ?"

"कहानी वह भी कोई सुख की नहीं है माया।—कामागातामारू के साथ सरकार ने जैसा व्यवहार किया उससे 'मेवरिक' के लिए सतर्कता जरूरी हो गई। बंगाल की खाड़ी में अंग्रेजों ने भारी पहरा बैठा दिया था किन्तु तब भी एक युवक नरेन्द्र भट्टाचार्य साहस करके बटेविया पहुँच ही गया। 'मेवरिक' वहीं खाली कर दिया गया। टीकम चन्द, कैथराइन और नीलम भी वहीं ठहरने को विवश हुए। जानती हो माया ?—अगर एक दिन की भी देर हो जाती तो सब खत्म था। दूसरे ही दिन जहाज की तलाशी का हुक्मनामा सादिर हो चुका था।"

"संयोग ही तो था न। क्या ऐसे ही संयोग जीवन को जीने योग्य नहीं बनाते ?"

"जीवन किसी संयोग पर नहीं निर्भर करता माया। बल्कि ऐसे संयोग तो छल ही साबित होते हैं, ताकि मनुष्य एक साथ कुछ तोड़-फोड़ कर नया कुछ निर्माण ही न कर सके। कुएँ से बचे ये लोग, तो खाई तैयार थी। कैथराइन बटेविया में मलेरिया का शिकार हो गई। मन पहले ही टूट चुका था। इतने कष्ट के बाद भी सपनों का देश भारत निकट नहीं आ पाया था। एक दिन जब वह सदा के लिए सो गई तो नीलम को वहाँ अपने आँसुओं तथा टीकम चन्द

ग्रौर दूर से सुधि लेते रहने वाले ग्रधर लाल के सिवा ग्रौर कोई सहारा नहीं रह गया। जिस काल्पनिक मातृभूमि के लिए उसे ये सब यातनाएँ सहनी पड़ती थीं, उस देश का प्रेम या गौरव समझने योग्य तब तक उसका मानसिक स्तर भी नहीं बन पाया होगा।"

"क्या उमर रही होगी उसकी तब ?" माया ने पूछा।

नवनीत विचार में पड़ गया। फिर तनिक मुस्कराकर बोला, "पूछा नहीं ग्रधर लाल से। तब क्या मालूम था कि एक दिन तुम यह सवाल कर बैठोगी ? छः साल की होगी, किन्तु मातृभूमि के गौरव का ग्रभिमान, उमर ही नहीं, ग्रादर्श के प्रति ग्रास्था भी तो माँगता है न ?"

"जैसे ग्रधर लाल को छोटी-सी उमर में ही प्राप्त हो गया था। है न ?"

"ग्रधर लाल एक ग्रद्‌भुत व्यक्ति थे माया। सचमुच ऐसे व्यक्ति—ग्रब हिन्दी में क्या कहा जाए सेल्फलेस को ?—निःस्वार्थ शब्द में वह व्याप्ति कहाँ है ग्रौर ग्रात्माहीन कहने से तो ग्रौर भी ग्रनर्थ हो जाता है।"

"निरात्म कहो न !"

"क्या शब्द कहा है तुमने माया ! भई, साहित्य-शास्त्री जो ठहरीं। कितने हैं दुनिया में ऐसे निरात्म ? लेकिन जब ऐसे व्यक्तियों का भी ऐसा दुःखद ग्रन्त हो तो क्या मनुष्यता के प्रति क्रोध नहीं ग्राता किसी को ?"

"क्रोध हो ग्राना तो कुछ ग्रंशों तक ठीक है, किन्तु बहुतेरों में उदासीनता ग्रौर विरक्ति पैदा हो जाती है। यह बात बुरी है। यदि कभी इससे किसी को लाभ पहुँचता भी है तो वह केवल व्यक्ति को ही, लेकिन क्रोध तो सारी मानवता की बुराइयों पर प्रहार करता है। ग्रधर लाल भी विरक्त होकर ग्राध्यात्मिक-मुक्ति के मार्ग में हिमालय की कन्दरा की ग्रोर बढ़ सकते थे, किन्तु चाहा था उन्होंने देश की मुक्ति का लक्ष्य प्रशस्त करना। यहीं उनकी निरात्मता का महत्त्व ग्रौर भी बढ़ जाता है। नहीं क्या ?"

"सचमुच माया ! तुम्हीं उन्हें गहराई से समझ सकी हो। साहित्य की दृष्टि जो है तुम्हारी। इतिहास तो केवल ढाँचे को लेकर खड़ा हो जाता है, प्राण-प्रतिष्ठा उसमें साहित्य के सिवा ग्रौर कर ही कौन सकता है ? ग्रौर तुमने भी तो देश की..."

"ग्रच्छा रहने दो ग्रब ये बातें। नीलम की बात क्यों नहीं कहते ? मालूम

पड़ता है मन ही मन जरूर चाहते रहे हो उसे।"

"क्या प्रमाण उस रात को अपनी इजलास में नहीं मिला तुम्हें ? तब तो जज महोदया, तुम्हारे ऊपर पक्षपात का दोष लगाया जा सकता है। सुरेश से कहूँगा कि उसे अपील करनी चाहिए। अपना पुराना पति समझ कर तुमने मुझे निर्दोष करार दे दिया।"

"पुराना क्यों ! क्या अब नहीं हो ? लेकिन सुरेश की दिलचस्पी तुममें नहीं, मुझ में है।'

"कहती क्या हो ? सुरेश की दिलचस्पी तुम में ?"

"सुनाऊँगी वह किस्सा भी। पर अभी तुम नीलम की बात तो पूरी करो न ?"

"उसमें अब अधिक है ही क्या रानी ? भारतवर्ष की तब राजनैतिक अवस्था अच्छी नहीं थी। अधर लाल ने टीकम चन्द को बटेविया कहला भेजा कि जब तक भारतवर्ष की स्थिति अच्छी न हो जाए, वे सब बटेविया ही रहें। पैसे की उन्हें चिन्ता थी नहीं, माँ काफी पैसा छोड़ कर मरी थी। नीलम की शिक्षा-दीक्षा का उचित प्रबन्ध वहीं कर दिया गया, खास कर नृत्य और संगीत में वहीं उसने अद्भुत दक्षता प्राप्त की। भारतीय संस्कृति का आर्षरूप भी उसे वहीं देखने को मिला। भारतवर्ष वे लोग आसके तभी, जबकि १९३५ में विधान के अनुसार देश के कई प्रांतों में काँग्रेस अपनी सरकार बना चुकी थी। उन्हीं दिनों अधर लाल का तबादला भी मानपुर हुआ और वे सब मानपुर आकर बस गए। नीलम को तब भारतीय सामाजिक ऊँच-नीच का कुछ भी पता न था। भारत में आकर क्या करे, क्या न करे। आखिर बिना विशेष कुछ सोचे-समझे उसने गायिका का व्यवसाय शुरू कर दिया।"

"यह तो उसका लोकदिखाऊ काम था जी लोकदिखाऊ। यहाँ आते ही तत्काल तो वह विप्लव-दल की सदस्या हुई थी।"

"ओह, सो तो तुम मुझ से अधिक ही जानती हो। अधर लाल तो तुम्हारे दल के पहले से ही सदस्य थे न ?"

"मेरे दल के नहीं। तब मैं तो दल की सदस्या भी नहीं थी महाराज ! बहुत बाद में बनी, लखनऊ से निष्कासन हो गया उसके बाद में। हाँ पिता जी सब कुछ जानते थे, पर व्यक्तिगत बातें वे भी नहीं जानते···"

—एक झटका-सा लगा। नवनीत के मस्तक की मानो कोई शिरा भटक कर अपने संगम से च्युत हो गई। ठंडी हवा के झोंकों में घनी रात्रि का निरभ्र आकाश मानो खिड़की की राह गाड़ी में उतर आया था। किसी ने उसे पुकारा था न। नहीं, माया का स्वर नहीं था। माया शायद पराए स्वर को सुन कर लजा गई है और भीतर चली गई है। माया, आखिर स्त्री ही तो ठहरी। पढ़ी लिखी हुई तो क्या हुआ ? और शालीनता भी तो यही है।

"नवनीत बाबू, क्या सो गए हैं ?"

"आइए, चले आइए। माफ कीजिए, पहचान नहीं पाया।"

सुरेश ने गाड़ी के भीतर की बत्ती जलादी और हँस कर कहा, "पहचान नहीं पाए ? मैं सुरेश हूँ। नींद लग गई थी शायद। सपना देख रहे थे न ? लीजिए जरा गरम दूध ले लीजिए।"

नवनीत ने आँखें मसल कर देखा। तो क्या सचमुच ही सपना था वह ? सुरेश नारायण हाथ में दूध का गिलास बढ़ाए खड़े हैं और कह रहे हैं, "नींद आ जाना तो बड़ा अच्छा है नवनीत बाबू। मैं चाय पीता हूँ, इतने आप यह थोड़ा दूध पीलें। इच्छाशक्ति के साथ वह बहुत असर करेगा आपके स्वास्थ्य पर। लाइट रहने दूँ ?"

गिलास हाथ में लेकर नवनीत ने कहा, "दिल्लो पहुँचाने में तो मेरी इच्छा-शक्ति ही काफी है सुरेश साहब ! पर दीजिए, जो भी आप देंगे वह अच्छा ही होगा। और लाइट तो आप बुझा ही दें। माया का तो कुछ मार्ग में पता नहीं लगा न ?"

"वे दिल्ली ही में आपकी प्रतीक्षा कर रही होंगी नवनीत बाबू। सुरक्षा के लिहाज से भी अच्छा यही है न ?" सुरेश ने लाइट बुझा कर बाहर जाते हुए कहा, "आप बहादुर हैं नवनीत बाबू ! इच्छाशक्ति से ही आप पूर्ण स्वस्थ हो जाएँगे। इससे बढ़ कर और कोई औषधि नहीं हो सकती।" और धक्के के साथ गाड़ी का दरवाजा बन्द हो गया।

सो माया दिल्ली में नवनीत की प्रतीक्षा कर रही है। लेकिन दिल्ली कहाँ दूर अस्त ? काल और स्थान का व्यवधान है ही कहाँ नवनीत के निकट अब ? अभी ही तो माया उसके सिरहाने बैठी उसकी कहानी सुनती रही है ? कौन कहता है स्वप्न था वह ? सार्थक हो जाए जो स्वप्न, वही क्या सत्य नहीं होता?

नवनीत ने दूध पिया और फिर आँखें बन्द करके लेट रहा। कुछ ही देर बाद दरवाजा फिर खुला। खाली गिलास लेकर फिर कोई चला गया। सुरेश आखिर भला आदमी ही है। माया ने शायद किसी समय एक बार कहा था न, कि नवनीत की तलाश के पहले उसके पिता जी किसी अन्य युवक के साथ माया के सम्प्रदान की बात सोच रहे थे। शायद सुरेश नारायण का नाम ही तो बताया था। नहीं नहीं, सुरेश की भक्ति का और भी कारण हो सकता है। माया विप्लव-दल की सभानेत्री जो है। सभा के सभी सदस्य, सुरेश नारायण उसका अपवाद नहीं हो सकता, सभी सदस्य तो अपने नेता की भक्ति करते ही हैं। नई बात इस में है ही क्या? सुरेश चाय पीकर आजाए तो कह भी देगा वह कि गाड़ी तेज चलाए तो भी नवनीत का जी अब न मिचलाएगा। जितनी जल्दी दिल्ली पहुँचे वह, उतना ही अच्छा है।"

गाड़ी चली तो नवनीत ने सुरेश से गाड़ी तेज चलाने के लिए कह भी दिया। पर उसने अनुभव किया, गाड़ी मानो और भी धीमी गति से जा रही है। शायद उसके मन का वहम ही हो। वह चाहता जो है कि गाड़ी हवा हो जाए। पर नहीं, गाड़ी कभी-कभी, लगता है, लड़खड़ाती भी जाती है। तो क्या गाड़ी ने भी शराब पी ली है?—नहीं सुरेश—पीता भी हो तो बुरा भी क्या है?—विप्लव-दल के सदस्य शराब न पिएँ, यह तो कोई नियम नहीं है। यहाँ लगा मानो गाड़ी फिर लड़खड़ाई। उसकी बला से। सुरेश नारायण के हाथ में है गाड़ी की नस। और वही तो जिम्मेदार है उसके लिए? उसने फिर अपनी चित्तवृत्ति को निविष्ट करके माया को आवाज दी।

१४



माया पुनः नवनीत के सिरहाने आ बैठी। रूठने के बाद मनाए हुए बालक की तरह नवनीत ने अपना सिर उसकी गोद में रख दिया और उसके हाथ को अपने हाथ में लेकर अपने गाल सहलाने लगा। माया का दूसरा हाथ नवनीत के सीने पर था।

माया ने कहा, "क्या हो गया है जी तुम्हें?"

"कहाँ?"

"तब फिर हर किसी के सामने बीमारी-ईमारी की क्या रट लगा रखी है?"

"यह रट न लगाऊँ तो कौन इस तरह तुम्हारी गोद में सिर रखे सोने देगा मुझे?"

"तुम बड़े धोखेबाज हो जी।"

"कैसे भई?"

"और नहीं तो क्या। नीलम जैसी तेजस्विनी निरीह लड़की को भी दिया न तुमने धोखा?"

"धोखा कहती हो उसे? पहली बात तो, नीलम का वह प्रेम ही नहीं था। खुद नहीं उसने स्वीकार किया था उस रात? बहुत तपस्या के बाद वह अपने सपनों के देश पहुँच चुकी थी। उमर भी थी ही। मंजिल पर पहुँच कर जब सब चिन्ताओं से छुट्टी मिल जाती है तो मनसाराम को प्रेम की फुरसत ही नहीं, तलब भी हो जाती है माया। और फिर मानपुर जैसे पिछड़े कस्बे में यदि कोई आधुनिक शिक्षा से लैस और अच्छे-खासे स्वास्थ्य वाला दिखनौटा युवक पहुँच जाए तो

सहज आकर्षण का यों ही विषय हो जाता है। क्या देखने-सुनने में मैं बहुत ही गया-बीता हूँ ?"

"यही तो भय का कारण है जी। चमकते हुए हीरे को खुले में छोड़ कर कौन निश्चिंत हो सकता है ?"

"एक व्यक्ति तो हो सकता है जी। हम गवाह हैं।"

"कौन है वह ?"

"उनका नाम है मायावती।"

"और नीलम नहीं क्या !"

"उससे हमें क्या मतलब है ? कह तो चुका हूँ, उसका वह प्रेम तो निठल्ले बैठे व्यक्ति की चकल्लस थी। खाना खाने के बाद जैसे किसी व्यक्ति को पान का शौकीन पान की दूकान पर ले जाकर पान खिला दे। पहले व्यक्ति को कोई शौक नहीं, इच्छा या तलब भी नहीं, पर खाना खाने के बाद एक फैशन जो हो चला है पान खाने का।"

"अच्छा, और आरती के बारे में क्या कहना है जी तुम्हारा !"

हँस कर नवनीत ने कहा, "अभय है न ?"

"हाँ हाँ, है। उस दिशा में निश्चिंत रहो। मैं अब वह कच्चे मन की माया नहीं हूँ। मैं हूँ विप्लव-दल की सभानेत्री। कहा था न मैंने ? तुम्हारे किसी भी भाव से मैं विवश नहीं हो सकती।—नहीं जी, तुम्हारे प्रेम से भी नहीं। आखिर नीलम की आसक्ति और तुम्हारे प्रेम की मान्यता में अंतर ही क्या है !—हो तो मात्रा ही का हो सकता है, प्रकार का नहीं। लेकिन इसमें उदास होने की क्या बात है जी ! प्रेम जैसी हलकी डोर की क्या चिन्ता की जाए ? हम तो विवाह के मजबूत रस्से से बँधे हुए हैं न। हिन्दुओं के विवाह की यह रस्सी बड़ी मजबूत होती है मियाँ, गला घोट देती है मगर टूटती नहीं। ऐसी ही मजबूत रस्सी तो चाहिए पहाड़ के शिखर पर चढ़ने के लिए। उस ऊँचाई पर चढ़ चुकने पर ही तो आसपास कोई दिखाई नहीं पड़ता, और पति-पत्नी में इतनी पारस्परिक निर्भरता आ जाती है कि प्रेम का द्वैत एक नितांत नगण्य वस्तु रह जाती है। क्या कहते हो ?"

"उस रस्सी से ही खींच लो न माया अपने पास मुझे ! मैं खड्डे में गिर गया हूँ।"

"पैर ही तो फिसला है। गिरे कहाँ हो! और बँधे हुए हैं न हम रस्सी से, यह देखो। घबराओ नहीं, बढ़े चलो आओ। मैं निष्कंप खड़ी हूँ।"

"नहीं, अब क्यों घबराने लगा। मुखबिर को कानून भी तो माफी दे देता है।"

"मुखबिर! मुखबिर कौन है यहाँ?"

"मैं हूँ न तुम्हारी अदालत में। पुराना पापी जो ठहरा। सरकारी अदालत में बना था न मुखबिर अधर लाल के खिलाफ। पर तब भी अभय नहीं थी। शर्ली से डर कर भाग निकला था। अब तुम्हारी अदालत में मुखबिर हूँ।"

"किन्तु किसके विरुद्ध?"

"अपने ही विरुद्ध।–आरती की बात पूछी थी न तुमने?–उस बार जो हकीकत नीलम को विवश कर गई थी, इस बार वह हकीकत मुझे परवश कर गई।"

"और उसकी मात्रा नीलम की दुर्बलता की मात्रा से अधिक थी। थी न?"

"उसी की प्रतिहिंसा में तो अधर लाल को होम होना पड़ा। मैं स्वीकार करता हूँ माया, मात्रा तो अधिक थी ही, अपने दुष्परिणाम के कारण वह एक गर्हित-कृत्य भी हुआ है।"

हँस कर माया ने कहा, "दंडनीय भी।"

"दंड क्या मैं पा नहीं चुका?"

"कहाँ? रस्सी से तुम्हें और जकड़ना होगा ताकि मेरे इशारे के बिना तुम हाथ-पैर भी नहीं हिला सको। समझे?"

"यही तो मैं कहना चाहता हूँ माया। छोड़ कर चली गईं तो एक क्षण के लिए भी तुमने नहीं सोचा कि जिस जहाज का लंगर खो जाए, वह तूफानी समुद्र में कैसे अपने मार्ग पर लगा रह कर मंजिल पर पहुँच जाएगा? अगर जौहरी अपना हीरा बाहर खुले में छोड़ दे, और अगर कोई चोर उसे उठाले या उठा लेने के लिए ललचा उठे, तो क्या इसके लिए वह जौहरी खुद उतना ही जिम्मेदार नहीं, जितना कि चोर हो सकता है? खुले में पड़ा हीरा देख कर चोर तो चोर, बल्कि साहू तक का मन डगमगा सकता है।"

हँस कर माया ने कहा, "और बेचारा हीरा? उसका तो कहीं कोई दोष है ही नहीं। वह तो उठा कर जेब में रख लेने की ही चीज है न? चाहे जौहरी की जेब हो या चोर की।"

माया के व्यंग्य से नवनीत भी हँस दिया। बोला, "चोरी छिपाने के लिए अगर उसे काट-तराश लिया जाए, तब भी उसका प्रायश्चित्त नहीं होगा क्या ?"

"होगा क्यों नहीं ? और जौहरी की हानि कुछ कम हुई है क्या ? लेकिन वह बाद में सुनाऊँगी, पहले तुम अपनी बात कहो। आज तो तुमसे सुनना चाहती हूँ मैं।"

"पूछो न। आज तो तुमसे कुछ छिपाना भी नहीं है। आरती की बात कह ही चुका हूँ। उस गँवई गाँव में जिस तरह नवनीत जैसा अपदार्थ भी महत्त्व का भागी हो सकता था, वहाँ आरती तो मानो मन्दिर की शोभा और श्री ही थी न।"

"जो भगवान को प्रिय होने के लिए ही है। यही हुआ भी। है न ?" हँस कर माया ने कहा।

"आरती ने बीमारी में मेरी सेवा न की होती माया, तो शायद मैं बच भी नहीं पाता। कैसे शारीरिक और मानसिक अवसाद में मैं लखनऊ से आया था मानपुर ? और फिर पुरुष के आग्रही भूखे मन के सामने, उसकी अन्नपूर्णा-सी वह स्निग्ध-छवि, अहेतुक सेवा का उसका व्रत, निश्छल-निस्संकोच व्यवहार ! गहरी आसक्ति, कहना चाहिए पत्नीत्व के भाव के बिना ऐसी निष्ठा नारी में नहीं मिलती न माया ?"

"वासना के चश्मे से पुरुष को और दिखाई ही क्या देगा ? नारी का मातृत्व कितनी गहराई तक जा सकता है, यह नारी ही जानती है। तुम कैसे समझ सकते हो कि संतान की निष्ठा के सामने पति की कोई बिसात ही नहीं रहती नारी की दृष्टि में।"

"समझ सकता हूँ माया, तुमसे ही समझ सकता हूँ। छाया के प्रति मेरी उपेक्षा ही ने तो तुम्हें मुझसे वीतराग कर दिया था।"

अपने को सम्हाल कर माया ने कहा, "जब हम दोनों में कुछ दूरी हुई तो यह रस्सी तन गई। अगर दूसरा समाज होता, जहाँ रस्सी मजबूत न होती तो टूट जाती न ?"

"बल्कि तनाव से रस्सी न टूटे तो वहाँ तलाक के झटकों का भी विधान है। सचमुच माया, आरती ने माँ के समान ही मेरी देखभाल की और उसका बदला क्या दिया मैंने ?"

"तब भी 'माता कुमाता न भवति', और तुम क्षमा कर दिये गये। आरती

ने ही तो उस रात तुम्हारी रक्षा की।"

"अच्छा माया, अगर आरती मेरी रक्षा न करती तो ?"

"मेरा निर्णय तो तुम सुन ही चुके थे।"

"अगर वह कार्यमय हो जाता ?"

"कार्यमय होने के लिए ही तो सुनाया गया था। पर अगर कार्यमय हो जाता तो तुम्हें क्या ? प्रायश्चित्त तो मुझे ही करना पड़ता न ?"

"तुम्हें क्यों ?"

"इसलिए कि रस्सी से जो बँधी हुई हूँ, अँधेरे में दिखाई न दे, पर जो बँधा हुआ है वह तो भूल नहीं सकता न ? न टूटनेवाली मजबूत रस्सी जो ठहरी।"

नवनीत एक क्षण चुप होकर गहरे विचार में खो गया। हँस कर माया ने कहा, "लेकिन मैं जानती थी कि माँ-बेटे के बीच की बात है। पत्नी से माँ का दर्जा ही ऊँचा है। मैं दंड दे सकती हूँ, पर बचाने वाली माँ भी तो मौजूद है। पर तुम सोच क्या रहे हो जी ?"

लम्बी साँस लेकर नवनीत ने कहा, "माँ मेरी बहुत बचपन ही में मर गई। शायद माँ का प्यार ऐसा ही होता होगा। आरती देवी सचमुच मेरी माँ ही रही होंगी। उस महिमामयी देवी का अब मैं माँ के रूप में ही ध्यान करूँगा माया। किन्तु शर्ली के बारे में तो मैं दोषी हूँ न।"

"अब उन बीती बातों का ध्यान ही क्यों किया जाए ?"

"पाप और पुण्य को प्रकट करने से वे घट जाते हैं न ? फिर तुम्हें तो मेरा सारा इतिहास सुन लेना चाहिए।"

"किस लिए ?"

"ताकि तुम मुझे क्षमा कर सको।"

"क्षमा करने या दंड देने वाली मैं कौन हूँ जी ? पाप और पुण्य में लिप्त इस जगत् में दूसरों के पाप-पुण्य का विचार करने की क्षमता है किसमें ? जो सबका स्वामी है, उस ईश्वर पर ही क्या यह भार नहीं छोड़ देना चाहिए ?"

हँस कर नवनीत ने कहा, "तुम मानती हो क्या ईश्वर को ! अच्छी ही बात है माया, जो नहीं मानते हैं, वे मनुष्य पर बहुत सारा बोझ लाद देते हैं, चाहे वह उठा पाए या न उठा पाए। खैर, हो अगर वह तो उसका विचार शायद मृत्यु के बाद ही संभव है, और उसका फैसला भी तो मृत्यु के बाद दूसरे

जन्म में मिलता है !"

"नहीं, इस जन्म में भी मिल सकता है जी।"

"तब भी कार्य-कारण सम्बन्ध की इस जन्म की बुद्धि से वह भार सरलता से कर्मों पर लादा जा सकता है न ?"

"ऐसे उदाहरणों की भी कमी नहीं है जी, जहाँ कार्य-कारण का पूर्वापर सम्बन्ध इस जन्म में स्थापित ही नहीं किया जा सके। जैसे हमारी छाया ही को लो। इस नन्हे से जीवन में क्या कारण संचित कर बैठी थी वह ?" और उसकी वाणी वाष्पाच्छन्न हो उठी।

माया के कंधे पर हाथ रख कर नवनीत ने कहा, "सांत्वना और संतोष तो प्राप्त किया जा सकता है माया, लेकिन वह तो मन को समझाना भर हुआ। यह दृष्टिकोण उदासीनता का है और दाम्पत्य-जीवन में इससे रस बनने में बाधा पहुँचती है। हम लोगों ने कम कष्ट नहीं सहा है; अपना अनुभव तो साक्षी है। अगर हमने जीवन में उदासीनता नहीं दिखाई होती तो इतना बड़ा मूल्य हमें नहीं चुकाना पड़ता। एक दूसरे की आवश्यकता और अपेक्षा को अपने से ऊपर उठ कर न देख सकने के कारण ही तो हमारा दाम्पत्य-जीवन रसहीन हो गया। रस नहीं बनने से रक्त नहीं बनता, तब कहाँ से मांस-मज्जा-अस्थि बनें ? इस रीढ़हीन जीवन से कभी न टूट सकने वाली रस्सी के जरिए हम घिसटते तो रहते हैं, पर जिन्दा कहाँ रहते हैं ?"

"तो एक दूसरे की आलोचना करते हुए रस बनाया जा सकता है क्या ? सुनती हूँ, वह तो और भी रस को सुखा डालती है !"

"सो सच ही सुनती हो। आलोचना या उदासीनता दोनों ही पैदा होती हैं सहानुभूति के अभाव से। मुझे देख कर आश्चर्य होता है माया, कि एक नारी अपने पुत्र के जिन अपराधों को बड़ी सहानुभूति के साथ, कई बार तो पक्षधरता के साथ, निबाह ले जाती है, उन अपराधों का शतांश भी वह अपने पति में सह नहीं पाती। जो आवश्यकताएँ पुत्र की होती हैं, वे क्या पति की नहीं हो सकतीं ? समाज में एक ही नारी तो पत्नी भी होती है, और माता भी; दोनों चाहे एक ही पुरुष की वह न होती हों, यद्यपि संतान के रूप में भी प्राप्त उसे पति ही होता है।"

"लेकिन एक ही पुरुष की पत्नी और माता, यह तो तुम कुछ फ्रॉयड जैसी

बात कर रहे हो। पाप नहीं होता इससे?"

"सचाई हो तो क्या फ्रॉयड की बात होने से ही अमान्य हो जाएगी? और मैं तो फ्रॉयड की बात भी नहीं कहता माया, मैं तो सिर्फ सहानुभूति की बात कह रहा हूँ! हमारी ही बात क्यों न ले ली जाए? तुम समझती थीं, मुझे शर्ली से प्रेम है। समझती थीं न?"

माया ने कहा कुछ नहीं, केवल उसका स्वीकृति-सूचक मस्तक कुछ हिल गया।

"किन्तु उसके प्राणों का ग्राहक भी मैं ही हुआ था। बाद में उसके ऊपर विश्वास न होने के कारण ही उस मुकदमे में मुखबिर होकर भी मुझे भाग आना पड़ा था। ये प्रेम के लक्षण हैं?"

माया ने कोई उत्तर नहीं दिया तो नवनीत कहने लगा, "नहीं हैं। लेकिन कह सकती हो, लगाव था। क्यों था, यह प्रश्न हो सकता है। एक प्यार करने वाली सहज सुन्दर पत्नी के होते हुए भी पुरुष क्यों दूसरी स्त्री में आसक्त हो जाता है, यह बात बहुतेरों को आश्चर्य में डाल सकती है। पत्नियों को जो यह बात कदापि समझ में नहीं आती, उसके तो सामाजिक कारण भी हैं। समाज में सेक्स के मामले में जितनी स्वाधीनता पुरुष ने अपने लिए बटोर ली है, स्त्री को उतना ही उसने उससे वंचित रखा है। नारी का यही सामाजिक विद्रोह पीढ़ियों से मन की गहराइयों में उमड़ता-घुमड़ता मानसिक-विद्रोह की शक्ल ले लेता है। किन्तु इसका भी कोई कारण नहीं कि ठीक तरह से समझ जाने पर, फ्रॉयड के नाम का ढोल बजा-बजा कर भी, हम इस मिथ्या मनोभाव पर विजय क्यों न पाएँ?"

"कैसे पाई जाए विजय?"

"व्यक्तित्व की प्रकृति को ठीक तरह से समझ करके। हर व्यक्ति का व्यक्तित्व अलग होता है और अलग होती हैं उसकी आकांक्षाएँ-वासनाएँ। इसके अतिरिक्त सामाजिक रूढ़ियाँ भी हैं, जिन पर विचार करना होता है। हमारी ही बात ले लो। जब हम दोनों को एक रस्सी में बाँध दिया गया था तो हमारे लिए वह रस्सी एक खेल से अधिक क्या थी? वह कुछ थी भी, इसका ही एहसास कब हुआ हमें? मेरे पिता थे, मुझे कुछ भी अनुभव नहीं कि उनका होना कैसा होता है। एकाएक वे नहीं रहे, तब भी कोई बात नहीं हुई और मैं जान भी नहीं पाया कि उनका न होना क्या होता है? और यह तो तुम स्वीकार करोगी

न माया, कि एक बच्चे के जीवन में पिता का होना-न होना कुछ तो अर्थ रखता ही है ?"

"क्यों नहीं रखता ? मेरे पिता का मेरे जीवन में जो स्थान रहा है, वह मैं ही जानती हूँ।"

"आज मैं भी जानता हूँ माया। किन्तु उस समय भी हम किसी रस्सी में आबद्ध थे, और उस रस्सी में कुछ अहमियत भी थी, यह हम कहाँ जानते थे तब ? तुम जान गई होओ तो नहीं कह सकता, मैं तो तब कुछ नहीं जानता था भई !"

माया मुस्करा कर रह गई। उसने कोई उत्तर नहीं दिया तो नवनीत ही कहने लगा, "चाहे कोई शारीरिक या मानसिक अपेक्षा न हो, किन्तु कॉलेज का वातावरण, और कॉलेज ही का क्यों, आज की सारी सभ्यता ही क्या कई तरह की नई मिथ्या-भूखों की जननी नहीं है ? पहली बार तम्बाकू की गंध और स्वाद दोनों उसके प्रति वितृष्णा ही पैदा करते हैं, पर कुछ ही समय में मनुष्य से वह ऐसी चिपकती है कि अन्य कोई वस्तु सामने टिक ही नहीं पाती।"

मुस्करा कर माया ने कहा, "और इस चिपकी रहने वाली सौत से पत्नी भी डाह नहीं करती।"

"पश्चिम में तो स्त्रियों से भी तम्बाकू इसी तरह चिपट जाती है न।" नवनीत हँसा।

"तम्बाकू स्त्रीलिंग है, इसलिए शायद पुरुष उसमें कोई विपत्ति नहीं देखता।"

नवनीत ने माया के गाल पर अँगुली से टिकोरी मारते हुए कहा, "कॉलेज के उस रंगीन वातावरण में शर्ली के साथ ही अगर तुम भी होतीं माया, तो कसम तुम्हारी, ट्रम्प कार्ड तुम्हारे हाथ रहता और शर्ली बेचारी चिलम ही भरती रह जाती।"

"और यही क्या पता कि चिलम पीने वालों में तुम्हारे साथ ही कितने न चेहरे आगे बढ़ जाते ?" माया के चेहरे पर शरारत भरा हास्य छा गया।

"लेकिन तभी बँधी हुई रस्सी यदि हाथ न आ जाती तो क्या गला न घुटने लग जाता ?"

"लखनऊ में तो मैं साथ थी। तब भी वह रस्सी तुम्हें पकड़ाई तो नहीं दी।"

"तुमने कभी खींचा ही नहीं उसे। ढीली जो पड़ी रही वह हमेशा।" फिर उसने एक लंबी साँस लेकर कहा, "हमारा-तुम्हारा जब सम्बन्ध हुआ माया, तो उमर का बहाव किनारों के भीतर एकरस बढ़ता चला जा रहा था। जब यौवन की बाढ़ आई तो सपाट-किनारे मानो कभी थे ही नहीं। तट से दूर खड़े भाड़-फूस भी उसे बाहों में भरने लगे। तुम थीं, मौजूद भी थीं, किन्तु खड़ी हो कर दूसरी बाहों से खींच कर तुमने अपनी ही बाँहों में कभी भरा नहीं। उठ कर यदि बाहें फैला देतीं। कितनी ऊँची हैं तुम्हारी बाहें? वह बाढ़ आप सिमिट कर तुम्हारी बाहों में भर जाती, छिप जाती। मगर तुम तो अनायास बालू के बाँध की तरह खिसक कर चल भी दीं न?"

"ढह गया न किनारा।"

"खिसक गया माया, ढहा नहीं। और खिसक गया तो मेरे पैरों तले जमीन भी खिसक गई। तुम नहीं जानतीं, तुम्हारे चले आने के बाद मेरी कैसी दुरवस्था हो गई थी।"

"क्यों? उसी शाम को तो तुम शर्ली से मिलने के लिए उतावले थे?"

"याद है तुम्हें? पर उसके बाद तो मुझ में घर से बाहर निकलने की भी शक्ति न रही, चाहे तुम विश्वास करो या न करो।"

"तुम कहोगे तो विश्वास क्यों नहीं करूँगी?"

"तीन-चार दिन बाहर नहीं गया माया। दफ्तर भी जब नहीं गया तो शायद चौथे दिन उनका नौकर घर पर आया। मैं तब भी अस्वास्थ्य का बहाना करके टाल गया। उसके बाद अगले हफ्ते जब एकाएक वहाँ पहुँचा तो पता लगा कि जेम्स नामक एक युवक के साथ भीतर कमरे में पढ़ाई चल रही है। आवाज देकर दरवाजा खुलवाया और भीतर पहुँचा तो न तो पढ़ने-लिखने की वहाँ कोई सामग्री थी, न मुद्रा ही। मुझे देख कर दोनों के चेहरे की हवाइयाँ उड़ने लग गईं और मेरे चेहरे पर जरूर क्रोध दिखाई दे गया होगा। इस छोकरे जेम्स से मैं पहले भी एक बार शर्ली के कारण ही उलझ पड़ा था। मुझसे तभी से वह कुछ-कुछ डरता भी था।"

"तुमने शायद उसे पीट दिया था न?"

"किन्तु इस बार नहीं। मेरे तेवर बदलते देख कर ही शर्ली ने उसे बचा लिया। अच्छा हुआ, वही हमारी आखिरी मुलाकात हो गई, जिसमें उसने यह

साबित कर दिया कि इस प्रेम में नाटक की कितनी प्रवंचना थी।"

"लेकिन पूरा किस्सा तो कहा ही नहीं जी तुमने।"

"पूरा किस्सा है ही क्या माया? सुनाने से भी लज्जा लगती है। उसने कहा कि वह भारतीय पुतली नहीं कि पति के धागा हिलाने पर ही हिले-डुले। मैंने कहा कि वह पुतली नहीं पश्चिमी तितली है जो क्षण भर भी टिक कर किसी फूल पर बैठी नहीं रह सकती। उसने कहा कि विवाह भी वह करेगी तो इस शर्त पर कि अपने मित्रों और सम्बन्धों के लिए वह पूर्ण स्वतंत्र रहेगी। मैंने क्रोध में कहा, वह चाहे जिससे शादी करे, मेरे अँगूठे में भी दर्द न होगा। मैंने कहा कि मैं वह ब्राह्मण हूँ जो ऐसी कपटचारिणी को छूने के बाद नहाए बिना साँस लेने में भी तकलीफ महसूस करे। उसने कहा—कहा उसने कि उसकी सौंदर्य-ज्योति पर कई परवाने भेंट चढ़ जाने को चारों ओर मँडरा रहे हैं। मैंने कहा कि उसका सफेद रंग मुझे कोढ़ी जैसा घिनौना लगता है। और यह सुनना था कि वह मुझे नोचने के लिए दौड़ी। वह तो दरवाजा खुला था, मैं भागा वहाँ से। उसके कायर, डरपोक जैसे व्यंग्य-संबोधन भी मुझे न लौटा सके।"

"अच्छा! लेकिन यह तो सभ्य व्यवहार नहीं था जी।"

"जरूर नहीं था। सभ्य व्यवहार का पात्र सभ्य व्यक्ति ही तो होता है। नारी सहज ही सभ्य मानी जाती है, यह मैं जानता हूँ। सामान्य तौर पर वह पुरुष से भी अधिक कोमल, नम्र, सुशील तथा भीरु होती है। लेकिन जब वह यह नहीं होती तो वह असभ्य ही नहीं, जंगली बिल्ली की तरह खूँखार और पशु से भी गई बीती हो जाती है।"

"लेकिन तुमने भी तो उसके अच्छे-खासे संगमर्मरी रंग को कोढ़ी का रंग बता दिया। यह क्या किसी नारी का कम अपमान है?" माया की शिकायत में भी उसके हल्केपन का भाव छिपा नहीं रह सका था, यह नवनीत ने भी अनुभव किया।

नवनीत ने कहा, "माया, तुम नारी हो, इसलिए मैंने तुम्हें उसके उस कथन का उल्लेख नहीं किया जिसने मुझे ऐसी कड़वी बात कहने को विवश किया था। मैंने उससे कहा था कि शर्ली, कितना मूर्ख हूँ मैं कि तुम्हारी इन सब हरकतों से अनजान बने रह कर मैं सोचता था कि तुम मुझसे प्रेम करती हो और यदि मुझसे प्रेम करती हो तो शायद विवाह करने के लिए तैयार भी हो जाओ। लेकिन

तुम्हारे पीछे लगे हुए इन कुत्तों को देख कर मुझे शक होता है कि···और उसने बात पूरी न करने दी मुझे और बोली, तुम उन्हें कुत्ता कहते हो ? अपने को बड़ा तीस-मारखाँ समझते हो नीट—हाँ माया, वह मुझे 'नीट' कह कर ही पुकारती थी, तुम जानती हो यह ? तभी तो मंजरी ने मुझे यही संबोधन दिया था। अब समझा मैं ! —सो कहा उसने, बाहर से तुम जितने 'नीट' हो, मन तुम्हारा उतना ही 'अन-नीट' है। जेम्स ही क्यों, रेडियर, लतीफ, वर्मा—न जाने कितने नाम गिना दिए उसने और कहा कि वे सब उसके मोस्ट इंटिमेट फ्रेंड हैं। मैं उनको कुत्ता कहता हूँ, लेकिन—दैट शी वुड प्रिफर टु स्लीप विद ए डॉग रादर दैन मैरी मी ! —नहीं नहीं, माया, एक स्त्री मन में यह विचार भी ला सकती है, मैं नहीं जानता था।"

"हाँ जी, नारी जब कुपित हो जाती है तो उसकी प्रतिहिंसा की भावना का कहीं कभी छोर नहीं मिल सकता। वह कुछ भी करने को—लेकिन देखो तो, कोई तुम्हें पुकार रहा है क्या ?"

"पुकारने दो जी ! मैं अब किसी की पुकार का गरजमन्द नहीं हूँ। अब मुझे चाहिए ही क्या तुम जो मेरे पास हो। बहारें आ गई हैं न ! क्या चाहिए मुझे अब और ?"

"नवनीत बाबू, नवनीत बाबू ! सो गए क्या ?"

"कौन ? अरे सुरेश साहब ? हाँ, कुछ सोने की चेष्टा कर रहा था भाई। दिल्ली आ गई ?"

"अभी कहाँ है दिल्ली ? देखिए, पहिए में कुछ गड़बड़ी हो गई लगती है। शायद सड़क पर कोई कील चुभ गई और पहिया पंक्चर हो गया। तभी तो मैं कह रहा था, यह गाड़ी क्यों, शराबी की तरह लड़खड़ा रही है ? यह तो अच्छा हुआ कि गाड़ी धीमी चल रही थी, वरना···"

"वरना क्या ?"

"ऐसे मौकों पर उलट भी जाती है गाड़ी।"

"तो क्या अब हम आगे नहीं बढ़ सकते ?" नवनीत ने उठने की चेष्टा करते हुए कहा।

"आप लेटे रहिए न ! क्यों तकलीफ करते हैं ? थोड़ी देर लगेगी। पहिया

बदलना पड़ेगा स्टेपनी है पास में। दस मिनट लगेंगे।" और वह दरवाजा खोल कर बाहर सड़क पर हो लिया।

नवनीत भी लेटा न रहा। उठ कर सीट पर बैठ गया। जंगल था चारों ओर, गाड़ी की हल्की रोशनी ही कुछ दूर तक फैली हुई थी। गहन अंधकार में पवन साँय-साँय करता गाड़ी की खिड़कियों पर टकरा रहा था।

गाड़ी के चारों ओर घूम कर देख आया एक बार सुरेश नारायण। निर्जन सुनसान सड़क वृक्षों की छाया में शांति से सोई हुई थी। हर पहिए को छूकर, दबा कर उसने इतमीनान किया कि सिर्फ आगे के पहिए की ही हवा निकली है। आसपास खोज कर दो-तीन बड़े पत्थर और ढोके भी वह उठा लाया। उन्हें पहियों के पास आड़ के रूप में फँसा कर उसने पीछे लगेज कैरियर खोला तथा अतिरिक्त पहिया निकाल कर जमीन पर पटक कर उसने देखा कि उसमें हवा का पर्याप्त दबाव है या नहीं। फिर वहीं से व्हील-ब्रेस, गाड़ी उठाने का जैक, पेंचकस आदि औजार निकाले, और सिगरेट को मुँह में दबाए-दबाए ही उसने सड़क की ओर बाजू में गाड़ी के नीचे जैक फँसा दिया। नवनीत भीतर बैठा हुआ देखता भर रहा।

रोशनी ऐसी न थी कि सब कुछ साफ दिखाई दे जाता। बैटरी पर अधिक दबाव न पड़े इसलिए हल्की रोशनी भी बन्द कर दी गई थी, किन्तु सुरेश-नारायण की गतिविधि और चीजों की धर-पकड़ की सामान्य-सी आवाज से भी नवनीत सारे व्यापार को इस तरह लक्ष्य कर रहा था मानो सब कुछ दिखाई दे रहा हो। रह-रह कर सुरेश नारायण के मुँह से सिगरेट का सिरा जल कर आकाश के तारों के जमघट में मंगल जैसा दिप उठता था।

नवनीत ने कहा, "आसपास कोई गाँव हो तो बुला लीजिए न किसी को ?"

"कहाँ है आसपास कोई गाँव ? मगर आप बैठे क्यों हैं ? आपकी तबियत भी ठीक नहीं है, लेट जाइए। यह तो मैं ठीक कर लेता हूँ। मोटर वालों के साथ ऐसी छोटी-छोटी मुसीबतें तो अक्सर हुआ ही करती हैं। यह कोई नई बात नहीं है।"

"सड़क पर कोई राहगीर भी दिखाई नहीं देता।"

"अब कहाँ से होगा भाईजान ? साढ़े बारह बजने वाले हैं। राहगीर भी इस वक्त तो कहीं दुबक कर कुछ नींद उतारने की सोचता है।"

हँस कर नवनीत ने कहा, "और हम हैं कि नींद को छुट्टी दिए बैठे हैं। कितनी असुविधा उठा रहे हैं आप मेरे लिए। मैं कभी उऋण नहीं हो सकूंगा आपसे सुरेश साहब।"

"जरूरत क्या है उऋण होने की? थोड़ा ब्याज ही बढ़ने दीजिए न?"

नवनीत ने भी बाहर आने के लिए दरवाजा खोला तो खड़े होकर सुरेश-नारायण ने कहा, "यह नहीं होगा नवनीत बाबू। आप अस्वस्थ हैं, आप बाहर इस ठंडी हवा में नहीं निकल सकते। आपकी सुख-सुविधा और स्वास्थ्य के लिए इस समय मेरी जिम्मेदारी है, और हमारे दल में जिम्मेदारी न निभा पाने का क्या फल मिलता है यह तो शायद आपसे छिपा ही नहीं है। मेरे ऊपर कृपा करके आप भीतर लेटे रहिए।"

हँस कर नवनीत ने पुनः दरवाजा बन्द कर लिया और बोला, "कर्तव्य के प्रति आपकी सजगता अवश्य एक दिन आपको शीघ्र ही अपने दल का अध्यक्ष बना देगी सुरेश साहब।"

हँस कर सुरेश ने कहा, "पर हमारा दल तो अब गोल हो रहा है। तब भी आपकी सदिच्छा के लिए धन्यवाद। अब आप आराम से लेट जाइए एक बार, तो मैं अपना काम शुरू करूँ।"

"क्या करूँ? आपका आदेश ही सही, वरना इस हवा में ताजगी ही कितनी हैं? ठंडक हो, अगहन में गरमी रहती ही कहाँ है? यह जो चंगा दिखाई दे रहा हूँ इतनी-सी देर में सो इस ताजा हवा की वजह से ही समझिए। लेकिन लीजिए साहब, आप कहते हैं तो लेट लेते हैं। आप अपनी जानें।" नवनीत सीट पर आगे सरक गया, पर तब भी लेटा नहीं।

नींद तो काफी ले चुका है वह—लेकिन नींद थी कहाँ? माया क्या सच-मुच ही उसका सिर अपनी गोद में लिए नहीं आ बैठी थी? कौन कह सकता है वह स्वप्न-मात्र था? इतना स्पष्ट, इतना माँसल, इतना स्थूल क्या स्वप्न हो सकता है? माया का कोमल स्पर्श उसके रोम-रोम में अभी भी व्याप्त है, चारों ओर यह उसके शरीर की मलय-गन्ध ही तो छाई हुई है। स्वप्न तो यह है कि सुरेश नारायण ने उस वास्तविकता में नवनीत को सुला दिया है और अब ख्वाब के इन धुंधले रेशों में उसे एक ऐसी छबि आभासित हो रही है मानो कोई व्यक्ति कार का निष्प्राण पहिया बदल रहा है। थोड़े से मनोबल की आवश्यकता

है, यह स्वप्न अभी समाप्त हो सकता है। तब यह कार, यह शीत का मौसम, सब कुछ की यह कुहेलिका एक फूँक मात्र से उड़ जाएगी और माया उसी तरह इठलाती हुई धीर-मन्थर गति से आकर नवनीत के मस्तक को अपनी पृथुल-माँसल जंघा पर रख लेगी। तब वे दोनों इस कार की भंगिमा के स्वप्न के मनोवैज्ञानिक अर्थ की आपस में आलोचना भी कर सकेंगे।

"अरे आप लेटे नहीं ? अभी बैठे हुए ही हैं ? यह तो आपकी बड़ी ज्यादती है नवनीत बाबू। ठंड लग रही है क्या ? एकाएक ही कुछ चमक उठी है। खिड़कियाँ बन्द किए देता हूँ। लीजिए मेरा यह गरमकोट डाल लीजिए बदन पर। ना, आपके पास वाली खिड़की खुली छोड़ देता हूँ, ताकि ताजी हवा आती रहे।" सुरेश नारायण कह रहा था।

"लेकिन ठंड तो बाहर आपको ही मुझसे अधिक लग रही होगी सुरेश बाबू।"

हँस कर सुरेश ने कहा, "पसीने-पसीने हो रहा हूँ। देखिए न ? एक नट जाम हो गया है, खुल ही नहीं पा रहा। जरा ताकत, देहाती-अनगढ़ ताकत माँगता है न ? देखता हूँ, उधर खेत में कुछ रोशनी-सी दिखाई दी थी। शायद कोई मिल जाए।"

"यह गाड़ी इतनी झुकी हुई क्यों है सुरेश साहब ? पहिया नहीं खुला, तब तो अभी आपने जैक भी नहीं लगाया होगा।"

"सड़क जरा सँकरी है, और आने जाने वाले ट्रैफिक के लिए किनारे भी तो लगा रखा है गाड़ी को। पर चिन्ता की बात नहीं है, मैंने पत्थरों का सहारा लगा रखा है। उलटेगी नहीं।"

"उलटेगी नहीं ? मैं तो सोच रहा था कहीं लुढ़क न पड़े। उलट भी सकती है क्या ?"

एक क्षण के लिए सुरेश के मानस में उलझन जैसी छा गई, पर एक तो अँधेरा और दूसरे नवनीत का इधर ध्यान भी नहीं था। वह ऊँचाई की ओर सिर करके लेट गया। पैर उसने खुली खिड़की के बाहर तक फैला दिए। गले तक चादर पड़ी हुई थी, सुरेश का गरम कोट भी उस पर पड़ा हुआ था। सुरेश अपने हृदय की धड़कन दबा कर वहाँ से हट गया था।

निर्द्वन्द्व लेटा हुआ नवनीत इस बार अपनी मनोमय दुनिया में नहीं लौट

सका। उसकी चेतना के कोश बहुत श्राँत हो चुके थे, और विश्रांति चाहते थे। किन्तु प्राचीन-स्मृति और अंतश्चेतना के भी कई कोश अभिव्यक्ति के प्लेटफार्म पर जमा हो गए थे। ट्रेन का कोई पता नहीं था। स्थानाभाव, अनवरत शोर-गुल और भीड़-भड़क्के में कोशों को शांति कहाँ? नवनीत की बहिर्चेतना को सोते देर नहीं हुई कि अंतश्चेतना के क्षेत्रों से भागे हुए शरणार्थी-कोशों का एक नया रेला प्लेटफार्म पर सपनों का नाच दिखाने लगा।

किसी हवाईजहाज में बहुत ऊँचाई पर उड़ रहा है नवनीत मानो। कितने समुद्र, कितने पहाड़, कितनी नदियाँ पार करके उसका यान हवा की लहरों पर थिरक रहा था? अकेला ही नहीं था वह जहाज में। कई चेहरे थे, पर पहचाना एक भी नहीं जा सकता था। पर यह क्या? सभी तो सैनिक वर्दी पहने हुए हैं, वह भी। शस्त्रास्त्र से सज्जित हैं सभी। मानो उसका भी कोई कर्तव्य है, और इसी कर्तव्य-बोध से प्रेरित होकर पास पड़ी हुई एक लम्बी सी वस्तु को उठाता है वह, और नीचे लक्ष्य करके फेंक देता है उसे। बम—बम है वह तो?

मानो एक भयानक उद्घोष हुआ, अवश्य ही बम का धड़ाका रहा होगा वह। इतनी ऊँचाई पर तो खटका ही सुनाई दे सकता है उसका। खिड़की से बाहर सिर निकाल कर देखता है नवनीत, पर वह तो रेलगाड़ी के डिब्बे में लेटा हुआ है। गाड़ी किसी जंगल में खड़ी होगई है। क्या उसका एंजिन खराब हो गया! सिर है उसका अधर लाल की गोद में। और वह सामने की सीट पर, आरती ही तो बैठी है। उधर छोटी-सी सीट पर सिकुड़ कर बैठी हुई, शायद नीलम है। नहीं इधर नहीं देख रही वह, खिड़की के बाहर ही उसका मन और नेत्र लगे हुए हैं। उधर टीकम चन्द, और इस ओर देखती हुई यह मंजरी ही तो है। आरती निहायत मासूम बच्ची ही लगती है बिल्कुल। सभी चेहरे पहचाने जा सकते हैं। पर माया कहाँ है! नहीं वह नहीं दिखाई देती। उसका सिर किसी पुष्ट माँसल जंघा पर नहीं, एक मामूली से तकिये पर है। क्या कहा? तो क्या गाड़ी चलेगी नहीं, क्या कोई दुर्घटना घट गई है! सब लोग क्यों उतरते जा रहे हैं?

चलेगी जरूर। गाड़ी ठीक हो रही है। रेलगाड़ी नहीं, मोटरकार है। ठीक हो रही है। ठक-ठक की ध्वनि जाहिर करती है कि मोटर का सीना अभी

धड़क रहा है, ठीक तरह धड़क रहा है। गाड़ी में कोई नहीं, सब उतर गए हैं। दुर्घटना में फँसना कोई नहीं चाहता यद्यपि देखना सब चाहते हैं। नवनीत देखना नहीं चाहता, इसीलिए लम्बी तान कर सोया हुआ है। गाड़ी ठीक हो जाएगी तो एंजिन आप सीटी मारेगा, गार्ड भी सीटी बजाएगा। हरी झंडी दिखाएगा। यात्री सब दौड़े आकर अपनी-अपनी जगह पर बैठ जाएँगे, और फक-फक करती हुई गाड़ी चल पड़ेगी। फक-फक नहीं, यह ठक-ठक है; रेलगाड़ी नहीं, यह मोटर गाड़ी है; दुरुस्त हो रही है। सामने उधर खड़ी है माया ही तो। नवनीत की राह देखती हुई। गाड़ी ठीक होते ही चल पड़ेंगे दोनों साथ-साथ। अब दिल्ली अधिक दूर नहीं है।

गाड़ी उठ रही है। मोटर नहीं, रेलगाड़ी नहीं, हवाई जहाज जमीन पर से आकाश में उड़ रहा है। कितना ऊँचा! ऊँचा, और ऊँचा, जहाँ से पृथ्वी किसी खिलाड़ी द्वारा अंतरिक्ष में उछाले क्षुद्र कंदुक-सी दिखाई देती है और ऊँचे, और ऊँचे। यह झुकान, ओह, हवाई जहाज चक्कर काट रहा है, कलाबाजियाँ खा रहा है, चील की तरह झपट्टा मार रहा है। मगर कहाँ-कहाँ है हवाई जहाज! यह तो मानो नवनीत स्वयं ही आकाश के चँदोवे से छिटक पड़ा है और खिसकता- उतरता चला आ रहा है नीचे पाताल में। नहीं नितांत हल्का, भारमुक्त हो गया वह। कहीं कोई अवरोध उसे अटका नहीं पाता। वह गिर रहा है। ऊपर बादलों के किले आपस में टकरा रहे हैं। सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी मानो सारा आकाश का पट किसी ने समेट लिया है, और जगह-जगह बिखरे हुए सब नक्षत्र-पिंड मानो उसके झोल में इकट्ठा होकर भयानक गर्जन के साथ आपस में टकरा-टकरा कर चकनाचूर हो रहे हैं। कहाँ—कहाँ है इस समय नवनीत? इन पहाड़ों के भयंकर गर्जन से भरे टकराव में उसे क्या कहीं खोजा जा सकता है! हो क्यों नहीं जाता सब कुछ शेष! क्या जरूरत है कि उसके प्राणों की यह क्षीण चिनगारी इस प्रलय की झंझा में भी चमकती रहे! माया, कहाँ हो तुम! बहारें फिर भी आएँगी, फिर भी आएँगी। क्या कहा, हम तुम जुदा होंगे! नहीं-नहीं, यह नहीं हो सकेगा, नहीं हो सकेगा माया। बहारें फिर भी आएँगी, और हम भी, फिर आएँगे, फिर आएँगे।

किन्तु कहाँ हुआ यह सब कुछ! ऐसा लगा मानो नवनीत बहारों की जगह पहाड़ों से गिरा, और वे सब पहाड़ भड़भड़ा कर मानो उसी पर गिर पड़े।

१५

शुक्ल पक्ष लगा ही लगा था शायद। क्षीण-कला चन्द्र संध्या को शायद कुछ समय के लिए दिखाई दिया हो, पर तभी वह अस्त भी हो गया था। रात के साथ ही साथ नवम्बर की सरदी भी बढ़ गई थी। जिस स्थान पर सुरेश नारायण की केडिलक कार की दुर्घटना घटी है—और दुर्घटना के सिवा उसे कहा ही क्या जा सकता है? सुरेश नारायण कानून का पण्डित है, दुर्घटना किसे कहा जाता है वह खूब अच्छी तरह जानता है, बल्कि जरूरत पड़ने पर कोर्ट तक में वह ऐसा ही प्रमाणित कर सकता है—वह स्थान सड़क का एक अपेक्षाकृत सँकरा भाग है, वहाँ सड़क बाईं ओर मुड़ जाती है। इसके अतिरिक्त वह स्थान कुछ ऊँचाई पर है जहाँ सड़क के दोनों ओर कुछ ढलान हो गया है। किसी अत्यन्त व्यस्त मार्ग पर यह दुर्घटना नहीं हुई, जैसे किसी परमहंस योगी के लिए एकान्त स्थान की अपेक्षा हो, जहाँ कम से कम बाहरी बाधा उपस्थित होकर ध्यान भंग कर सके, तो इससे अधिक उपयुक्त स्थान अन्यत्र नहीं मिलेगा। वृक्ष भी इधर अधिक हैं, जिससे तारों की क्षीण चमक भी नहीं दिखाई देती।

जब कार उलटी तो नवनीत लेटा हुआ था, झुकी हुई बाँईं ओर की खुली खिड़की से उसके पैर बाहर निकले हुए थे। मानसिक स्थिति तथा स्वप्न के कारण नींद भी शायद गहरी नहीं थी, और गाड़ी का संतुलन भी एकाएक नहीं, धीरे-धीरे बिगड़ रहा था। दुर्घटना जब सचमुच घटती है तो वह कार को एक तिनके के समान अतर्कित रूप और अपरिमेय शक्ति से ऐसे उखाड़ देती है कि घटना का पूर्वापर संदर्भ तलाश ही नहीं किया जा सकता। पुरुष की इच्छा-शक्ति उसकी तुलना में बहुत कमजोर प्रमाणित होती है, और व्यक्ति की योजना

और उसके हाथ और भी अशक्त।—नतीजा यह हुआ कि गाड़ी के झुकाव के साथ हर झटके में नवनीत का अवसन्न हल्का शरीर खुली खिड़की की राह बाहर खिसकता जा रहा था, जिसका किसी को पता न था, स्वयं नवनीत को भी नहीं। आखिर एक निश्चित कोण पर जब गाड़ी का झुकाव पहुँच गया और अपनी ही शक्ति से उलट पड़ी तो बाहर फेंका जाकर भी नवनीत पूरा नहीं फिक पाया—यहाँ अवश्य दुर्घटना हुई। जाने कैसे कुछ टेढ़ा भी हो गया था उसका शरीर, और उसका बायाँ पैर तथा पेट के नीचे का हिस्सा गाड़ी की गिरफ्त में आ गए।—पैर की शायद हड्डी चूर-चूर हो गई, और पेट में दरवाजे का कोना घुस गया। नीचे की एकाध पसली भी शायद टूट गई।

नवनीत को चेतना आई भी हो तो वह इतनी क्षणिक रही होगी कि अपनी विभीषिका को वह स्वप्न की विभीषिका से अलग करके देखने का संतुलित विवेक पा ही न सका होगा। और यह आशा भी नहीं की जा सकती कि सुरेश-नारायण के होश-हवास इस काबिल रहे हों कि वह यहाँ ठहर कर किसी प्रकार दुर्घटना को हल्का या गहरा करने में सहायक हो पाता, दुर्घटना का जमा-खर्च प्राप्त करने के लिए भी नहीं।

जितनी हड्डियों को आघात पहुँचा वे शरीर के भीतर थीं, पीड़ा तो उससे बहुत होती है, किन्तु प्राण नहीं छूट जाता।—संज्ञा अवश्य खो जा सकती है। दरवाजे की फाँस के पेट में घुस जाने से रक्त-प्रवाह भी काफी हुआ, चेतना को डूबने में और भी सुगमता हुई। यदि फाँस कुछ और ऊपर की ओर पहुँच कर हृदय को छू सकती तो सब कुछ शीघ्र ही सम्पन्न हो जाता, परन्तु वह नहीं हुआ और कुछ ही देर बाद दरवाजे की फाँस ने ही घाव का रास्ता रोक रक्त का प्रवाह भी रोक दिया था। यदि जीवन सस्ता नहीं है, तो मृत्यु उससे तनिक भी सस्ती नहीं। नवनीत अचेत रहा, किन्तु जीवन और मृत्यु दोनों उसके शरीर पर एक-दूसरे के अधिकार के लिए पैंतरेबाजी करने लगे।

लगभग डेढ़ घण्टे के बाद एक बैलगाड़ी सड़क से गुजर रही थी। नींद उड़ गई तो उन्होंने समझा सबेरा हुआ ही चाहता है, और गाड़ी जोत दी। सबेरे ही उन्हें पलवल पहुँच जाना था, दिन निकलते-निकलते सोनाह तक भी पहुँच गए तो कोई बात नहीं। पलवल के खेत सोनाह के खेतों से मिले हुए ही हैं। बुड्ढा ताऊ गुदड़ी ओढ़े पुआल पर पड़ा था, और बदन पर पिछौड़े को दुहरा करके

भतीजा रह-रह कर बैलों की पूंछ पर हाथ रख देता था। कुछ गरमी लाने के लिए उसने चिलम भी लगा ली थी, जिसके कश से वह गरमी भी प्राप्त कर रहा था और नींद को भी दूर रखता जा रहा था।

मोड़ में जैसे ही गाड़ी घुसी कि अन्धकार में उसने देखा कि उसके बैलों के कान अनायास ही खड़े हो गए हैं। यह धौलिया केरड़ा जरा डरपोक है ही।—कहीं पत्ता खड़का और यह भड़का। कान खड़े करके इस तरह जोत के भीतर घुसने की कोशिश करेगा जैसे कोई शेर ही झपट कर चला आ रहा है। अंधेरे में तो हर काली चीज एक डरावने जानवर का वहम पैदा कर देती है। कहते हैं, पशुओं को हर चीज की गन्ध भी आती है, लेकिन इस धोलिया की तो मानो आँखें भी सूँघती हैं।—और लो, यह तो पेट को जोत से सटाकर आखिर खड़ा ही हो गया। इस तरह देख रहा है बाँई ओर जैसे कोई खतरा इसी ओर से चला आ रहा है।

लड़के ने टिचकारी मार कर उसकी पूंछ पर हाथ रखते हुए कहा, "हँ हँ !"

भीतर से गुदड़ी में से ही बूढ़े ने कहा, "किया हुया रे नरसिंगे ?"

"कुच्छ नेई ताऊ ! ये धौलिया कुछ चमक गिया दिक्खे है।"

"जरा हाक्का कर दे रे। कुच्छ होयगा तो परे को चल्या जायगा।"

नरसिंगे ने जोर की हाँक भारी। एक वृक्ष से कोई पक्षी पंख फड़फड़ा कर उड़ गया, पर धौलिया और भी सिकुड़ कर अड़ गया। नरसिंगे के पूंछ मरोड़ने का कोई असर नहीं हुआ। नरसिंगे ने कहा, "खुसकैट हो गिया है साला।"

बूढ़ा उठ बैठा। इधर-उधर देख कर बोला, "बड़े तड़केई चल निकरे हैं रे। अब्भी तो पौ फटने में भौत देर दिक्खे है।—उतको देख तो रे ?—काला-काला सा कुछ लग्गे है न ?"

"हाँ ताऊ। इत्ता बड़ा तो, पड़ा हुआ हत्थी तो नई है ?—विसकोई देख कर ये धौलिया भड़क्या है ताऊ।—पर नैंक भी तो सुसरा हिलता-डुलता नई।"

"अच्छा ठैर। मैं देक्खूं।"

"ना ताऊ, तू मती ना जाय। दियासलाई बाल कर देख ले पैली न !"

"अच्छा। दे मेरे कूं दियासलाई।" और बूढ़ा नीचे उतर गया, जरा आगे बढ़ते ही बोला, सीत भी अब्भी से कड़ाके की पड़न लग्गई सुसरी।—अरे नरसिंग, आ सुसरी तो कोई मोटर उलटी पड़ी है रे।" उसे देखने के लिए दियासलाई

भी नहीं जलानी पड़ी।

"मोटर ?—अपन गिए थे तबतो नई थी ताऊ।" और बैलों को पुचकारता हुआ नरसिंग भी नीचे उतर गया।

"रात कोई खुसकैट हुई दिक्खे है। राम जाणे, किसी के कुच्छ लग्गी-वग्गी तो नई। सुसरा कोई दिक्खे भी तो नई। और ये टोले-भाटे किसने लाकर रक्खे हैं ?—सुलटणे की कोसिस करी होयगी एकई गुलाँच खाई है सुसरी ने।"

"कोई सराब पीकर चला रिया होगा साला। सड़क से इत्ता बचा कर ढलान में जाए तो छकड़ा गाड़ी भी उलट जाए।"

"अभी तो इत्ते अधर में अटक रई है के थोड़ा-भौत भी झटका लगे तो एक गुलाँची और खा जाए।—चल रे नरसिंगे। तू बैठ गाड़ी में, मैं नाथ पकड़ कर बरद को निकार लेता हूँ।—आगे कुछ हो गिया तो राज-थाणे में कहाँ गव्हा-पुरावा देते फिरेंगे ?—चल भई !"

"ठैर तो ताऊ। जरा दियासलाई दे तो।" नरसिंग जरा पीछे की आर आगे बढ़ गया था।

"किया है रे ?"

"कुच्छ दिक्खे है !—देख तो !"

बूढ़ा आगे बढ़ा, उसने दियासलाई जलाकर देखा, गाड़ी की छत से आधा बाहर निकला एक आदमी बेहोश पड़ा था। वह बोला, "अरे, किसी मोट्यार की ल्हास है रे !"

"सुसरे सराबिन से इत्ता भी नई बना ताऊ, कि बिचारी ल्हास को तो ठिकाने लगा देते। थोड़ा भिनसार होते ही स्यार-कुत्ते और ऊपर से चील-कव्वे चीथ-चीथ कर देंगे।"—बुझती हुई दियासलाई की रोशनी में वह थोड़ा और झुक गया।

बूढ़ा बोला, "किसकी राँड मरे, किसके सुपने आए ! तुरत-फुरत चल दें रे नरसिंग, हिंया से। मौत-फौत का केस दिक्खे है। जमाना भौत खराब है। बैठे रिए तो पुलिस-थाणे फँदे-फँदे फिरणा होयगा। बढ़े-बूढ़े की सीख मानो तो घोड़े के पिछाड़ी और राज के अगाड़ी कब्भी नई जाय।"

"एक तुल्ली और रगड़ तो ताऊ।"

"अरे क्यूँ खराब कराय है तुल्लिन कूँ ?—लड़ाई के इस दईमारे राज में

दियासलाई कित्ती मुसकिल से मिले है—?"

"तू रगड़ तो सही ताऊ। मुझे लगे है कि ल्हास में कुछ साँस है।"

"छाया-वाया होयगी किसी परेत-वरेत की। बच्चा है, तू किया जाणे ? रात के पिछले पैर में सुरग-लोग की आतमा भी मिरत लोक में फिर्या करे है। विस पचड़ा में मती ना पड़।"

"पर एक बार देख तो लेवें ताऊ। ल्हास ई होयगी तो कौन सुसरी हमको लील ई जाएगी। और मती ना करे, जीव अगर थोड़ा-भौत भी हुआ तो मिनख की खिजमत करना तो अपण सब का फरज है ताऊ।"

लड़का हठी है। ताऊ की सीख नहीं मानता। चढ़ता हुआ रक्त जो है। बड़े ही बेमन से बूढ़े ने एक दियासलाई और जलाई। लड़के ने उल्लास के साथ कहा, "देख ताऊ! ए तो साँस लेवे है। मैंने तो तब्भी कई थी न! बेहोस हो रिया है। देख, इधर हिंया तो खून भी टपक्या है। देख ना, या फाटक की कोर धँस गई है बिचारे के पेट में।" और दियासलाई बुझ गई।

बूढ़े ने कहा, "मरा नई तो अब मर जायगा। हिंया ठैर कर अपण भी किया कर लेंगे। इस्से तो भली, जित्ता जल्दी चलें हिंया से और पलवल पौंच कर हुवाँ से किसी डाग्दर-फाग्दर को खबर कर दें।"

लड़के ने जैसे सुना ही नहीं। बोला, "अपणी बाल्टी में पाणी है न ताऊ। —होस मैं लाणे की कोसिस तो करें। बरदों को खोल देता हूँ मैं।" और बूढ़े की कुछ भी परवाह न करते हुए वह सड़क पर आया, बैलों को खोल कर गाड़ी की जोत से बाँध दिया। इतनी देर वहाँ खड़े रहने और मालिकों के आने-जाने से बैल भी मानो आश्वस्त हो चले थे। नरसिंग ने जोत से लटकती हुई पानी की बाल्टी ले ली, और कार के पास आकर बेहोश नवनीत के मुँह पर पानी के छींटे मारे। बूढ़े ने दो-एक दियासलाइयाँ और खर्च कीं, लेकिन अंधेरे से वे लोग इतने अभ्यस्त हो गये थे कि अब और उसकी आवश्यकता नहीं रह गई।

कुछ ही देर के उपचार से नवनीत की साँस तेजी से चलने लगी। चेत के साथ ही पीड़ा की चेतना भी उग्र हो जाती है। कुछ ही क्षणों बाद उसने गर्दन हिलाई, और दाहिना हाथ छाती पर रख दिया तो उसके अधरों से निकला, "ओह!—क्या होगया, हाय माँ।"

बूढ़े ने कहा, "बेट्टी के बाप, और होयगी कहा ?—तिहारी या टमटमिया

पिलपिली होय गई है, कलाबाजी खाय गई, पर रामजी की किरपा से तुम जिन्दा बच निकरे हो।"

"जिन्दा ?—लगता तो ऐसा ही है।—सुरेश नारायण का क्या हुआ भाई ?"

"सुरेश नराण ?—ओ भी टमटमिया में था किया ?—जरूर टें बोल गिया होगा तब तो ! हियाँ को कहीं दिक्खेई नई भई !"—एक बार और खोज-तलाश हुई। दियासलाइयाँ जलीं और बुझीं, लेकिन और कोई जीवित या मृत दिखाई नहीं दिया।

"तुमरा ए सुरेस नराण तो भाग का कलन्दर लगे है बीर। कहीं दिक्खेई नई। बच निकरा है।" बूढ़े ने कहा, मानो सुरेश ने जानबूझ कर इसे दुर्घटना में फँसा दिया और आप साफ बच निकला।

नवनीत ने कहा, "चलो अच्छा हुआ। आसपास कहीं मदद लेने गया होगा।"

नरसिंग ने कहा, "तुमको खींचके निकारने की कोसिस करें किया ?"

नवनीत ने सिर हिलाकर कहा, "खींचोगे तो सारा ही पेट चिर जाएगा भाई।—यह इधर का पैर भी, पता नहीं है, भी कि नहीं। ओ बाप, बहुत दर्द है भाई। गाड़ी को थोड़ा ऊपर उठा सकोगे इधर से ?"

लड़का कोशिश करने के लिए आगे बढ़ा तो बूढ़े ने कहा, "हाड़-माँस के आदमी से ए लोहे का लौंदा उठे है किया ?—और फिर कित्ते अधर में अटक रई है सुसरी ?—जरा इतके-उतके से नैंक हिली कि एक और गुलाँच खा जाएगी दारी।—तब तुम्हारे हाड़-माँस किया बचेंगे ?"

नवनीत ने कहा, "गाड़ी के आसपास कहीं जैक होगा। इधर लाकर लगा दो और कुछ ही गाड़ी उठ जाए तो शायद निकल आने की गुंजायश हो जायगी।"

"आ जैक का बला होवे है बाबू सा'ब ? गाँव के गँवार हम कहा जाने—"

"लोहे का एक औजार होता है भाई। जरा-सा पेंच घुमाने से उसे ऊँचा-नीचा किया जा सकता है। इस गाड़ी में भी था। जरा देखो न, भीतर या बाहर जरूर मिल जाएगा।"

"भित्तर ?—लोहे के सिकंजे में फंस कर भित्तर से कौन निकर सके है ?" बूढ़े ने कहा, किन्तु इधर नरसिंग गाड़ी के चारों ओर चक्कर लगा आया। पीछे का

लगेज केरियर खुला पड़ा था। नवनीत के कथनानुसार वह वहाँ से एक-एक कर कभी कोई हैंडल, कभी पेंचकस लाकर नवनीत को बताने लगा। आखिर बूढ़े को ही पत्थरों के बीच पड़ा हुआ जैक मिल गया। नवनीत ने इशारे से ही बता दिया और नीचे की जमीन को जरा समतल करके वहाँ जेक रख दिया गया तो उसने बताया कि किस तरह उसका पेंच फिराया जाए ताकि गाड़ी का वह हिस्सा ऊपर उठ जाए। गाड़ी कहीं एक करवट और न ले बैठे, इसलिए दूसरी ओर कुछ पत्थरों का सहारा भी लगा दिया गया।

कुछ ही प्रयत्न से गाड़ी इतनी ऊँची उठ गई कि नवनीत का शरीर बिना उससे रगड़ खाए बाहर निकाला जा सके। जैसे-जैसे गाड़ी उठती गई, उसकी पीड़ा भी बढ़ती गई। पेट में फँसा दरवाजे का हिस्सा शरीर के हिस्से से रगड़ा तो रहा था किन्तु खुले हुए घाव के लिए ढक्कन का काम भी वही दे रहा था। उसके ऊपर हटते ही घाव भी खुलने लगा और उसमें से फिर रक्त-प्रवाह चल निकला। —खैर, बायाँ हाथ तो बच गया। दब जरूर गया था, पर उसे हिलाया-डुलाया जा सकता है। अधिक दर्द भी नहीं करता। किन्तु बायाँ पैर?—वहाँ तो मानो भीतर पिघली हुई गरम आग का लावा भर गया लगता है। जरा-सी हरकत से सारे बदन में सुइयाँ चल जाती है। जरूर हड्डी चूर हो गई है।

नवनीत के बदन की शाल दरवाजे में उलझ कर आधी फट गई थी, पर उसका आधा भाग उसके दाहिने पैर में लिपटा हुआ था। शायद शाल ओढ़े होने की वजह से ही वह फँस कर भीतर रह गया, वरना बाहर सरलता से फेंका जाता। उसने इशारा किया कि शाल फाड़ ली जाए, और पेट के खुले हुए स्थान पर कस कर लपेट दी जाए ताकि रक्त अधिक न बह सके। दोनों के प्रयत्नों में नवनीत ने भी योग दिया और इसके साथ ही दोनों ने आहिस्ता से उसे उठा कर गाड़ी की छाया से दूर एक साफ जगह पर लिटा दिया।

लड़के और बूढ़े ने सुझाया कि नवनीत गाड़ी में लेट जाए तो वे उसे पलवल पहुँचा देंगे। वहाँ अस्पताल भी है और पुलिस-थाना भी। नवनीत ने स्वीकार नहीं किया। एक तो बैलगाड़ी के सफर से उसका खूब परिचय है, उसके लड़खड़ाते पाँव के लिए हर हचकोला मौत के समान दर्दनाक होगा, और उसकी शिथिल हड्डियाँ भीतर ही भीतर बिखर जाएँगी। दूसरे, उसे उसके साथी सुरेश नारायण की भी प्रतीक्षा करनी है, जो डॉक्टरी और दूसरे प्रकार की सहायता लेकर

पहुँच ही रहा होगा। वह लौट कर आए और उसे न पाए तो क्या हालत होगी उसकी ? हाँ, पलवल पहुँच कर वे चाहें तो वहाँ से जिस तरह की भी हो सके मदद भिजवाने की व्यवस्था कर दें ताकि सुरेश नारायण को भी उसका लाभ पहुँच जाएगा और यदि वह न आ पाया तब तक तो यही मदद उसका उद्धार कर सकेगी। लड़के ने अपना पिछौड़ा नवनीत पर ठंड से हिफाजत के लिए डाल देने का प्रस्ताव भी किया तो बूढ़े ने कहा कि क्या नवनीत की जगह वह मरना चाहता है ? सुन कर नवनीत ने भी इनकार कर दिया। कुछ देर बाद जब वहाँ करने को और कुछ नहीं रह गया तो गाड़ी जोत कर दोनों वहाँ से रवाना हो गये। गाड़ी की गड़गड़ाहट रात के सूनेपन को भेद कर बहुत देर तक सुनाई देती रही।

सो, हकीकत यह है कि नवनीत अतीत की किसी मनोमय कुहेलिका में माया के साथ अपने कृत्याकृत्य की आलोचना में व्यस्त नहीं है, प्रत्युत किसी दुर्घटना का नायक होकर इस भयानक ठंडी रात की निर्जनता में अवश असहाय मौत की घड़ियाँ गिन रहा है। यहाँ खुले में हवा की मार सीधी पड़ती है, जो हड्डियों के जोड़-जोड़ को कँपा देती है। नवनीत को किंचित हँसी आई, दुर्घटना ने उसकी हड्डियों को ऐसा बिलो दिया है कि यह पराक्रांत प्रकंप पवन भी उन्हें नहीं हिला सकता। शरीर की शारी शक्ति लगाने से अगर पैर में कुछ हरकत करता है वह, तो मानो वह दहकती हुई पिघली आग सारे बदन को छू देती है। वहाँ यह ठंडी हवा शायद भाप बनकर रह जाती हो। पेट का वह पिंजरा टूट कर ही तो मानो पक्षी को कैद कर लाया है।

—जा रहा था न वह दिल्ली, नई दिल्ली ! माया उसकी प्रतीक्षा कर रही होगी। सुरेश कहीं वहीं तो सीधा खबर देने नहीं चला गया ! हो सकता है उसे कहीं कुछ भी चोट न आई हो। उसका कांट भी तो नहीं है, और सवारी भी मिल ही सकती है उसे। नवनीत को क्या पता ? चलता हुआ रास्ता है। वह तो अचेत था न ! तब तो माया और हर तरह की सहायता आती ही होगी। उसे प्रतीक्षा करनी ही है।

किन्तु वे आ पाएँ, उसके पहले ही यदि नवनीत का अन्त आ पहुँचे ! या उसका अन्त आए उसके पहले ही सूँघता हुआ यदि सियारों का दल आ पहुँचे और उसे रक्तप्लुत-असमर्थ पाकर उस पर टूट पड़े तो ? माटी खाय जनावराँ

महामहोच्छब होय ! माटी नहीं, जीवित मांस—शायद, उसकी ग्रांतरिक गरमी में तपाया हुग्रा जीवित मांस ग्रौर भी ग्रधिक स्वादिष्ट लगे। मगर रक्त का स्वाद उसे मालूम है—नहीं, वह शुद्ध शाकाहारी है, शराब पीता है तो क्या हुग्रा ? मांसभक्षी न सही, रक्तपायी है क्या वह ? रक्त ग्रौर शराब एक नहीं होता। हाला ग्रौर हल-जहर ग्रौर रक्त भी एक नहीं होते । रक्त पीना पड़ा है उसे ग्रपना ही, जब कभी किसी कड़े ब्रश से साफ करते समय रगड़ से मसूढ़े छिल जाते थे। शराब का कहाँ है वैसा स्वाद !—लेकिन भूखे ग्रौर प्यासे सियार जब उसकी बोटियाँ नोचने लगेंगे, उसके हाथों में इतनी शक्ति भी नहीं रहेगी कि उन्हें निवारित कर सकें—कोई दुर्विनीत कौग्रा—नवनीत के साथ दुर्विनीत ही तो होगा वह?—ग्रगर उसकी ग्रांख ही झटक ले जाए ? माया तब ग्राकर उसे देखेगी तो भय के मारे क्या चीख न पड़ेगी ! शायद बेहोश हो जाए।—नहीं, नवनीत को तब तक तो ग्रपने ग्राप को सुरक्षित रखना है । ग्रपने ग्राप वह कुछ नहीं, वह है माया की धरोहर। एक बार वह ग्रा जाए, तो वह जाने उसकी ग्रमानत जाने। वह निश्चिन्त हो जाएगा।

गनीमत है कि उसकी गर्दन सही-सलामत है, इच्छानुसार उसे मोड़ कर वह इधर-उधर देख सकता है। ऊपर सारा ग्राकाश तारों से भरा पड़ा है, जिधर दृष्टि टिक जाए, वहीं प्रकाश की एक चिनगारी दिप उठती है । ग्रंधेरी रात, खुला साफ ग्रासमान, यही तो तारों के चमकने का ग्रवसर है। दृष्टि की सीमा से परे भी, तारे ही तारे, सारा ही ग्रंतरिक्ष इस एक ही तत्व से भरा पड़ा है—शक्ति ग्रौर तत्व—शक्ति या ऊर्जा ही का तो प्रमाण है इनकी यह दीप्ति की यह क्षीणता या तीव्रता ! जितना दूर उतनी ही उसकी दीप्ति क्षीण,—एक लाख छयासी हजार दो सौ बयासी मील प्रति सैकिंड चल कर जिसे इन ग्रांखों तक पहुँचने में ग्ररबों वर्ष लग जाते हैं—एक प्रकाश-वर्ष यानी पाँच हजार ग्राठ सौ ग्रस्सी ग्ररब मील। यह ध्रुव नक्षत्र ही यहाँ से ग्राठ सौ से ग्रधिक प्रकाश-वर्ष दूर है। ग्रौर पल्सेटिंग स्टार है न यह तो। रक्त की जगह प्रकाश से भरी नाड़ी की तरह फुदकता हुग्रा खागौलिक दूरियाँ—कल्पना करने मात्र से सिर चक्कर खाने लगता है न । सूर्य का यह निकटतम पड़ोसी ग्राल्फा सेंटारी सवा चार प्रकाश-वर्ष यानी मीलों में पच्चीस के ग्रंक के ग्रागे बारह शून्य वाली संख्या इतना दूर है।

सवा चार प्रकाश-वर्ष हो या चार दशमलव तीन, ये स्थानीय दूरियाँ क्या वस्तु के अवधारण का एक साधन भर नहीं है ! समय के चौथे आयाम का एक सीमित अहसास भर।—अस्तित्व का अर्थ इस अंतरिक्ष में गति ही तो है, और चरम-गति है यहाँ पर प्रकाश की। दूरी का तात्पर्य है प्रकाश की दो अवस्थाओं के बीच का अन्तर, किन्तु समय का तात्पर्य भी तो यही है। प्रकाश की दो अवस्थाओं के बीच का अन्तर। फर्क है तो इतना ही कि पहली दशा में वही प्रकाश उभयनिष्ठ है, जबकि दूसरी अवस्था में पृथक-पृथक। प्रकाश का कण जिस व्यवधान में एक लाख छयासी हजार दो सौ बयासी मील पहुँच जाए उसे तो एक सैकिंड के नाम से पुकार लो, और इस परिमाण के अवकाश में प्रकाश जितनी दूरी तय कर ले उसे नाम दे लो एक लाख छयासी हजार दो सौ बयासी मील का। यह क्षण और कण क्या अन्योन्य नहीं हुआ !

चरम है न प्रकाश की गति इस अंतरिक्ष में। जब समय जम कर केवल मात्र 'क्षण' बनकर रह जाता है, और स्थान सिमिट कर एक बिन्दु भर, केवल एक कण।—यदि कोई प्रकाश की गति से भागकर इस आलफा सेंटारी का एक चक्कर लगा आये तो ! क्या सचमुच उसके लिए यह यात्रा एक क्षण भर की ही होगी, जबकि इस पृथिवी पर उसके सगोत्रीय साढ़े आठ वर्ष बूढ़े हो चुकेंगे ! समय के बाहर, काल के बाहर तब मृत्यु क्या है !

यह सप्तर्षि-मंडल क्षितिज से ऊपर उठ आया है। तो क्या अभी दो ही बजे हैं !—नवनीत को करना ही क्या है ! सवेरा होने तक तो उसे चील-कौए का भय नहीं है । ठंड ! यही विडम्बना है—भीतर आग और बाहर शीत। क्या इतने सारे तारे मिलकर भी उसकी शीत कुछ कम कर सकते हैं !

वह सिरिअस ही तो है, सबसे अधिक चमकीला तारा, वेद में वर्णित शुनः-शीर या श्वास या व्याध ! आकाशगंगा के दूसरे तट पर वह रहा लघु-श्वान प्रश्वन, प्रोसिअन। जिस ओर यह श्वान लक्ष्य किए है वह है ओरिअन या अग्रहायण-राशि। इसी को देख कर तो पुष्पदन्त ने गाया था—

प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वाम् दुहितरम्
गतं रोहिद्‌भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं
त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः।

ग्रोरिग्रन के पेट में खड़े वे तीन तारे ही तो हरिणी हैं, रोरुद्यमान भय से दुबकी हुई हरिणी। क्रोध से लाल यह ग्रार्द्रा नक्षत्र सचमुच ही तो दैत्य है, जिसके पेट में सूर्य के साथ इस पृथिवी का सारा ही क्रांति-वृत्त समा जाए। वृष-राशि के उस रोहिणी नक्षत्र की छाया में खड़ी छह बहिनों वाली उस कृत्तिका को तो कहीं हरिणी नहीं कहा गया है ? छह नहीं, दृष्टि-शक्ति प्रबल हो तो सात से भी ग्रधिक बहिनें गिनी जा सकती हैं उस क्षेत्र में। ग्रोरिग्रन के पेट में हरिणी के नीचे रुई के फाहे जैसा प्रकाश का वह गाला है न, वह है एक नीहारिका यहाँ से ग्रठारह सौ प्रकाश-वर्ष दूर, रजकण ग्रौर गैसकणों का एक विपुल ग्रम्बार। इन्हीं से तो नए नक्षत्रों का निर्माण होता है। नहीं, खागोलिक पैमाने पर यह दूर नहीं है, हमारी ग्राकाशगंगा गैलेक्सी का ही तो यह भाग है। लेकिन हमारी जैसी ही यह दूसरी गैलैक्सी, पड़ोसिन ही कहना पड़ेगा इसे भी, यह देवयानी या एण्ड्रोमिडा गैलैक्सी हमसे बीस लाख प्रकाश-वर्ष दूर, जबकि प्रकाश एक सैकिण्ड में—

घबरा उठीं न इन साँस रोकने वाली संख्याग्रों से ? खागोलिक-तथ्यों का यही चमत्कार है माया। इसी पृष्ठभूमि में सोचो, यह नवनीत ग्रब ग्रौर ग्रधिक जीवित न रह कर ग्राज रात शेष होने के पहले ही शेष हो जाए तो नीलाकाश में फैली इन ग्रनंत-ग्रनंत सृष्टियों में कौनसा व्यक्तिक्रम हो जाएगा ? कुछ नहीं न। तब इस क्षुद्रातिक्षुद्र जीनन की खंडाणु-क्षणता को ही पकड़ कर क्यों बैठे रहें हम ? ग्रौर उसके हाथ से निकल जाने पर कोई शोक-संतप्त भी क्यों हों ? कहां हो तुम ? कहां हूँ मैं ? कहीं हैं भी हम ? कहीं हम सब इस ग्रोरिग्रन की महा-काय निहारिका की वायवीय ग्रनुभूति मात्र तो नहीं हैं ? यह शरीर क्या उसी ग्रनुभूति का सिकुड़ता, पथ राता, निबिड़ाता जारहा जड़ बना हुग्रा, ग्रात्मा से पृथक निर्जीव या निरात्म पिंड मात्र तो नहीं है ?

कुछ कहना चाहती हो माया ? कहो न। दो बार कान के पास मुँह ले जाकर भी तुमने कुछ कहा नहीं।—यों फूंक—नहीं माया, कान में गुदगुदाती चलती है भाई। मानो न—ग्रोह, तो कुत्ता नहीं सियार था। भाग गया है—पर कुछ देर बाद फिर ग्राएगा तो ? इस बार ग्रौर दो-चार साथ होंगे उसके।—माया, क्या तुम्हें दिखाई नहीं देता ? यहाँ, यहाँ पड़ा हूँ मैं इधर।—देखो। नवनीत ने पुकारने का प्रयत्न किया, पर उसके ग्रोठ केवल काँप कर ही रह गये।

तो क्या उसकी चेतना क्षीण होती जा रही है ? खोजती हुई माया ग्रा जाए तब तक भी क्या वह जीवित नहीं रह सकेगा ! रात की निबिड़ता में जमीन सूँघते घूमने वाले इन सियार-लोमड़ियों से कौन बचाएगा उसे !—नहीं, जब तक होश है, तब तक किसी तरह ग्राड़वाले किसी सुरक्षित स्थान तक पहुँच जाना चाहिए उसे। इधर झाड़ियाँ घनी दीखती हैं, यदि वहाँ तक पहुँचा जा सके तो सियार सरलता से उसे नहीं पा सकेंगे। तीर की तरह चुभनेवाली इस हवा से भी कुछ रक्षा हो जाएगी।—बहुत दूर कहाँ है ! ढूँढ़ क्यों नहीं सकेगा कोई उसे ? सुरेश बाबू ! ना ना, यह उसके मन का वहम मात्र है। नवनीत से वह दुश्मनी क्यों करेगा ! यह भी कोई तर्क है कि दुर्घटना में वह क्यों नहीं फँस गया ? फिर दुर्घटना ही क्या ? घटाए वह पर क्यों ! ग्राखिर गाड़ी तो उसी की है। नहीं-नहीं ऐसे विचारों को मन में जगह देने से मनुष्यता के ऊपर से विश्वास हटने लगता है। नवनीत को तो ग्रभी ग्रपने ऊपर विश्वास है, माया के ऊपर विश्वास है, मनुष्यता के ऊपर विश्वास है। बस, कुछ प्रयत्न करके वह जरा ग्रागे उस ग्रोर सरक भर जाए।

जमीन सूखी है, पर कंकर-पत्थर तो हैं ही, कील-काँटा भी हो सकता है। बायाँ हाथ दर्द तो कर रहा है, पर दोनों हाथों को शरीर का वजन उठाने के लिए जमीन पर टिकाया जा सकता है। सो भी ठीक, पर पेट ग्रौर पैर ? जरा-सी हरकत होते ही पेट की ग्रँतड़ियाँ मानो पट्टी के बंधन से खिसक पड़ना चाहती हैं ! ग्रौर पैर ? हिलाने की इच्छा करने से ही मानो बिच्छुग्रों की फौज दौड़ पड़ती है भीतर नसों में। लेकिन चलना तो पड़ेगा ही नवनीत ! उसने इच्छा-शक्ति को केन्द्रित किया। दाहिने पैर की एड़ी को जमीन पर सख्त करते हुए उसने पुट्ठों की रगों तथा शरीर के समस्त शेष भाग को ढीला किया ग्रौर एड़ी को धक्का दिया। सिर की दिशा में वह एक इंच खिसक जरूर गया, किन्तु इस एक ही क्षणांश में भयंकर भूचाल से मानो पृथ्वी ग्रौर ग्राकाश एकमेक हो गए। ग्राँखें के सामने ग्रँधेरा छा गया, चेतना मानो ग्राँधी के बबूले में उठ कर गायब होने लग गई। ग्रौर पीड़ा ? मानो मानपुर का वह तालाब ग्रागे से भर कर ग्रपना बाँध तोड़ बह चला हो !

—पीड़ा का क्षेत्र यह शरीर—जीव का समय ग्रौर स्थान में विचरण सहज करने के लिए ही तो शरीर को उसका बड़ा ही उपयुक्त वाहन करार दिया जाता

है, जिसे विकास ने लाखों-करोड़ों वर्षों के प्रयोग के उपरान्त इतना सुचारु और समर्थ बनाया है ! विश्वास करने योग्य है यह तथ्य क्या ? कितनी बड़ी दुर्दमनीय कैद है यह ? किस बुरी तरह फँसा हुआ है जीव इसके शिकंजों में ? शरीर जीव का वाहन है, पर जीव ही को क्या शरीर की बेगार नहीं ढोनी पड़ती अपनी पीठ पर ? शायद इसीलिए तो नहीं कहीं शरीर को आत्मा का बंधन कहा गया है ? कौन कहता है कि ये आँखें देखने के लिए बनी हैं ? सच तो यही है कि आँखों से दृष्टि को कैद कर दिया गया है प्रतिबद्ध कर दिया है उसे, कि प्रकाश के बाहर और एक दूरी के बाद कुछ न देखा जा सके। आँखें बन्द कर लो तो कहाँ नहीं पहुँच जाती दृष्टि ? कितना घना अंधकार नहीं उसके स्पर्श मात्र से प्रज्वल-प्रकाशपुञ्ज बन जाता ? विज्ञान कहता है न कि प्रकाश की अमुक दीर्घता से पूर्व और परे की तरंगें मानवीय आँखों को नहीं दिखाई दे सकतीं। कानों के लिए भी तो ध्वनि-तरंगों की ऐसी ही एक सीमा है माया ! तुम्हें नहीं लगता ऐसा कि मानो शक्ति के अगाध समुद्र में से इन्द्रियों की इन छोटी छोटी-सी सीपियों में दो-दो बूँद भर कर किसी स्वार्थी ने एक जगह रख दिया और कह दिया "लो मनुष्य तैयार है !" और मनुष्य समझ बैठता है कि मेरे जैसी अनन्त सम्भावना-क्षमता वाला कोई है ही नहीं !

कौन स्वार्थी है वह जिसने इस तरह बाँध दिया है मनुष्य को ? क्यों बाँध दिया है इस तरह उसे ? क्या स्वार्थ सिद्ध होता है इससे उस स्वार्थी का ? इस तरह टूट कर, क्षत-विक्षत हो कर भी क्यों बाँधे हुए है यह शरीर इस उन्मुक्त पंछी को ? माया, शरीर का यह वाहन तो सचमुच एक बंधन है, जो उसे एक ही लीक पर धकेलता जाता है। स्थान में उसकी गति कुछ मुक्त हो भी, समय में तो उसे उसी ढलान की दिशा और मार्ग पर अग्रसर होना होता है जिसके आगे मौत का खड्डा मुँह बाए उसे लील लेने के लिए सन्नद्ध है। और तब भी क्या यह खड्डा केवल शरीर ही के लिए नहीं है ? तब तो शरीर की कैद से मुक्त होकर यह पंछी समय के क्षेत्र में भी आगे-पीछे, ऊपर-नीचे मुक्त विहार कर सकता है न ! नहीं क्या ? अरे देखो न, मनसाराम तो शरीर को यहीं पड़ा छोड़ कर पीछे अतीत में निर्बाध जाता ही रहता है। कहा करो उसे स्मृति तुम। नाम से क्या आता-जाता है !

क्यों करता है फिर तू ही इस पिंजरे की इतनी परवाह नवनीत ? यों पड़े

रहने से आग तो झुलसाती ही रहेगी, और न जीवन मिलेगा, न मौत ! दाहिने पैर को जरा धीरे-से जरा और धीरे—हाँ, यह ठीक है। ओह, पसीना तो आएगा ही भाई ! यह नामाकूल बायाँ पैर, जैसे दाहिने पैर की शैया पर सो गया हो। एड़ी से नहीं, इस दाहिने पैर को अब धीरे-धीरे घुटने की जगह से ऊपर खींचो नवनीत, बहुत धीरे-धीरे ! पलंग पर लेटे बादशाह सलामत की टाँग ठहरी। हिल गई कहीं तो कहर बरपा हो जाएगा ! हाँ ठीक है, दर्द तो होगा ही। पर सहोगे नहीं तो करोगे क्या ? थम्बे जैसा टिक गया न दाहिना पैर जमीन पर ! अब जरा इस पर दबाव डालकर घुटने को ढीला छोड़ दो। हाँ, इस तरह··· ओफ्···फ्···फ्···! हिम्मत रखो नवनीत ! देखो न, पंजों पर आराम से लेटे बाएँ पैर को कितना मामूली-सा पता लगा है, और कितना, आठ इंच खिसक आए हो मिस्टर ! महीन रेत है नीचे। बरसात में कोई नाली बहती होगी इधर से। रेत ठंडी न होगी तो क्या गरम होगी ? अभी तो वह भड़भूंजा सूरज सोया हुआ है न। इसी तरह है अगर कुछ उपाय है तो सरकने का। इस शरीर की अब और गति नहीं है, आगे-पीछे नहीं, एक ही लीक पर सीधे ही ठेला जा सकता है इसे।

मन नहीं है यह शरीर कि विगत और आगत दोनों में उड़ सके ! अच्छा नवनीत, जिस तरह विगत में स्मृति के रास्ते वह जाता है, उसी तरह आगत में भी तो कल्पना के रास्ते जाता है न ! किन्तु कल्पना यथार्थ नहीं होती—स्मृति क्यों यथार्थ होती है ? स्मृति में वह रह आया होता है, उसी तरह कल्पना में भी वह रह आकर लौट आए तो ? तब आगत भी उसका जाना-पहचाना हो उठेगा न ! यह संभव है ? अतीत में वह रह आया ही नहीं होता, बल्कि अतीत में लिपटा ही तो रहता है। पर अतीत में जो "वह" था, वर्तमान में वही "वह" कहाँ है ? वह तो अतीत के साथ ही पीछे रह गया न ! यह जो आज वर्तमान में है "वह" क्या बिल्कुल जुदा एक "नया" नहीं है ? "वह" नया हो, लेकिन इस शरीर का हर "कण" अतीत के उस "क्षण" से जो संपृक्त है ! उससे जुदा वह कुछ नहीं है दोस्त ! और उसीसे चिपक कर वह शाश्वत भी हो जाना चाहता है। स्मृति उसी "क्षणमय" कण को मनसाराम के आगे कर देती है और कहती है, "ले देख अपने लंगूर की शकल !" क्षण से पृथक यदि हो जाए वह कण, तो फिर वह चिर हो उठेगा, नित्य-नवीन ! आगत-विगत कुछ भी उसके लिए अविज्ञात

कहाँ रहेगा ?

अरे ! जीवन के इस रहस्य को गुहते-गुहते ही पहुँच गया तू अपने लक्ष्य पर क्या ? पीड़ा हुई भी हो तो "क्षण" की अनुभूति से कटे हुए चैतन्य के इस "क्षण" ने महसूस नहीं की । ऐसी ही चिन्मय प्रकृति तो चाहिए मनुष्य को, समय की सीमा से निवृत्त ! अच्छी ही जगह है रे ! झाड़ी बहुत घनी भी नहीं । दूर से कहाँ कोई वस्तु अपनी वास्तविकता में दिखाई देती है ? यह नर्म-नर्म दूब, जरजराते हाड़ को कुछ आराम मिलेगा जी ! सर्द तो होगी ही, शबनम के कुछ कतरे सजल कर गए हैं शायद ! कविता करना सीखो नवनीत ! पैर में भरी हुई यह तरल आग, और दूब पर बिछी हुई ओस की ये हिमशीतल बूँदें । सभी तो कविता हो सकती है, और कविता कभी सालती नहीं, वह तो घाव पर मरहम लगाती है जी ! दिखाई भी देता है सामने दूर तक यहाँ से सड़क, गाड़ी, मोड़—कोई आता दिखाई दिया तो पुकार भी सकता है वह ! यहाँ, हरी-हरी दूब पर माया बैठ कर उसका सिर गोद में ले लेगी । माया को कोई असुविधा न होगी इस जगह ।

सप्तर्षि-मंडल ऊपर चढ़ रहा है । वशिष्ठ के पास ही वह अरुन्धति बैठी है न ! उसकी तरह ही तो वशिष्ठ भी मानो घुटना मोड़कर उसकी गोद में सिर रखे लेट गए हैं ! भालू कहाँ छिपा हुआ है इस राशि में ? तीन बज रहे होंगे ! यह गीला गीला-सा—अरे हजरत, शबनम में नहाई दूब पर सुबह की कुआँरी किरण की तरह नहीं लेटे हुए हो तुम ? इस नाजुकखयाली में खून के कतरे का क्या काम ? पेट बँधा हुआ है, उसे अब खोल कर फिर ठीक से बाँध सकना इन हाथों से नहीं हो सकेगा नवनीत ! खून है तो वह गीला ही नहीं, गरम भी है । इतनी प्रगति हुई तो क्या थोड़ा खून भी नहीं बहेगा ? सब घूम रहा है ! सो तो है ही । यह पृथ्वी ही क्या हजार मील फी घंटा अपनी कीली पर नहीं घूम रही ? सूरज के चारों ओर तो साढ़े अठारह मील फी सेकिण्ड, छियासठ हजार छः सौ मील प्रति घंटा की दौड़ है इसकी । उसी पृथ्वी पर से सब कुछ घूमता नहीं दिखाई देगा तो क्या स्थिर दिखाई देगा ? धुँधला दिखाई देता है तो आँखें मूँद लो । देखो न कितना साफ दिखाई देता है ? और कितनी दूर तक ? रात-वात का यह परदा, बस आँखों की पलकों तक ही है । देखो न, क्या नहीं दिखाई देता, क्या नहीं सुनाई देता ? आँख कान की इन सीमाओं को तो सर करो !

—यह पगध्वनि तो पहचानी हुई है न ! ओ ! ओ कुहकिनी ! अरी ओ माया ! मैं इधर हूँ यहाँ ! शबनम में नहाई कुआँरी किरणों की पलकों पर ! उधर कहाँ भटक रही हो वीराने में ? मैं दिखाई नहीं देता ! क्या गजब है ? हाथ के कन्दील की रोशनी इधर करो न ! भई वाह ! तुम तो जैसे फ्लॉरेंस नाइटेंगिल बनी हुई हो। इस मामूली-सी दुर्घटना को तुमने युद्ध का मैदान समझ लिया न ! बलिहारी है तुम्हारी बुद्धि की, और सेवा-भावना की। अरे भली मानस, मेरे सिवा और है ही कौन यहाँ ? सुरेश बाबू ? यहाँ कहाँ हैं वे ? खबर पहुँचा कर तुम्हें लिवा लाने ही तो गए हैं वे। तुम्हें नहीं मिले ?

"मुझे खबर देने ? मुझे खबर देने तो कोई नहीं आया !" तुम्हारी यह क्या हालत है ?"

"पूछ रही हो क्या हालत है ? जैसे कुछ जानती ही नहीं। जानती न होतीं तो इस तरह यहाँ वीराने में क्या करने आतीं ?"

"तुम्हें कब से तलाश कर रही हूँ न ! पर यह सुरेश का क्या किस्सा है ? क्रोध नहीं गया क्या अभी ?"

"कैसी बात कर रही हो माया ? क्रोध और तुम पर कभी कर सकूँगा ? तुम्हीं तो आज मेरे लिए सब कुछ रह गई हो और तुम पर क्रोध करूँगा ? तुम्हें सुरेश नारायण ने कुछ नहीं कहा क्या ? मिला भी नहीं ? तो कहेगा ही कैसे कुछ ? वह देखो न उधर, शैतान की दाढ़ों-जैसा मुँह बाए उल्टी पड़ी सुरेश की कार नहीं दिखाई देती ?"

"हाँ-हाँ, उसकी तो गाड़ी है। मैं तो पहचान ही नहीं पाई थी ! क्या हुआ उसे ?"

"कुछ खराबी हुई और उलट गई। खराब होकर उलटी, या उलट कर खराब हुई, बात तो एक ही है न ! मैं बच गया। बच गया न ?"

"क्या तुम इसी कार में थे ?"

"तभी बच गया कह रहा हूँ माया ! नहीं तो यहाँ क्यों पड़ा मिलता ?"

"सुरेश दब गया क्या ?"

"सुरेश बाबू—देख तो कैसे सकता था मैं ! पर दबे नहीं होंगे वे, बाहर थे न वे तो। पर उन पर तुम बरस क्यों रही हो इस तरह ? लो बैठो तो, हरी दूर्वा का आसन है तुम्हारे लिए। वह बेचारा तुम्हारा ही तो आदेश पालन कर रहा था।"

"मेरा आदेश ?"

"तुम्हारा नहीं तो विप्लव-दल की सभानेत्री का होगा ! मुझे लिए जा रहा था न तुम्हारे पास। अच्छा यह बताओ पहले, खतरे से तो तुम बाहर हो गई न !"

'खतरे से ? कौन से खतरे से जी ?"

"पुलिस के खतरे से भाई ! तुम लोगों की गन्ध पाकर पुलिस तुम्हारे शिविर पर धावा मारने वाली थी न ! इस तरह क्या देख रही हो मेरी ओर माया ? आश्चर्य होता है कि मुझे यह सब गुप्त सूचना कहाँ से मिल गई ? मैं ही चिन्ता नहीं करूँगा तुम्हारी तो और कौना करेगा माया ? बीमार हूँ तो क्या हुआ ? और बीमार ही अब ऐसा कौन सा हूँ ? देखो, भला-चंगा तो दिखाई देता हूँ। ना-ना, यहाँ हाथ मत लगाओ माया,—पिंडोरा के बक्से का मुँह है यह। मैंने कस कर बाँध रखा है इसे। पैर ? अरे भाई, मैं प्रलय का दूत हूँ न—उसमें बिजलियाँ तड़पती हैं, महा समुद्र लरजते हैं वहाँ, प्रलय के बारह सूर्यों का गर्जन है ! अगर पैर में थोड़ी-सी हरकत कर दूँ तो पृथ्वी के उनचास पवन अट्टहास कर उठें, प्रलयंकर शंकर का रौद्र ताँडव प्रारम्भ हो जाए ! तुम इसे कविता कहती हो माया ? तो यह प्रलय की कविता है !"

माया मानो केवल आँखें भर कर नवनीत को देखती रही।

"इस तरह क्या देख रही हो ? क्या तुम्हें विश्वास नहीं होता ? उल्टी पड़ी वह गाड़ी क्या कोई दूसरी कहानी कह रही है ? अरे मैं जो उससे इतना दूर आ पड़ा हूँ वह तो मेरी इच्छा-शक्ति का फल है। अगर मेरी पीठ देख सकतीं तुम—पीठ, हमेशा पीठ ही तो दिखाई है तुम्हें माया ! लेकिन पत्नी से हारने में लज्जा नहीं है। आज नहीं दिखाऊँगा लेकिन ! मजबूर कर दिया इस दुर्घटना ने न ! कमर ही तोड़ दी है, और पेट में गिरा दिया है इसने अणुबम !"

"बहुत पीड़ा होती है ?"

"पीड़ा को पचाने का नाम ही तो जीवन है। और अब तुम जो आ गई हो तो क्या पीड़ा शेष रह सकती है ? तुम्हारा जरा-सा स्पर्श संजीवनी है मेरे लिए माया ! मेरी तो केवल एक ही पीड़ा थी, तुम्हारा अभाव ! अब सब पीड़ा चली गई है, सब पीड़ा !"

"लेकिन तुम्हारा यह फट गया हुआ पेट, जर्जराया हुआ पाँव ?"

"ऐसे तो अनेक हैं माया, दुनिया में। मेरे ही ले लो न! मेरी फटी हुई आस्थाएँ, जर्जराया हुआ ईमान—उसी तरह नहीं हैं ये सब क्या, जिस तरह फटी हुई धूल-कीचड़ में सनी मेरी यह कमीज हो गई है, जिस तरह बिना जले ही सील कर नष्ट हो जाने वाली सिगरेटें जेब में पड़ी-पड़ी ही कुचल गई हैं!"

"पर कमीज-सिगरेट इनसे तो तुम ऊपर हो. काफी ऊपर हो जी!"

"और आस्था, ईमान इनसे ऊपर नहीं हूँ?" हँस कर नवनीत ने कहा।

"व्यक्ति से उनका अलगाव इतना कहाँ है जितना सिगरेट-कमीज से है?"

"आपस में पैर और पेट का उससे भी कम दिखाई देता है माया! पर यह तो देखने वाले की दृष्टि ही का तो फेर है। इनको सहन करने वाला ही जब इन्हें अलग करके महसूस कर सकता है तो देखने वाला क्यों नहीं देख सकता?"

"लेकिन तब भी कमीज फटना और पेट फटना तो एक बात नहीं है जी!"

"क्यों नहीं है? बेचारी कमीज से पूछो न! फटने से उसे कितनी पीड़ा होती होगी? और पेट फटने की पीड़ा? डॉक्टर कितनी जल्दी चीर देता है उसे बिना किसी पीड़ा के अहसास के! दूसरों का हुआ पेट तो क्या हो गया? अपनी संतान के गाल पर पड़ा हुआ थप्पड़ क्या माँ-बाप को महसूस नहीं होता?"

'क्या सचमुच तुमको पेट और पैर की पीड़ा महसूस नहीं होती?"

"यही क्यों माया? और भी तो कई पीड़ाएँ हैं जो महसूस होती हैं। तुम नहीं थीं तो तुम्हारे अभाव की क्या कम पीड़ा सही है मैंने? विश्वास नहीं होता?"

"होता है जी, होता है। वह पीड़ा तो मैं खुद सह चुकी हूँ न! सह कर ही तो जाना जाता है। अरे, तुम्हारा सिर तो जमीन पर पड़ा हुआ है, मुझे खयाल ही नहीं रहा। कैसी सख्त जमीन है।" और माया ने उठा कर नवनीत के सिर को अपनी गोदी में रख लिया।

नवनीत के मुँह पर एक निर्व्याज-उल्लास की लहर व्याप्त हो गई। बन्द पलकों की कोरों पर छाई हुई वाष्प को माया ने देख लिया, और उसके प्यासे अधर उस खारे पानी के लोभ को रोक नहीं सके। नवनीत के कान में एक दूरागत वंशी की तान लहरा उठी, "ओ मेरे जीवन के जादूगर छलिया! कहाँ छिपे रह गए तुम इतने बरस? किस छलना की छाया में भुला बैठे इस प्यासी

चातकी को ?"

नवनीत ने अपने आपको कहते हुए सुना, "वह जो कहते हैं न माया, जानने का नाम ही होना हैं, नोइंग इज बीइंग—महसूस करने से ही अस्तित्वशील हो-जाना पड़ता है। पीड़ा को महसूस करो तो वह है, नहीं करो तो नहीं है। लेकिन जानती हो ? यह अधूरा तथ्य है, हाफ ट्रूथ। फिर वह नहीं रह जाती। अत्याचार को सहन करलो फिर वह नहीं रह जाता।"

"क्या कहते हो ? यह कैसे सच हो सकता है ?"

"तुम आतंकवाद की सभानेत्री ठहरी, शायद आसानी से न समझ सको। लेकिन मैं तो जानता ही नहीं, महसूस भी कर चुका हूँ न ! कहाँ है अब इन घातों और आघातों की पीड़ा ? जानती हो न, विचार की उस रात्रि में सहन करके ही तो मैं मृत्यु के भय से उबर गया था। दैनिक जीवन में भी तो जिसे हम आदत कहते हैं, वह क्या है ? सह करके उसका अस्तित्व लोप कर देना, मुक्ति पालेगा, यही तो दर्शन है।"

माया ने एक लम्बी साँस ली, और धूल से सने नवनीत के बिखरे बालों में अपनी अँगुलियाँ चलाते हुए कहा, "लगता है, मेरे मन को अभी बहुत कुछ सहना बाकी है। तभी तो मैं सुरेश के इस विश्वासघात को भुला नहीं पा रही हूँ।"

"विश्वासघात और सुरेश नारायण। मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा माया।"

"तुम जानती भी तो नहीं न ! उस दिन कहा था न मैंने ? उसकी मुझ में दिलचस्पी है।"

"हाँ-हाँ, सो तो जानता हूँ। इसीलिए तो मुझे खतरे से निकाल लाकर तुम्हारे पास लिए जा रहा था। मैं इतना कृतघ्न नहीं हूँ कि किसी के उपकार को भूल जाऊँगा माया।"

माया के अधरों पर क्षीण हास्य की रेखा खिंच गई तो नवनीत ने कहा, "मेरी बात का यकीन नहीं होता न ! कहना चाहती हो न कि अधर लाल के उपकार की बात ही मैं कहाँ याद रख सका ? उपकार की भावना हम लोगों की बड़ी रूढ़ है माया, वह वैयक्तिक न रह कर सामाजिक भी हो गई है, जबकि कृतज्ञता एक सर्वथा व्यक्तिगत भावना है। अधर लाल से मुझे प्राणदान मिला

था, किन्तु मुझे तो उसकी तब आवश्यकता नहीं थी न। बिना आवश्यकता पाई वस्तु क्या भार नहीं होती ? किन्तु जिस वस्तु को मैंने चाहा था, उसी की प्राप्ति में बन गए वे बाधा। मन के अव्यक्त कोने में शायद यही भाव रहा था अधर लाल के प्रति। किन्तु सुरेश नारायण तो तुझे मेरी मंजिल तक पहुँचा गया है न ! तुम्हारी गोदी में जो मेरा सिर है, वह उसकी ही कृपा का तो फल है !"

मैं अधर लाल की बात स्मरण करके नहीं हँसी थी जी। हँसी थी मैं सुरेश ही की बात पर। कैसे तुम उसकी दुरभिसंधि को उपकार समझ बैठे हो? सामाजिक न होकर जो व्यक्तिगत मात्र रह जाता है, वह गुण कितना धोखे से भरा हो सकता है।"

"कैसे ? समझाओ तो।"

"पुरानी कहानी सुनानी होगी कुछ।"

"तो क्या हर्ज है ? फुरसत ही फुरसत है अब तो सारी। सारा ही समय तो अपना है। देखती नहीं, समय की कारा से बाहर जाने को उद्यत बैठे हैं हम, वह सामने खुला फाटक नहीं देखतीं ? तब तक तुम अपनी यह कहानी ही सुनाओ।"

"तुम शायद जब लखनऊ थे तब तुम्हें कोई गुमनाम पत्र मिला था याद है?"

"गुमनाम पत्र ? ओह, एक था तो। यों तो गुमनाम पत्र बहुत ही आते रहते हैं पोस्ट ऑफिस में, पर वह था किसी वकील का तुम्हारे गुजर-बसर के लिए दो सौ रुपए महावार का दावा करने वाला पत्र। उन दिनों कुल वेतन मुझे मिलता था एक सौ पचपन रुपए। और फिर वकील होकर भी गुमनाम पत्र ? किस मूर्ख वकील से लिखवाया था वह पत्र तुमने माया ? उसे याद करके क्रोध नहीं आता, हँसी आती है।"

"पर तुम्हें तो उस समय क्रोध ही आया था मेरे देवता।"

"शायद उसका दबाव मैंने तुम्हें नहीं, पिताजी को ही पत्र लिख कर दिया था। है न ? करता ही क्या और ? पर मैं कह रहा था, कोई अच्छा वकील नहीं था वहाँ अपना दावा पेश करने के लिए ?"

"वह पत्र मेरी या पिताजी की प्रेरणा से नहीं लिखा गया था जी, बल्कि उसके बारे में उन्हें मालूम तब हुआ जब तुम्हारा पत्र आया। वह पत्र इसी सुरेश ने लिखा था, यह तो बहुत बाद में मालूम हुआ।"

"सुरेश नारायण ने ? वकील तो है, और चतुर भी काफी लगता है वह, पर अपना नाम ही छिपा बैठेगा, इतना मूर्ख कैसे हो गया था तब ? नोटिस देने पर तो नाम देना पड़ता है वकील को।"

"पर खाली नोटिस ही तो नहीं था न वह। तुमने जिस विषय को लेकर मुझ पर आक्षेप किया था, वह क्या सिर्फ गुजारे का ही दावा था ?"

"तुम्हारे बारे में आक्षेप ? कहती क्या हो माया ?"

"मेरे पुनर्विवाह की बात कैसे लिख गए थे जी तुम ? पिता जी को कितना बड़ा आघात लगा था उससे, तुम नहीं सोच सकते।"

"और तुम्हें ?"

"माया ने नवनीत की ओर आँखें तरेर कर देखा, तो नवनीत ने अपना मुँह छिपा कर उसको कमर से आवेष्टित करके बोला, "नाराज हो गई न ? मेरे पर ही कितनी भयानक चोट थी वह कि अनजाने ही उसने मेरे जीवन-स्रोत की दिशा ही बदल दी। चुटीला, निराश लक्ष्यहीन मन ही तो था कि आरती की प्रवंचना में फँसा, अधर लाल के साथ कृतघ्नता और देश के साथ गद्दारी की, और अब यह कुत्ते-बिल्ली की मौत···"

"मौत ? कहते क्या हो जी, कुछ ख्याल भी है भले-बुरे का, शुभ-अशुभ का ?"

हँस कर नवनीत ने उत्तर दिया, "भूल गया ! अब मौत कहाँ है माया ? अब तो जीवन ही जीवन है, बहारों से भरा हुआ। हम-तुम दोनों जिसका कूल ही नहीं पा सकते। भूल जाओ माया, भूल जाओ उस बीती बात को, अगर सुनाना ही चाहती हो तो केवल कहानी भर सुना दो। अब वे पुराने निराश प्रेमी नहीं हैं हम। हमारी मूर्खताओं पर भी हमें तटस्थ भाव रखना है अब। और अगर तटस्थ भाव से कहानी नहीं कह सकती तो जाने दो। दुनिया में बहुतेरे निठल्ले कहानीकार हैं; हमारी जूठी कहानी पर उन्हें ही जीने दो।"

"तटस्थ भाव कहाँ से लाऊँ ? तुम्हारे पत्र ने ही तो पिता जी के सामने समस्या का मिथ्या समाधान प्रस्तुत किया था। उस पत्र के पहले अगर कभी ऐसी भावना उनके मन में रही भी हो, तो भी वह कभी अभिव्यक्ति के स्तर पर नहीं आई थी। उस पत्र ने मानो उन्हें साहस दिया। और जब पहले पहल उन्होंने मुझे कहा तो मुझे काठ ही मार गया। याद रहे, तुम्हारे पत्र के बारे

में मैं तब तक कुछ भी नहीं जानती थी !"

नवनीत ने एक लम्बी साँसें ली, और कहा, "पर मैंने तो सोचा था कि तुम्हें नई शिक्षा मेरा सुझाव मानने की ही प्रेरणा देगी ।"

"शिक्षा से ही क्या होता है जी ? संस्कार भी तो हैं। विचारों और संस्कारों में समानता लाने के लिए पीढ़ियाँ लग जाती हैं । केवल शिक्षा से यह सहज नहीं हो जाता । इसके अलावा—"

"इससे अलावा क्या ?"

माया के चेहरे पर लज्जा की लाली पुत गई। उसने कहा, तुम बड़े शठ हो। एक बार प्राप्त हो कर तुम क्या छोड़े जा सकते हो ? कैसा अदम्य लोभ जगा दिया था तुमने ? वह प्राप्ति वह "फुलफिलमेंट" फिर क्या और किसी की आकाँक्षा बनी रहने देता है ? फिर मैं तो फलवती भी हुई थी न । छाया के उस सौभाग्य को न सम्हाल सकी तो क्या मेरे ही भाग्य का दोष न था ?"

एक विचित्र सम्मोहन में बँधा, आँखें बन्द किए नवनीत माया के वक्तव्य को सुनता रहा । माया ने उसे पा कर तृप्ति अनुभव कर ली, किन्तु माया को पा कर भी वह तो मरीचिका की खोज में भटकता ही रहा न ?

नवनीत के सिर को सहलाते हुए माया कहती रही, "पिताजी के पुनर्विवाह के प्रस्ताव का जितना तीव्र प्रतिवाद था मेरे निकट, उतना ही निकट था उसके दूसरे प्रस्ताव का, बिन-बुलाए मानपुर चले आने का। निष्फल अभिमान और कठोर उपेक्षा की कैंची में किसी एक की कन्या कटी जा रही हो तो उस पिता पर क्या प्रतिक्रिया हो सकती है उसकी ? जानते हो, वही उनके घुल-घुल कर मरने का कारण हुई ।"

"हमारी यह अहमिका, यह अभिमान ही तो हमारा शत्रु है माया। इसको तोड़े बिना दो व्यक्तित्व परस्पर मिल कर भी नहीं मिल पाते । यही नहीं, कछुए की तरह उनकी समस्त प्रवृत्तियाँ भी अपने ही में सिकुड़ी कैद रहती हैं । और गुजारे के दावे में झलके अलगाव की आग इधर मुझे अलग बराबर दहकाती जलाती रही, और मैं यहाँ अभिमान लिए बैठा रहा ।"

"जानते हो, पिताजी के प्रस्ताव की अवहेलना के बाद निष्फल अभिमान में जब जली जा रही थी तभी तुम्हारा पत्र मुझे अनायास ही पढ़ने को मिल गया। पिता जी उसे कहीं रख कर भूल गए थे। और पढ़ कर मैं भी प्रतिहिंसा के

लिए उद्यत हो उठती थी। अस्वाभाविक लगता है क्या तुम्हें?"

"जो होना है वह तो होता ही है माया, स्वाभाविक-अस्वाभाविक का प्रश्न ही असंगत है।"

"शायद ऐसा ही हो। तुमतो जानते हो, पिता जी को बचपन से ही मेरी चिन्ता थी। जीवन में दायित्व समझते थे वे एक तो राष्ट्र के लिए या फिर उनकी मातृहीना कन्या के लिए। तुमसे परिचय के पहले ही अपने जामातृ के रूप में वे एक लड़के पर दृष्टि जमाए हुए थे। अवश्य तुमने आकर वह स्थान हथिया लिया उसका।"

"अच्छा कौन था वह सौभाग्यशाली लड़का? हमें भी बताओ न भाई।"

"दुर्भाग्यशाली ही कहो न! वह लड़का था यही सुरेश नारायण। पिता जी की इच्छा से यह भी अवगत था। और तब स्वाभाविक था कि मुझे लेकर कुछ सपने, कुछ आशाएँ यह भी जीवन में पाल ले। तुम्हारे आते ही यह सहज ही मार्ग से हट गया, पर सपने और आशाएँ तो इसकी निज की थीं। इसने फिर विवाह ही नहीं किया।"

"तब तो इसकी लगन ही मुझसे बाजी मार ले गई माया। लेकिन अपने मन की बात तो तुमने कही ही नहीं!"

मुस्कराकर माया ने कहा, "अपने मन की क्या बात होती? जैसे नागनाथ वैसे साँपनाथ! मैं तो केवल पिता जी को जानती थी, उन पर मेरा पूर्ण विश्वास था। और उमर भी तब क्या थी सुरेश से मिलना-जुलना बराबर होता रहता था, पर केवल मित्रता भर के लिए। और फिर वह वकालत करने लग गया। पिता जी अवश्य उसे पुत्र की ही तरह मानते रहे और कालान्तर में तो वह उनके आतंक दल का सदस्य भी हो गया।"

"यानी वह उनका भक्त भी था। भई, तुमने उस बेचारे के साथ ज्यादती की माया!"

"वह तो तुमने मेरे साथ की, यह क्यों नहीं कहते? और तुमने जो पाया, वही तो मेरा हुआ और वही तो किसी को मैं दे सकती थी, अगर मैंने ही उसे दिया हो कुछ तो।"

"मेरी ज्यादती की क्या कुछ कम सजा मिली है मुझे? लेकिन मेरी बात रहे, तुम अपनी ही सुनाओ।"

"इतने उतावले क्यों हो रहे हो ? कुछ जलन होने लग गई है क्या मन में?"

"नहीं होनी चाहिए क्या ?"

"सो ही तो। यह सुरेश बड़ा चालाक है। लखनऊ से लौट कर जब मैं मथुरा पहुँची थी न तो जाने कैसे इसने हमारे बीच के तनाव को मालूम कर लिया। जरूर मेरे मन की अवश अवस्था भी जिम्मेदार रही होगी इसके लिए। जिस तरह प्रेम छिपाए नहीं छिपता, उसी तरह उदासीनता विरक्ति, ये भी तो छिपाए नहीं छिपते न।"

"तो तुम्हारी विरक्ति और तुम्हें उसकी आसक्ति का आभास हो गया। है न ?"

"और चला उसके बाद उसके उपदेशों का ताँता। इतिहास का उसने प्रमाण दिया कि नारी को पुरुष की अपेक्षा नहीं होनी चाहिए कि विवाह जीवन को पंगु करने वाला बन्धन है, और इस बन्धन की उच्छृंखलता का अवरोध भी समझ जाए, तब भी आवश्यकतानुसार उसमें उन्मुक्ति का विधान तो स्वीकार किया जाना ही चाहिए। आदि आदि—"

"यानी सुरेश बाबू वकील ही नहीं, अच्छे समाज-सुधारक भी हैं। और वह मुस्करा दिया।"

"उपदेशक कहो न। समाज के नाम तो उनकी कुल जमा सहानुभूति मेरे ही साथ थी। पर शिष्य उनके अनुकूल नहीं हुआ, मेरी शिक्षा-दीक्षा को कोसना ही उनके हिस्से रहा। और तब शुरू हुई उनकी कूटनीति।"

"कूटनीति !"

"वही तो। पहले तो तुम्हें लिखा गुमनाम पत्र। लेकिन तुम्हें बता देती हूँ कि इस पत्र का न मुझे पता था न पिताजी को और यह चाल उसकी काम कर गई।"

"क्या चाल ?"

"कि तुम जल-कट कर मुझे मुक्ति दे दो, और अपनी शेष आशा के भी नष्ट हो जाने पर मैं पिता जी की ओर देख कर उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर लूँ। पिता जी ने तुम्हारा पत्र मुझे नहीं दिखाया, कुछ कहा भी नहीं उसके बारे में। किन्तु उस पत्र की उन पर वैसी ही प्रतिक्रिया हुई, जैसी सुरेश चाहता था। समझ रहे हो न ?"

"हाँ, माया। संदर्भ बदलते ही किस तरह सारे अर्थ बदल जाते है ? कल्पना करो न उस समय की मेरी मनस्थिति की। एक ओर तो अधर लाल, नीलम, टीकम चन्द आदि की अनवरत कर्मण्यता थी, और देश की तत्कालीन उथल-पुथल में मेरा मन आलोड़ित-विलोड़ित मथा जा रहा था। शर्ली का और तुम्हारा तिरस्कार जहाँ नीलम के प्रति वितृष्णा में पैदा हुआ, वहाँ मेरे चारों ओर एक अनन्त रिक्तता छा गई, और तब आरती की वृत्ति मुझे नाश के मार्ग पर ढकेलने लगी। आरती के लिए शायद इतनी नहीं, जितनी तुम्हारे पत्र की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप। मेरे दिशाहीन मन की अवस्था यदि उद्भ्रांत न होती तो तुम्हारे निकट इतना दोषी होता क्या ?

"जानती हूँ जी। जानना क्या, तुम तो मेरे रक्त में भिद चुके थे। नहीं तो व्यक्त और अव्यक्त समस्त मन से पार्वती की तरह केवल तुम्हारा ही ध्यान लगाए क्या बैठी रह सकती थी ! किन्तु तभी जब अनायास तुम्हारा पत्र मुझे पढ़ने को मिल गया तो मैं अपने से ही विद्रोह कर बैठी न !"

"विद्रोह !"

"उसी की कथा तो सुना रही हूँ जी। सुरेश के प्रस्ताव को मैं अस्वीकार कर चुकी थी, उससे मिलना-जुलना तक मैंने प्रायः बन्द ही कर दिया था, और बाहरी दुनिया से कट कर मैं अपने में ही सिमटने-सिकुड़ने लगी। पिता जी पर इसका प्रभाव ही भीतर पड़ता जा रहा था, यह मुझे तब मालूम पड़ा जब एक दिन एकाएक ही उन्हें दूकान पर ही दिल का दौरा पड़ गया और घर की अपेक्षा उन्हें सीधे अस्पताल पहुँचाया गया। मेरे भाग्य से उस समय तो वे बच गए, किन्तु उसके बाद उनके मुँह की हँसी विलीन हो गई सदा के लिए। और समझ सकोगे शायद कि उनके प्रति मेरा अपना दोष मन ही मन मुझे निरंतर कचोटने लगा। उन्हें ठेस पहुँचाने का दोष मेरा ही तो था।"

"मेरे दोष को क्यों भूले जा रही हो माया !"

"इसलिए कि तुम्हारे बिना भी मैं उस दोष का मार्जन कर सकती थी। इसी मानसिक कचोट के कारण मैंने सुरेश से फिर मिलना-जुलना शुरू कर दिया। और जब पुनः पिता जी बीमार पड़े और उनके चित्त को बहुत अशांत पाया तो एक दिन सुरेश के सामने ही उनसे उनकी मनःशांति का उपाय पूछ डाला। पहले तो शायद अपने को बहलाने के लिए ही उन्होंने कहा कि वे अपने उठाए हुए देश

के काम के अधूरेपन से चिन्तित हैं, तो मैंने उनसे कहा कि उनके बाद उनके इस कार्य को पूरा करने का दायित्व मैं लूंगी। तब लम्बी साँस लेकर फिर वे बोले कि इससे भी अधिक उनकी चिन्ता का करण मैं थी, कि मातृहीना कन्या को वे सुखी नहीं देख सकेंगे। सुरेश ने मेरी ओर देखा तब मैंने पिता जी से कहा कि देश का उनका उठाया हुआ काम पूरा होते ही में गृहस्थिन बनने का वादा करती हूँ, आवश्यकता पड़ी तो पुनर्विवाह के द्वारा भी।"

"तुम्हारे पिता को इससे अवश्य ही शांति मिली होगी।"

"समझी तो मैं ऐसा ही, किन्तु मनुष्य के इस मन का अपने से ही विद्रोह क्या समझ में आ सकता हैं?—पिता जी ने तब शायद यही समझा कि पुनर्विवाह के निश्चय से उन्हें मेरी चिन्ता से मुक्ति मिल जाएगी। सुरेश मुझे पाकर अपने आपको खूब भाग्यशाली समझेगा कह भी वे मत ही मन जानते थे, और यह भी कि मुझे सुखी रखने में वह कुछ भी उठा न रक्खेगा। इसके अलावा वे यह भी जानते ही थे कि सुरेश सब प्रकार से योग्य व्यक्ति भी है। किन्तु प्राचीन आदर्शों के प्रति उनके मन की अव्यक्त आस्था का हमें क्या उन्हें स्वयं पता न था।"

"होता है माया, ऐसा ही होता है। मन का यह द्वैत मानव-चरित्र को बड़ा ही दुर्बोध्य बना देता है। यही तथ्य जानने के लिए तब उसके समग्र व्यक्तित्व की छानबीन जरूरी हो जाती है।"

पिता जी की अवस्था सुधरने के स्थान पर बिगड़ने लगी, किन्तु बाहर से उन्होंने कोई अशांति व्यक्त नहीं होने दी। मुझसे प्रगट में यह कहा भी कि यदि पुनर्विवाह से मुझे सुख पाने की आशा हो तो उनका मुझे पूर्ण आशीर्वाद है। एक बार सावधान भी किया था उन्होंने मुझे। पुनर्विवाह में उनके मत से कोई सामाजिक दोष नहीं था, किन्तु वे मानते थे कि मनुष्य केवल बाहरी समाज की वस्तुगत उपज ही नहीं, उसके चारों ओर पीढ़ियों से चली आती हुई धार्मिक-नैतिक संस्कारों की मिट्टी भी खाद पहुँचाती रहती है। सोने के पिंजरे में बन्द पक्षी के पंखों का कोई महत्व नहीं है, मन में आजादी का लोभ जगा सकने की संभावना के कारण पंख उसके लिए बाधा भी समझे जा सकते हैं। पर उनको काट फेंकने के बाद पक्षी क्या रह जाता है?—संस्कारों के बिना मनुष्य पशु से पृथक क्या हो सकता है?—और उनकी बात का पूर्ण मर्म में समझ पाऊँ, इसके पहले ही उनके महाप्रयाण का मुहूर्त आ पहुँचा।" माया की वाणी अवरुद्ध हो

गई। नवनीत के बालों में उसका चंचल हाथ अचल हो गया। नवनीत को लगा मानो सृष्टि का समस्त संचार पल भर के लिए एक स्थान पर आ कर रुक गया, किन्तु वाणी द्वारा उसने माया को सांत्वना देने की कोई चेष्टा नहीं की। उसका दाहिना हाथ अवश्य उसकी पीठ को थपथपाता हुआ उसे आश्वस्त कर रहा था।

माया ने अपने आपको शीघ्र ही सम्हाल लिया और बोली, "बस, उसके बाद मेरा विद्रोह भी शेष हो गया। सुरेश मन ही मन समझ गया होगा और फिर एक लक्ष्मण रेखा तो थी ही; जब तक देश स्वाधीन न हो तब तक मैं अपने ही वादे से मुक्त थी। इधर विप्लव-दल की सदस्यता और शीघ्र ही उसका नेतृत्व मुझे व्यस्त किए रहा, मानो जीवन को लक्ष्य ही मिल गया था। सब कुछ यों ही चलता भी रह सकता था, किन्तु देश की राजनीति ने फिर मोड़ लिया, और हमारी मंजिल ने जीवन में फिर व्यक्तिगत समस्याएं पैदा कर दीं।"

'व्यक्तिगत समस्याएँ ?" नवनीत ने न समझ कर पूछा।

"महात्मा जी ने असहयोग के द्वारा अहिंसक युद्ध की एक नई पद्धति मनुष्य को दी है न।—हमारे यद्यपि मूल लक्ष्य में तो उससे कोई अन्तर नहीं पड़ता, पर साधनों में तो है ही।"

"मूल लक्ष्य से तुम्हारा तात्पर्य भारत की स्वाधीनता ही तो है न ?"

"यदि गहराई से विचार किया जाए तो भारत की या किसी भी देश की स्वाधीनता का लक्ष्य तो तात्कालिक आवश्यकता ही है, जिसे शॉर्ट रेंज लक्ष्य कह सकते हैं, लॉग रेंज लक्ष्य तो है अराजकता का, बल्कि जिसे साधनों की वजह से ही अंधेरगर्दी का नामांतर मान लिया जाता है। अराजकता का सही अर्थ तुम तो जानते ही हो न ?"

हँस कर नवनीत ने कहा, "राजनीति का पण्डित नहीं हूँ माया, केवल इतिहास पढ़ा है। किन्तु आखिर तुम्हारे बल से सहानुभूति तो थी ही। अराजकता से तुम्हारा तात्पर्य बाहरी शासन की अपेक्षा की समाप्ति ही तो है न ?"

"हमारे दल के कई सदस्यों से तुम अधिक सही जानते हो।" माया ने भी हँस कर कहा।

'पर इतिहास की बात दूसरी है माया। इतिहास साधनों के बारे में नहीं सोचता।"

"कैसे ?"

"इतिहास एक चिरन्तन प्रवाह का क्रम है न ! उसकी उपत्यका है विकास। एक ओर भूगोल की परिधि में परिव्याप्त राष्ट्र और दूसरी ओर जीवन स्पंदन से कुजबुजाता हुआ मानव-समाज, दोनों उसके दो कूल हैं। इतिहास का चरम लक्ष्य क्या है, यह तो कहा नहीं जा सकता, किन्तु यदि विकास की दिशा का अनुधावन करके कुछ तथ्य निकाला जा सकता है तो अपने ही भीतर से शासन की प्रेरणा अवश्य उसके प्रवाह की एक मंजिल होगी। ऐतिहासिक-आन्दोलन ठीक कार्य-कारण सिद्धांत से स्थिर नहीं होते, बल्कि भौतिक विज्ञान के नियमों का ही वहाँ प्रचलन दिखाई देता है, किन्तु राजनीति में व्यक्तिगत दायित्व और आचारिक मूल्यों का ही बोलबाला रहता है।'

"तो क्या तुम यह कहना चाहते हो कि इतिहास का लक्ष्य पूर्वनिश्चित है ?"

"यदि हम दशाब्दियों के स्थान पर शताब्दियों जैसी बड़ी-बड़ी सामयिक इकाइयों में इतिहास का सर्वेक्षण करें तो प्रायिक संभावनाएँ निश्चायक बन जाती हैं माया। स्वीयता का तत्व काम करता है, पर वह राजनीति के क्षेत्र में ही। किसी विशेष प्रकार की आर्थिक नीति, जलवायु आदि के दबाव या उत्तेजना-प्रेरणाएँ अवश्य पूर्व-निश्चायकता की मात्रा को समाप्त कर देती हैं, किन्तु देर-सवेर और सामान्यतौर पर पूर्वनिश्चित रूपाकार लक्षित होते हैं। कहा न मैंने, इतिहास एक नदी के प्रवाह के समान है और राजनीति के स्वीयतावादी तत्व मानो उसके तल में फेंकी हुई एक भारी चट्टान है। चट्टान से एकाध मील की दूरी के बाद नदी फिर अपने उसी प्रकृत विस्तार में पूर्ववत् बहने लगेगी, जो भू-भाग की प्राकृतिक रचना ने उसके लिए बहुत पहले से निश्चित कर रखा था। किन्तु चट्टान के आसपास थोड़ी दूरी में, काल के क्षेत्र में कुछ वर्षों की अवधि में चट्टान का पतन एक भयानक व्यक्तिक्रम पैदा करता ही है। यही है तुम्हारी राजनीति का आन्दोलन माया। किन्तु इस समय इन बेकार स्थूल सिद्धांतों की बात रहने दो। तुम कह रही थीं कि इससे जीवन में नई व्यक्तिगत समस्याएँ पैदा हो गईं। क्या हैं वे समस्याएँ ?"

हँस कर माया ने कहा, "वही अनिश्चय की स्थिति, जो राजनीति की देन है न तुम्हारे मत में। विप्लव-दल यदि समाप्त हो जाता है तो हमारे व्यक्तिगत

जीवन की दिशा क्या हो ?—और फिर, कहा था न मैंने, देश की स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद पिता जी को दिया हुआ मेरा एक और आश्वासन था। सुरेश ने अपना पुराना प्रस्ताव दुहराना शुरू कर दिया न!"

"कुछ-कुछ आभास तो मुझे भी हुआ था इसका—"

"अच्छा। मैं तो समझती हूँ मुझ में तुम्हारी सारी दिलचस्पी खत्म हो गई थी।"

"यही तो कहना चाहती हो न, कि तुम्हारी खत्म नहीं हुई थी। अच्छा, अपनी बात कहती जाओ, अपनी बात मैं बाद में कहूँगा। यह तो कहो माया, तुम्हारे दल में जब मेरे विचार का प्रश्न प्रस्तुत हुआ, तो और सदस्य न जानते हों, पर क्या सुरेश भी मुझे नहीं पहचानता था?"

"मैंने कभी उसे तुम्हारा परिचय नहीं दिया, पिता जी से अवश्य उसे तुम्हारे बारे में कुछ मालूम हुआ होगा। बल्कि उसका तो यह अनुमान था कि तुम उस अंग्रेजी लड़की से बँध चुके हो। नाम से भी उसे किसी भ्रांति का अंदेशा नहीं था; क्योंकि पिता जी तुम्हारा उल्लेख 'जमाई बाबू' के नाम से ही किया करते थे। फिर एक ओर मेरी पतिनिष्ठा, दूसरी ओर सभागृह में तुम्हें लेकर मेरी उदासीनता, अगर कभी उसमें संदेह पैदा भी हुआ होगा तो वह नष्ट हो गया होगा।"

"लेकिन जब उसे मालूम हुआ तो क्या आश्चर्य नहीं हुआ होगा उसे? क्या करूँ माया, यह गलती हरनाम की हुई। मेरा इसमें दोष नहीं है।"

"वह बेचारा क्या जानता? पर हाँ, इस समय तो इस अवस्था का कारण वह सूचना ही हुई, समझते हो न? जब देश की स्वाधीनता सामने है और हमें अपना विप्लव-दल भंग करना है तब उसे आशा हो गई कि अब हमारे मिलन में कोई बाधा नहीं रह गई है। उसे क्या मालूम था कि बाधा अभी है, तुम जो पति का दावा लेकर दस्तावेज के साथ दरवाजे पर आ बैठे न?"

"दरवाजे पर कहाँ आ बैठा जी?"

"समन्स लेकर नहीं भेजा हरनाम को घर पर? बल्कि वारंट ही कहो न! यह तो मैं घर पर मिली नहीं, वरना तभी मुझे गिरफ्तार करके ले जाने से तुम्हारे नाजिर को कौन रोक सकता था? मेरी गैरहाजिरी में घर की दीवार पर ही चस्पा हो गया वह सम्मन और मुझसे भी पहले मेरे वकील की दृष्टि पड़ गई उस पर। नहीं क्या?"

"यानी तुमने उस पत्र को पढ़ कर सुरेश को प्रेरित नहीं किया था मुझे दिल्ली ले जाने के लिए ?"

"यह सब उसी की चाल है। पहले तो आसामी ही फरार, ताकि वारंट ही न सिकर सके, और फिर दावेदार फरार। यानी दावा खारिज।"

"तुम्हारा मतलब है कि सुरेश की यह चाल थी कि धोखा देकर मुझे रंग-भूमि से हटा दे ?"

"रंगभूमि से ही नहीं जी, दुनिया से भी। यह दुर्घटना क्या दुर्घटना है ? वह है संघटना, पूर्व-योजनाबद्ध स्वेच्छा से घटाई गई।"

नवनीत कुछ क्षणों तक मानो अपने में खोया-सा पड़ा रहा। फिर सहसा हँस कर बोला, "पर देखो न, कैसी मात खाई है उसने। तुम तो आखिर उसे सींठ बता कर आ गईं न मेरे पास। यों शायद मिलने में देर भी होती। पर क्यों जी, तुम्हें मेरा पता कैसे लग गया ?"

"तुम्हारे उसी जल्लाद नाजिर से !"

"तुम्हारा मतलब हरनाम से है न ?"

"और कौन हो सकता है तुम्हारा नाजिर, वकील, हिमायती ? तुम मुझ से रूठ गये थे, पर तब भी वह मुझे नहीं भूला था। यहाँ पर भी कितनी प्रतिष्ठा दे रखी थी उसने मुझे ? घर पर आकर कह गया मुझे, और कह ही नहीं गया, मुझे साथ लेकर घर पहुँचा तुम्हारे उस भैरव-मन्दिर में। वहीं सब पता लगा।"

"पर मैंने तो उसे तुम्हें लेने के लिए नहीं भेजा था !"

"और भी कई बार तुमसे छिपकर वह मुझ से मिल गया है जी। तुमने उसे निराश होकर नीलम और आरती को बुलाने के लिए ही तो भेजा था न ? पर उसकी आशा का केन्द्र तो मैं थी। उसी ने तो मुझे बचा लिया। पर, अरे यह गीला-गीला क्या है जी ?"

"कहाँ ?"

"यह तुम्हारी पीठ के नीचे। जरा ठहरो—" माया ने नीचे से हाथ निकाल कर कहा, "अरे ? रक्त है यह तो ?"

"रक्त ?"—पर कुछ मुस्करा कर नवनीत ने कहा, "इससे तो माया, मुझे उष्णता ही महसूस हो रही है। उसकी तुम चिन्ता क्यों करती हो ? चादर ही

का तो पट्टा है, ढीला हो गया होगा, और घाव खुल जाए तो उसका काम और है ही क्या बहने के सिवा ? तुम चिन्ता मत करो माया। मैं तो जैसे माँ की गोद में सोया हुआ हूँ निर्वेद, निर्व्याज।"

सचमुच एक क्षीण-सी कराह के साथ नवनीत ने हिलने की चेष्टा की तो उसके शरीर की वेदना के सभी तन्तु एक साथ झनझना उठे।—कितना सारा रक्त उसके नीचे संचित हो गया था। जाने कहाँ से जंगली चीटियाँ रक्त की गंध से खिची चली आ रही थीं, किन्तु ताजगी के साथ ही रक्त में प्राणों का स्पन्द भी था। जब कभी पीड़ा बेहोशी का आवरण फाड़ कर चेतना के क्षेत्र को उभाड़ देती तो शरीर क्षीण-सी हरकत भी कर देता और चीटियाँ इधर-उधर भाग जातीं।

रात मानो शेष होना ही नहीं चाहती थी। हवा की लहरों के आरे शरीर को अनुक्षण गहरे चीरते जा रहे थे, पर नवनीत की चेतना भौतिक अवयवों के स्तर से परे किसी अन्य स्तर पर काम कर रही थी। वह अचेतना या अवचेतना की गहराई का लोक नहीं था, किन्तु शायद वासना और कल्पना के हाथों सजाया हुआ एक ऊर्ध्व अतीन्द्रिय मनोलोक था। शरीर उसका क्षीण होता जा रहा था, किन्तु उसके साथ मन की कोई संगति नहीं थी। मानो शरीर की क्षीणता के अनुपात में ही उसकी चेतना के बन्दीगृह की दीवारें ढह कर उसके मन को एक अकल्प उन्मुक्ति, एक सूक्ष्म दिव्यता दे रही थी। शरीर की पीड़ा की कोई अनुभूति वहाँ शेष नहीं रह गई थी। उसकी चेतना में स्मृति-कल्पना-वासना आदि सब आ मिले थे, और वह एक कालातीत, स्थानातीत लोक देख रहा था अपने सामने। उस लोक की वास्तविकता या अवास्तविकता का कोई प्रश्न ही नहीं पैदा हो सकता था।

और वास्तविकता भी क्या है ?—क्या स्थिति और आकार उसके आवश्यक उपादान हैं ? तब दस फीट लम्बाई का दूरबीन दो फीट के बक्स में पैक किया जा सकता है ? अनुभूति या अस्तित्व वास्तविकता के तत्व के लिए अनिवार्य हैं ? किन्तु हम केवल गणना द्वारा ही नहीं क्या बहुत पहले चन्द्रग्रहण का स्थान और समय निर्धारित कर लेते हैं ? और वास्तविकता के लिए 'सत्य' होने की भी क्या आवश्यकता है ? आखिर जेम्स वॉट ने ताप के गलत सिद्धांत के आधार

पर गणना द्वारा वाष्प एंजिन का आविष्कार जो कर डाला था। तो भी कुछ अंशों तक वास्तविकता के लिए अस्तित्व की आवश्यकता होनी चाहिए, चाहे उस अस्तित्व के प्रकार का वर्णन नहीं किया जा सके। जन्म और मृत्यु के पार जीवन की कल्पना करना कठिन है।–कोई अनस्तित्व की कल्पना नहीं कर सकता, क्या इसमें कोई गहरा रहस्य है? अस्तित्व और अनास्तित्व के बीच की सीमारेखा क्या है? यदि हम कहें कि जीत का अर्थ ऊष्मा या ताप की कमी है, और अंधकार से तात्पर्य क्षयमाण प्रकाश से है, तो शायद अस्तित्व-अनास्तित्व की समस्या का समाधान हम पा सकें। समय, जीवन और प्रेम की तरह ही अस्तित्व भी सापेक्ष्य क्यों न हो, और उसका विस्तार भी असीम क्यों न हो?—कौन निश्चयपूर्वक कह सकता है कि किस सीमारेखा पर 'होना' और 'न होना' मिलते हैं,—या कब 'अनास्तित्व' का अस्तित्व अनास्तित्व हो जाएगा? नवनीत के लिए माया की संप्राप्ति की अवस्था किसी काल या किसी देश के अस्तित्व की सापेक्ष्यता में अवश्य प्रमाणित नहीं की जा सके, किन्तु नवनीत की सापेक्ष्यता से उसे मिथ्या ही कैसे कहा जा सकता है?

सड़क पर आवागमन धीरे-धीरे प्रारम्भ हो रहा था। बैलगाड़ियाँ, पैदल, घुड़सवार और माल से लदी लारियाँ अपनी गति के अनुपात से कुछ ठिठक कर दुर्घटना के स्थान पर खड़े हो जाते, और चल देते। जो कल ही इधर से गुजरे थे, वे कुछ अधिक ठिठकते, महसूस करते कि दुर्घटना ताजी है, किन्तु ऐसी दुर्घटना पर आवश्यक कार्यवाही तो कभी की हो चुकनी चाहिए। अतः उनके अधिक दिलचस्पी लेने का प्रश्न ही नहीं था। और यदि अभी कोई कार्यवाही नहीं की गई है तो फिर जो बोले सो साँकल खोले! बेहतर यही है कि नजर फेंक कर चल दिया जाए। सवेरा होने पर तो कोई कुछ करेगा ही। आखिर वहाँ नीरवता है, निस्तब्धता है, पुलिस का कोई दूत भी नहीं, तो जरूर दुर्घटना पुरानी हो गई। यदि कोई एकाध क्षण के लिए ठहर भी जाता तो वहाँ की मनहूसियत से आप ही आक्राँत होकर चल देता। ठण्डी हवा के आलम में लोगों को गठरी बन कर बैठ रहना सुखकर मालूम होता है, हाथ-पैर खोल कर दूसरों की चिन्ता में माथा खराब करना किसी को रुचिकर नहीं होता।

नवनीत की किसी ने खबर नहीं ली। वह दूर झाड़ी की आड़ में पड़ा हुआ

था, एकाएक किसी की दृष्टि उस सुनसान स्थान पर जाती ही क्यों ? यदि खुली वायु की जीवनदायिनी शक्ति अनायास उसे उपलब्ध न हो गई होती तो अब तक वह शरीर के साथ ही मन से भी जड़ हो गया होता। हवा का वेग उसके फेफड़ों में दबाव पैदा करके उन्हें सक्रिय रखे हुए था, जिससे दिल में रक्त-संचार रुक नहीं सकता था। पेट का घाव बँधा हुआ तो था, किन्तु कभी-कभी शरीर की रगड़ से कहीं से खुल जाता तो रक्त बहने लग जाता। संयोग ही उसका जीवन बनाए हुए था, और संयोग ही उसकी मृत्यु का कारण होने वाला था, चाहे मृत्यु क्षण-क्षण नवनीत के प्राणों पर अधिकार बढ़ाती ही क्यों न जा रही हो। और नवनीत स्वयं जीवन और मृत्यु, चेतना और अचेतना, अस्तित्व से परे किसी अद्भुत अगोचर लोक में माया की गोद में अपना सिर रखे जीवन की सुखद अनुभूति से अनुप्राणित था।

आधुनिक ढंग से सजा हुआ शयन-कक्ष, राजसी पलंग, गुदगुदे गद्दों पर लेटा हुआ, माया की कोमल पृथुल जंघाओं के स्पर्श से प्रमुदित मस्तक पर बालों में माया के हाथों की कोमल अनुभूति प्राणों का संचार करती हुई। जीवन का विश्वास-प्रकाश उसके सामने फैला हुआ है, रूप-यौवन और स्नेह से लबरेज भरी हुई माया उसके सामने है। भूत, भविष्य कहीं कुछ नहीं है, समय मानो उसके इस वातावरण में प्रस्तुत क्षण का एक विराट अवरोध पाकर रुक गया है।

माया के अंग-प्रत्यंगों को हाथ से टटोल कर मानो उसकी गोचर विद्यमानता को प्रत्यक्ष करके नवनीत ने कहा, "माया, तुमने मुझे सचमुच अंगीकार कर लिया न ? तुम आ गई हो न ?"

"आ गई ? अरे, यह मैं हूँ जी !—रही अंगीकार की बात, सो मैंने अस्वीकार ही कब किया था जी ? सच पूछो, तो क्या तुमने ही मुझे यह दण्ड नहीं दिया है ?

"शिकवे-शिकायत किस लिए मेरी रानी ? बीता हुआ कहाँ है कुछ भी, कि उसे लेकर सिर पीटा जाए ? जो कुछ सुरेश के पत्र ने किया वह भी तो उसी तरह पीछे रह गया है अब, जिस तरह मेरी चिन्ताहीनता और लापरवाही।"

"लेकिन हमें अपने भविष्य का निर्माण जो करना है ?"

"भविष्य ? भविष्य का कहीं कुछ अस्तित्व है ! क्या जो नहीं है, उसका निर्माण कैसा ?"

"क्या कहते हो ? भविष्य नहीं है ? भविष्य न हो तो व्यक्ति जिए किसके लिए ?

"इसलिए कि वह जीवित है । जिस क्षण वह नहीं है, बस, उसके बाद वह नहीं रहता । हमारे अस्तित्व का यही तो अभिशाप है कि क्षण के बाहर वह जीवित नहीं रहता ।"

"लेकिन मनुष्य यह जो घर-बार बनाता है, आम बोता है, और सारी सभ्यता का निर्माण करता है, वह सब कुछ भविष्य की आशा से ही करता है !"

"और वह आशा उसे सदा छलती है न ? कल के लिए वह आज जो कुछ बनाता है, वह कल के लिए कहाँ बन पाता है ? और कल तक वह स्वयं भी तो 'वह' नहीं रह जाता । इसी असंतोष में फिर आज को भूल कर वह आने वाले कल के लिए निर्माण में प्रवृत्त होता है, और फिर वही असंतोष, जिसे तृष्णा कहते हैं न माया !"

"तृष्णा ही कहलो उसे, किन्तु उसके बिना यह जगत ही क्या है ?"

"सचमुच कुछ नहीं है । मुझे ही देख लो न । इस भौतिक जगत के कण-कण में ही मैं क्षण-क्षण अपना अस्तित्व समझा था, और किसी भी मूल्य पर उसकी सार्थकता प्रमाणित करने के लिए उद्यत रहता था । अपनी ही वैयक्तिकता में ईश्वर, धर्म आदि की तो मेरे लिए कोई अपेक्षा थी ही नहीं, किन्तु समाज, राष्ट्र और व्यक्ति के प्रति भी मैं अपने दायित्व को नितांत सीमित और अन्योन्य ही मानता आया हूँ । और इसका फल मुझे क्या सहना पड़ा जानती हो ? मैं अपने आप एक अतिरिक्त व्यक्तिगत-सुपरफ्लुअस इँडिव्हिजुअल ही तो रह गया था न ?"

"निराश होने पर हर व्यक्तिवादी अपने को ऐसा ही सोचने के लिये विवश होता है ।"

"लेकिन तुम जानती हो मैंने हार नहीं मानी थी, चाहे अपने संघर्ष में सफलता मुझे न मिली हो । इस जगत में हर व्यक्ति को अपने अस्तित्व को सिद्ध करने की पड़ी है माया, उसके लिए प्रयत्न करते रहना पड़ता है, वरना वह

सचमुच ही इस जगत के लिए निरर्थक, सुपरफ्लुअस हो उठता है।"

"और प्रयत्न करने पर भी यदि निराशा ही हाथ लगे?"

मुस्कराकर नवनीत ने कहा, "जैसे कि मुझे लगी है। अनुभूति निराशा की ही हाथ लगती है माया। आशा फलवती हो तो व्यक्ति उसमें इतना तल्लीन, संपृक्त हो उठता है कि अनासक्ति के साथ उसे उपलब्धि समझने की उसकी स्थिति ही नहीं रहती, और उस उपलब्धि का सुख तथा संतोष उसे मिल ही नहीं पाता। किन्तु निराशा की स्थिति में उस वस्तु से पृथक् होकर व्यक्ति अपने अभाव को अनुभव कर लेता है, और उस अभाव पर कष्ट पाता है। इसीलिए तो अनासक्ति का इतना महत्व है। यों भी, हर क्षण के बाद व्यक्ति जो आगे बढ़ जाता है, वह पिछले क्षण की आशा या स्वप्न के अनुरूप तब नहीं रह पाता। लक्ष्य और सिद्धि की यह दौड़ कभी खत्म नहीं होती। इसी दौड़ का नाम जीवन है, चाहे इसे तृष्णा ही कह लिया जाए और जब यह खत्म हो जाती है, तो जीवन भी खत्म हो जाता है।"

"लेकिन तृष्णा खत्म न होने पर भी तो जीवन खत्म हो जाता है न?"

"ओ हो। जीवन क्या कोई एक इकाई है? वह तो शृंखला है माया, शृंखला। और जिसे हम खत्म होना देखते हैं वह खात्मा एक कड़ी का होता है। शायद ऐसी ही स्थिति में तो वह फिर से जन्म ग्रहण करने को बाध्य हो। वैसे ही, शरीर के नष्ट न होने पर भी तृष्णा खत्म होती है, हो सकती है।"

माया ने हँस कर कहा, "शायद उसे ही जीवन्मुक्त कहते होंगे। पर अपने को तुम्हारा यह मायावाद समझ में नहीं आता और रास भी नहीं पड़ता। अपनी खाल जरा मोटी है न।"

"तुम्हें समझने की जरूरत भी क्या है। मन से ही नहीं, शरीर से भी तुम कितनी पूर्ण कमनीय रमणीय हो?"

"किन्तु इस शरीर को तो तुमने कैद कहा है, बंधन कहा है न?"

"तो क्या हुआ। घोड़े पर सवार व्यक्ति, घोड़े की लगाम को थामे रह कर भी, आखिर कुछ अंशों तक घोड़े की इच्छा का गुलाम तो है न? घोड़ा सवार को लक्ष्य पर भी पहुँचा सकता है और और अलक्ष्य पर भी।—"

"हाँ जी, खड्डे में भी गिरा सकता है, और अगर अड़ियल हो तो सवार

के लिए उसकी पीठ सरासर कैद ही तो हो उठती है।"

"इतना ही नहीं, माया। एक और पक्ष हो सकता है इसका। घोड़े पर सवार व्यक्ति अपने पैरों की क्षमता से भी अपरिचित हो सकता है।"

'तब फिर मुझे ही इस शरीर की बेगार पर साधुवाद क्यों देते हो?"

"अपने परिवेश की कैद को सदा लादे फिरने से कैद भी तो आखिर व्यक्ति का एक अंग हो चली है। वह और यह प्रकृति भी कितना सँवार लेती है बन्दी-घर की इन दीवारों को? व्यक्ति फिर बन्दीगृह को बन्दीगृह कहाँ समझता है? वह तो उसे अपना गृह, आश्रय समझने लग जाता है न? और इतनी आदत हो उठती है उसको कि इसके अभाव में वह रहने की कल्पना भी नहीं कर सकता। तुम अपने इसी शरीर की पूर्णता से सम्पन्न हो माया। घर की चार दीवारों, कहना चाहिये प्रासाद की मणि-खचित चारु-चित्रित दीवारों का भी एक महनीय सुख है। और फिर यह भ्रांति भी तो एक और सूक्ष्म कैद में जकड़ी है जिसे हम अनुभव नहीं करते, किन्तु एक दिन करना ही पड़ता है।"

"कौन सी सूक्ष्म कैद है जी वह?"

"वह कैद है समय की भई। स्थान की कैद दिखाई देती है, समय की दिखाई नहीं देती, पर उसका दंड तो भुगतना ही पड़ता है। तब ये दीवारें खस्ता हो जाती हैं, गिरना इनका ध्रुव है। वह क्षण भी उन्मुक्ति का क्षण है, किन्तु इस बन्दीघर का कैदी भावना से हताश और शिथिल अनुभव करने लगता है अपने आपको, कि उस उन्मुक्ति का उसे सुखबोध नहीं, दु:ख-बोध ही प्राप्त होता है। तुम अभी इस शरीर का सुख भोगने की स्थिति ही में हो माया। कितनी कोमल है तुम्हारी काया, कितनी स्पृहणीय-कमनीय है तुम्हारी कांति? तुम्हारा स्पर्श अनुभूति को रोमांचित कर देता है, शरीर में कामनाएँ-वासनाएँ जागृत करता है। नहीं, मेरे अपने मोह में तुम्हें घसीटना अन्याय होगा। तुम घर लौट जाओ माया, लौट जाओ जीवन की राह पर। मैं तो उस राह पर एक सुपरफ्लुअस प्राणी ही रहा, अब तो डेरा-डंडा उखाड़ कर कन्धे पर भी लाद लिया है। खाना-बदोश मुसाफिर का क्या एतबार? लौट जाओ माया, इस मृत्यु की निबिड़ राह से।" और वह माया के सारे शरीर पर हाथ फिरा-फिरा कर स्पर्श की अनुभूति को तीव्रतर करने लगा।

"लौट जाऊँ? कहते क्या हो? मैं लौट जाऊँ! लेकिन बँधी हुई नहीं हूँ

क्या तुमसे ! और तुम्हारी यह विदेह की उपलब्धि क्या मेरी उपलब्धि नहीं है ? अनुभूति मेरी नहीं हो सकी हो अभी तक वह, किन्तु विदेह होने पर क्या प्रेम का बंधन टूट जाता है ?"

"बंधन यदि देह के खूँटे से ही बँधा हुआ हो तो जरूर टूट जाता है, लेकिन हम-तुम तो तब बँधे थे माया, जब देह के उद्वेलों का बोध ही हममें विकसित नहीं हुआ था। शरीर के उद्वेल में पाँव डगमगा भी गये, पर मन तो निष्कंप खड़ा रहा न ? अपनी तो यही बात है माया। मुझे तो तुम्हारे प्रेम का वरदान शरीर को नहीं, आत्मा को मिला है, और विदेह होकर उस पाश को देश ही में नहीं, काल में भी स्थिर-नित्य अनुभव कर रहा हूँ। शरीर तो, तुम देख ही रही हो, क्षण-क्षण कण-कण होकर क्षीण होता जा रहा है। इसकी धारणा का आधार यह रक्त जो निर्बाध बहता चला जा रहा है। कितना तरल है यह आधार ! चाह कर भी इसे कोई सहेज कर नहीं रख सकता, फिर इस तरलता का मोह क्यों ? आत्मा के रोम-रोम से मैं तुमसे बँध चुका हूँ और विदेह होकर तुम्हारे रोम-रोम में मैं अपने को रमा महसूस करूँगा। किन्तु तुम क्यों मेरे पार्थिव-पाश की दुराशा को सहन करोगी माया ? यह विश्व विपुल है, जीवन का तुम्हारा आधार भी अभी पुष्ट सबल है। तुम लौट जाओ माया।"

"लौट जाऊँ, पर किसके लिए ?"

"अपने निज के लिये और किसके लिये ?"

"किन्तु तुम्हारे बिना मैं क्या हूँ ? जल के बिना सूखी नदी का क्या अर्थ है ?"

"वह बरसात तक प्रतीक्षा करती है माया। तुम्हारे लिए तो सृष्टि का संगीत मुखर होने के लिए उत्सुक है।"

"सुरेश की ओर इशारा है क्या तुम्हारा ?"

"वही समझ लो। आखिर तुम्हारे मन ने भी तो उसे लेकर तुम्हें धोखा दिया था ?"

"किन्तु मैं तो वह माया नहीं हूँ न ? वह माया तो मर गई।"

"मर गई !"

"वह निगोड़ी तो तभी मर गई थी न, जब उसे तुम्हारी पुकार ही नहीं सुनाई दी। विश्वास नहीं होता ?"

"कहती क्या हो माया ! सुरेश ने तो कहा था कि जब हरनाम मेरा पत्र लेकर पहुँचा तो तुम घर थी ही नहीं ।"

"मेरी बात क्यों कहते हो ? यह तो उस माया की बात है। पर हाँ, यह तो सच है कि हरनाम जब पत्र लेकर वहाँ पहुँचा था, तब वह हतभागिनी घर पर नहीं थी।"

"तब !"

"तब क्या ? जब लौटी तो महरी ने कहा नहीं होगा उससे ?"

"पर वह पत्र तो सुरेश नारायण अपने साथ ले आये थे।" नवनीत ने कहा।

"तो क्या हुआ ? हरनाम ने तो महरी से कह भी दिया था न कि तुम बहुत बीमार हो।"

"और ऐसा भी तो हुआ हो सकता है कि माया दौड़ी गई हो उस भैरव-मन्दिर में। वहाँ से मैं सुरेश नारायण के साथ रवाना हो ही चुका था। नहीं माया, दोष अगर किसी का हुआ हो तो वह सुरेश का ही हो सकता है, माया का नहीं। वह माया तो तुम्हारी ही तरह कोमल, कमनीय और प्रेय है मेरी रानी।"

"हाँ जी। तुम औरतों को जानते ही कहाँ हो ? शर्ली, नीलम, सुरेश के लौट आने पर दोनों अपने पुनर्विवाह की योजना न बना रहे हों।"

"तो क्या तुम सोचती हो, सुरेश नारायण के इस मुझे विदेह बनाने के छल में वे भी सम्मिलित हैं ?"

"सम्मिलित न भी हों तो भी जो हो चुका है उसे स्वीकार क्यों न करे वह ? यह तो आखिर उनमें तय हुआ ही था कि यदि तुम कहीं से दमयन्ती के नल की तरह ऋतुपर्ण के सारथी बन कर भी न टपक पड़ो तो सुरेश का प्रस्ताव मानने में उसे कोई आपत्ति न होगी। अब तुम यहाँ लाकर पटक दिए गये हो, विदेह होना चाह ही रहे हो। बस, उनके स्वयंवर में बाधा ही क्या रह गई है ?"

"तुम बड़ी निष्ठुर हो माया। आखिर वह भी तो तुम्हारी बहन है, एकदम यमज।"

"तभी तो वह मुझसे जलती है। जो इस तरह तुम्हारा सिर गोद में लेकर बैठने का सौभाग्य पा गई हूँ, वह उसे कहाँ सहन हो रहा है ? देख लेना, और कुछ नहीं तो जल-कुढ़ कर ही वह सुरेश के साथ अपना ब्याह रचा बैठेगी।"

"तो यह खुशी ही की बात होगी माया। मेरे नाम का पल्ला बाँध कर कितना दु:ख उठाया है बेचारी ने ? सुरेश के साथ अगर वह सुख से रह सके तो मेरा उसे आशीर्वाद और अभिनन्दन। और माया, तुम्हें भी चाहिए कि तुम भी उसे क्षमा कर दो। मैं तो चाहता हूँ कि तुम भी वहीं लौट कर उससे सुलह कर लेतीं।"

"हाँ जी, कर लेती न सुलह ! देखो जी, हमें यह मजाक पसन्द नहीं। तुम बड़े निष्ठुर होते जा रहे हो। मेरे साथ तुमने कभी सदय व्यवहार नहीं किया, यह तुम्हें कभी नहीं भूलना चाहिए।"

"किन्तु मेरे साथ यह यात्रा कितनी कठिन है, जहाँ देह तक का सम्बल नहीं।"

"पर वह सम्बल कहाँ ? वह तो बाधा है न !"

"बाधा है, किन्तु इसीलिए तो विदेह होना पड़ता है। रक्त, मज्जा, मांस, अस्थि, सब का मोह त्यागना पड़ता है न ?"

"यह जरा-सा खून बहा कर ही शहीद हो जाना चाहते हो ? लेकिन मैं तो तुमसे भी पहले विदेह हो चुकी हूँ, तभी तो तुम्हारी नीरव पुकार सुन कर स्थान और समय की दूरियाँ पार करके कहाँ से नहीं आ टपकी हूँ मैं ? यह तुम्हें मेरे शरीर ही का स्पर्श लगता है क्या, आत्मा का नहीं ? और अब क्या हम चाह कर भी अलग हो सकते हैं ! जरा अपने मन का परदा तो उठाओ, तुम्हारे मन के कण-कण और क्षण-क्षण में क्या मैं व्याप्त नहीं हूँ ! अलग कहाँ हूँ तुमसे मैं ! तुम्हारी मनोमय अनुभूति..."

नवनीत ने और कस कर माया को अपनी भुजाओं के आलिंगन में कस लिया और कहा, "हाँ माया, मेरी ही भूल है। यह ठंडी बयार, देखो न। बसन्त की बहार होती जा रही है।"

"हाँ, बहार ही है जी। और तुम भी तो थक गए मालूम देते हो। अच्छा, अब सोने का प्रयत्न करो न ? मैं तुम्हारे मस्तक पर हाथ फिराती हूँ।"

"सो ही ठीक है माया। तुम्हारी गोद में पलकें यों ही भारी हो उठती हैं।"

माया ने अँगुली को ओठों से लगाकर 'शिश' किया और कहा, "नहीं, अब नहीं बोलने पाओगे। चलो सोओ। अब और दुर्वृत्त नहीं होने दूंगी।"

हंस कर नवनीत माया की ओर देखने लगा। माया ने भी मुस्करा दिया।

उसके कुछ क्षणों बाद माया ने अपना हाथ नवनीत की पलकों पर रख कर उन्हें धीरे-धीरे बन्द कर दिया, और हौले-हौले वह उसके मस्तक तथा पलकों को सहलाने लगी। नवनीत की चेतना को सहारा मिल गया।

पूर्व अरुणोदय की किरणें भी उसे चूमने के लिए मचलने लगी थीं।

* * *